Wundt
The father of Modern Scientific Psychology.

विषय-सूची

परिशिष्ट :

—:०:—

: १ :

मापन एवं मूल्याङ्कन की प्रस्तावना

विज्ञान एवं मापन
(Science and Measurement)

मनुष्य की सभ्यता के विकास में जैसे-जैसे विज्ञान की प्रगति हुई, मापन विधियों का भी विकास होता गया। प्रारम्भ में सभी क्षेत्रों में यत्न एवं भूल की विधि का सहारा लिया जाता था, पर कालान्तर में अनुभव के अलग-अलग अंशों को बटोर कर दर्शनशास्त्र का जन्म हुआ। तीन शताब्दी पूर्व जब गैलीलियो ने प्रयोगात्मक विधि से नियमों की सत्यता-असत्यता की जाँच की तो आधुनिक विज्ञान का उदय हुआ। तब से केवल भौतिक एवं रसायन-शास्त्र में ही नहीं, वरन् मनोविज्ञान, भूगोल, जीवशास्त्र सभी में मनुष्य के परिमाणात्मक ज्ञान का विस्तार हुआ है। विज्ञान ने हमारे भौतिक जगत में एक क्रांति ला दी है। पर यह वैज्ञानिक विधि है क्या, इस सम्बन्ध में अनेक व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई हैं। बर्टेण्ड रसैल के अनुसार वैज्ञानिक विधि का अर्थ है, विशिष्ट तथ्यों के अध्ययन से सामान्य नियमों की खोज। प्रारम्भ से इस विज्ञान के दो पक्ष रहे हैं--वस्तुओं के बारे में ज्ञान प्राप्त करना एवं उन्हें बदलना। इसीलिए विज्ञान का विकास भी 'शुद्ध विज्ञान' (Pure Science) तथा 'व्यवहृत विज्ञान' (Applied Science) के रूप में हुआ है।

भौतिक-शास्त्र में तो बहुत पहले ही, यहाँ तक कि ईसा के समय में ही प्रयोग होते थे; पर महत्वपूर्ण कार्य का प्रारम्भ तो लगभग ३०० वर्ष पहले गैलीलियो से हुआ। जैसे ही किसी विज्ञान की शाखा में मापन के यथार्थ साधनों का प्रवेश हुआ, इस विज्ञान की सर्वतोमुखी प्रगति भी हुई। इसी कारण से रसायन-शास्त्र एवं भौतिक-शास्त्र आगे बढ़े। भौतिक-शास्त्र में मापन का प्रवेश गणित के रूप में हुआ। चार्ल्स डार्विन के 'विकास के सिद्धान्त' (Theory of Evolution) में अनेक संग्रहीत तथ्यों का केवल वर्गीकरण किया गया। पर बाद में चलकर गाल्टन ने 'विकासवाद' में भी मापन-विधि पर बल दिया, न कि केवल वर्गीकरण पर। इसीलिए पियर्सन, स्पीयरमैन, फिशर आदि द्वारा प्रतिपादित सांख्यिकी विधियों ने जीवशास्त्र में प्रवेश किया। मुलर, वैबर तथा हैल्महोल्ज़ ने शरीर-शास्त्र को परिमाणात्मक विश्लेषण की सुदृढ़ भित्ति पर खड़ा किया।

पर समाज-विज्ञानों में मापन-विधि का प्रयोग भौतिक एवं प्राकृतिक विज्ञानों की तरह सरल नहीं है, क्योंकि समाज-विज्ञान प्राकृतिक विज्ञानों की अपेक्षा केवल नए विकसित ही नहीं हैं वरन् इन विज्ञानों में अन्वेषण से प्राप्त तथ्य भी अपेक्षाकृत अधिक जटिल हैं। इस जटिलता का कारण यह है कि ये विज्ञान मनुष्य और उसके सामाजिक जीवन का अध्ययन करते हैं। इसके अतिरिक्त प्राकृतिक एवं भौतिक विज्ञानों ने दर्शनशास्त्र के गर्भ से मुक्ति पाकर अपनी स्वयं की सत्ता स्थापित कर ली है, जबकि सामाजिक विज्ञान अभी तक बहुत कुछ दर्शन के चंगुल में फँसे हैं। इनका शब्द-भण्डार, भाषा, अलग अस्तित्व नहीं रखती। और अभी भी इनमें गुणात्मक चिन्तन विस्तृत रूप में प्रचलित होने के कारण अस्पष्टता एवं असार्थकता शेष है। जहाँ तक मनोविज्ञान का प्रश्न है, हम इसे अभी तक विशुद्ध रूप से विज्ञान नहीं कह सकते। इसका विज्ञान या कला होना बहुत कुछ हमारे दृष्टिकोण एवं अध्ययन की विधि पर निर्भर है। कई बार इसके विज्ञान एवं कला पक्ष के हिमायतियों में तीव्र मत-भेद उत्पन्न हुए हैं। पर अब दिन-प्रतिदिन मापन-विधियों का प्रयोग बढ़ता ही जा रहा है। अनुसन्धान, प्रयोग, सांख्यिकी सभी में परिमाणात्मक निष्कर्षों को महत्त्व दिया जाता है।

मापन का महत्व

(Value of Measurement)

मापन का अर्थ है किन्हीं निश्चित इकाइयों में वस्तु या गुण के परिमाण का पता लगाना। यह मानवीय मन के विभिन्न पक्षों या गुणों के सम्बन्ध में

भी उतना ही सत्य है जितना भौतिक वस्तुओं के सम्बन्ध में। ई० एल० थॉर्नडाइक के अनुसार, "प्रत्येक वस्तु जो जरा भी सत्ता रखती है, किसी न किसी परिमाण में सत्ता रखती है; और कोई भी वस्तु जिसकी किसी परिमाण में सत्ता है, मापन के योग्य है।"[1] तथापि मापन बहुत कुछ उपयुक्त साधनों के निर्माण पर निर्भर है। विभिन्न क्षेत्रों में इन साधनों के विकास में काफी प्रगति हुई है, तथापि काफी कार्य अभी बाकी है। मनोवैज्ञानिक मापन भौतिक मापन की अपेक्षा कहीं अधिक जटिल है, क्योंकि शिक्षा एवं मनोविज्ञान का उद्देश्य केवल मानवीय व्यवहार का पता लगाना ही नहीं है वरन् उसमें परिवर्तन भी करना है। जब तक निश्चित और यथार्थ मापन के साधनों का विकास नहीं होता, यह सम्भव नहीं है। मनोवैज्ञानिक व्यक्तित्व गुणों का अध्ययन एवं मूल्यांकन करने का इच्छुक रहता है और उसका उद्देश्य रहता है कि व्यक्ति के व्यक्तित्व का संगठित एवं सर्वतोमुखी विकास करना। संगठित एवं सर्वतोमुखी विकास के लिए ऐसे गुणों एवं अभिवृत्तियों का विकास आवश्यक है जो व्यक्ति को समाज-कल्याण की ओर अग्रसर कर सके। इन गुणों एवं अभिवृत्तियों का विकास करने के लिए सर्वप्रथम व्यक्तित्व विकास के प्रतिकारकों का पता लगाना आवश्यक होता है और मापन इस दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी है।

मापन का जीवन में अत्यन्त महत्व है। सोते, जागते, उठते, पढ़ते सभी समयों पर एवं अन्य अनेक अवसरों पर हम मापन का उपयोग करते हैं। हम मापन पर किस सीमा तक निर्भर करते हैं, इसे समझने के लिए एक उदाहरण लीजिए। मान लीजिए एक व्यक्ति बस स्टेशन से १५ मील की दूरी पर रहता है। वह जानता है कि दूरी १५ मील है, क्योंकि उसे इसका मापन ज्ञात है। ठीक समय पर बस स्टेशन पहुँचने के लिए वह अपनी घड़ी देखता हैं, क्योंकि उसकी घड़ी समय का मापन करती है। उसकी कार में लगा 'गतिमापक' (Speedometer) गति का मापन करता है। टिकिट खरीदते समय वह कुछ धन-राशि अदा करता है; जैसे-रुपए और नये पैसे। इनका भी वह निश्चित इकाइयों में मापन करता है। उसके कमरे में ताप की मात्रा भी किसी यंत्र से मापित होती है। किसी व्यक्ति को दोपहर का भोजन अत्यन्त स्वादिष्ट लगता है क्योंकि रसोइये ने

1. "Any thing that exists at all, exists in some quantity, and anything that exists in some quantity is capable of being measured."—E. L. Thorndike : "*The Nature, Purposes and General Methods of Educational Products.*" 17th Year book, National Society for the Study of Education, part II, p. 16.

भोजन के अनेक घटकों तथा आवश्यक पदार्थों का ठीक-ठीक मापन करके उसे स्टोव पर चढ़ाया था। समाचार-पत्र के स्तम्भ, उनकी शीर्ष रेखाएँ और विभिन्न स्तम्भों में निकलने वाले विज्ञापन जो कि हम पढ़ते हैं, पहले से ही प्रमापित से रहते हैं। सच कहिए कि हमारी सभ्यता का सम्पूर्ण विकास ही किसी न किसी प्रकार के मापन पर निर्भर है, जैसे वर्ष, मास, मिनट, सैकिन्ड और पल में समय का मापन होने से विभिन्न राष्ट्रों के बीच लिखे जाने वाले सधि-पत्रों का हिसाब रखा जा सकता है। सेनाओं की प्रगति, नियमित सरकार चलाने में, एवं दूरी, आकार, आयतन सभी का ज्ञान मापन पर ही निर्भर है। इसी कारण सड़कों, रेलों, और नहरों का निर्माण सम्भव हुआ है। प्रकाश की तीव्रता एवं विद्युत परिमाण के मापन की विधि में विकास होने के कारण भौतिक शास्त्र की प्रगति हुई। मानव शरीर का तापक्रम, रक्तचाप, दिल की धड़कन, नाड़ी की गति आदि की मापन विधियों में विकास होने के कारण चिकित्साशास्त्र की प्रगति हुई। मिट्टी एवं बीज के गुण, दूध की विषय-वस्तु आदि के मापन ने कृषिशास्त्र को धनी बनाया है।

परिमाणात्मक एवं गुणात्मक मापन
(Quantitative and Qualitative Measurement)

मनोविज्ञान एवं शिक्षा में भी मापन का अत्यन्त महत्व है। इनका सम्बन्ध भौतिक मापन से न होकर मानसिक मापन से है। यह एक अत्यन्त कठिन तथा जटिल कार्य है, क्योंकि मनोवैज्ञानिक मापन में 'व्यवहार का मापन' सन्निहित है। और चूँकि व्यवहार परिस्थिति एवं उद्दीपक के साथ बदलता रहता है अतः मानसिक मापन कभी निश्चित नहीं हो सकता। ज्ञानोपार्जन, बुद्धि, व्यक्तित्व ये सभी तथ्य जिनका कि मनोविज्ञान में मापन होता है, जटिल हैं। यही कारण है कि इस शताब्दी के प्रारम्भ तक इन क्षेत्रों में मापन-विज्ञान अधिक विकसित न था। भौतिक एवं मनोवैज्ञानिक मापन में मुख्य अन्तर यह है कि भौतिक मापन मुख्यतः परिमाणात्मक (Quantitative) होता है, जबकि मनोवैज्ञानिक मापन मुख्यतः गुणात्मक (Qualitative)। 'परिमाणात्मक' से अर्थ है किसी कोई वस्तु जिसकी भौतिक जगत में सत्ता हो, जिसमें आकार, विषयवस्तु, परिमाण आदि गुण हों, जिसे देखा जा सके और जिसकी उपस्थिति या अनुपस्थिति को अनुभूत किया जा सके। इन अर्थों में भौतिक मापन परिमाणात्मक हुआ, जैसे दूरी, लम्बाई, क्षेत्रफल, वजन, आयतन आदि का मापन। इन मापनों के लिए कुछ इकाइयों की आवश्यकता पड़ती है; जैसे—१२" = १' या ३ फीट = १ गज। परिमाणात्मक मापन में निम्न गुण हैं :—

(अ) इन सभी इकाइयों का सम्बन्ध एक ज़ीरो बिन्दु से होता है । इकाई का अर्थ होता है---जीरो बिन्दु से ऊपर एक निश्चित मूल्य । छः फीट का अर्थ है '०' से ऊपर छः फीट ।

(ब) परिमाणात्मक मापन में किसी यन्त्र पर समान इकाइयाँ समान परिमाण की होती हैं; जैसे एक फुट के सभी इंच बराबर दूरी के होते हैं; एक मील में सभी गज समान दूरी के आदि ।

(स) परिमाणात्मक मापन अपने आप में सम्पूर्ण होता है । हम चाहें तो किसी कपड़े के टुकड़े की सारी लम्बाई का मापन कर सकते हैं । इसी प्रकार हम किसी कमरे के सम्पूर्ण आयतन या किसी दूकान में बोरियों में भरी सम्पूर्ण चीनी की मात्रा का मापन कर सकते हैं ।

(द) किसी वस्तु का मापन स्थिर या निरपेक्ष रहता है; जैसे मांशपेशियों के सिकुड़ने की गति । इन सभी विशेषताओं से ज्ञात होता है कि परिमाणात्मक भौतिक मापन वस्तुगत होता है । यह आत्मगत मूल्यांकन से प्रभावित नहीं होता ।

परिमाणात्मक मापन के विपरीत मनोवैज्ञानिक गुणात्मक मापन आत्मगत एवं अनिश्चित होता है । जैसे किसी खिलौने, या जानवर के बारे में या किसी अध्यापक के कार्य का निर्णय । किसी खिलौने के गुण के सम्बन्ध में निर्णय करते समय हमें किसी प्रतिमान को आधार बनाना पड़ता है और उस प्रतिमान की तुलना में खिलौने को निर्णीत करना पड़ता है । इस प्रकार के प्रतिमान की सत्ता मूल्यांकन करने वाले के मन में ही रहती है । और आवश्यक नहीं है कि यह प्रतिमान उचित भी हो, क्योंकि यह आत्मगत होता है । इसी प्रकार अध्यापक की विशेषता का मापन या निर्णय करते समय प्रधानाध्यापक या पर्यवेक्षक उसका सारा कार्य नहीं देखता, पर केवल उसका एक न्यादर्श ले लेता है । वह उसके बारे में इस प्रकार से निर्णय ले सकता है—श्रेष्ठ, अच्छा या मध्यम । किन्तु इन प्रतीकों का कोई निश्चित मूल्य नहीं होता । कितना अच्छा, श्रेष्ठ या मध्यम, यह कैसे जाना जा सकता है । इसी प्रकार एक अध्यापक किसी छात्र द्वारा लिखे 'अंग्रेजी कम्पोजीशन' का मूल्यांकन उसकी भाषा, व्याकरण, विषय-वस्तु के आधार पर कर सकता है और तदनुसार उसे अंक दे सकता है । पर विद्यार्थी से किस प्रकार की भाषा, विषय-वस्तु आदि की आशा रखनी चाहिए इसका कोई निश्चित आदर्श नहीं है । यह तो केवल अध्यापक के मन में स्थित प्रतिमान पर निभर है । इस प्रकार गुणात्मक मापन की निम्न विशेषताएँ हैं :—

(अ) इनमें कोई ज़ीरो बिन्दु नहीं होता। यदि किसी बुद्धि परीक्षण में किसी बालक की बुद्धि-लब्धि 'ज़ीरो' आ भी जाए तो इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि उस बालक में बुद्धि-लब्धि शून्य है। इसी प्रकार इकाइयों का सम्बन्ध निरपेक्ष (Absolute) न होकर सापेक्ष (Relative) है। यदि एक बालक की बुद्धि-लब्धि १२० है और दूसरे की ६० तो इसका यह अर्थ नहीं है कि पहले में दूसरे से दुगुनी बुद्धि है।

(ब) मानसिक या गुणात्मक मापन की इकाइयाँ आपस में समान नहीं हैं। १३ और १३½ मानसिक आयु वाले बालकों की मानसिक आयु का अन्तर उतना ही नहीं है जितना ६ और ६½ वर्ष की मानसिक आयु वाले बालकों का। यद्यपि निरपेक्ष अन्तर ½ वर्ष है, पर वास्तव में ६ तथा ६½ में १३ तथा १३½ की अपेक्षा अधिक अन्तर है।

(स) भौतिक मापन जैसे ८० पौण्ड या १५ इंच निश्चित परिमाण की ओर संकेत करते हैं। पर मनोवैज्ञानिक मापन में ऐसा नहीं है। यदि एक परीक्षार्थी गणित के प्रश्नों में से १० में से ८ ठीक करे तथा लेखन में २०० शब्दों में ५० भूलें करे तो हम यह नहीं कह सकते कि वह गणित में होशियार है और लेखन में कमजोर। हमें यह देखना पड़ेगा कि गणित के प्रश्न कठिन थे या सरल या इसी प्रकार लेखन में बोले गए शब्द कैसे थे। इसके अतिरिक्त अन्य विद्यार्थियों ने कितने प्रश्न हल किए और कितनी भूलें कीं। अतः गुणात्मक मापन का तुलनात्मक महत्व है।

(द) गुणात्मक मापन में तुलना का आधार प्रायः 'मानक' (Norms) होते हैं जो सामान्य वितरण में औसत निष्पादन के आधार पर बनाए जाते हैं।

ऊपर के विवेचन के आधार पर परिमाणात्मक तथा गुणात्मक मापन में निम्न अन्तर है :—

परिमाणात्मक मापन	गुणात्मक मापन
१. ज़ीरो बिन्दु।	१. कोई भी ज़ीरो बिन्दु नहीं वरन् एक प्रतिमान या मानक।
२. निश्चित तथा निरपेक्ष मूल्य की इकाइयाँ।	२. अनिश्चित तथा केवल सापेक्ष मूल्य की इकाइयाँ।
३. वस्तु की सम्पूर्ण मात्रा या परिमाण का माप सम्भव।	३. वस्तु के किसी आंशिक गुण का ही माप सम्भव।
४. वस्तुगत।	४. प्रायः आत्मगत, यद्यपि वस्तुगत बनाने की ओर वैज्ञानिकों के प्रयास।

मापन एवं मूल्यांकन
(Measurement and Evaluation)

मापन का अर्थ है—संक्षिप्त, यथार्थ परिमाणात्मक मूल्य ज्ञात करना, जैसे इंचों में किसी रेखा की लम्बाई या किसी परीक्षण में किसी विद्यार्थी के अंक। इसका अर्थ है किसी निश्चित क्षेत्र या गुण का मूल्य ठहराना। मूल्यांकन शिक्षा एवं मनोविज्ञान में एक नया शब्द है एवं इसका अर्थ भी अधिक व्यापक है। इसमें आत्मगत निर्णय एवं वस्तु या घटना के सम्बन्ध में हमारी राय भी सम्मिलित है। ब्रेडफील्ड तथा मोरडॉक ने अपनी पुस्तक 'शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन' में इन दोनों शब्दों का अन्तर बताते हुए उल्लेख किया है कि मापन की प्रक्रिया में किसी घटना या तथ्य के विभिन्न परिमाणों के लिए प्रतीक निश्चित किए जाते हैं ताकि उस घटना या तथ्य के बारे में यथार्थ निश्चय किया जा सके, जबकि मूल्यांकन में उस घटना या तथ्य का मूल्य ज्ञात किया जाता है।[1] उदाहरण के लिए एक टाइपिंग सीखने वाले विद्यार्थी को लीजिए। यदि अन्य विद्यार्थियों के साथ उसे एक टाइपिंग परीक्षा दी जाए और परिणाम निकले कि वह प्रति मिनट ४० शब्द टाइप करता है और कुल ५ गलतियाँ करता है, तो इसे मापन की प्रक्रिया कहेंगे। इसमें मुख्य तथ्य (Phenomenon) टाइप करना है। गति एवं परिशुद्धता इस तथ्य के वे परिमाण हैं, जिनका कि मापन किया जा रहा है। ४० शब्द तथा ५ गलतियाँ ये वे प्रतीक (Symbols) हैं, जिनसे कि परीक्षार्थी की टाइप-योग्यता प्रमाणित हुई है। अब यदि लड़के की टाइप करने की योग्यता को अन्य विद्यार्थियों की टाइप-योग्यता से या सामान्य वितरण में विद्यार्थियों द्वारा प्राप्त अंकों को सामने रखकर आंका जाए और उस आधार पर परीक्षार्थी को 'बी' ग्रेड दिया जाए तो इस प्रक्रिया को 'मूल्यांकन' कहेंगे। इसमें प्रतीक 'बी' विद्यार्थी की टाइप-योग्यता की गति एवं परिशुद्धता का मूल्य आंकता है। यह

1. "Measurement is the process of assigning symbols to dimensions of phenomena in order to characterise the status of a phenomena as precisely as possible. Evaluation is the assignment of symbols to phenomena in order to characterise the worth or value of a phenomena usually with reference to some social, cultural or scientific standard."—Bradfield and Mordock : *Measurement and Evaluation in Education.* Macmillan, 1957. p. 2.

प्रतीक ज्ञात करने के लिए सामान्य वितरण में प्राप्त अंकों या अन्य विद्यार्थियों की योग्यता को प्रतिमान (Standard) माना गया है।

एक अन्य उदाहरण लीजिए। माना कि किसी भवन की छत बनाने के लिए हमें लोहे की कड़ियों की आवश्यकता है। हम लौह-सामान की दूकान पर जाकर अनेक कड़ियों की लम्बाई का '**मापन**' करेंगे। पर हम यह भी देखेंगे कि ये लम्बाइयाँ हमारी छत की लम्बाई के अनुरूप है या नहीं। यह '**मूल्यांकन**' हुआ।

ये उदाहरण मापन एवं मूल्यांकन का अन्तर स्पष्ट करते है। पर कई परिस्थितियों में इस अन्तर की स्पष्ट पहिचान करना इतना सरल नहीं है। यह तब होता है जब मापन करने के पश्चात् बिना वास्तविक चिन्तन के मूल्यांकन केवल एक स्वाभाविक प्रक्रिया बन जाता है। जैसे किसी परीक्षा में प्राप्त सापेक्षिक अंकों के कारण यह स्वयं ही पता चल जाता है किसी व्यक्ति का समूह में क्या स्थान है। अर्थात् सर्वाधिक अंक प्राप्त करने का मतलब है सर्व-श्रेष्ठ भी होना। मापन तथा मूल्यांकन में अन्तर तब भी स्पष्ट नहीं होता जब कि रिवाज या लम्बी अवधि तक प्रयोग करते रहने के कारण मापन के प्रतीकों तथा गुणात्मक प्रतिमानों में निश्चित सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। जैसे विभिन्न प्रसारों (ranges) में बुद्धि के कुछ मूल्य निश्चित हो गए हैं; यथा— ९०-११०=औसत, ११०-१३०=औसत से ऊपर, १३०-१५० श्रेष्ठ, १५० या ऊपर, प्रतिभाशाली।

वास्तव में मूल्यांकन गुणात्मक निर्णय करने की एक प्रक्रिया है। अतः यह भी एक प्रकार का मापन ही है। जिस प्रकार हम किसी वस्तु के परिमाण का विवरण देने के लिए प्रतीकों का प्रयोग करते हैं, उसी प्रकार उसके गुणों का विवरण देने के लिए। और जिस प्रकार हम इंच, पाउण्ड, सैकिण्ड आदि को मापन का आधार बनाते हैं, उसी प्रकार गुणात्मक मानकों को मूल्यांकन का आधार बनाते हैं। मापन वस्तुगत होता है, पर मूल्यांकन मुख्यतः आत्मगत।

मापन-योग्य तथ्य
(Measureable Phenomena)

हम 'तथ्य' (Phenomenon) शब्द का प्रयोग सामूहिक रूप से सभी मापन-योग्य वस्तुओं के लिए करते हैं, क्योंकि यही एक ऐसा सामान्य शब्द है जो उन सभी वस्तुओं को सम्मिलित कर लेता है, जिन्हें अध्यापक या शिक्षा-शास्त्री मापना चाहते हैं। इसके अन्तर्गत सभी क्षेत्र आ जाते हैं; जैसे—कला,

संगीत, हॉकी, बैडमिन्टन आदि में योग्यता; गणित, समाज-शास्त्र मनोविज्ञान, अंग्रेजी आदि में ज्ञानोपार्जन; क्लैरीकल कार्य, इन्जीनियरिंग चिकित्सा-विधि आदि में अभिरुचि; जनतन्त्र, अल्पसंख्यकों, स्कूल, राष्ट्र, किसी संस्था के प्रति अभिवृत्ति; खेल, पाठन आदि में रुचि तथा व्यक्ति के अनेक गुण जैसे—रचनात्मक प्रवृत्ति, अभियोजन और 'बुद्धि'। इस प्रकार मापन-योग्य तथ्यों की एक विस्तृत श्रृंखला है। पर किसी तथ्य को स्पष्ट रूप से बताना उतना सरल नहीं है। इसके कई कारण हैं :—

(१) ये एक-दूसरे से बिल्कुल अलग नहीं हैं और न उनमें स्पष्ट रूप से कोई विभाजन-रेखा ही खींची जा सकती है। उदाहरण के लिए योग्यता और उपलब्धि दोनों का एक ही अर्थ हो सकता है और इसी प्रकार तत्परता तथा अभिरुचि का भी।

(२) इसके अतिरिक्त कोई भी एक तथ्य अपने अन्तर्गत एक ही प्रकार के सभी क्षेत्रों का प्रतीक नहीं है। किसी विद्यार्थी की सफलता की भविष्यवाणी करने के लिए सम्भव है हम यह समझें कि केवल उसकी बुद्धि, पूर्वज्ञान, स्कूल के प्रति अभिवृत्ति और उसकी अध्ययन सम्बन्धी आदतें जानना काफी है। पर उसके बाद भी यह आवश्यक नहीं है कि हम उसकी सफलता के बारे में बता सकें, क्योंकि स्कूल में सफलता अनेक अन्य बातों जैसे प्रेरणाशक्ति, शिक्षा की प्रवणता आदि पर भी निर्भर है।

(३) मापन-योग्य कुछ तथ्य (Phenomena) ऐसे भी हैं जिन्हें ठीक से परिभाषित नहीं किया जा सकता; जैसे नागरिकता, ज्ञान, व्यक्तित्व बुद्धि। विभिन्न लोग इनका विभिन्न अर्थ लगाते हैं। फिर इनकी परिभाषायें अत्यन्त अमूर्त तथा दुरूह शब्दों में की गई हैं।

(४) मापन अनेक शैक्षणिक उद्देश्यों के लिए प्रयुक्त होता है, जैसे-निदान, भविष्यवाणी, अनुसन्धान, वर्गीकरण, प्रशासन। एक दिये हुए उद्देश्य में अनेक दृष्टिकोण हो सकते हैं। एक ही तथ्य के सम्बन्ध में अनेक दृष्टिकोण रहने से गलतफहमी की काफी सम्भावना रहती है। उदाहरण के लिए पाठन-योग्यता का मापन लीजिए। अध्यापक पाठन-योग्यता का मापन इसलिए करना चाहता है कि विद्यार्थी ने पाठन-विषयवस्तु को कितना सीख लिया है; एक उपचारक इसलिए कि बालक पाठन-कला में कहाँ तक पिछड़ा है और इसका अन्य बातों से कहाँ तक सम्बन्ध है; और स्कूलों का सुपरिन्टेन्डेन्ट या इन्स्पैक्टर इसलिए कि वह अभिभावकों को अपने क्षेत्र में जो शिक्षा दी जा रही है, उसकी महत्ता एवं यथार्थता से प्रभावित कर सके। ये सभी व्यक्ति अलग-अलग परीक्षणों का प्रयोग करेंगे, तथापि ये सब एक ही पाठन-योग्यता का मापन करेंगे।

(५) अधिकांश मापन-योग्य तथ्य व्यक्ति के व्यवहार के अङ्ग हैं कुछ व्यक्त तथा कुछ अव्यक्त; और कुछ मन तथा संवेग की किसी अवस्था की ओर संकेत करते हैं। उन्हीं परिस्थितियों में बार-बार मापन से स्वयं इस व्यवहार में परिवर्तन सम्भव है।

मापन-आयाम
(Dimensions of Measurement)

हम किसी भी तथ्य के अनेक पक्षों; जैसे—उसके परिमाण, गुण, विशेषताएं, विस्तार आदि का मापन करते हैं जैसे हम यह कहते हैं कि कोई व्यक्ति ५' ८" 'लम्बा' है, या उसका 'वज़न' १३५ पाउण्ड है, या उसका 'रंग' सांवला है। 'लम्बाई', 'वजन', 'रंग' ये अनेक पक्ष हैं। किसी तथ्य के अनेक पक्षों अवयव, परिवर्त्ती, गुण, दशाएँ, विस्तार आदि को हम शब्द **'आयाम'** या 'परिमाण' (Dimension) से व्यक्त करेंगे। किसी तथ्य के बारे में जो कुछ मापन किया जाये, वह उसका 'परिमाण' हुआ। यह मापन हम उसी सीमा तक कर सकते हैं जिस सीमा तक हमें उस तथ्य के विस्तार का ज्ञान है। किसी तथ्य के बहिर्मुखी विस्तार का हमें मापन करना होता है; जैसे—किसी विद्यार्थी की स्थिति के बारे में जानने के लिए हमें उसकी आयु, लम्बाई, वज़न, स्कूल के विषयों का ज्ञान, बुद्धि, व्यक्तित्व, पृष्ठभूमि—सभी का मापन करना पड़ता है। तथ्य उसी सीमा तक मापन-योग्य हैं अर्थात् उनका विवरण, वर्गीकरण आदि किया जा सकता है जिस सीमा तक वे निम्न दशाओं की पूर्ति करें—

(१) मापन-योग्य आयाम किसी एक व्यक्ति में ही नहीं, वरन् पूरे समूह में उपलब्ध हों या पाये जाते हैं; जैसे प्रत्येक विद्यार्थी में आयु, लम्बाई, वज़न, पाठन-योग्यता, प्रेरणा-शक्ति आदि होती है। केवल इनकी मात्रा एवं गुण में व्यक्तिगत विभेद होता है।

(२) किसी भी तथ्य के आयाम का मापन करते समय हम ज्ञानेन्द्रियों का प्रयोग करते। जैसे किसी रेखा की लम्बाई नापते समय हम उसे देखते हैं। किसी वस्तु में प्याज की सत्ता जानने के लिए हम उसे सूँघते हैं। इस प्रकार मापन के समय किसी न किसी व्यक्ति को वस्तु की संवेदना ग्रहण करनी होती है।

(३) किसी मापन-योग्य आयाम के प्रति अनेक असम्बन्धित एवं निष्पक्ष व्यक्ति एक ही प्रकार की प्रतिक्रियायें करते हैं। एक रेखा की लम्बाई का सभी व्यक्ति एक ही मापन करेंगे; अन्यथा उनका मापन विश्वसनीय नहीं होगा। शिक्षा एवं मनोविज्ञान में जब किसी तथ्य का अनेक व्यक्ति मापन करते हैं तो

कुछ न कुछ असंगतता आ ही जाती है। पर हम विश्वसनीयता गुणांक निकालकर अपने तथ्यों की संगतता का पता लगा सकते हैं।

(४) मापन करने से पहले यह आवश्यक है कि आयाम को ठीक से परिभाषित किया जाए। शिक्षा एवं मनोविज्ञान के क्षेत्र में यह और भी अधिक आवश्यक है, क्योंकि अनेक शब्दों एवं प्रतीकों के स्पष्ट अर्थ नहीं दिए रहते।

(५) आयाम का मापन तभी सम्भव है जब व्यक्तियों में इसकी मात्रा एवं गुण में व्यक्तिगत विभेद हो। हम बुद्धि का मापन इसलिए करते हैं क्योंकि अलग-अलग व्यक्तियों में इसकी मात्रा अलग-अलग होती है। यदि किसी समूह के सभी व्यक्ति किसी विशेष गुण में एक समान हों, तो उस गुण के मापन से कोई लाभ नहीं है।

ऊपर दी गई 'आयाम' की दशाओं को पढ़ने से ज्ञात होगा कि वे सब एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं। जैसे किसी आयाम की स्पष्ट परिभाषा तभी सम्भव है जब उस सम्बन्ध में सांवेदनिक आंकड़े उपलब्ध हों। इसके अतिरिक्त ये दशाएँ केवल निरीक्षण योग्य आयाम (Observable Dimensions) के सम्बन्ध में ही हैं। हम व्यवहार के अमूर्त पक्ष, निरीक्षण के अयोग्य मन की अनेक बातों का भी मापन कर सकते हैं। हम इन्हें अनुमानित आयाम (Inferred Dimensions) कहेंगे। इनका मापन भी अप्रत्यक्ष रूप से किया जाएगा। बुद्धि एक ऐसा तथ्य है जिसके आयाम अनुमानित होते हैं, जैसे निगमन तर्कशक्ति, आगमन तर्कशक्ति। हम तर्क-शक्ति का निरीक्षण नहीं करते, क्योंकि हम मन की तह में पहुँचकर 'वहाँ क्या हो रहा है', यह नहीं जान पाते। हम इस शक्ति का मापन करने के लिए उन परिस्थितियों में बालक के व्यवहार का निरीक्षण करेंगे, जिनमें तर्क-शक्ति आवश्यक होती है। इस प्रकार अनुमानित परिमाण का भी अत्यन्त यथार्थता एवं शुद्धता से मापन करना सम्भव है। स्मरण-शक्ति, व्यक्तित्व के अनेक गुण, सभी अनुमानित आयाम हैं।

मापन-योग्य आयाम का चयन करने में निम्न सिद्धान्तों का आश्रय लिया जा सकता है :—

(१) आयाम मापन के उद्देश्यों से मेल खाता हो; जैसे—स्टेनोग्राफी सिखाते समय उपयुक्त विद्यार्थी का चयन करने में अध्यापक को इस आयाम का मापन करना चाहिए कि विद्यार्थी व्याकरण एवं वर्ण-विन्यास की कितनी भूलें करता है।

(२) मापन में कितनी शुद्धता आवश्यक है, इसे ध्यान में रखना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि अध्यापक विद्यार्थियों को उनकी पाठन-योग्यता के अनु-

रूप तीन स्तरों में बाँटने का इच्छुक है तो उसे पाठन-वस्तु की गति और उसे समझने की सामर्थ्य से ही सम्बन्ध रखना चाहिए।

(३) आयाम का चयन करते समय मूल्यांकन मानकों को ध्यान में रखना चाहिए; जैसे—शार्टहैण्ड में योग्यता का मापन करते समय निम्न मानक आदर्श रूप निश्चित किए जा सकते हैं—६०—८० शब्द प्रति मिनट ... निम्न; ८०—११० शब्द प्रतिमिनट ... मध्यम; ११०—१४० शब्द प्रति मिनट ... उत्कृष्ट।

मूल्याङ्कन प्रतिमानों की प्रकृति एवं स्रोत
(Nature and Source of Evaluation Standards)

मूल्याङ्कन प्रतिमान वे आधार हैं जिन पर मूल्यों सम्बन्धी निर्णय किए जाते हैं। ये पूर्णतया हमारे आत्मगत विचारों से निर्धारित होते हैं; जैसे यह कहना कि ३६% अंक प्राप्त करने पर तृतीय श्रेणी, ४८% पर द्वितीय श्रेणी एवं ६०% पर प्रथम। वस्त्र, बातचीत, पसन्द आदि मामलों में हमारे मूल्यांकन प्रतिमान बहुत कुछ रीति-रिवाज पर आधारित रहते हैं। स्कूल में किसी विद्यार्थी की योग्यता का मापन करते समय भी हम मूल्यांकन प्रतिमान निर्धारित करते हैं। ये प्रतिमान पूर्व निर्धारित विचारों, निष्कर्षों एवं अनुमानों पर निर्भर रहते हैं। पर सभी मूल्यांकन प्रतिमानों को निर्धारित करने का अन्तिम स्रोत है हमारी सांस्कृतिक परम्परा जो हमें विरासत में मिली है और जिससे हमारा जीवन-यापन होता है। मूल्यांकन प्रतिमानों का तात्कालिक स्रोत दर्शन, मनोविज्ञान, समाज मनोविज्ञान, इतिहास, विधि आदि विषयों में उपलब्ध विशेषज्ञों द्वारा लिखा गया साहित्य है। जीवन के अच्छे-बुरे अनुभव, तत्कालीन एवं साहित्य के अध्ययन से एवं परम्परागत व्यवहारों से विद्वान् यह निश्चय करने में समर्थ होते हैं कि कौन से प्रतिमान उचित हैं और कौन से नहीं।

एक सुनिर्धारित मूल्यांकन प्रतिमान में निम्न बातें होनी चाहिए :

(१) मूल्यांकन प्रतीक स्पष्ट रूप से व्यक्त किए गए हों जो किसी विशिष्ट गुण या मूल्य की ओर संकेत कर सकें।

(२) मूल्यों के विभिन्न वर्गों या पक्षों में स्पष्ट अन्तर होना चाहिए ताकि उनके बीच एक सीमा-रेखा बन सके।

(३) मूल्यांकन प्रतिमान स्थायी एवं वस्तुगत होने चाहिए ताकि उनमें चाहे जब परिवर्तन न किया जा सके।

(४) ये हमारी सांस्कृतिक परम्परा के अनुरूप होने चाहिए।

मापन में प्रतीक एवं उनका उपयोग
(Symbols And Their Use In Measurement)

मापन का लक्ष्य है किसी वस्तु या घटना की प्रतीकों में अभिव्यक्ति। सब ओर समाचार-पत्रों एवं पत्रिकाओं में, रेडियो पर, बातचीत में, एवं समाज तथा प्राकृतिक विज्ञान के क्षेत्र में, हम अंकों एवं प्रतीकों में मापन के परिणामों को व्यक्त करते हैं; जैसे---१०० किलोमीटर, १४० डिगरी, ४० मील प्रतिघण्टा, २० रु० प्रति मन, १५ पाउण्डस् आदि। इसी प्रकार जब किसी परीक्षण का प्रयोग हो चुकता है तो हम प्रतीकों में व्यक्त इसके परिणामों में ही दिलचस्पी लेते हैं; जैसे---१२० बुद्धि-लब्धि, १४० प्राप्त अंक, ९ वर्ष ६ महीने मानसिक आयु इत्यादि। हमारी सभ्यता के लम्बे इतिहास में मनुष्य ने मापन में सर्वप्रथम प्रतीकों का प्रयोग कब और किस प्रकार किया, इस सम्बन्ध में विस्तृत साहित्य उपलब्ध नहीं हैं। पर इतना कहा जा सकता है कि सर्वप्रथम इसका प्रारम्भ 'कितना' इस रूप में हुआ। परिमाण को प्रतीकों में व्यक्त करने की समस्या निस्संदेह सांस्कृतिक विकास के प्रथम चरण में ही उत्पन्न हुई होगी क्योंकि प्रारंभ में ही एक काफले के व्यक्ति यह जानने को उत्सुक थे कि अन्य काफलों के पास कितनी भेड़ें, गायें, या पशु हैं। इतिहासज्ञ यह जानते हैं कि प्रतीकों का प्रयोग 'कुछ', 'अधिक', 'अनेक', 'सब', आदि शब्दों के रूप में हुआ। कालान्तर में अंकों एवं अन्य प्रतीकों का प्रयोग होने लगा। अब अंगु-लियों, पत्थर के टुकड़ों, इत्यादि के माध्यम से वस्तु की गणना का प्रयोग त्याग दिया गया।

मनुष्य मापन में मुख्यतया निम्न प्रकार के प्रतीकों का प्रयोग करता आया है---

१. **वर्गात्मक या विवरणात्मक प्रतीक** (Classifying Symbols)---जैसे कुछ, अधिक, सब इत्यादि। ये प्रतीक वस्तु के परिमाण का केवल सामान्य विवरण देते हैं।

२. **पदात्मक या क्रमात्मक प्रतीक** (Ranking Symbols)---जैसे बड़ा, छोटा, सबसे बड़ा, सबसे छोटा, मध्यम इत्यादि। ये प्रतीक वस्तुओं के तुलना-त्मक मूल्य की ओर संकेत करते हैं।

३. **वास्तविक गणनात्मक प्रतीक** (Scaling Symbols)---जैसे तीन, चालीस, एक हजार इत्यादि।

व्यक्ति स्वयं अपने जीवन काल में इन तीनों प्रकार के प्रतीकों का प्रयोग करता है। विकास की प्रथम अवस्था में बालक ताप के बारे में अनुभव करते

समय गर्म, ठंडा आदि प्रतीकों का प्रयोग करेगा। तदनन्तर काफी प्रशिक्षण मिलने पर वह ६८° सेन्टीग्रेड, ८९° फहरनहाईट, इस प्रकार के प्रतीकों का प्रयोग करेगा।

अब हम इन तीनों प्रकार के प्रतीकों का संक्षेप में वर्णन करेंगे।

१. वर्गात्मक या विवरणात्मक प्रतीक—

इस प्रकार के प्रतीकों के अनेक उदाहरण दिये जा सकते हैं, जैसे वेदर ब्यूरियो (Weather Bureau) हवा की स्थिति को बताने के लिये प्रयुक्त होने वाले प्रतीक—शान्त वायु, तीव्र वायु, आँधी, तूफान आदि। मोटर कार या वायुयानों के मॉडिल नम्बर जैसे—यू० पी० ए० ४२६, सुपर कान्स्टीलेशन, एस० २१ आदि भी इसी प्रकार के प्रतीक हैं। शिक्षकों के बारे में अध्यापकों द्वारा किये गये निर्णयात्मक मूल्यांकन जैसे—निडर, आज्ञाकारी, विनम्र, आदि प्रतीक भी इसी श्रेणी में आते हैं। वर्गात्मक प्रतीक किसी वस्तु, तथ्य, या घटना को वर्गों में व्यक्त करके उनके सम्बन्ध में विवरण प्रस्तुत करते हैं। अतः उनका कार्य नाममात्र का (Nominal) है। पर वर्गीकरण उचित रूप से हो सके, इसके लिये यह आवश्यक है कि जहाँ तक सम्भव हो, प्रतीक वर्ग के किसी विशिष्ट गुण की ओर संकेत करे और अन्य वर्गों से उसका अन्तर स्पष्ट करें। पर कितना ही अच्छा वर्गीकरण क्यों न किया जाय, यह प्रतीक वस्तु या घटना से किसी एक ही पक्ष की ओर संकेत करते हैं। इसलिये ये शिक्षा एवं मनोविज्ञान में अधिक उपयोगी नहीं हैं।

२. क्रमात्मक प्रतीक—

क्रमात्मक प्रतीक तब उपयोगी हैं जब वस्तुओं को क्रम में रखना आवश्यक हो। उदाहरण के लिए यदि कोई कम्पनी जिसमें बीस सेल्समैन हों, वर्ष के अन्त में बिक्री की मात्रा के आधार पर उन्हें क्रम में रखना चाहे तो एक सेल्स-मैन प्रथम क्रम या पद (rank) प्राप्त करेगा, दूसरे सेल्समैन को इसके बाद का क्रम मिलेगा, एवं इसी प्रकार अन्य सेल्समैन भी क्रम में रखे जायेंगे। इसके लिए १,२,३,···आदि अंकों, या A, B, C,···आदि अक्षरों का प्रयोग किया जा सकता है। शतांशीय क्रम (Percentile Rank) भी प्रयुक्त होते हैं। क्रमात्मक प्रतीकों की निम्न विशेषताएँ हैं :—

(१) क्रमात्मक प्रतीक तुलना में विशेष सहायक नहीं होते। यदि किसी विद्यार्थी का अपनी कक्षा में ऊपर से तीसरा क्रम हो तो पूरे कॉलिज में उसका क्रम कुछ और होगा। इसी प्रकार एक समूह में अंग्रेजी भाषा की योग्यता में किसी विद्यार्थी का दूसरा क्रम है, तो सम्भव है कि किसी अन्य विषय में उसका कोई अन्य क्रम होगा; जैसे—२७ वाँ या ४५ वाँ।

(२) क्रमात्मक प्रतीक क्रमों में वास्तविक अन्तर क्या है, इस पर कोई प्रकाश नहीं डालते। यदि तीन विद्यार्थियों का गणितीय योग्यता में १४,१५ एवं १६ वाँ क्रम है तो इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि १५वें क्रम वाला विद्यार्थी, १४वें क्रम वाले विद्यार्थी से उतना ही उत्तम है जितना १६ वें क्रम वाला विद्यार्थी १५ वें क्रम वाले विद्यार्थी से। यदि इनके अंक क्रमशः ७५, ६६ और ४४ हैं तो क्रम होने पर भी इनके अन्तरों में वास्तविक अन्तर समान नहीं है। १४ वें एवं १५ वें क्रम वाले विद्यार्थियों के अंकों में अन्तर ९ है, जबकि १५वें एवं १६ वें क्रम वाले विद्यार्थियों के अंकों का अन्तर २२ है।

(३) क्रमात्मक प्रतीकों पर गणितीय सिद्धान्त लागू नहीं होते; अर्थात् इन पर घटाने, जोड़ने, गुणा करने या विभाजित करने की प्रक्रिया नहीं हो सकती।

(४) क्रमात्मक प्रतीकों को वास्तविक गणनात्मक प्रतीकों में परिवर्तित नहीं किया जा सकता। उदाहरण के लिए यदि इंचों में किसी विद्यार्थी की लम्बाई ज्ञात हो एवं अन्य विद्यार्थियों की लम्बाई भी; तो हम उनके क्रम निश्चित कर सकते हैं। पर क्रम ज्ञात होने पर हम उनकी वास्तविक लम्बाई ज्ञात नहीं कर सकते।

३. वास्तविक गणनात्मक प्रतीक—

निश्चित स्थिति बताने वाले प्रतीकों का मापन में सर्वाधिक महत्व है। फुटा, घड़ी, थर्मामीटर, आदि से जो मापन किया जाता है उसे गणनात्मक प्रतीकों में ही व्यक्त करते हैं; जैसे—११ इंच, २ बजकर २५ मिनट, ८५°, ३ किलो आदि। इस प्रकार के प्रत्येक मापन में किसी न किसी इकाई को निश्चित करना पड़ता है; जैसे—इंच, पाउन्ड, डिग्री, नए पैसे, आदि। यह इकाई स्थिर होती है; अतः इकाई की समान मात्राओं में अन्तर भी समान होता है। ८५ इंच तथा ७५ इंच में वही अन्तर है जो ६५ इंच और ५५ इंच में। जीरो का अर्थ है कि वस्तु का परिमाण कुछ नहीं है। वास्तविक गणनात्मक प्रतीकों के सम्बन्ध में गणितीय प्रक्रियायें सम्भव हैं; अर्थात् इन पर घटाने, जोड़ने, गुणा करने आदि की क्रियायें की जा सकती हैं। शिक्षा एवं मनोविज्ञान के क्षेत्र में विभिन्न गुणों के मापन में जीरो का प्रयोग नहीं होता। जीरो बुद्धि-लब्धि का कोई अर्थ नहीं है। शिक्षा एवं मनोविज्ञान के गणनात्मक प्रतीकों पर गणितीय प्रक्रियाएँ भी नहीं होतीं।

यह आवश्यक नहीं है कि किसी क्षेत्र में उपर्लिखित प्रतीकों में से किसी एक ही प्रकार के प्रतीकों का प्रयोग हो। इनमें से कई प्रकार के प्रतीक एक

साथ प्रयोग कर सकते हैं। उदाहरण के लिए किसी विद्यार्थी की शाब्दिक अभिरुचि को निम्न प्रतीकों से व्यक्त कर सकते हैं— अवस्था १४ वर्ष, बुद्धि-लब्धि ११८, क्रम ५वाँ, गणित में ९ वीं कक्षा एवं कक्षा में ८८ वां शतांशीय मान, पाठन-अवस्था १४ वर्ष ६ माह। किस समय किस प्रकार के प्रतीक का प्रयोग करें—यह घटना, वस्तु या तथ्य की प्रकृति पर निर्भर है। पर यह ध्यान रखना चाहिए कि गणनात्मक प्रतीक अधिकांश परिस्थितियों में उपयोगी हैं।

मापन के मापदण्ड
(Scales of Measurement)

मापन के चार स्तर हैं :—(१) नाम मात्र का या वर्गात्मक (Nominal or Classifcatory); (२) क्रम-सूचक या अनुस्थिति क्रमात्मक (Ordinal or Ranking Scales); (३) अन्तरात्मक (Interval); तथा (४) आनुपातिक (Ratio) मानदण्ड।

हम नीचे इनमें से प्रत्येक का विवेचन करेंगे।

१. नाममात्र का या वर्गात्मक मापदण्ड (Nominal or Classificatory Scale)—

जब अङ्कों या प्रतीकों का प्रयोग केवल किसी वस्तु, व्यक्ति या गुण का वर्गीकरण करने या उन समूहों की पहिचान करने के लिए किया जाता है जिनसे कि विभिन्न वस्तुएँ सम्बन्धित हैं, तो ये अङ्क या प्रतीक नाममात्र के या वर्गात्मक मापदण्ड के अन्तर्गत आते हैं। उदाहरणस्वरूप, मनोवैज्ञानिक सम्बन्धी व्याधियों का वर्गीकरण, क्योंकि इसमें निदान करने वाला व्यक्तियों को व्याधि के अनुसार विभिन्न समूहों में रखता है; जैसे—शिजोफ्रेनिक, पैरानोइड, मैनिक-डिप्रेसिव आदि। इस प्रकार यहाँ व्यक्ति जिस समूह से सम्बन्धित है, उसका प्रतिनिधित्व करने के लिए प्रतीकों का प्रयोग हुआ है। व्यक्तियों का पुरुष एवं स्त्री में वर्गीकरण, वस्तुओं का रंगों में, विद्यार्थियों का कक्षाओं में वर्गात्मक मापदण्ड के अन्य उदाहरण हैं। मोटर कारों की लाइसेंस प्लेटों पर लिखी गई संख्यायें भी इसी के अन्तर्गत आती हैं, क्योंकि इनके अनुसार कारों को जिले या प्रदेश के उपवर्गों में वर्गीकृत करते हैं।

वर्गात्मक मापदण्ड के अनुसार वर्गीकृत हो चुकने पर वस्तुओं के विभिन्न वर्गों में एक निश्चित सीमा-रेखा खींची जा सकती है। किसी उपवर्ग के अन्तर्गत वर्गीकृत व्यक्ति प्रमापित किए जाने वाले गुण में समान होते हैं।

सीजिल के अनुसार यह समानान्तर सम्बन्ध तीन प्रकार का है :—

(१) प्रतिबिम्बी (Reflexive)—जैसे a=a

(२) संमित (Symmetrical)--जैसे यदि a=b, तो b=a

(३) परागमनीय (Transitive) जैसे यदि a=b, b=c, तो a=c

इस प्रकार वर्गात्मक मापदण्ड में विभिन्न समूहों को प्रतिनिधित्व करने वाले प्रतीकों को वास्तविक सूचना में परिवर्तन किये बिना ही बदला जा सकता है, जैसे मोटरकारों के उदाहरण में लाइसेंस की संख्याएँ जो पहले एक प्रदेश के लिए रखीं गईं थी, किसी अन्य प्रदेश के लिए प्रयुक्त हो सकती हैं।

क्रमसूचक या अनुस्थिति क्रमात्मक मापदण्ड (Ordinal or Ranking Scales)—

जब निरीक्षण तथ्यों को इस प्रकार अनुस्थिति क्रम में रखा जा सके कि एक निरीक्षण अन्य की अपेक्षा एक दिए हुए परिवर्त्ती का अधिक प्रतिनिधित्व करे तो इसे क्रमसूचक मापदण्ड कहते हैं। समूहों में वर्गीकृत परिवर्त्तियों में एक प्रकार का सम्बन्ध होता है जैसे, बहतर, अधिक कठिन, उत्तम। उदाहरण के लिए किसी देश में सामाजिक वर्गों—निम्न, निम्न मध्यम, मध्यम, उच्च मध्यम, उच्च—में व्यक्तियों का वर्गीकरण लीजिए। यह क्रमसूचक मापदण्ड है, क्योंकि इस प्रकार के वर्गीकरण में प्रत्येक वर्ग प्रतिष्ठा एवं सामाजिक स्तर में अपने से नीचे के वर्गों से ऊपर है और अपने से उच्च वर्गों से नीचे। उच्च वर्ग के सभी सदस्य उच्च-मध्यम के सदस्यों से सामाजिक स्तर एवं प्रतिष्ठा में ऊँचे हैं; इसी प्रकार उच्च-मध्यम वर्ग के सभी व्यक्ति निम्न-मध्यम वर्ग के व्यक्तियों से ऊँचे हैं, जबकि निम्न वर्ग के लोग सबसे नीचे। इसी प्रकार यदि दस व्यक्तियों को एक लाइन में दीवार के सहारे खड़ा कर दिया जाये इस प्रकार कि सबसे पहले सबसे लम्बा व्यक्ति हो, फिर उससे छोटा और अन्त में सबसे छोटा तो यह भी एक क्रमसूचक मापदण्ड हुआ।

वर्गात्मक एवं क्रमसूचक मापदण्ड में मौलिक अन्तर यह है कि वर्गात्मक मापदण्ड में साम्य का सम्बन्ध रहता है, जबकि क्रमात्मक मापदण्ड में समानता (Equivalence), तथा आपेक्षिक रूप से बड़ा (Greater than), दोनों प्रकार का सम्बन्ध। क्रमसूचक मापदंड में परिवर्त्तन कर देने से तथ्यों के स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं होता। जैसे प्रथम वर्ग (First class) पाने वाले विद्यार्थी

को पुरस्कार में ४ पुस्तकें दी जाएँ तथा फर्स्ट क्लास एवं डिस्टिंक्शन प्राप्त करने वाले विद्यार्थी को ७ पुस्तकें, तो इससे यह प्रदर्शित होता है कि फर्स्ट क्लास तथा डिस्टिंक्शन दोनों प्राप्त करने वाला विद्यार्थी केवल फर्स्ट क्लास प्राप्त करने वाले विद्यार्थी से बढ़कर है (Is greater than)। यह सम्बन्ध तब भी इसी प्रकार प्रदर्शित होगा जब फर्स्ट क्लास एवं डिस्टिंक्शन दोनों प्राप्त करने वाले विद्यार्थी को ९ पुस्तकें पुरस्कार स्वरूप मिलें और केवल फर्स्ट क्लास प्राप्त करने वाले विद्यार्थी को ६ पुस्तकें।

चूँकि किसी मापदण्ड पर क्रमिक अन्तर या वर्गों के बीच दूरी सदैव समान नहीं होती, क्रमसूचक मापदण्ड पर गणित क्रियायें सम्भव नहीं हैं। अर्थात् जोड़, बाकी, गुणा, भाग, औसत, विचलन आदि क्रियाओं का इन पर प्रयोग सम्भव नहीं है। निरीक्षण एवं तथ्यों को क्रमानुसार रखे जाने से यह तो ज्ञात होता है कि एक तथ्य में दूसरे तथ्य से अधिक परिवर्त्ती है, पर यह ज्ञात नहीं होता कि यह कितना अधिक है। चार व्यक्तियों की लम्बाई ७०", ६८", ६४", तथा ६१" होने पर उन्हें क्रमानुसार प्रथम द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ कहा जायगा। यहाँ प्रथम और द्वितीय क्रमों में २" का अन्तर है, द्वितीय तथा तृतीय में ४" का तथा तृतीय एवं चतुर्थ में ३" का।

अन्तरात्मक मापदण्ड (Interval Scales)—

जब निरीक्षणों एवं तथ्यों का प्रतिनिधित्व करने वाली संख्याएँ इन तथ्यों को केवल क्रमानुसार ही नहीं रखतीं, वरन् उन तथ्यों में वास्तविक अन्तर या दूरी के बारे में अर्थपूर्ण एवं यथार्थ सूचना भी प्रदान करती हैं, तो इसे अन्तरात्मक मापदण्ड कहते हैं। अन्तरात्मक मानदण्ड में किन्हीं दो संख्याओं के बीच की दूरी या अन्तर का परिमाण ज्ञात होता है। अर्थात् हम यह जानते हैं कि मानदण्ड पर सभी वस्तुओं की बीच की दूरी या अन्तर क्या है। उदाहरण के लिए तापक्रम का मापन अन्तरात्मक मानदण्ड पर होता है। सेन्टीग्रेड तथा फेहरनहाइट दोनों प्रकार के मापदण्डों में मापन की इकाई और ज़ीरो किन्तु दोनों अविहित या स्वेच्छिक (Arbitrary) होते हैं, अर्थात् इन दोनों मानदण्डों में ये भिन्न-भिन्न होते हैं। किन्तु ये दोनों मानदण्ड एक ही प्रकार एवं परिमाण की सूचना प्रस्तुत करते हैं। इसका कारण है एक मानदण्ड से दूसरे में मूल्यों का सीधा परिवर्तन। किसी भी प्रकार के सीधे परिवर्तन से अन्तरात्मक मानदण्ड के आवश्यक लक्षणों में कोई परिवर्तन नहीं होता।

उदाहरणार्थ, सेन्टीग्रेड तथा फहरेनहाइट मापदण्डों में इस प्रकार के सीधे सम्बन्ध को निम्न सूत्र से व्यक्त कर सकते हैं—

$F = \text{३२} \times \frac{9}{5} C$, जिसमें F = फैह्रेनहाइट मानदण्ड पर डिगरियों की संख्या; C = सेन्टीग्रेड मापदण्ड पर डिगरियों की संख्या। निम्न सारिणी से दोनों मापदण्डों पर पारस्परिक तापक्रम सम्बन्ध ज्ञात होता है।

सेन्टीग्रेड	०	१०	२०	३०	४०	५०	६०	७०	८०	९०	१००
फेह्रेनहाइ	३२	५०	६८	८६	१०४	१२२	१४०	१५८	१७६	१९४	२१२

यदि हम सारिणी को ध्यान से देखें तो ज्ञात होगा कि एक मानदण्ड के विभिन्न तापक्रमों में अन्तर का दूसरे मापदण्ड के विभिन्न तापक्रमों में जो अन्तर है, उससे साम्य है। पर यह सम्बन्ध मापन की इकाई एवं ज़ीरो बिन्दु पर निर्भर है। सेन्टीग्रेट मानदण्ड पर हिम तथा उबाल बिन्दु (Freezing and boiling points) क्रमशः 0° और $\text{१००}^\circ C$ हैं, जबकि फेह्रेनहाइट मापदण्ड पर क्रमशः ३२° एवं $\text{२१२}^\circ F$, और पारस्परिक अनुपात इस प्रकार हैं :—

$$\frac{\text{१०४-८६}}{\text{८६-६८}} = \text{१}, \quad \frac{\text{१००-६०}}{\text{६०-४०}} = \frac{\text{२१२-१४०}}{\text{१४०-१०४}} = \text{२}, \quad \frac{\text{१००-३०}}{\text{३०-१०}} = \frac{\text{२१२-८६}}{\text{८६-५०}} = \text{३.५},$$

इत्यादि। इस प्रकार यह एक परिमाणात्मक मानदण्ड है और इस पर गणितीय तथा सांख्यिकीय क्रिया सम्भव हैं, जैसे औसत, विचलन, सहसम्बन्ध आदि। पर अन्तरात्मक मानदण्ड में हम केवल दो निश्चित मूल्यों के बीच के अन्तर या दूरी के पारस्परिक अनुपात ही ले सकते हैं, किन्हीं दो मूल्यों के बीच की दूरी या अन्तर नहीं ले सकते। हम उदाहरण के लिए यह नहीं कह सकते कि एक मानदण्ड पर ५०° दूसरे मानदण्ड की २५° से दुगुना होगा। इसके लिए पहले निश्चित सम्बन्ध जैसे $F = \text{३२} \times \frac{9}{5} C$ पर ध्यान देना होगा।

आनुपातिक मापदण्ड (Ratio Scales)—

"जब किसी मानदण्ड में अन्तरात्मक मापदण्ड के सभी गुण विद्यमान हों और साथ ही जिसमें आधार स्वरूप कोई वास्तविक ज़ीरो-बिन्दु हो, तो इसे आनुपातिक मापदण्ड कहेंगे।"[1] एक आनुपातिक मानदण्ड में किन्हीं दो बिन्दुओं के बीच का अनुपात मापन की इकाई पर निर्भर नहीं रहता। उदाहरण के लिए लम्बाई, जिसका मापन फुट, इंच या किन्हीं अन्य इकाइयों में होता है, एक आनुपातिक मानदण्ड है। एक वस्तु जिसकी लम्बाई १२′६″ है उस वस्तु से दुगुनी लम्बी है जिसकी लम्बाई ६′३″ है। वजन या भार

1. "When a scale has all the characteristics of an interval scale and in addition has a true zero point as its origin, it is called a ratio scale."—Sidney Siegel. : *Non-paramatic Statistics for Behavioral Sciences.*, McGraw Hill Book Co., New York, 1956, p. 29.

का मापन भी आनुपातिक मानदण्ड में होता है क्योंकि आउन्स तथा पाउन्ड्स में भी एक वास्तविक जीरो-बिन्दु होता है। यदि हम पाउन्ड्स तथा आउन्स दोनों में किन्हीं दो वस्तुओं का वजन ज्ञात करें तो हम निरीक्षण करेंगे कि उनके पाउन्ड्स तथा आउन्स के वजन में आनुपातिक सम्बन्ध होगा। आनुपातिक मापदंड में मापन की इकाई विहित या स्वेच्छाचारी होती है पर जीरो-बिन्दु निश्चित होता है। अतः यदि हम परिवर्त्ती के प्रत्येक मूल्य में कोई दी हुई संख्या जोड़ें, तो हम मौलिक अनुपात बनाए नहीं रख सकते। जैसे यदि $\frac{१०}{५}=२$, $\frac{१०+४}{५+४}$ दो के बराबर नहीं होगा। तथापि यदि इन मूल्यों में किसी दी हुई संख्या का गुणा किया तो अनुपात में परिवर्तन नहीं होगा। जैसे $\frac{१०}{५}=२$, तो $\frac{१०\times४}{५\times४}=$दो। "अतः आनुपातिक मानदण्ड किसी निश्चित संख्या से गुणा किये जाने तक अद्वितीय है।" इस मानदण्ड में प्राप्य

Four Levels of Measurement

Scale	Nature	Measure
1. Nominal	Equivalence	Frequency, Distribution, Mode
2. Ordinal	1. Equivalence 2. Greater than	Median, Percentile Spearman rho
3. Interval	1. Equivalence 2. Greater than 3. Known Ratio of any two intervals	Mean, S. D, Pearson or Multiple correlation
4. Ratio	1. Equivalence 2. Greater than 3. Known Ratio of any two intervals 4. Known Ratio of any two scales value	Geometric mean Coefficient of Variation

तथ्यों पर गणितीय प्रक्रियाएँ सम्भव है । इस प्रकार की क्रियाएं वस्तुओं से सम्बन्धित सांख्यिक मूल्यों पर भी सम्भव हैं और संख्याओं के बीच के अन्तरों पर भी ।

मापन के उद्देश्य या कार्य
(Purposes or Functions of Measurement)

मापन का अनेक उद्देश्यों के लिए प्रयोग होता है जैसे स्कूल में परीक्षार्थियों को अंक प्रदान करके उनके वर्गीकरण तथा तरक्की में, अध्यापक की शिक्षण-योग्यता का निर्णय करने में, शिक्षा पर होने वाले व्यय को निश्चित करने में । किसी शैक्षणिक प्रशासनिक अधिकारी के पर्यवेक्षण में चलने वाले शैक्षणिक कार्यक्रम की प्रगति का निरक्षीण या मूल्यांकन करने में भी परीक्षण उपयोगी हैं । यदि परीक्षण की रचना करने में शैक्षणिक उद्देश्यों को ठीक से ध्यान में रखा गया है तो पाठ्यक्रम के विकास में भी ये उपयोगी हैं । परीक्षण अनेक विद्यार्थियों को ज्ञान प्राप्त करने की प्रेरणा देकर उन्हें प्रोत्साहित करते हैं ।

सामान्य तौर से परीक्षण के निम्नलिखित मुख्य उद्देश्य हैं—

पूर्वकथन (Prediction)—

हम अपने जीवन में नित्य कोई न कोई निर्णय लेते हैं । एक फिजीशियन यह निर्णय करता है कि अपने रोगी को कैसे ठीक करे; एक व्यापारी यह निर्णय लेता है कि किस कर्मचारी को रखे, किस को निकाले, कच्चा माल कहाँ से खरीदे, वेतन किस प्रकार बाँटे; एक अफसर इसी प्रकार अपने मातहत व्यक्तियों से काम लेने और नीतियों के सम्बन्ध में अनेक निर्णय लेता है । इस प्रकार के सभी निर्णयों में भविष्यवाणी सन्नहित है । उदाहरण के लिए यदि पर्दे पर अक्षरों की एक कतार दिखाकर यदि हम किसी व्यक्ति की दृष्टि-पहिचान ज्ञात करना चाहें, तो सम्भव है हम यह भी जानना चाहें कि क्या यह दृष्टि-पहिचान-परीक्षण वायुयान के अक्षरों को पहिचानने और प्रत्यक्षीकरण करने की सफलता की भविष्यवाणी करेगा । इसी प्रकार परीक्षण के औपचारिक (Clinical) प्रयोग में भी यह भविष्यवाणी सम्बन्धी उद्देश्य सन्निहित है । एक उपचारक यह अनुसंधान करने का इच्छुक हो सकता है कि क्या जब कोई व्यक्ति संवेगात्मक शब्दों के प्रत्यक्षीकरण में कठिनाई का अनुभव करता है तो यह उसमें संवेगात्मक अव्यवस्था की ओर संकेत करता है ।

पूर्वकथन (Prediction) का अर्थ है वर्तमान के आधार पर भविष्य के बारे में बताना । किसी परीक्षण की भविष्यवाणी करने सकने की सामर्थ्य ज्ञात करने के लिए हम इसकी पूर्वकथन वैधता (Predictive Validity) निकालते हैं । यदि एक

कम्पनी अपने यहाँ १०० सेल्समैन को नियुक्त करना चाहती है तो वह आवेदन पत्र देने वालों की किसी उपर्युक्त परीक्षण से परीक्षा लेगी और अच्छे अंक पाने वाले १०० सेलसमैन नियुक्त कर लेगी। निश्चित अवधि के पश्चात् इनको किसी कसौटी के आधार पर आँका जाएगा और इन्हें अंक (Score) प्रदान किए जायेंगे। परीक्षण तथा कसौटी के अंकों में सहसम्बन्ध निकाला जाएगा। यदि यह उच्च है तो कहा जाएगा कि परीक्षण की उच्च पूर्वकथन वैधता (Predictive Validity) है। इस सम्बन्ध में विस्तृत विवरण आगे के अध्यायों में किया गया है।

ज्ञानोपार्जन परीक्षण, बुद्धि परीक्षण, अभिरुचि परीक्षण सभी में इस प्रकार की वैधता निकाली जा सकती है। पर अभिरुचि परीक्षणों जैसे क्लेरीकल परीक्षण, मैकेनीकल परीक्षण में पूर्वकथन वैधता निकालना अत्यन्त आवश्यक है। इंगलैण्ड की तो पूरी शिक्षा-व्यवस्था ही इस सिद्धान्त पर आधारित है। परीक्षणों के आधार पर कौन व्यक्ति किस क्षेत्र में जाने के योग्य है, यह ज्ञात किया जाता है और तदनुसार शिक्षा दी जाती है।

तुलना (Comparison)—

मनोविज्ञान एवं शिक्षा सम्बन्धी अध्ययनों का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह निकला है कि गुणों मे व्यक्तिगत विभेद पाया जाता है। ज्ञान, बुद्धि, व्यक्तित्व गुण—सभी बातों में कुछ-न-कुछ असमानता पायी जाती है। परीक्षणों का एक मुख्य उद्देश्य इन असमानताओं का तुलनात्मक अध्ययन करना है। गाल्टन ने इस प्रकार के अध्ययन को बहुत महत्व दिया और व्यक्तिगत विभेदों का कारण पता लगाने का प्रयत्न किया। तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए दो या अधिक समूहों के ज्ञानोपार्जन, बुद्धि या अन्य किसी मापन-योग्य तथ्य के सम्बन्ध में आंकड़े एकत्र करते हैं। तदनन्तर उनका मध्यमान, विचलन आदि निकालते हैं और सांख्यिकीय गणनाओं के आधार पर निश्चित निष्कर्षों पर पहुँचने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार किसी विषय या क्षेत्र में विद्यार्थियों के ज्ञानांकों की तुलना करके यह जाना जा सकता है कि उनमें से कौन-सा समूह श्रेष्ठ है। जब किसी विशेष गुण का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं तो अन्य गुणों पर ध्यान नहीं देते जैसे ऊँचाई की तुलना करते समय वजन या चरबी पर।

निदान (Diagnosis)—

शैक्षणिक निदान में अनेक तकनीकी प्रविधियों का प्रयोग होता है जिनका उद्देश्य सीखने की मुख्य एवं विशिष्ट कठिनाइयों का पता लगाना है। और

यदि सम्भव हो तो उनका कारण पता लगाना तथा उनकी रोक तथा निराकरण का प्रबन्ध करना है। जिस प्रकार चैकित्सिक निदान में अनेक व्यावसायिक यन्त्रों जैसे थर्मामीटर, स्टेथोस्कोप, माइक्रोस्कोप आदि का प्रयोग होता है ताकि निश्चित, यथार्थ और वस्तुगत निदान सम्भव हो सके, उसी प्रकार शैक्षणिक निदान में अनेक परीक्षणों एवं सांख्यिकीय प्रविधियों का प्रयोग होता है। विशिष्ट विषयों पर बनी नैदानिक परीक्षाएँ, नैदानिक चार्ट, मानचित्र, दृष्टिलीनता को नापने वाले अनेक साधन सभी इस दृष्टि से उपयोगी हैं। तथापि शैक्षणिक निदान चैकित्सिक निदान जितना यथार्थ एवं वस्तुगत नहीं होता। अब शैक्षणिक निदान के क्षेत्र में भी दिन-प्रतिदिन वैज्ञानिकता बढ़ती जा रही है। पर वास्तव में तो निदान की अच्छाई एवं यथार्थता बहुत कुछ अध्यापन की श्रेष्ठता पर निर्भर है और इस बात पर भी कि किस सीमा तक और कितनी स्पष्टता के साथ पाठ्यक्रम का विश्लेषण कर लिया गया है। किसी भी विषय में नैदानिक परीक्षण की रचना करने से पहले तत्सम्बन्धी आवश्यक योग्यता की पहिचान आवश्यक है।

मनोविज्ञान में निदान शैक्षिक विषयों और संवेगात्मक कठिनाइयों दोनों में ही सम्भव है। शैक्षिक क्षेत्र में निदान के दो रूप हैं—(अ) सामान्य सर्वेक्षण द्वारा मूल एवं मुख्य कठिनाइयों का निदान (Diagnosis of general difficulties), तथा (ब) विशिष्ट कठिनाइयों का निदान (Diagnosis of specific weaknesses) जैसे बोलने, सुनने, देखने सम्बन्धी कठिनाइयों या अभावों का पता लगाना। शैक्षिक क्षेत्र में निदान के लिए जो परीक्षण बने हैं वे अनेक विषयों से सम्बन्ध रखते हैं जैसे शान्त पाठन, भाषा की समझ, गणित आदि। पाठन अनेक बातों पर निर्भर है जैसे शब्दों के अर्थ का ज्ञान, वाक्यों का अर्थ समझने की योग्यता, विचारों एवं वाक्यों की इकाइयों को तर्क-संगत रूप से प्रवाहित करने की सामर्थ्य और इच्छित विषय-वस्तु तक शीघ्र ही पहुँच जाने की योग्यता। भाषा की समझ चिन्तन की स्पष्टता, स्मरण-शक्ति, शब्द-भण्डार आदि पर निर्भर है। इनमें से किस बात में व्यक्ति कमजोर है, नैदानिक परीक्षा से जाना जा सकता है।

शैक्षणिक निदान केवल कठिनाइयों का पता लगाने और निराकरण करने में ही सहायक नहीं होता किन्तु सम्भावित कमियों का पूर्व ज्ञान प्राप्त करने और पहले से ही उनकी रोकथाम करने में भी सहायता करता है, जैसा कि चैकित्सिक निदान में होता है जहाँ पहले ही अनेक बीमारियों और उनके लक्षणों की रोकथाम की जा सकती है। उदाहरण के लिए यदि पाँचवीं कक्षा में निदान द्वारा यह ज्ञात हो कि भिन्नों के सवाल हल करने में विद्यार्थी

आमतौर से कमजोर हैं तो इस विशिष्ट कमजोरी को दूर करने के लिए विशिष्ट रूप से शैक्षणिक व्यवस्था की जा सकती है। किन्तु इस उद्देश्य के लिए निदान तभी उपयोगी है जबकि वह विस्तृत हो और सामान्य कथनों तक ही सीमित न हो।

संवेगात्मक कठिनाइयों के निदान से हमारा अर्थ है विस्तार में व्यक्तित्व गुणों का पता लगाना, जैसे वह बहिर्मुखी है, अन्तर्मुखी है या उभयमुखी, वह सामाजिक है या असामाजिक, उसमें मनोदौर्बल्य किस सीमा तक और और किस प्रकार का है।

चुनाव एवं वर्गीकरण (Selection and Classification)—

परीक्षणों की सहायता से अनेक व्यक्तियों में से कुछ को छांटकर बाकी को अलग किया जा सकता है। मुख्यतः औद्योगिक स्थानों में, सेना में, सरकारी नौकरियों में तथा स्कूल में प्रवेश के लिए इनका उपयोग होता है। इसी प्रकार वर्गीकरण भी अनेक परिस्थितियों में सम्भव है जैसे परीक्षण के आधार पर सेना में व्यक्तियों का कार्य वर्गीकृत हो सकता है। मानसिक रोगियों का भी वर्गीकरण होता है। बुद्धि-परीक्षणों के आधार पर विद्यार्थियों को कक्षाओं तथा सेक्सन में रखा जा सकता है।

अनुसन्धान (Research)—

अनुसन्धान में परीक्षणों का विस्तृत रूप से उपयोग होता है। इस हेतु दो प्रकार के समूह लिए जाते हैं—नियन्त्रित समूह तथा प्रयोगात्मक समूह। उदाहरण के लिए हम यह जानना चाहते हैं कि 'कोचिंग' (Coaching) का बुद्धि-परीक्षण में प्राप्त अंकों पर प्रभाव पड़ता है या नहीं; तो हम नियन्त्रित समूह को कोई कोचिंग नहीं देंगे पर प्रयोगात्मक समूह को देंगे। फिर बुद्धि-परीक्षा देकर अंकों की तुलना करेंगे। अनुसन्धान विश्वास-योग्य निष्कर्ष प्राप्त करने में अत्यन्त उपयोगी हैं।

: २ :

परीक्षण–प्रकार

शिक्षा एवं मनोविज्ञान में प्रयुक्त विभिन्न मापन
(Various Measures used in Psychology and Education)

शिक्षा एवं मनोविज्ञान में जिन अनेक प्रकार की मापन प्रविधियों या परीक्षणों का प्रयोग होता है, उन्हें विभिन्न दृष्टिकोणों से एवं विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है। इससे पूर्व कि हम अनेक लेखकों के दृष्टिकोणों को प्रस्तुत करें, परीक्षणों का एक सरल एवं अपेक्षाकृत स्पष्ट वर्गीकरण दे रहे हैं और तत्सम्बन्धी अनेक तकनीकी शब्दों की व्याख्या भी करते हैं :—

परीक्षणों का वर्गीकरण

प्रश्न-रचना के आधार पर :—

अ. निबन्धात्मक या मुक्त उत्तर-प्रश्न

ब. वस्तुनिष्ठ या सीमित उत्तर-पद

स. क्रियात्मक या अशाब्दिक परीक्षण

प्रशासन के आधार पर :—

अ. व्यक्तिगत बनाम सामूहिक परीक्षण

ब. मौखिक एवं लिखित परीक्षण

स. गति एवं शक्ति परीक्षण

प्रमापीकरण के आधार पर :—

अ. अनौपचारिक, अप्रमापीकृत या अध्यापक निर्मित परीक्षण

ब. औपचारिक या प्रमापीकृत परीक्षण

फलांक गणना के आधार पर :—

अ. गुणात्मक मूल्यांकन से सम्बन्धित

ब. स्टैन्सिल की गणना पर आश्रित

स. मशीनों की गणना पर आश्रित

मापित आयाम के आधार पर :—

अ. बुद्धि-परीक्षण :

(i) शाब्दिक एवं अशाब्दिक

(ii) व्यक्तिगत एवं सामूहिक

ब. विशिष्ट अभियोग्यता परीक्षण :—

(i) कलात्मक (ii) क्लैरीकल

(iii) भाषात्मक (iv) यंत्रात्मक

(vi) व्यवसायात्मक (v) अन्य

स. निष्पत्ति, ज्ञानोपार्जन या साफल्य परीक्षण :

(i) सामान्य या सर्वे परीक्षण

(ii) नैदानिक परीक्षण

(iii) कृत्य-प्रवरण परीक्षण[1]

द. व्यक्तित्व एवं अभियोजन परीक्षण :

(i) व्यक्तित्व तालिकाएँ

(ii) साक्षात्कार प्रविधियाँ

(iii) निर्णय विधियाँ

(iv) प्रक्षेपण विधियाँ

(v) पारिस्थितिक परीक्षण

य. रुचि परीक्षण

र. अभिवृत्ति परीक्षण ।

प्रश्न-रचना के आधार पर—

निबन्धात्मक परीक्षाओं में कुछ निश्चित प्रश्न दे दिए जाते हैं और

---

1. Job Selection Tests

परीक्षार्थी काफी समय लेकर अपने दृष्टिकोण से उनके विस्तार से उत्तर देता है। केवल उत्तर की विषय-वस्तु ही नहीं उसकी भाषा, शैली, परीक्षक का दृष्टिकोण, उसकी मनःस्थिति सभी का उन उत्तरों पर दिए गए अंकों पर प्रभाव पड़ता है। इसके विपरीत **वस्तुनिष्ठ** परीक्षणों में कुछ छोटे-छोटे पद होते हैं जिनका निश्चित उत्तर होता है। कम समय में अनेक पदों का उत्तर दिया जा सकता है। ये पद कई प्रकार के होते हैं, जैसे सत्य-असत्य पद, बहु-वरण पद, मिलान पद, पूर्ति पद आदि।

क्रियात्मक परीक्षणों में दो या तीन आयाम की वस्तुओं का प्रयोग होता है एवं प्रयोज्य की हस्तकौशल योग्यता का मापन किया जाता है। पेपर-पैन्सिल, फॉर्म् बोर्ड, घन, ब्लाक आदि भी प्रयुक्त होते हैं। **अशाब्दिक** परीक्षण वे हैं जिनमें पेपर-पेन्सिल का प्रयोग तो होता है पर प्रश्न-पदों की प्रतिक्रिया करने में या उनका अर्थ बताने में परीक्षार्थी शब्दों का प्रयोग नहीं करते। जैसे अंकों या तीन आयामों वाली वस्तुओं का जिनमें प्रयोग किया जाए, वे परीक्षण। क्रियात्मक परीक्षण अशाब्दिक तो होते हैं पर इनमें प्रतिक्रिया करने में पेपर पैन्सिल का या केवल वस्तुओं एवं उपकरणों के हस्तकौशल का या वस्तुओं एवं उपकरणों के प्रस्तुत किए जाने पर उनकी प्रतिक्रिया में पेपर पेंसिल का प्रयोग होता है। विदेशियों या भाषा की कठिनाई से ग्रस्त व्यक्तियों पर इनका प्रयोग होता है। **अशाब्दिक एवं अभाषिक** परीक्षणों में मुख्य अन्तर यह है कि यदि किसी परीक्षण में निर्देशों में भाषा का प्रयोग हुआ भी हो, पर यदि उसके उत्तर भाषा या शब्दों में नहीं हैं तो परीक्षण अशाब्दिक होगा, अभाषिक नहीं। कुछ क्रियात्मक परीक्षण अशाब्दिक भी होते हैं और अभाषिक भी।

प्रशासन के आधार पर—

व्यक्तिगत परीक्षण वे हैं जिन्हें एक समय में एक ही व्यक्ति पर प्रशासित किया, जा सकता है और जिनमें परीक्षक द्वारा पूरा ध्यान दिया जाना तथा उसका प्रशिक्षित होना आवश्यक है। यद्यपि ऐसे परीक्षणों के प्रशासन की प्रविधियाँ प्रमापीकृत होती हैं पर परीक्षार्थी की आयु, लिंग, योग्यता के अनुसार परीक्षक इनमें आवश्यक परिवर्त्तन कर सकता है। इस प्रकार के परीक्षणों में प्रायः शाब्दिक के साथ-साथ क्रियात्मक पद भी होते हैं। **सामूहिक** परीक्षणों को व्यक्तिगत परीक्षणों के विपरीत एक साथ समूह पर प्रयुक्त किया जा सकता है। इनमें प्रायः अनेक उपपरीक्षण भी होते हैं और इनमें अलग-अलग अंक ज्ञात करने के पश्चात् परीक्षार्थी का सम्पूर्ण अंक भी ज्ञात करते हैं।

मौखिक परीक्षाएँ प्रायः कक्षा में वास्तविक ज्ञान के मापन में प्रयुक्त होती हैं। इनके अनेक रूप हो सकते हैं। प्रारम्भिक कक्षाओं में इनका प्रयोग प्रचुरता से होता है। पर इनका वैज्ञानिक मूल्य अधिक नहीं होता, क्योंकि इनके आधार पर किया गया निर्णय या मूल्यांकन प्रायः आत्मनिष्ठ होता है। इसके विपरीत **लिखित** परीक्षाएँ मापन में मुख्य रूप से प्रयुक्त होती हैं। निष्पत्ति, बुद्धि, व्यक्तित्व सभी क्षेत्रों में प्रयुक्त परीक्षाएँ प्रायः लिखित ही हैं।

गति परीक्षणों में प्रश्न समान कठिनाई के होते हैं पर परीक्षण में प्रश्नों की संख्या इतनी अधिक होती है कि कोई भी परीक्षार्थी निश्चित समयावधि में इन्हें पूरा नहीं कर पाता। प्रश्न इतने सरल होते हैं कि उनका सही उत्तर देने में परीक्षार्थी योग्य तो होता है पर कम समय होने से वह सबका उत्तर नहीं दे पाता। निश्चित समय में कितने सही उत्तर दिए हैं, इससे उसके कार्य की गति का मापन होता है। इसके विपरीत **शक्ति परीक्षणों** में प्रश्नों को आरोही क्रम (Ascending order) में प्रस्तुत करते हैं। इनमें किसी निश्चित विषय-क्षेत्र में परीक्षार्थी की अधिक से अधिक कठिन प्रश्नों का उत्तर देने की क्षमता का मापन होता है। समयावधि इतनी पर्याप्त रखी जाती है कि अधिक से अधिक प्रश्नों का उत्तर दिया जा सके। व्यवहार में परीक्षण न तो विशुद्ध रूप से गति-परीक्षण होते हैं और न शक्ति-परीक्षण, वरन् इन्हें मिला जुला कर प्रयोग करते हैं। ऐसे मिश्रित परीक्षणों में यद्यपि प्रश्नों को कठिनाई के अनुसार आरोही क्रम में रखा जाता है पर फलांक गणना इस आधार पर की जाती है कि निश्चित समयावधि में परीक्षार्थी ने कितने प्रश्नों का सही उत्तर दिया है। ऐसा मुख्यतया बुद्धि-परीक्षणों में होता है। निष्पत्ति क्षेत्र में टाइप-राइटिंग, हस्तलेखन आदि का मूल्यांकन करने वाले परीक्षण भी इसी प्रकार के हैं।

प्रमापीकरण के आधार पर—

अध्यापक-निर्मित परीक्षाएँ वे हैं जो अध्यापक स्थानीय प्रयोग के लिए ज्ञानोपार्जन, व्यक्तित्व, रुचि, अभिवृत्तियों आदि के मापन-हेतु समय-समय पर बनाते हैं, जबकि **प्रमापीकृत परीक्षाएँ** बड़े पैमाने पर विश्वविद्यालयों, प्रकाशन गृहों, मनोवैज्ञानिक ब्यूरो पर अनुसंधान-संस्थानों द्वारा अनेक अन्वेषकों के सहयोग से बनवाई जाती हैं। इनके न्यादर्श एक बड़े समूह पर आधारित होते हैं और सामान्य वितरण को ध्यान में रखकर इनके मानमानों की गणना की जाती है। निष्पत्ति, बुद्धि, व्यक्तित्व सभी क्षेत्रों में प्रमापीकृत परीक्षण उपलब्ध हैं। औपचारिक या अध्यापक निर्मित परीक्षाएँ एक कक्षा में, पूरे

स्कूल में, कई स्कूलों में एक साथ भी प्रयुक्त हो सकती हैं, इनके बनाने में अनेक अध्यापकों का सामूहिक सहयोग सम्भव है और किन्हीं परिस्थितियों में इनका मुद्रण या प्रकाशन भी होता है, पर तो भी इनका प्रमापीकरण नहीं होता और स्कूल के बाहर इनका उपयोग भी प्रायः नहीं होता। जबकि प्रमापीकृत परीक्षण में परीक्षार्थियों के प्रतिनिधिकारी समूह पर इसका सर्वप्रथम अन्वीक्षण (Try out) आवश्यक है। दोनों प्रकार के परीक्षणों में एक ही प्रकार की पद रचना होती है, दोनों ही वस्तुनिष्ठ हैं और दोनों में व्यक्तिगत आधार पर निर्णय नहीं होता। तथापि प्रमापीकृत परीक्षण अधिक विश्वसनीय हैं और परीक्षार्थियों की पारस्परिक तुलना में अधिक उपादेय हैं।

मापित आयाम के आधार पर—

बुद्धि, अभियोग्यता, व्यक्तित्व, रुचि आदि परीक्षणों में पारस्परिक भेद इतना स्पष्ट नहीं है। **बुद्धि-परीक्षण** सीखने की सामर्थ्य का मापन करते हैं, जबकि **निष्पत्ति या ज्ञानोपार्जन** परीक्षण स्वयं सीखे हुए विषय का। अर्थात् बुद्धि-परीक्षण शिक्षण योग्यता एवं निष्पत्ति-परीक्षण शिक्षण का पता लगाते हैं। निष्पत्ति परीक्षणों में स्कूल में पढ़ाए जाने वाले सभी विषय आ जाते हैं। दक्षता या प्रशिक्षण देने के बाद लिए जाने वाले परीक्षण दक्षता परीक्षण (Skill Tests) कहलाते हैं। निष्पत्ति एवं बुद्धि दोनों व्यक्तित्व के अंग हैं। अतः व्यक्तित्व परीक्षणों में सैद्धान्तिक रूप से इन्हें सम्मिलित किया जा सकता है, पर **व्यक्तित्व परीक्षणों** में व्यवहार में वे परीक्षण हैं जो व्यक्तित्व गुणों, संवेगों, विघटनों, मनोविकृतियों, का पता लगाते हैं। **अभियोग्यता परीक्षण** किसी विशिष्ट क्षेत्र में प्रशिक्षण दिये जाने पर व्यक्ति की उसमें सफल होने की सम्भावना है या नहीं, इसका मापन करते हैं। अभियोग्यता परीक्षण कई प्रकार के हैं, जैसे कला, व्यवसाय, विक्रय, इन्जीनियरिंग के क्षेत्र में।

निष्पत्ति परीक्षण मुख्यतः दो प्रकार के हैं—सर्वे तथा नैदानिक। **सर्वे परीक्षण** वे प्रविधियाँ हैं जिनमें किन्हीं विषयों या ज्ञान के क्षेत्र में सामान्य मापन होता है, जैसे हाई स्कूल में ज्यामिति में या सभी गणित के विषयों में ज्ञान के स्तर का मापन करने वाले परीक्षण। **नैदानिक परीक्षण** किसी एक विषय या ज्ञान-क्षेत्र में परीक्षार्थी की कमजोरियों का पता लगाते हैं, जैसे गणित में यह पता लगाना कि परीक्षार्थी गणना में कमजोर है, सूत्रों को समझने में या प्रश्नों की भाषा या इकाइयों में।

इस सम्बन्ध में कुछ अन्य आवश्यक शब्दों की व्याख्या देना भी उपयुक्त होगा।

तालिका परीक्षण (Inventory Tests) ये रचना में सर्वे परीक्षणों की भाँति होते हैं, पर सर्वे परीक्षण शिक्षण के बाद प्रयुक्त होते हैं और ये पहले। इनका उद्देश्य यह जानना है कि बालक के ज्ञान की पृष्ठभूमि क्या है ताकि उपयुक्त शिक्षा का निश्चय किया जा सके।

पूर्वकथन परीक्षण (Prognostic Tests) इनका उद्देश्य स्कूल के किसी विषय में भावी सफलता की पूर्व सूचना देना है। यह इस बात का पता लगाते हैं कि स्कूल के किसी विषय में सफलता प्राप्त करने के लिए विद्यार्थी में जो दक्षता, ज्ञान या योग्यता होनी चाहिए, वह उसमें है या नहीं। अतः ये अभि-योग्यता परीक्षणों (Aptitude Tests) से काफी मिलते जुलते हैं, पर इन्हें निष्पत्ति परीक्षणों के अन्तर्गत ही वर्गीकृत किया जाता है।

विश्लेषणात्मक परीक्षण (Analytical Tests) ये परीक्षण एक ही विषयों के विभिन्न क्षेत्रों में व्यक्ति की योग्यता का विश्लेषण करते हैं। अतः ये नैदानिक परीक्षणों की भाँति ही होते हैं। उदाहरणार्थ मौन-वाचन योग्यता में शब्दार्थ, वाचन गति, तथ्यों की समझ, मुख्य विचार समझने की सामर्थ्य आदि का पता लगाने वाले परीक्षण।

कूट प्रश्न (Quizzes)—ये कुछ सत्य-असत्य या सरल पूरणात्मक प्रश्न होते हैं जो कक्षा में अध्यापक विद्यार्थियों से इसलिए पूछ लेता है कि उन्होंने पढ़ाया गया विषय समझा या नहीं।

निष्पत्ति परीक्षाएँ (Mastery Tests)—इनका उद्देश्य केवल उन मौलिक विषयों, योग्यताओं या दक्षताओं का मापन करना है जो प्रत्येक परीक्षार्थी के लिए आवश्यक हों।

एनास्तासी ने अपनी 'मनोवैज्ञानिक परीक्षण'[1] नामक पुस्तक में परीक्षणों का निम्न वर्गीकरण किया है :—

व्यवहार के आधार पर :—

(1) General classification and Screening Tests अर्थात् विभिन्न प्रकार के बुद्धि परीक्षण जो शिशुओं से लेकर प्रौढ़ों तक के लिए बनाये गये हैं।

(2) Differential Aptitude Batteries—किशोरों एवं प्रौढ़ों के मार्ग-प्रदर्शन में उपयुक्त। ये परीक्षण बुद्धि का एक सामान्य फलांक प्रस्तुत नहीं करते, वरन् बुद्धि के विभिन्न पक्षों के बारे में व्यक्ति की परि-

---

1. Anastasi, Anne : *Psychological Testing*. The Macmillan Co., NewYork, 1957, pp. 31-38.

सम्पत्ति एवं देयता (Assets and liabilities) का अलग-अलग फलांक प्रस्तुत करते हैं, एवं अवयव-विश्लेषण पर आधारित हैं।

(3) Achievement Tests—ये विशिष्ट शिक्षा का मापन करते हैं और प्रारम्भिक स्कूल से लेकर स्नातकों एवं व्यावसायिक स्कूलों के छात्रों के लिए विभिन्न विषयों में बनाए जाते हैं।

(4) Special Aptitude Tests—ये अत्यन्त विशिष्ट क्षेत्रों, जैसे संगीत, कला, विधि, इंजीनियरिङ्ग आदि में विशिष्ट अभियोग्यता का मापन करते हैं।

(5) Personality Tests—संवेगात्मक अभियोजन, व्यक्तित्व गुणों आदि के परीक्षण।

प्रशासन के आधार पर :—

(1) Individual Tests, (2) Group Tests.

परीक्षण के माध्यम के आधार पर :—

(1) Paper and Pencil Tests, (2) Performance Tests, (3) Motion Picture films, (4) Television.

इनमें से प्रथम दो मुख्यतः बुद्धि-परीक्षणों में प्रयुक्त होते हैं। चलचित्रों का प्रयोग द्वितीय महायुद्ध में किया गया, पर टैलीविज़न का प्रयोग बिल्कुल नया है। बड़े पैमाने पर प्रयुक्त परीक्षणों में कहीं-कहीं इनका उपयोग किया गया है।

विषयवस्तु के आधार पर :—

(1) Verbal, (2) Numerical, (3) Spatial, (4) Pictorial.

ली० जे० क्रॉन्बेक[1] ने सभी परीक्षणों को दो विस्तृत वर्गों में बाँटा है:—

१. अधिकतम निष्पादन परीक्षण (Tests of maximum performance)

२. प्रारूपिक निष्पादन परीक्षण (Tests of typical performance)

(१) **अधिकतम निष्पादन परीक्षण**—इनमें निम्न प्रकार के परीक्षण सम्मिलित हैं—

(**अ**) **योग्यता परीक्षण**—जैसे मानसिक परीक्षण या बुद्धि-परीक्षण। इनमें से अधिकांश परीक्षणों को 'सामान्य मानसिक योग्यता के मापक' की संज्ञा दी जाती है।

---

1. Cronbach, Lee. J. : *Essentials of Psychological Testing* (2nd Ed.), Harper and Brothers, NewYork 1960. pp. 29-34.

(ब) **विशिष्ट योग्यता परीक्षण**—विशिष्ट योग्यताओं का अलग से मापन करने वाले परीक्षण।

(स) **प्रवीणता परीक्षण**—ये किसी ऐसे कार्य में व्यक्ति की प्रवीणता (Proficiency) का मापन करते हैं जिसका अपने आप में महत्त्व हो, जैसे फ्रेंच पढ़ना, प्यानो बजाना।

(द) **निष्पत्ति परीक्षण**—किसी विशिष्ट विषय या क्षेत्र में व्यक्ति द्वारा अर्जित ज्ञान का परीक्षण।

(य) **अभियोग्यता परीक्षण**—किसी व्यवसाय या प्रशिक्षण विषय में भावी सफलता का पूर्वकथन करने वाले परीक्षण।

(२) **प्रारूपिक निष्पादन परीक्षण**—इन परीक्षणों का प्रयोग व्यक्ति में कितना ज्ञान या योग्यता है, यह जानने के लिए नहीं होता, वरन् उसकी विशेषताओं को जानने के लिए जैसे हँसमुख रहना, ईमानदारी या व्यवहार के अन्य पक्ष। योग्यता परीक्षणों में उच्च फलांक प्राप्त करना आवश्यक है, किन्तु प्रारूपिक परीक्षणों में हम फलांक के आधार व्यक्ति की सामर्थ्य को अनेक स्तरों में वर्गीकृत नहीं करते जैसे मैडीकल क्षेत्र में रुचि होने का अच्छे या बुरे या मध्यम स्तर से कोई सम्बन्ध नहीं है। प्रारूपिक प्रावीण्य में हमें व्यक्ति के व्यक्तित्व के बारे में संकेत मिलते हैं। इस प्रकार के परीक्षणों में व्यक्तित्व, रुचि, अभिवृत्तियों आदि के परीक्षण सम्मिलित हैं। प्रश्नावली, [illegible], प्रक्षेपण, निर्णय, आदि इस प्रकार के परीक्षण के माध्यम हैं।

मुर्सेल ने अपनी पुस्तक 'मनोवज्ञानिक परीक्षण'[1] में निम्न वर्गों में परीक्षणों को बाँटा है :—

(१) **मनोमितिक एवं प्रक्षेपी परीक्षण** (Psychometric and Projective Tests)—मनोमितिक परीक्षण में परीक्षार्थी के मानसिक गुण या लक्षण का मापन होता है, जब कि प्रक्षेपी परीक्षण में उसके व्यक्तित्व का गुण या प्रकार प्रकट होता है। मनोमितिक परीक्षण में ऐसी उद्दीपक परिस्थितियाँ उपस्थित की जाती हैं जिनके निश्चित पूर्व-निर्धारित मूल्य होते हैं जैसे विभिन्न उद्दीपक शब्दों के अर्थ, जबकि प्रक्षेपी परीक्षणों में प्रस्तुत उद्दीपक परिस्थितियों, जैसे स्याही के धब्बे, चित्र आदि की उन्मुक्त व्याख्याएँ दी जाती हैं।

(२) **प्रक्रिया के आधार पर**—जैसे विशिष्ट अभियोग्यता, प्रतिभा, रुचि, व्यक्तित्व, स्वभाव, आचरण आदि के परीक्षण।

---

1. Mursell, J. L., *Psychological Testing*. Longman, Green and Co., New York, 1950.

(३) **पद-प्रकार के आधार पर**—इस आधार पर परीक्षण अनेक प्रकार के हो सकते हैं जैसे **शाब्दिक**—जिनमें शब्दों या प्रतीकों का प्रयोग हो। **अशाब्दिक**—जिनमें चित्रों का निर्वचन (Interpretation) हो या ब्लाक, डिजाइन आदि प्रयुक्त हों। **निष्पादन**—जिनमें हस्तकौशल करना पड़े। **अभाषिक**—जिनमें व्यक्ति वस्तुओं की तुलना करे, उन्हें क्रमबद्ध करे या हस्तकौशल दिखाए।

(४) **प्रशासन के आधार पर**—जैसे **व्यक्तिगत** एवं **सामूहिक** परीक्षण।

मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक परीक्षणों में अन्तर
(Difference between Psychological and Educational Tests)

यद्यपि ये दोनों शब्द सामान्य रूप से एक ही अर्थों में प्रयुक्त होते हैं तथापि सूक्ष्म रूप से देखने पर इनमें अन्तर दृष्टिगोचर होता है। मनोवैज्ञानिक परीक्षण मानसिक प्रक्रियाओं से सम्बन्धित हैं, जैसे बुद्धि; शैक्षिक परीक्षण स्कूल में पढ़ाए जाने वाले विषयों से जैसे पाठन, गति, वर्ण-विन्यास, सामाजिक अध्ययन। हम मनोवैज्ञानिक परीक्षणों को विस्तृत अर्थ में इस प्रकार अवश्य प्रयुक्त करते हैं कि उनमें शैक्षिक परीक्षण सम्मिलित कर लिए जाते हैं। मानसिक एवं शैक्षिक परीक्षणों के सम्बन्ध को व्यक्त करने के लिए परिपूर्त्ति अनुपात (Accomplishment Quotient) को भी प्रयुक्त करते हैं,

जिसका सूत्र है : $A.\ Q. = \frac{\text{Attainment Age}}{\text{Mental Age}}$

मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक परीक्षणों में स्पष्ट अन्तर न होने का कारण यह है कि मानसिक क्षमता एवं निष्पत्ति स्वतन्त्र परिवर्त्ती नहीं हैं। उनमें बहुत कुछ समानता है और जो अन्तर है भी वह उद्देश्य का है। शैक्षिक परीक्षणों में भी मानसिक प्रक्रियाएँ निहित हैं जैसे स्मृति, समझ, अन्तर्दृष्टि; और दूसरी ओर मानसिक या मनोवैज्ञानिक परीक्षण, विशेषकर वे परीक्षण जो शाब्दिक प्रतिक्रियाओं पर आधारित हैं, स्कूल में अर्जित सामग्री पर निर्भर करते हैं।

इन दोनों प्रकार के परीक्षणों में अन्तर की अस्पष्टता के कारण अब इस प्रकार के शैक्षिक परीक्षण बनाए जा रहे हैं जोकि पर्याप्त रूप से विस्तृत एवं सामान्य हैं। ये केवल स्मृति प्रक्रियाओं तथा सूचना से ही सम्बन्धित नहीं होते वरन् समस्यामूलक चिन्तन से भी। अभियोग्यता परीक्षणों (Aptitude Tests) को शैक्षिक तथा मानसिक परीक्षणों के मध्य में रखा जा सकता है। परीक्षण की ये दो धाराएँ परस्पर उन्मुख हैं। दोनों का अन्तर केवल सापेक्षिक रह गया है, न कि निरपेक्ष।

मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मनोवैज्ञानिक प्रयोग में अन्तर
(Difference between Psychological Experiment & Psychological Test)

विद्यार्थी प्रायः मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मनोवैज्ञानिक प्रयोग में स्पष्ट अन्तर नहीं कर पाते। हम कुछ मुख्य तथ्यों का संकेत कर रहे हैं, ताकि इन्हें स्पष्ट रूप से अलग-अलग समझा जा सके :—

१. दोनों में ही उद्दीपक परिस्थिति उपस्थित रहती है और प्रतिक्रियाओं का मूल्यन करना पड़ता है। दोनों में उद्दीपक भी एक ही प्रकार के प्रयुक्त होते हैं जैसे परीक्षण तथा प्रयोग दोनों में ही कागज-पैन्सिल के पथजाल प्रयुक्त होते हैं। अन्तर तो केवल लक्ष्य में हैं, जिस हेतु कि सामग्री का प्रयोग होता है। परीक्षण की परिस्थिति में बालक की योग्यता का मापन करने के लिए क्रमशः कठिन से कठिनतर पथजाल उपस्थित किए जा सकते हैं, जबकि प्रयोगशाला में एक ही पथजाल में सीखने की प्रक्रिया का अध्ययन सम्भव है। एक अन्य उदाहरण लीजिए। परीक्षण तथा प्रयोग दोनों में तात्कालिक प्रत्यास्मरण के लिए अंकों की शृङ्खलाओं का प्रयोग होता है। किन्तु परीक्षण में इसका उद्देश्य परीक्षार्थी की योग्यता प्रकट करना है, जबकि प्रयोगशाला में स्मृति-प्रक्रिया का अध्ययन।

२. एक परीक्षण की रचना करते समय पदों का संकलन करना पड़ता है एवं प्रमापीकरण, विश्वसनीयता, वैधता एवं मानकों की गणना, आदि कार्य भी। प्रयोगों में इस प्रकार के किसी प्रमापीकरण की आवश्यकता नहीं पड़ती। हाँ, प्रयोगों के लिए परिवर्त्तियों का नियन्त्रण अवश्य करना पड़ता है।

३. मनोवैज्ञानिक परीक्षण एवं मनोवैज्ञानिक प्रयोग दोनों का उद्देश्य अलग-अलग है। परीक्षण व्यक्तियों से सम्बन्धित हैं, जबकि प्रयोग क्रियाओं से। तथापि इन दोनों प्रकार के उद्देश्यों को हम निरपेक्ष रूप से बिल्कुल अलग नहीं कर सकते। एक-दूसरे के पूरक हैं और जैसे-जैसे अनुसन्धान कार्य बढ़ेगा ये दोनों एक-दूसरे के विकास में सहायक होंगे।

: ३ :

मापन का ऐतिहासिक विकास

व्यक्ति की निष्पत्ति, ज्ञान एवं गुण इत्यादि का पता लगाने में अत्यन्त प्राचीन काल से ही किसी न किसी प्रकार के परीक्षणों एवं मापन-विधियों का प्रयोग होता रहा है । प्राचीन काल में चीन, जोर्डन, मिश्र प्रभृति संस्कृतियों से इस प्रकार के अनेक प्रमाण मिले हैं । पर आधुनिक काल में जिस प्रकार विभिन्न क्षेत्रों में परीक्षण प्रयुक्त होते हैं, यह एक नए प्रकार की ही प्रगति है । उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से ही निष्पत्ति, ज्ञान, बुद्धि, अभियोग्यता, व्यक्तित्व गुण इत्यादि के मापन के लिए व्यापक रूप से परीक्षणों का प्रयोग होने लगा है । बीसवीं शताब्दी में बने अनेक परीक्षणों का तो प्रमापीकरण भी हुआ, और अब सर्वत्र प्रमापीकृत परीक्षणों की संख्या में वृद्धि हो रही है । अनेक विश्वविद्यालयों, सरकारी कार्यालयों, शिक्षा मन्त्रालयों, प्रकाशकों एवं अन्य संस्थाओं द्वारा परीक्षणों का प्रकाशन हो रहा है । स्वयं भारत में इनके प्रकाशन के अनेक केन्द्र हैं । इस अध्याय के अन्तर्गत हम प्राचीन काल में एवं आधुनिक युग में, प्रयुक्त इन विभिन्न परीक्षण-प्रविधियों का संक्षेप में वर्णन करेंगे ।

प्राचीन काल में मापन

मौखिक परीक्षाओं का सर्वप्रथम वर्णन ओल्ड टेस्टामेन्ट[1] में मिलता है। गिलैडाईट्स अपने शत्रु एफ्रेमाइट्स से जोर्डन की रक्षा कर रहे थे। जोर्डन को पार करने वाले व्यक्तियों के सम्बन्ध में यह निर्णय करने के लिए कि ये ऐफ्रेमाइट्स हैं या नहीं, उन्होंने एक अत्युत्तम विधि निकाली। वे प्रत्येक ऐसे व्यक्ति से पूछते थे, क्या तुम ऐफ्रेमाइट हो। जब वह कहता था, नहीं तो वे उससे कहते थे : 'शिबोलेथ' शब्द का उच्चारण करो। यदि वह ठीक से इस शब्द का उच्चारण कर लेता था तो वे उसे अपने देश का समझकर छोड़ देते थे। पर यदि वह शिबोलेथ (Shibboleth) के स्थान पर सिबोलेथ (Sibboleth) बोलता था, तो यह विश्वास किया जाता था कि वह एफ्रेमाइट है; क्योंकि ऐफ्रेमाइट 'श' ध्वनि का ठीक से उच्चारण नहीं कर सकते। इस शब्द का ठीक से उच्चारण न कर सकने के कारण बयालीस हजार एफ्रेमाइट्स को मौत के घाट उतार दिया गया।

यूनान में सुकरात[2] (४७०-३९९ ई० पू०) **ऐथीन्स** में अपने शिष्यों के ज्ञान की परख करने एवं अपने विचारों को समझाने के लिए उनसे एक के बाद दूसरा प्रश्न पूछता था। उसकी विधि इतनी प्रसिद्ध हुई कि इसका नाम ही 'सुकरात की विधि' (Socratic Method) पड़ गया। ईसा से ५०० वर्ष पूर्व यूनान के एक अन्य नगर स्पार्टा में युवकों के शारीरिक विकास का परीक्षण करने के लिए भी अनेक कठिन कार्यों को करा कर उनकी परीक्षा ली जाती थी।

ईसा से २२०० वर्ष पूर्व चीन में[3] राज्य के अफसरों (Government officials) का चयन करने के लिए लिखित परीक्षाओं की व्यवस्था थी। ईसा से २९ वर्ष पूर्व तक लोक सेवकों के चयन में निश्चित रूप से लिखित रूप में परीक्षाओं का उपयोग किया जाने लगा था। इससे चीनी संस्कृति पर पर्याप्त प्रभाव पड़ा, क्योंकि एक ओर तो सारे राज्य क्षेत्र में एक ही प्रकार की व्यवस्था होने से एकता बनाए रखने में सहायता मिली; दूसरे, सरकारी नौकरी प्राप्त करने के लिए सबको समान अवसर प्राप्त हुए।

---

1. Old Testament, Judges, 12, 5-7.
2. See : Plato's *Dialogues.*
3. Cressey, P. F. : "The Influence of the Literary Examination System on the Development of the Chinese Civilization." *American Journal of Sociology*, 35 : 250-267, September, 1929.

आधुनिक युग में मापन

प्राचीन काल में बुद्धि, व्यक्तित्व गुण, ज्ञानोपार्जन आदि क्षेत्र में मापन इतने व्यापक रूप से कभी प्रयुक्त नहीं हुए, जितने आजकल। विभिन्न क्षेत्रों में इनके विकास का संक्षिप्त इतिहास निम्न प्रकार है :—

निष्पत्ति परीक्षण (Achievement Tests)—

मध्यकाल में तेरहवीं शताब्दी में, बोलोना (Bologna) एवं पैरिस विश्व-विद्यालयों में मौखिक परीक्षाओं का प्रयोग होता था। इंग्लैण्ड में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में १७०२ में लिखित परीक्षाएँ प्रचलित थीं। अमरीका में १८४५ में बोस्टन में परीक्षाएँ प्रयुक्त होती थीं। इस समय **होरेस मन** (Horace Mann) 'मैसेच्युसैट्स शिक्षा मंडल' (Massachusetts Board of Education) का मंत्री था। उसने एक विद्यालय पत्रिका[1] में, जिसका कि वह संपादक था, परीक्षाओं के सुधार के लिए अनेक सुझाव दिए। इसमें उसने मौखिक परीक्षाओं के दोषों एवं लिखित परीक्षाओं के उपयोगों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित किया। तत्पश्चात् एक अंग्रेजी अध्यापक श्री **ज्यौर्ज फिशर** ने प्रथम वस्तुगत परीक्षणों का सूत्रपात किया। सन् १८६४ में 'ग्रीनविच चिकित्सालय विद्यालय' में उसकी 'प्रमाप पुस्तकों' (Scale Books) का प्रयोग होता था। इनके माध्यम से व्याकरण, रचना, गणित, हस्तलेखन, वर्ण-विन्यास, सामान्य इतिहास आदि विषयों में निष्पत्ति का मापन होता था।

अमरीका में वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के सूत्रपात का श्रेय **डॉ० जे० एम० राइस** को है। इसने १९०४ में अनेक विद्यार्थियों को एक वर्ण-विन्यास परीक्षा दी। परीक्षा के परिणामों का विश्लेषण किया। वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि जिन विद्यार्थियों ने आठ वर्ष तक प्रतिदिन ३० मिनट वर्ण-विन्यास अध्ययन किया, वे उन विद्यार्थियों से श्रेष्ठतर नहीं थे, जिन्होंने आठ वर्ष तक केवल पन्द्रह मिनट प्रतिदिन ही वर्ण-विन्यास का अध्ययन किया था। राइस के इस कथन का काफी विरोध हुआ, पर कालान्तर में शिक्षाशास्त्री इस बात में विश्वास करने लगे कि राइस की बात सच है, एवं शिक्षा क्षेत्र में वस्तुगत मापन अत्यन्त आवश्यक है। पर सन् १८९७ में जब 'राष्ट्रीय शिक्षा संस्था के प्रबन्ध विभाग' (Department of Superintendence of the National Educational Association) की कान्फ्रेन्स में राइस ने अपने विचार रखे, तो उसके कथन पर काफी आश्चर्य एवं अविश्वास प्रकट किया गया था।

1. Mann, Horace, "Boston Grammar and Writing Schools," *Common School Journal*, Vol. VII, No. 19, Oct. 1, 1845.

थार्नडाइक ने सन् १९०४ में शैक्षिक मापन पर प्रथम पुस्तक[1] प्रकाशित की। सन् १९०८ में उसके शिष्य 'स्टोन' ने गणितीय तर्क पर प्रथम प्रमापीकृत परीक्षण प्रकाशित किया। सन् १९०९ में स्वयं थॉर्नडाइक ने बालकों के लिए हस्तलेखन मापदण्ड का प्रकाशन किया। १९३० में ओडेल ने एक अन्य पुस्तक शैक्षिक मापन पर प्रकाशित की जिसमें उस काल में प्रचलित अनेक परीक्षणों का वर्णन है। प्रारम्भ में अमरीका में इन प्रमापीकृत परीक्षणों का काफी विरोध हुआ। पर शीघ्र ही अनेक केन्द्रों, शिक्षा-संस्थाओं एवं विश्वविद्यालयों में इनकी प्रगति तीव्र गति से होने लगी। सन् १९२० में मैकाल (McCall) के प्रयोगों से अध्यापकों द्वारा स्वयं परीक्षाओं का निर्माण होने लगा। तब से अमरीकी विद्यालयों में अध्यापक निर्मित अनौपचारिक परीक्षण व्यापक मात्रा में प्रयुक्त होते रहे हैं। सन् १९२७ के पश्चात् अनेक दैनिक परीक्षण भी बने हैं।

बुद्धि-परीक्षण (Intelligence Tests)—

व्यक्तिगत विभेदों को मान्यता प्राचीन काल में दी जाती रही थी। पर अठारहवीं शताब्दी के अन्त में सन् १७९५ में ग्रीनविच की ज्योतिष-प्रयोगशाला में मैस्किलीन ने अपने एक सहयोगी को केवल इस कारण पद-च्युत कर दिया कि एक रेखा से सितारे के संक्रमण का निरीक्षण करने में उसे कुछ देर लगती थी। बाद में यह ज्ञात हुआ सब व्यक्तियों का निरीक्षण काल समान नहीं होता। इनमें व्यक्तिगत अन्तर होता है। इस प्रकार व्यक्तिगत विभेद के सिद्धान्त को वैज्ञानिक क्षेत्र में मान्यता हुई। लीपजिग में वुन्ड्ट की प्रयोगशाला में व्यक्तिगत विभेदों पर अध्ययन हुआ। और यहाँ से शिक्षा प्राप्त कर जब कैटैल अमरीका गया तो उसने इन विभेदों का मापन करने के लिए सन् १८९० में परीक्षणों का एक कार्यक्रम प्रस्तुत किया। सांवेदनिक एवं गत्यात्मक अन्तरों के मापन के लिए अनेक परीक्षण बनाए गए। कैटैल के सहयोगियों जैस्ट्रो, गिल्बर्ट, बागले आदि व्यक्तियों ने भी इसी प्रकार के परीक्षणों की रचना की। योरुप में सन् १८९५ में एहर्न ने ऐसे परीक्षणों का विवरण प्रकाशित किया, जिनमें अक्षर- गणना, प्रूफ़-पाठन, साहचर्य आदि की प्रक्रियाओं का मापन था। अल्फ्रेड बिने ने भी इसी काल में अपने प्रारम्भिक परीक्षणों की रचना की, जो सांवेदनिक तथा गत्यात्मक प्रक्रियाओं से सम्बन्धित थे।

आधुनिक बुद्धि-परीक्षणों का वास्तविक सूत्रपात सन् १९०५ में हुआ जब फ्रांस में बिने ने बुद्धि-परीक्षण बनाया। इसका नाम 'बिने-साइमन मापदण्ड'

---

1. Thorndike, E. L.: *An Introduction to the Theory of Mental and Soaial Measurements.*, Teachers College, Columbia University, New York, 1904.

(Binet-Simon Scale) था । सन् १६०८ तथा १६११ में स्वयं बिने ने इनका परिवर्द्धन किया । तत्पश्चात् अन्य देशों में, विशेषकर अमरीका में, इनके अनेक परिवर्द्धन हुए हैं । एवं इनके आधार पर अन्य अनेक परीक्षण बने हैं । सन् १६११ में ऐसा एक परिवर्द्धन वाइनलैण्ड स्कूल के डायरैक्टर **गौडार्ड** ने किया । १६१६ में स्टेन्फोर्ड विश्वविद्यालय में **टरमैन** ने बिने-साइमन मापदण्ड का परिवर्द्धन किया । इसे स्टेन्फोर्ड-परिवर्द्धन कहते हैं । परिवर्द्धित परीक्षण का नाम स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण है । सन् १६३७ में स्टेन्फोर्ड-विश्वविद्यालय में ही टरमैन तथा मैरिल ने दुबारा इसका परिवर्द्धन किया । इसे टरमैन-मैरिल परिवर्द्धन कहते हैं । इनका वर्णन हम अगले अध्याओं में अधिक विस्तार से करेंगे ।

प्रथम महायुद्ध में सामूहिक बुद्धि-परीक्षणों का विकास हुआ । १६१७ में **आर्मी अल्फा परीक्षण** (Army Alpha Test) बना । इसकी सहायता से अमरीकी सेना में भर्त्ती होने वाले व्यक्तियों की परीक्षा की जाती थी । विदेशी व्यक्तियों या अँग्रेजी भाषा से अनभिज्ञ व्यक्तियों के परीक्षण के लिए **आर्मी बीटा परीक्षण** की रचना की गई । द्वितीय महायुद्ध में **आर्मी जनरल क्लासीफिकेशन टैस्ट** की रचना की गई । इसी समय एक अन्य परीक्षण भी बनाया गया, जिसका नाम है : आर्मी व्यक्तिगत मानसिक परीक्षण ।

सेना के प्रयोग के अतिरिक्त सामान्य जनता में प्रयोग करने के लिए भी अनेक सामूहिक परीक्षणों का निर्माण हुआ है । निष्पादन परीक्षणों में कोह ब्लाक डिजाइन परीक्षण, अलैक्जैन्डर पुनस्सारण परीक्षण, पिन्टनर-पैटर्सन निष्पादन परीक्षण आदि प्रसिद्ध हैं । 'बुद्धि-परीक्षण' के अध्याय में हम इन सभी प्रकार के परीक्षणों की विस्तार से विवेचना करेंगे ।

विशिष्ट अभियोग्यता परीक्षण (Specific Aptitude Tests)—

अभियोग्यता का अर्थ है व्यक्ति की वह क्षमता जिसके आधार पर हम यह कह सकें कि प्रशिक्षण दिए जाने पर कोई व्यक्ति किसी क्षेत्र में सफल होगा, या नहीं । अभी तक हमने सामान्य बुद्धि के परीक्षणों का वर्णन किया है । विशिष्ट क्षेत्रों में व्यक्ति की सफलता का पूर्वकथन करने के लिए भी अनेक परीक्षण बने हैं । ये परीक्षण विशिष्ट बुद्धि, अर्थात् बुद्धि के किसी एक पक्ष, एवं किसी निश्चित क्षेत्र में सफलता से सम्बन्धित हैं । इसी आधार पर इन परीक्षणों का नामकरण भी किया गया है; जैसे लिपिक अभियोग्यता परीक्षण (Clerical Aptitude Tests), संगीत अभियोग्यता परीक्षण (Musical Aptitude Tests), कलात्मक अभियोग्यता परीक्षण (Artistic Aptitude Tests), विधि अभियोग्यता परीक्षण (Legal Aptitude Tests), आदि ।

प्रथम अभियोग्यता परीक्षण टैलीफोन में कार्य करने वाली लड़कियों के लिए एवं मोटर वालों के लिए सन् १९१३ में मुन्स्टेरबर्ग ने बनाया। इसके पश्चात् तो अनेक परीक्षणों की रचना होने लगी। १९१५ में सीशोर ने संगीत प्रज्ञा परीक्षण (Seashore Test of Musical Talent) की रचना की। १९१८ में स्टैन्क्विस्ट सामान्य यान्त्रिक योग्यता परीक्षण (Stenquist Test of General Mechanical Ability) बना। इसी वर्ष रॉजर्स ने गणितीय योग्यता का एक परीक्षण बनाया। सन् १९२४ में आयोवा स्थान-निर्धारण परीक्षाओं (Iowa Placement Examinations) का प्रकाशन हुआ। आजकल सामान्य बुद्धि परीक्षणों के स्थान पर विशिष्ट अभियोग्यता परीक्षणों के निर्माण की ओर ही प्रवृत्ति है।

व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Tests)—

प्रागैतिहासिक काल से ही व्यक्ति एक-दूसरे के गुणों का मूल्यांकन करने एवं इस पर अपने निर्णय देने लगे थे। पर ये निर्णय या मूल्यांकन विश्वसनीय नहीं कहे जा सकते। कालान्तर में अनेक दार्शनिकों एवं दैहिकशास्त्रियों ने मनुष्य के गुण एवं व्यवहार का मानसिक एवं दैहिक आधार पर चिन्तन प्रारम्भ किया। हस्तरेखा शास्त्र, मुखाकृति विज्ञान, आदि विद्याओं का विकास हुआ। पर इसे व्यवहार एवं व्यक्तित्व के मापन की दृष्टि से हम अधिक महत्व नहीं दे सकते।

चरित्र-गुण के वैज्ञानिक मापन के सूत्रपात का श्रेय गाल्टन को है। वह इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि हमारा व्यवहार एवं गुण स्थायी है। अतः इसका मापन सम्भव है। उसने निर्णय विधि का प्रयोग करके चरित्र गुणों के मापन का प्रयास किया। बाद में चलकर शैक्षिक एवं व्यावसायिक संदर्शन की व्यावहारिक आवश्यकता के कारण व्यक्तित्व एवं चरित्र-गुण के मापन में लोगों की रुचि बढ़ी। सन् १९१२ में फरनैल्ड ने चरित्र-गुण के मापन के लिए परीक्षण बनाये।[1] हार्टशॉर्न तथा में ने १९२४-२९ के मध्य 'चरित्र-शिक्षा अन्वेषण' Character Education Inquiry) का प्रकाशन किया। चरित्र-गुण परीक्षण के क्षेत्र में यह सबसे महत्वपूर्ण कदम था।

व्यक्तित्व गुणों के मापन की दिशा में वर्गश्रेणी मापदण्डों (Rating Scales), प्रश्नावलियों (Questionnaires), एवं अन्य विधियों का प्रयोग हुआ है। प्रथम वर्गश्रेणी मापदण्ड गाल्टन ने सन् १८८३ में मानसिक प्रतिमाओं

1. Fernald. G. G. "*The Defective Delinquent Class Differentiating Tests.*"—American Journal of Insanity, 68, 524-594, 1912.

की तीव्रता का पता लगाने के लिए किया था। तत्पश्चात् स्कॉट का मनुष्य का मनुष्य से मिलान मापदण्ड (Scott Man-to-Man Scale) बना। इसका उद्देश्य प्रथम महायुद्ध में अफसरों में से नेतृत्व की योग्यता वाले व्यक्तियों का चयन करना था। सन् १९२३ में फ्रॉयड के ग्राफिक वर्गश्रेणी मापदण्ड (Freyd's Graphic Rating Scale) का प्रकाशन हुआ। कुछ अन्य प्रमुख वर्गश्रेणी मापदण्डों में लेयर्ड मापदण्ड (Laird's Scale) १९२५, ब्रिजिज़ मापदण्ड (Bridges Scale) १९३१, आदि हैं।

प्रश्नावली विधि का आविष्कार गाल्टन ने सर्वप्रथम इंग्लैण्ड में किया। पर उसने यह नामकरण नहीं किया। श्री स्टैनले हॉल ने अमरीका में सन् १८८० में प्रश्नावली विधि प्रयुक्त की। आज भी समाज के साथ अभियोजन, अभिवृत्ति, रुचि एवं व्यक्तित्व गुण के मापन में प्रश्नावली का मापन होता है। सैन्य जीवन की कठिनाइयों के साथ सैनिकों की अभियोजन शक्ति का मापन करने के लिए वुडवर्थ ने सन् १९१७ में व्यक्तिगत प्रदत्त पत्र (Woodworth Personal Data Sheet) की रचना की। १९२३ में मैथ्यूज़ ने विद्यालयों में प्रयोग करने के लिए इसमें परिवर्तन किए। १९१९ में 'प्रैसे' ने काटने की परीक्षा (Pressey X-O Test) प्रकाशित किया। इसमें संवेगात्मकता का मापन होता है। बर्नरिटर (Bernreuter) की व्यक्तित्व अनुसूची से, जिसका निर्माण १९३३ में हुआ, व्यक्तित्व के चार पक्षों का मापन होता है। हैथावे तथा मैकिन्ले (Hathway and McKinley) ने सन् १९४० में मिनेसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व अनुसूची (Minnesota Multiphasic Personality Inventory) की रचना की। इससे भी व्यक्तिगत व्यवस्थापन का मापन करते हैं। इनका विस्तृत वर्णन हम व्यक्ति परीक्षण के अध्याय में करेंगे।

सन् १९२० के पश्चात् अभिवृत्तियों के मापन के लिए भी अनेक परीक्षणों की रचना हुई है। १९२३ हार्ट का सामाजिक अभिवृत्तियों एवं रुचि के मापन का परीक्षण प्रकाशित हुआ। १९२८ के पश्चात् थर्सटन ने अभिवृत्ति मापन में अनेक सांख्यिकीय सुधार किए। थर्सटन तथा चेव ने स्वयं अभिवृत्तियों के मापन के लिए मापदण्ड बनाया है। १९३२ में लाइकर्ट ने अन्तर्राष्ट्रीयता, साम्राज्य-वाद, एवं नीग्रो लोगों के प्रति अभिवृत्ति का मापन करने के लिए मापदण्ड बनाए। १९३३ में बोगार्डस ने 'सामाजिक दूरी मापदण्ड' (Social Distance Scale) की रचना की; और १९३४ में रैमर ने सामान्यीकृत अभिवृत्ति मापदण्ड (Generalised Attitude Scales) की रचना की।

व्यक्तित्व परीक्षण के लिए साहचर्य विधि का भी प्रयोग होता है। वर्ग-श्रेणी विधि एवं प्रश्नावली की भाँति इस विधि के सूत्रपात का श्रेय भी गाल्टन

की है। सन् १८७९ में गाल्टन ने मुक्त साहचर्य विधि का निर्माण किया। १९०५ में जुंग ने १०० शब्दों की एक शब्द-सूची बनाई। इसके प्रयोग से जो प्रतिक्रियाएँ प्राप्त होती हैं, उनका विश्लेषण करके एक निश्चित विधि के द्वारा भावनात्मक ग्रन्थियों का पता लगाते हैं। केन्ट तथा रोजानोफ ने १९११ में एक अन्य शब्द-सूची (Kent-Rosanoff Word List) बनाई। वुडवर्थ, ईडर तथा अन्य व्यक्तियों ने भी इसी प्रकार की शब्द-सूचियाँ बनाई हैं।

व्यक्तित्वमापन की एक अन्य विधि प्रक्षेपी-विधि है। रोशा के स्याही के धब्बों के परीक्षण (Rorschach Ink-Blot Test) में कुछ चित्रों में स्याही के धब्बे दिए रहते हैं। इनके आधार पर परीक्षार्थी अपनी प्रतिक्रियाएँ करता है। इन प्रतिक्रियाओं के विश्लेषण के आधार पर परीक्षार्थी के व्यक्तित्व का मूल्यांकन करते हैं। इस परख का निर्माण १९२१ में हुआ। १९३५ में मुरे ने थैमाटिक अपरसैप्सन टैस्ट (Thematic Apperception) की रचना की। इसमें कुछ संदिग्ध चित्रों को देखकर व्यक्ति अपनी प्रतिक्रियाएँ करता है। इन दोनों ही प्रविधियों का व्यापक रूप से प्रयोग होता है।

अब हम कुछ महत्वपूर्ण परीक्षणों की अक्षरक्रमानुसार एक संक्षिप्त सूची प्रस्तुत कर रहे हैं एवं तत्पश्चात् वर्ष-क्रम में पश्चिमी देशों में प्रकाशित। प्रमुख पुस्तकों की सूची।

Alphabetical List of Important Testing Events

Army Alpha, Army Beta Tests
Arthur Adaptation of Leiter International
A. C. E. Psychological Examinations
Brace Motor Ability Tests
Binet-Simon Intelligence Scale
Bernreuter Personality Inventory
Barrett Ryan Literature Test
Bell-Adjustment Inventory
California Achievement Tests: Advanced Battery, Elementary Battery
California Personality Test
California Short-Form of Mental Maturity
Children's Apperception Test (C. A. T.)
Clapp-Young Self-Marking Tests
Co-operative Achievement Tests
Co-operative English Tests
Coxe-Orleans Prognosis Test of Teaching Ability

Differential Aptitude Tests (D. A. T.)
D. A. T. Verbal Reasoning and Numerical Ability Test
D. A. T. Language Usage (Spelling & Sentences) Tests
Davis-Eells Games Test for Grades 1–6
Every Pupil Test in Physics
Fisher's Scale Books
Gesell's Child Development Schedules
George Washington University English Literature Test
Gates Reading Readiness Test
Gregory Tests in American History
Gates Diagnostic Test of Reading
Holzinger-Crowder Uni-Factor Tests
Hudelson Scales
Hagerty-Olson Wickman Behaviour Rating Schedule
Horace-Mann-Lincoln Institute Social Distance Scale
Iowa Academic Testing Programme
Iowa Every Pupil Tests in Basic Skills
Iowa Placement Examinations
Iowa Silent Reading Test
Kuder Preferance Record
Kuhlmann Intelligence Test
or Kuhlmann Test of Mental Development
Leiter International Performance Scale
,, Arthur adaptation for Childern With Linguistic handicaps
Lewerenz Tests of Fundamental Abilities of Visual Act]
Munsterberg Aptitude Test for Telephone Girls
Modern School Achievement Test
Metropolitan Standard Achievement Tests
Macquarrie Tests of Mechanical Ability
McAdory Art Test
Meier and Seashore Art Adjustment Tests
Merrill-Palmer Scale
Minnesota Multi-phasic Personality Inventory
Minnesota Pre-school Scale
Minnesota Mechanical Ability Tests
Make a Picture Story Test

Nelson High School English Test
North-western Intelligence Tests
Ohio State University Psychological Tests
Ohio Quick Scoring Mental Ability Tests
Ohio Scales for Rating Standard Tests
Ohio Self-Administered Tests of Mental Ability
Ohio Social Acceptance Scale
Orleans Algebra Prognosis Test
O' Rourke Mechanical Aptitude Test
Porteus Maze Test
P. E. A. Interpretation of Data Sheet
Primary Mental Ability Tests
Pintner General Ability Tests
Pintner-Patterson Performance Scales
Roger's Physical Capacity Tests
Roger's Test of Personality Adjustment
Rorschach Ink-Blot Test
Ruch-Popenoe General Science Test
Springfield's Tests
Strong Vocational Interest Blank
Stone Reasoning Test in Arithmatic
Sones-Harry High School Achievement Test
Stenquist Test of General Mental Ability
Scott Man to Man Scale
Seashore Test of Musical Talent
Stanford Achievement Tests
Thorndike-McCall Reading Test
Terman Group Test of Mental Ability
Terman McNemar Test of Mental Ability
Test of General Educational Development (G. E. D)
Thematic Apperception Tests
Thorndike Handwriting Scale
Traxler Silent Reading Test
Van Alshyne Picture Vocabulary Test
Winnetka Scale for Rating School Behaviour
Wrightstone Tests of Critical Thinking
Watson Glaser Critical Thinking Appraisal
Wechsler Bellevue Intelligence Scales
Wechsler Intelligence Scale for Children
Woodworth's Personal Data Sheet

उल्लेखनीय प्रकाशित पुस्तकें---

ऐतिहासिक क्रम में मापन पर अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित कुछ महत्वपूर्ण पुस्तकें निम्नलिखित हैं :—

१९०४	थॉर्नडायक	:	**मानसिक एवं सामाजिक मापन के सिद्धान्त का परिचय**
१९१४	कैली	:	**शैक्षिक संदर्शन**
१९१६	व्हिपिल	:	**मानसिक एवं शारीरिक परीक्षणों की विवरण-पुस्तिका**
१९१६	टरमैन	:	**बुद्धि का मापन**
१९१९	सीशोर	:	**संगीत का मनोविज्ञान**
१९२२	मैकॉल	:	**शिक्षा में मापन कैसे करें**
१९२६	फ्रीमैन	:	**मानसिक परीक्षण**
१९२७	थॉर्नडायक	:	**बुद्धि का मापन**
१९२७	स्पीयरमैन	:	**मनुष्य की योग्यताएँ**
१९२७	रटॉफर्ड	:	**माध्यमिक शिक्षण में परीक्षण एवं मापन**
१९२८	हल	:	**अभियोग्यता-परीक्षण**
१९३७	टरमैन तथा मैरिल	:	**बुद्धि का मापन**
१९३९	वैश्लर	:	**प्रौढ़ बुद्धि का मापन**
१९३९	नैल्सन	:	**प्रारम्भिक शिक्षा में परीक्षण एवं मापन**
१९४३	रैमर्स तथा केज	:	**शैक्षिक मापन एवं मूल्यांकन**
१९४९	थॉर्नडायक	:	**वैयक्तिक चयन : परीक्षण एवं मापन**
१९५४	रॉस एवं स्टैनले	:	**आज के विद्यालयों में मापन**

इसके अतिरिक्त ग्रीन, जोरगैनसन एवं जरबैरिच, एनस्तासी, क्रॉन्बैक, लिन्डक्विस्ट, मुर्सेल, गुडएनफ, गिलीकसन, जोर्डन आदि ने भी मापन पर पुस्तकें लिखी हैं।

: ४ :

मापन के आवश्यक गुण

कोई भी परीक्षण-रचयिता ऐसा परीक्षण बनाना चाहता है जो सर्वश्रेष्ठ विधि से मापन कर सके। एक अच्छा परीक्षण वह है जो जिस उद्देश्य की पूर्ति से बना है, उसकी पूर्त्ति कर सके। यदि ध्यान से निरीक्षण किया जाए तो उसमें निम्न गुण मिलेंगे :—

१. **व्यापकता** (Comprehensiveness)
२. **विभेदकारिता** (Discrimination)
३. **वस्तुगत होना** (Objectiviy)
४. **वैधता** (Validity)
५. **विश्वसनीयता** (Reliability)
६. **व्यवहार योग्यता** (Usability), **अर्थात् प्रशासन-फलांकन एवं निर्वचन में सुविधा** (Ease of Administration, Scoring and Interpretation)

किसी भी अच्छे परीक्षण में ये सभी गुण होने चाहिए। पर इनमें से किसी की भी स्वतन्त्र सत्ता नहीं है। सब एक-दूसरे पर निर्भर हैं। एक का दूसरे पर प्रभाव पड़ता है। केवल सुविधा के लिए ही हम इनका अलग-अलग वर्णन कर रहे हैं।

व्यापकता

व्यापकता का अर्थ यह है कि किसी परीक्षण में पाठ्यक्रम में सम्मिलित तथ्यों में से अधिक से अधिक का समावेश कर लेना चाहिए। परीक्षण परीक्षार्थी के व्यवहार का केवल आंशिक न्यादर्श न हो। जितना अधिक कोई परीक्षण पाठ्यक्रम एवं उसके विभिन्न अंशों एवं क्षेत्रों से सम्बन्धित होगा, उतना ही वह व्यापक भी होगा। किसी सांख्यिकीय सूत्र के आधार पर हम व्यापकता का अनुमान नहीं लगा सकते। परीक्षण की व्यापकता के बारे में निर्णय करना स्वयं निर्माता की सूझ-बूझ, उसकी कुशाग्र बुद्धि एवं उसकी परीक्षण-निर्माण की क्षमता पर निर्भर है।

माइकील्स तथा कार्नेस[1] ने व्यापकता के सन्दर्भ में निष्पत्ति परीक्षण की तुलना केक की परतों के न्यादर्श से की है। यदि केक की परतों के गुण के बारे में हमें बताने को कहा जाए तो हम केवल देखकर ही उत्तर नहीं दे देंगे। हम इसका स्वाद लेना चाहेंगे। पर इसको पूरी तरह से खा लेना हमारे लिए आवश्यक नहीं होगा। यदि केक की अनेक परतें हों, तो हम सभी परतों का स्वाद लेकर, तब अपना निर्णय न देंगे। परीक्षण की रचना करते समय भी हम इसी प्रकार पाठ्यक्रम में सम्मिलित सभी तथ्यों को न लेकर, उनमें से कुछ का न्यादर्श (Samp le) या बानगी लेंगे। इनमें परीक्षार्थी की सफलता-असफलता के आधार पर हम सम्पूर्ण तथ्यों के ज्ञान के बारे में निर्णय देंगे।

तथ्यों का कितना भाग लिया जाय कि परीक्षण व्यापक हो सके, एक महत्वपूर्ण विषय है। पर न्यादर्श (Sample) में समग्र (Population) का कितना अंश हो, इसका निर्णय करना परीक्षण-रचयिता परीक्षण के उद्देश्यों, एवं प्रशासन की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर करेगा। हाँ, परीक्षण इतना व्यापक हो, कि यह वैध हो सके। पाठ्यक्रम वैधता (Content or Curricular Validity) का वर्णन करते समय हम इसकी विस्तार से विवेचना करेंगे। यह आवश्यक है कि परीक्षण को व्यापक बनाने के लिए परीक्षण के सभी उद्देश्यों (Objectives) तथा परिणामों (Outcomes) को ध्यान में रखना आवश्यक है।

विभेदकारिता

एक परीक्षण तभी विभेदकारी होता है, जब वह निष्पत्ति या उपार्जन में

1. Micheels, W. J., and Karnes, M. Ray : *Measuring Educational Achievement*, McGraw Hill Book Co., New York, 1950.

अन्तरों का पता लगा सके, अर्थात् यह सुयोग्य एवं अयोग्य छात्रों में विभेद कर सके। परीक्षण-पद जब भली-भाँति विद्यार्थियों में विभेद करता है, तभी उनका निष्पत्ति या अंकों के आधार पर पद-क्रम (Ranking) सम्भव है। इसके लिए तीन बातें आवश्यक हैं : प्रथमतः, जब परीक्षण प्रशासित किया जाए तो फलांकों का प्रसार-क्षेत्र (Range) काफी विस्तृत होना चाहिए, क्योंकि इसमें प्रत्येक विषय में निम्नतम से लेकर उच्चतम फलांक दिए जा सकेंगे। द्वितीय, परीक्षण में कठिनाई के सभी स्तरों के प्रश्न-पद सम्मिलित होने चाहिए। कुछ प्रश्न-पद ऐसे हों जिनका उत्तर सभी विद्यार्थी असानी से दे सकें; एवं कुछ पद ऐसे हों कि केवल योग्य विद्यार्थी ही उनका उत्तर दे सकें। तृतीय, प्रत्येक पद इस प्रकार का हो कि अधिकांश योग्य विद्यार्थी उसका उत्तर दे सकें और अधिकांशतः अयोग्य या कम योग्य विद्यार्थी उनका उत्तर न दे सकें। कुछ पद ऐसे भी होते हैं कि अयोग्य या कम योग्य विद्यार्थी तो उनका उत्तर दे देते हैं, पर सुयोग्य विद्यार्थी उन्हें हल नहीं कर पाते। ऐसे पदों की विभेदकारी सामर्थ्य नकारात्मक होती है। अतः उन्हें परीक्षण में समन्वित न करना ही श्रेयस्कर होगा।

परीक्षण-पदों की विभेदकारी सामर्थ्य ज्ञात करने के लिए परीक्षण के उपरान्त प्रत्येक पद का विश्लेषण किया जा सकता है। इसे पद-विश्लेषण (Item Analysis) कहते हैं। इससे प्रत्येक पद की कठिनाई के स्तर का पता चल जाएगा।

वस्तुगत होना

किसी भी परीक्षण के लिए वस्तुगत होना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि इसका विश्वसनीयता एवं वैधता दोनों पर प्रभाव पड़ता है। अतः आवश्यक है कि केवल फलांकन ही नहीं, वरन् परीक्षार्थी द्वारा परीक्षण के व्यक्तिगत पदों का निर्वचन भी वस्तुगत हो। एक बार परख की कुंजी (Key) बन जाने के बाद यह प्रश्न उठना ही नहीं चाहिए कि प्रश्न अस्पष्ट तो नहीं है या उसके उत्तर के बारे में ठीक से निर्णय नहीं किया जा सकता। कोई भी व्यक्ति उत्तर-पुस्तिका को जाँचे, एवं किसी भी अवसर पर जाँचे, परीक्षार्थी को सदैव उतने ही अंक मिलने चाहिये। निबन्धात्मक परीक्षाओं में यह बात नहीं होती। इनमें उत्तर-पुस्तिकाओं के जाँचने वाले व्यक्ति के व्यक्तिगत या आत्मगत (Subjective) निर्णय से उसके द्वारा प्रदत्त अंक प्रभावित रहते हैं। जहाँ तक परीक्षार्थी द्वारा पदों को स्पष्ट रूप से समझने अर्थात् उनका वस्तुगत निर्वचन (Interpretation) करने की बात है, यदि पदों की रचना सुव्यवस्थित हो, और ये द्वयार्थक (Ambiguous) न हों, तो सब परीक्षार्थी उनका एक, और

केवल एक, ही अर्थ लगाएँगे। अन्यथा विद्यार्थी पदों का कुछ अर्थ समझेंगे जबकि परीक्षण-रचयिता ने उन्हें किन्हीं अन्य अर्थों में प्रयुक्त किया था। इससे परीक्षण की वैधता कम हो जाएगी। परीक्षण-पदों को वस्तुगत बनाने के लिए यह आवश्यक है कि वे द्वयार्थक न हों, उनमें स्थिरता (Consistency) हो, एवं व्याकरण की दृष्टि से वे शुद्ध हों। यदि हम निम्न पदों को पढ़ें तो पता चलेगा कि वे वस्तुगत नहीं हैं।

	शुद्ध	अशुद्ध
(i) हैमहोल्ज़ एक महान् मनोवैज्ञानिक था।	( )	( )
(ii) तार किसी भी धातु से बन सकता है।	( )	( )
(iii) हथौड़े से कील ठोकते हैं।	( )	( )

इन पदों के बारे में निश्चय रूप से शुद्ध या अशुद्ध कहना तर्क-संगत नहीं है।

विश्वसनीयता

जब किसी परीक्षण में विभिन्न अवसरों पर या एक ही प्रकार के विभिन्न परीक्षण पदों में किसी परीक्षार्थी द्वारा प्राप्त फलांकों में संगति होती है, तो वह परीक्षण विश्वसनीय कहलाता है।[1] विश्वसनीयता का सम्बन्ध मापन की यथार्थता से है। कुछ न कुछ त्रुटि तो किसी भी प्रकार के वैज्ञानिक मापन में होती है, जैसे तापक्रम के बढ़ने और घटने से धातु का फुटा बढ़ता या सिकुड़ता है। अतः यथार्थ मापन तभी सम्भव है जब तापक्रम स्थिर रहे। इसी प्रकार मनोवैज्ञानिक परीक्षण के परिणाम भी अनेक बातों पर निर्भर करेंगे। बार-बार किसी व्यक्ति पर किसी परीक्षण को प्रयुक्त करने से परिणाम, अर्थात् परीक्षार्थी के फलांक, विभिन्न हो सकते हैं, क्योंकि पुनर्परीक्षण में उसकी मानसिक एवं वातावरणजन्य वस्तुस्थिति वही न रहेगी, जो प्रथम परीक्षण में थी। ध्यान एवं प्रयास में परिवर्त्तन, सीखने, स्वास्थ्य, व्यक्तित्व में परिवर्त्तन सभी सम्भव हैं। यदि कोई परीक्षण इस प्रकार से संरचित हो कि इन परिवर्त्तनों से उसके परिणामों पर प्रभाव न पड़े या कम पड़े तो वह परीक्षण विश्वसनीय कहलाएगा। स्टेनफोर्ड-बिने परीक्षण एक ऐसा ही परीक्षण है।

1. "The reliability of a test refers to the consistency of score obtained by the same individuals on different occasions or with different sets of equivalent items." Anastasi A., *Psychological Testing.*, The Macmillan Co,, New York. 1957, p. 94,

किसी परीक्षण की विश्वसनीयता का अर्थ है कि उसे बार-बार प्रयुक्त करने पर प्राप्त फलांकों या परिणामों में परिवर्तन न हो; अर्थात् परिणाम संगत (Consistent) हों। यदि कोई व्यक्ति हमें आज किसी घटना को एक रूप में सुनाए और कुछ दिन बाद किसी दूसरे रूप में, तो हम उसकी बात में विश्वास नहीं कर पायेंगे, क्योंकि इसमें संगति नहीं है। पर यह जब भी घटना सुनाए, उसी रूप में सुनाए, तो हमें उसकी बात विश्वसनीय लगेगी। अतः विश्वसनीय परीक्षण वह है जिसमें विश्वास किया जा सके।

विश्वसनीयता और वैधता में अन्तर है। इस अन्तर को स्पष्ट करने के लिए रॉस[1] ने एक उदाहरण दिया है : एक व्यक्ति अवकाश से लौटकर अपने मित्रों को एक मछली का, जोकि उसने पकड़ी थी, चित्रमय वर्णन सुनाता है। प्रत्येक मित्र को अत्यन्त सूक्ष्मता के साथ विस्तार में वह उसी प्रकार का मनोरम विवरण देता चलता है। अतः सांख्यिकीय अर्थ में यह कहानी विश्वसनीय है, क्योंकि यह संगत है। पर इस संगत विवरण के आधार पर उसकी सत्यता स्थापित नहीं होती। अतः विवरण आवश्यक रूप से वैध नहीं है। एक अन्य उदाहरण लीजिए। आज किसी समय मेरे पड़ोसी की घड़ी आठ बजाती है। मेरी घड़ी बन्द है। अपने पड़ोसी की घड़ी देखकर मैं भी अपनी घड़ी में आठ बजा लेता हूँ। दूसरे दिन अपने पड़ोसी की घड़ी से मैं अपनी घड़ी मिलाता हूँ और मुझे ज्ञात होता है कि दोनों घड़ियों में एक ही समय है। इससे यह पता चलता है कि घड़ी विश्वनीय है, न यह धीमी है न तेज। पर यदि मेरी घड़ी में ८ बज कर १० मिनट हो जाएँ तो यह विश्वसनीय नहीं है। विश्वसनीय होने पर भी मुझे यह पता नहीं कि वास्तव में समय वही हुआ है जो घड़ी में है। सम्भव है कि रेडियो के अनुसार समय ८ बजने में ५ मिनट हो और मेरी घड़ी में ८ बज कर १० मिनट। ऐसी अवस्था में घड़ी समय का वैध मापन नहीं कर रही है।

परीक्षण की विश्वसनीयता का सांख्यिकीय मापनों की विश्वसनीयता में संभ्रम (Confusion) नहीं होना चाहिए। उदाहरण के लिए जब हम मध्यमान, प्रमाप-विचलन, सहसम्बन्ध आदि की विश्वसनीयता की बात करते हैं तो हमारा मतलब प्रमाप त्रुटि (Standard Error) या न्यादर्श त्रुटि (Sampling Error) से होता है। अर्थात् हम यह जानना चाहते हैं कि विभिन्न न्यादर्शों के किसी दिए हुए तथ्य का मध्यमान, प्रमाप-विचलन आदि निकाला जाए तो परिणामों में कितनी संगति होगी। इस प्रकार परीक्षण की विश्वस-

1. C. Ross : *Measurement in Today's Schools.*

नीयता में एक ही परीक्षण को उन्हीं व्यक्तियों पर बार-बार प्रयुक्त करके परिणामों में कितनी संगति है, यह ज्ञात करते हैं, जबकि सांख्यिकीय मापकों की विश्वसनीयता में अलग-अलग समूहों पर जो परिणाम आते हैं उनमें संगति देखते हैं।

परीक्षण की विश्वसनीयता जानने की मुख्यतः **चार** प्रविधियाँ हैं:—

१. परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि (Test Re-test Method)।
२. विकल्प या समानान्तर प्रतिरूप विधि (Alternate or Parallel Form Method)।
३. अर्द्ध-विच्छेद विधि (Split-Half Method)।
४. युक्ति-युक्त पद-साम्य विधि (Method of Rational Equivalence)।

१. **परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि** (Test Re-test Method)—

यह फलांकों की दो सूचियों में पारस्परिक साम्य ज्ञात करने की सरलतम विधि है। इसमें परीक्षण को विद्यार्थियों पर प्रशासित करके उनके फलांक लिख लिए जाते हैं। कुछ समय उपरान्त उन्हीं विद्यार्थियों पर पुनः परीक्षण किया जाता है और उनके फलांक लिख लेते हैं। तदुपरान्त प्रथम परीक्षण एवं पुनः परीक्षण में प्राप्त फलांकों की इन दो श्रेणियों में सहसम्बन्ध ज्ञात कर लेते हैं। यदि यह सहसम्बन्ध काफी अधिक है तो परीक्षण विश्वसनीय है, अन्यथा नहीं।

इस विधि की निम्न **परिसीमाएँ** हैं :—

(१) यदि परीक्षण का तत्काल ही पुनर्परीक्षण किया जाए तो अनेक परीक्षार्थी अपने प्रथम परीक्षण के उत्तरों का प्रत्यास्मरण कर लेंगे, एवं जिन प्रश्नों को उन्होंने प्रथम परीक्षण में सही नहीं किया था, उनका उत्तर सोचने में समय व्यतीत करेंगे और इस प्रकार उनके फलांक में वृद्धि हो जाएगी। अभ्यास, परीक्षण से पूर्व परिचय, विश्वास के कारण भी फलांकों में वृद्धि होगी।

(२) यदि प्रथम एवं पुनर्परीक्षण में मध्यान्तर काफी अधिक, छः माह या उससे अधिक, हो और विशेषकर परीक्षार्थी कम आयु के बालक हों तो शारीरिक वृद्धि के कारण उनके फलांकों में वृद्धि हो जाएगी।

अतः इस प्रकार की विधि का प्रयोग करने में समय पर्याप्त देना चाहिए—न बहुत कम और न बहुत अधिक। एक या दो माह का समय उचित है। पर ऊपर बनाए गए परिवर्त्तियों या प्रभावी तत्त्वों को, समय का कितना ही ध्यान क्यों न रखा जाए, पूर्ण रूप से निसरित (Eliminate) नहीं किया जा सकता। अतः परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि भी विश्वसनीयता के मापन की सर्वोत्तम विधि **नहीं है**।

इस प्रकार की विश्वसनीयता के लिए 'स्थिरता गुणांक' (Coefficient of Stability) संज्ञा प्रयुक्त की जाती है। इस प्रकार का गुणांक यह संकेत करता है कि किस सीमा तक परीक्षण के फलांक प्रयोज्य के मानसिक परिवर्तनों या परीक्षण के वातावरण में हुए कारणों से प्रभावित होते हैं। पर 'स्थिरता गुणांक' एक अमूर्त संज्ञा है। दो परीक्षणों के मध्यान्तर में परिवर्तन होने से स्थिरता गुणांक में भी परिवर्तन हो जाएगा। उदाहरण के लिए उन परीक्षणों को लीजिए जिनका कुछ दिनों या सप्ताहों के मध्यान्तर से पुनः परीक्षण करने पर स्थिरता गुणांक काफी उच्च आता है। पर यदि यह मध्यान्तर कुछ वर्ष हो तो प्रथम तथा पुनः परीक्षण के फलांकों में बहुत कम साम्य मिलता है। ऐसा विशेषतः कम आयु के बालकों के बुद्धि-परीक्षणों में होता है और इसी कारण ये परीक्षण पूर्वकथन के योग्य नहीं होते।

२. विकल्प या समानान्तर प्रतिरूप विधि (Alternate or Parallel Form Method)—

यह विधि उन्हीं परिस्थितियों में उपयुक्त है, जब परीक्षण के दो प्रतिरूपों की संरचना सम्भव हो; और दो प्रतिरूप विकल्प या समानान्तर तभी हो सकते हैं जब दोनों में विषयवस्तु समान हो, दोनों के प्रश्न समान कठिनाई के हों और उनका रूप एक हो। दो प्रतिरूप बनाये जाने के बाद एक ही समूह पर कुछ समय के अन्तर से इन दोनों समानान्तर प्रतिरूपों को प्रशासित कर देते हैं। तदुपरान्त इन दोनों के प्राप्त फलांकों में सहसम्बन्ध ज्ञात करते हैं। यदि यह सहसम्बन्ध गुणांक काफी उच्च है तो परीक्षण विश्वसनीय समझा जाता है।

इस विधि की **परिसीमाएँ** ये हैं—

(१) इस प्रकार से विश्वसनीयता गुणांक ज्ञात करने में भी अभ्यास, स्थानान्तरण, स्मरण आदि का प्रभाव पड़ता है। अतः दो प्रतिरूपों के प्रशासन के बीच लगभग इतना समय होना चाहिए कि इन प्रभावों से बचा जा सके। लगभग दो से लेकर चार सप्ताह तक का समय आदर्श है।

(२) दो प्रतिरूप बनाते समय यह अत्यन्त कठिन काम है कि दोनों प्रतिरूपों में विषय-वस्तु एवं कठिनाई के स्तर को समान रखा जा सके।

३. अर्द्ध विच्छेद विधि (Split-half Reliability)—

इस विधि के अनुसार प्रथमतः परीक्षण को दो समानान्तर भागों में बाँट लेते हैं। तदनन्तर इन दोनों भागों को परीक्षार्थियों के एक ही समूह पर अलग-अलग प्रशासित करते हैं। इन दोनों अर्द्ध-परीक्षणों में इस प्रकार अलग अलग फलांक आ जाते हैं। इनके बीच सह-सम्बन्ध ज्ञात कर लिया जाता है। यह सहसम्बन्ध अर्द्ध-परीक्षण का सहसम्बन्ध हुआ। स्पीयरमैन-ब्राउन-सूत्र के अनुसार

इस अर्द्ध-परीक्षण के सहसम्बन्ध गुणांक से पूरे परीक्षण का गुणांक प्राप्त कर लेते हैं—

सूत्र है $r = \frac{२r^1}{१+r^1}$

जिसमें : r=पूरे परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक

r^1=अर्द्ध-परीक्षणों के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक

उदाहरण के लिए यदि r^1=·६०, तो $r = \frac{२\times·६}{१+·६} = \frac{१·२}{१·६}$=·७५

परीक्षण को दो समान भागों में बाँटने की अनेक विधियाँ हैं। इसमें सबसे अधिक प्रचलित विधि यह है कि सम (Odd) तथा विषम (Even) पदों को अलग-अलग कर लिया जाए, अर्थात् एक भाग में १, ३, ५, ७, ९ आदि क्रम वाले पद लिख लिए जाएँ तथा दूसरे भाग में २, ४, ६, ८, १०, १२ आदि क्रम वाले पद। एक अन्य विधि में प्रारम्भ के आधे पदों को एक भाग में तथा अन्त के आधे पदों को दूसरे भाग में लिख लेते हैं। यदि प्रश्न-पद कठिनाई के हिसाब से आरोही क्रम में लिखे हों तो सम-विषम विधि (Odd-Even Method) ही सर्वश्रेष्ठ है।

अर्द्ध-विच्छेद विधि उस परिस्थिति में उपयुक्त होती है जब परीक्षण की दो समानान्तर प्रतिरूपों की संरचना करना सम्भव न हो या जब परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि भी प्रयुक्त न की जा सके जैसा कि निष्पादन परीक्षण, व्यक्तित्व, अभिवृत्ति या रुचि परीक्षाओं में। प्रक्षेपण परीक्षणों में भी परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि का प्रयोग सम्भव नहीं है। अर्द्ध-विच्छेद विधि का मुख्य गुण यह है कि इसमें विश्वसनीयता की गणना के लिए सभी आवश्यक प्रदत्त एक ही अवसर पर प्राप्त हो जाते हैं और इस प्रकार दो अलग-अलग बार परीक्षण के प्रशासन में जो परिवर्तन होते हैं उनसे मुक्ति मिल जाती है।

इस विधि की निम्न **परिसीमाएँ** हैं—

(१) परीक्षण के प्रत्येक अर्द्ध-भाग का एक ही बार प्रशासन होता है। अतः दोनों अर्द्ध-भागों के फलांकों पर दैव-त्रुटियों (Chance Errors) का एक-सा प्रभाव पड़ता है।

(२) परीक्षण का अनेक विधियों से अर्द्ध-विच्छेद किया जा सकता है। और अलग-अलग विधि से अर्द्ध-विच्छेद किए जाने पर विश्वसनीयता गुणांक भी अलग-अलग आता है। इस प्रकार प्राप्त गुणांक एक अनन्य मूल्य (Unique Value) नहीं है।

(३) गति परीक्षणों में इस विधि का प्रयोग नहीं हो सकता।

परीक्षण की लम्बाई का विश्वसनीयता पर प्रभाव—

यदि किसी परीक्षण की लम्बाई बढ़ा दी जाए, तो यह अधिक प्रतिनिधिकारी हो जायेगा। इसका यह अर्थ है कि इसकी विश्वसनीयता बढ़ जाएगी, क्योंकि बड़े न्यादर्श पर आधारित निष्कर्ष छोटे न्यादर्श के निष्कर्षों की तुलना में अधिक विश्वास योग्य होते हैं। स्पीयरमैन-ब्राउन प्रोफेसी सूत्र से यह ज्ञात हो सकता है कि कितनी लम्बाई से विश्वसनीयता कितनी बढ़ती है। यह सूत्र इस प्रकार है—

$$r_n = \frac{nr^1}{१+(n-१)r^1}$$

जिसमें :

r_n=जिस परीक्षण में प्रश्नों की वृद्धि की गई है, उसका विश्वसनीयता गुणांक।

n=परीक्षण की लम्बाई को जितना बढ़ाया गया है, उतने गुना।

r^1=प्रश्नों को बढ़ाने से पहले परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक।

उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि किसी परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक ·८ है। अब इसके प्रश्नों की संख्या ५ गुने कर दी गई तो स्पीयरमैन सूत्र से प्राप्त किया गया विश्वसनीयता गुणांक होगा—

$$r_n = \frac{nr^1}{१+(n-१)r^1}; \text{ or } r_n = \frac{५ \times ·८}{१+(५-१)·८} = \frac{४·०}{१+३·२}$$

$$= \frac{४}{४·२} = ·९५$$

इस सूत्र के उपयोग से यह भी जाना जा सकता है कि कोई विशेष विश्वसनीयता गुणांक प्राप्त करने के लिए किसी परीक्षण के प्रश्नों की संख्या को कितने गुना बढ़ाना चाहिए। जैसे यदि किसी परीक्षण का वर्तमान गुणांक ·६ है और हम इसे ·७५ तक बढ़ाना चाहते हैं तो n निम्नलिखित विधि से निकालेंगे—

$$.७५ = \frac{n \times ·६}{१+(n-१) \times ·६} = \frac{n \times ·६}{(n \times ·६)+·४}$$

या $n=२$.

स्पीयरमैन पूर्वकथन सूत्र (Spearman-Brown Prophecy Formula) के प्रयोग करते समय कुछ सतर्कताएँ बरतना आवश्यक है। निस्संदेह इस सूत्र के प्रयोग से किसी भी सीमा तक परीक्षण की विश्वसनीयता बढ़ाई जा सकती है, पर इसका प्रयोग तभी उचित है जब परीक्षण में बढ़ाए गए पद सभी भांति परीक्षण के मौलिक पदों की भाँति हों—विषय-वस्तु एवं कठिनाई दोनों

दृष्टियों से। इसके अतिरिक्त गति परीक्षणों पर भी इस सूत्र का प्रयोग नहीं करना चाहिए। सूत्र में यह बात स्वयं मान्य है कि जब परीक्षण के प्रश्नों की संख्या बढ़ाई गई है तो परीक्षण की प्रकृति नहीं बदली गई है।

फिलहाल में ऐसे प्रयास किए गए हैं कि स्पीयरमैन-ब्राउन सूत्र के स्थान पर अन्य यथार्थ मापक प्रयुक्त हो सकें ताकि गणन-कार्य कम किया जा सके। इसका एक मुख्य कारण है स्पीयरमैन-ब्राउन सूत्र का यह मुख्य आधार होना कि दोनों अर्द्ध-परीक्षण सभी बातों में समान हों। अनेक स्थलों पर इस मान्यता की पूर्ति नहीं हो पाती। इस सूत्र के स्थान पर एक अन्य सूत्र निम्नलिखित है—

$$rtt = 2\left(1 - \frac{\sigma a^2 + \sigma b^2}{\sigma t^2}\right)$$

जिसमें :

rtt = सम्पूर्ण परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक

σt^2 = सम्पूर्ण परीक्षण के फलांकों का विचरण (Variance)[1]

σa^2 तथा σb^2 आधे परीक्षणों के फलांकों के विचरण।

४. **युक्तियुक्त पद-साम्य विधि** (Method of Rational Equivalence)—

इस विधि में प्रश्न-पदों के आपसी सहसम्बन्ध को ज्ञात कर उनमें पद-साम्य देखा जाता है। इसे कूडर तथा रिचार्डसन द्वारा प्रयुक्त निम्न सूत्र से ज्ञात करते हैं :—

$$r = \frac{n}{(n-१)} \times \left(\frac{\sigma२ - \Sigma PQ}{\sigma२}\right),$$

जिसमें :

r = सम्पूर्ण परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक।

n परीक्षण में प्रश्नों की संख्या।

σ = परीक्षण के फलांकों का प्रमाप-विचलन।

P = प्रत्येक प्रश्न-पद का सही उत्तर देने वाले परीक्षार्थियों का अनुपात।

Q (1-P) = प्रत्येक प्रश्न-पद का अशुद्ध उत्तर देने वाले परीक्षार्थियों का अनुपात।

उदाहरण के लिये यदि परीक्षण में ४० प्रश्न हैं, परीक्षार्थियों की संख्या ५० है, प्रमाप-विचलन १० है, और ΣPQ = १५, तब

१. **विचरण** (Variance) **प्रमाप-विचलन का वर्ग।**

$$r = \frac{४०}{(४०-१)} \times \left(\frac{१०^{२} - १५}{१०^{२}}\right) = \frac{४०}{३९} \times \frac{८५}{१००} = \frac{३४}{३९} = .८७$$

विश्वसनीयता गुणांक प्राप्त करने के लिए सर्वप्रथम परीक्षण का प्रशासन करके फलांक दे देते हैं। फिर प्रमाप-विचलन तथा प्रत्येक प्रश्न को कितने अनुपात में परीक्षार्थियों ने सही किया और कितनों ने गलत, यह ज्ञात करते हैं। सही × गलत का मान निकाल कर प्रत्येक प्रश्न का PQ पता लगाते हैं। सभी PQ का योग करके ΣPQ ज्ञात करते हैं, और फिर सूत्र का प्रयोग करते हैं।

कूडर-रिचार्डसन का एक अन्य सूत्र निम्नलिखित है, जिसे अनेक अवसरों पर प्रयुक्त करते हैं :—

$$r = \frac{n\sigma^{2} - M(N - M)}{\sigma^{2} - (n-1)}$$

इसमें सभी प्रतीकों का ऊपर दिए गए सूत्र के प्रतीकों के अनुसार ही मान है। M का अर्थ है, परीक्षण के फलांकों का मध्यमान।

इस विधि में कूडर-रिचार्डसन के सूत्रों द्वारा जो विश्वसनीयता गुणांक निकाला जाता है, उसकी निम्न **परिसीमाएँ** हैं :—

(१) सूत्र इस आधारभूत मान्यता पर निर्भर है कि परीक्षण के पद समान कठिनाई के हैं। पर व्यवहार में सब पदों का समान कठिनाई-स्तर का होना सम्भव नहीं है। कभी-कभी इस शर्त के पूरा न होने पर भी सूत्र से अच्छे निष्कर्ष उपलब्ध हुए हैं।

(२) अन्य विधियों से जो विश्वसनीयता गुणांक उपलब्ध हुए हैं, उनकी तुलना में इस विधि से प्राप्त गुणांक कुछ कम आते हैं।

गति-परीक्षणों की विश्वसनीयता (Reliability of Speed Tests)—

केवल समय-अवधि निश्चित कर देने से ही कोई गति-परीक्षण नहीं हो जाता। क्योंकि यदि सभी प्रयोज्य दिये हुए समय में कार्य कर लें तो कार्य करने की गति का कोई महत्व नहीं है और यदि कोई भी परीक्षार्थी समय के अन्तर्गत परीक्षण न दे पाए तो भी कार्य करने की गति का मापन नहीं होता। कोई परीक्षण तब गति-परीक्षण है जब एक बड़ी सीमा तक परीक्षण के फलांकों में व्यक्तिगत विभेद गति के कारण हो। यह ज्ञात करने के लिए कुछ सूत्र प्रयुक्त होते हैं।

कोई परीक्षण गति-परीक्षण है, यह निश्चय करने के बाद ही उसका विश्वसनीयता गुणांक निकालने की कौन सी विधि उपयुक्त होगी, यह निश्चय करना चाहिए। एक ही बार के प्रयास पर आधारित विधियाँ जैसे अर्द्ध-

विच्छेद विधि (Split-half Method) तथा युक्तियुक्त पद-साम्य विधि (Method of Rational Equivalence) गति-परीक्षणों की विश्वसनीयता निकालने के लिए अनुपयुक्त हैं, क्योंकि इनमें विश्वसनीयता अनावश्यक रूप से उच्च आएगी। उदाहरण-स्वरूप यदि परीक्षार्थी ने एक परीक्षण में ५० पद सही किये हैं—२५ सम तथा २५ विषम तो इनके मध्य सहसम्बन्ध +.१ आयेगा। इससे परीक्षण की विश्वसनीयता के बारे में कोई सूचना नहीं मिलती।

अतः परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि (Test-Retest Method) तथा समानान्तर प्रतिरूप विधि (Parallel Form Method) गति-परीक्षणों की विश्वसनीयता निकालने में अधिक उपयुक्त हैं। अर्द्ध-विच्छेद विधि का प्रयोग उस दशा में सम्भव है जब विच्छेदन (Splitting) पदों के आधार पर न करके समय के आधार पर किया जाए। अर्थात् एक अर्द्ध-परीक्षण का समय कुछ रखा जाये और दूसरे का कुछ और।

विश्वसनीयता के निर्धारक तत्व (Factors Affecting Reliability)—

किसी परीक्षण के विश्वसनीयता गुणांक को अनेक बातें प्रभावित करती हैं। इनका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है:—

१. **परीक्षण की लम्बाई** (Length of the test)—इसका विश्वसनीयता पर प्रभाव पड़ता है। कुछ परीक्षणों में सम्पूर्ण परीक्षण एवं उसके अनेक उप-परीक्षणों, सभी के फलांकों की गणना की जाती है और सम्पूर्ण परीक्षण तथा उपपरीक्षण, इन सबकी विश्वसनीयता भी अलग-अलग दी जाती है। सम्पूर्ण परीक्षण की विश्वसनीयता उपपरीक्षण की विश्वसनीयता से अधिक होती है क्योंकि लम्बाई के अधिक होने का अर्थ है अधिक पद होना जो अधिक प्रतिनिधिकारी होते हैं। स्पीयरमैन-ब्राउन सूत्र से किसी निश्चित लम्बाई के बढ़ाने से कितनी विश्वसनीयता बढ़ेगी, इसकी गणना की जाती है। इसका वर्णन पीछे किया जा चुका है।

२. **परीक्षित न्यादर्श में व्यक्तिगत-विभेद का प्रसार** (Range of Individual differences in the sample tested)—यदि परीक्षित न्यादर्श के सभी सदस्य किसी दिए हुए गुण की दृष्टि से एक समान हों, तो एक परिवर्त्तीय के आधार पर हम किसी अन्य परिवर्त्तीय या गुण में उनकी कार्यकुशलता के बारे में [illegible] पूर्वकथन नहीं कर सकते, क्योंकि इन दोनों परिवर्त्तियों के फलांकों में न्यून [illegible] (Low or insignificant correlation) होगा। यदि हम [illegible] के विद्यार्थियों पर दो अभियोग्यता परीक्षण

एक साथ प्रशासित करें, जैसे कि शाब्दिक समझ और गणितीय तर्क के परी-क्षण, और विद्यार्थियों का समूह एकजातीय (Homogeneous) हो, तो पता चलेगा कि इसके इन दो परीक्षणों में प्राप्त फलांकों में निम्न सहसम्बन्ध होगा। पर यदि यह समूह विविधजातीय (Heterogeneous) हो तो फलांकों की दो श्रेणियों में उच्च सहसम्बन्ध होगा। इसी प्रकार यदि एक परीक्षण ऐसे समूह में प्रयुक्त हो जिसमें अनेक कक्षाओं के विद्यार्थी सम्मिलित हों, और फिर ऐसे समूह में भी जिसमें एक ही कक्षा के विद्यार्थी सम्मिलित हों, तो प्रथम परिस्थिति में विश्वसनीयता गुणांक अधिक होगा, दूसरी में कम।

३. **परीक्षार्थियों का औसत योग्यता-स्तर** (Average ability level of the examinees)—अलग-अलग योग्यता-स्तर के परीक्षार्थियों पर परीक्षण के प्रशासन से पता चलता है कि अधिक योग्यता-स्तर के या अधिक अवस्था के व्यक्तियों पर प्रयुक्त परीक्षण की अधिक विश्वसनीयता होगी। कारण यह है कि कम अवस्था के परीक्षार्थियों में समझ की कमी होती है और वे अनुमान से काम लेते हैं।

४. **प्रशासन की परिस्थितियाँ एवं फलांक-गणना** (Testing conditions and scoring)—यदि सभी स्थानों पर प्रशासन की परिस्थितियाँ एक समान (Uniform) न हों तो फलांकों में भी अन्तर होगा। कक्षा के कमरे में परीक्षण करना एक बात है और सैक्रेटेरियट में परीक्षण करना और बात। परीक्षक की मनोवृत्ति, निर्देशों में अन्तर, अभ्यास के लिए दिए गये प्रश्नों की संख्या, प्रेरणा, मध्यान्तर, सभी बातें विश्वसनीयता को प्रभावित करेंगी। इसी प्रकार अंकगणना में की गई अशुद्धताएँ, गणना की प्रविधि हाथ से है, स्टे-न्सिल से, पन्च बोर्ड से या मशीन से—योग निकालने में की गई अशुद्धियाँ, इन सभी का विश्वसनीयता गुणांक की गणना पर प्रभाव पड़ेगा।

५. **अनुमान लगाना एवं संयोग का प्रभाव** (Guessing and chance errors)—अनुमान लगाने में कुछ परीक्षार्थी अधिक योग्य तथा भाग्यशील होते हैं, तथा दूसरे कम। पर अनुमान सूत्र संभावना-सिद्धान्त (Probability theory) को ध्यान में रखकर बनाया गया है। अतः यह सभी विद्यार्थियों के लिए एकसमान उपयोगी नहीं है। अनुमान की संभावना अधिक होने से परी-क्षण में अविश्वसनीयता आती है। फिर अनेक संयोग-प्रभाव भी परीक्षण की विश्वसनीयता कम करते हैं, जैसे ध्यान भंग, लिखते में पैन्सिल टूट जाना, घर जाने की चिन्ता, आदि।

६. **परीक्षण की संरचना** (Construction of the test) प्रश्नों का रूप, उनकी कठिनाई का स्तर, फलांक-गणना की वस्तुनिष्ठता, पदों की

अन्तर्निर्भरता, प्रश्नों की शब्द-रचना, प्रत्येक प्रश्न के विकल्प प्रत्युत्तरों की संख्या, सभी का विश्वसनीयता पर प्रभाव पड़ेगा। अधिक विकल्प प्रत्युत्तर होने से परीक्षण अधिक विश्वसनीय होगा।

वैधता

वैधता किसी भी परीक्षण का एक अत्यन्त आवश्यक गुण है, क्योंकि जब तक कोई परीक्षण वैध नहीं है यह उपयोगी नहीं हो सकता। ग्रीन, जोरगेन्सन तथा जरबैरिच[1] के अनुसार वैधता का अर्थ है वह कार्य-कुशलता जिससे कि कोई परीक्षण उस तथ्य का मापन करता है जिसके लिये वह बनाया गया है।

यदि परीक्षण इस उद्देश्य की पूर्ति न करे तो यह विद्यार्थियों के लिए अन्याय होगा। वैधता में यह बात सम्मिलित है कि परीक्षण जिन विद्यार्थियों के लिए बनाया जाय वह उनकी बौद्धिक परिपक्वता के अनुरूप हो। नवीं और दसवीं कक्षा के परीक्षार्थियों के लिए बनाया गया परीक्षण पाँचवीं तथा छटवीं कक्षा के विद्यार्थियों के अनुपयुक्त होगा। इस प्रकार वैधता एक अच्छे परीक्षण का विशिष्ट गुण है न कि सामान्य, क्योंकि एक परिस्थिति के लिए बनाया गया परीक्षण दूसरी परिस्थिति में अवैध होगा। किसी भी परीक्षण को समान्यत: वैध या अवैध नहीं कहा जा सकता।

चूँकि यह बिल्कुल अव्यावहारिक है कि हम सभी तथ्यों तथा घटनाओं का मापन कर सकें, मापन योग्य व्यवहार का कोई न्यादर्श लेना आवश्यक हो जाता है। जिस सीमा तक न्यादर्श को मापन करने वाला एक दिया हुआ उपकरण या परीक्षण उस न्यादर्श का वास्तव में मापन करता है इसे उसकी वैधता कहते हैं। और यह दो प्रकार से ज्ञात हो सकती है। तार्किक विधि से या सांख्यिकीय विधि से। किन्तु दोनों ही विधियों में वैधता के निर्धारण के लिए हमें किसी कसौटी का चुनाव करना पड़ता है। इसीलिए गिलीकसन (Gulliksen) ने वैधता की परिभाषा इस प्रकार दी है : It is "the correlation of the test with some criterion." अर्थात् वैधता का अर्थ है किसी कसौटी के साथ परीक्षण का सह-सम्बन्ध। किसी भी परीक्षण का वैधता गुणांक समय-समय पर और स्थान-स्थान पर बदल सकता है अत: यह परीक्षण का कोई निश्चित या एकात्मक गुण नहीं है। परीक्षण के जितने नये उपयोग निकलते हैं, उतने

1. Green, Jorgenson and Gerberich: *Measurement and Evaluation in the Secondary School,* Longmans, Green and Co. New York, 1957, p. 66.

ही नये वैधता गुणांक भी निर्धारित किये जा सकते हैं । इससे आ[illegible] है कि कोई वैधता गुणांक किसी निश्चित समय पर किसी निश्चित समूह पर मापन करने के अर्थों में ही उपयुक्त होता है । एनस्तासी के अनुसार, "The question of test validity concerns what the test measures and how well it does so."

कोई परीक्षण तभी वैध होगा जबकि वह विश्वसनीय होगा । यदि किसी परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक शून्य है तो यह किसी परीक्षण के साथ सह-सम्बन्धित नहीं होगा । फ्रीमैन के अनुसार, "The first necessary condition of a valid test is that it have an adequate degree of reliability. If the reliability coefficient of a test is zero, it cannot correlate with any thing. A test that correlates poorly even with itself cannot correlate with a measure of another variable."

अनेक प्रकार की वैधताओं का विवरण उपलब्ध है । पर अनेक मनोवैज्ञानिक लेखक एकमत नहीं हैं । **क्रॉनबैक** ने पूर्वकथनात्मक (Predictive), समवर्त्ती (Concurrent), विषयवस्तुगत (Content) तथा अन्वय (Construct) इन चार प्रकार की वैधताओं का वर्णन किया है । **ग्रीन**, जोरगेनसन तथा **जरबैरिच** ने पाठ्य-विषयात्मक(Curricular), सांख्यिकीय (Statistical), तर्कसंगत(Logical)वैधता की व्याख्या की है । **गुड** तथा **हाट** ने वैधता का चतुष्पदीय वर्गीकरण प्रस्तुत किया है—रूप या अनीक (Face) वैधता, निर्णायक (Jury-opinion), विरोधी समूह (Opposed Groups), स्वतन्त्र कसौटी (Independent Criterion) । **फ्रीमैन** ने चार प्रकार की वैधता का वर्णन किया है—संकार्य (Operational), कार्यात्मक (Functional), [illegible] (Factorial), तथा अनीक(Face)। **जोर्डन** ने आन्तरिक(Internal) तथा बाह्य (External)इन दो प्रकार की वैधताओं पर विस्तृत प्रकाश डाला है । **एनस्तासी** ने अनीक (Face), विषय वस्तुगत (Content), अवयवात्मक (Factorial) तथा अनुभवजन्य (Empirical) इन चार प्रकार की वैधताओं की व्याख्या की है । रॉस ने भी क्रानबैक की भाँति चतुष्पदीय वर्गीकरण पूर्वकथनात्मक (Predictive), समवर्त्ती (Concurrent or Status), विषयवस्तुगत (Content) तथा अन्वय (Congruent or Construct) पर बल दिया है ।

वैधता की इन किस्मों में समन्वय स्थापित करके एक स्पष्ट चित्र अंकित करना सरल कार्य नहीं है और विद्यार्थी के लिए भ्रमात्मक है । तथापि हम नीचे सुविधा के लिए एक सरल वर्गीकरण प्रस्तुत करेंगे । व्यावहारिक दृष्टि से यह उचित है ।
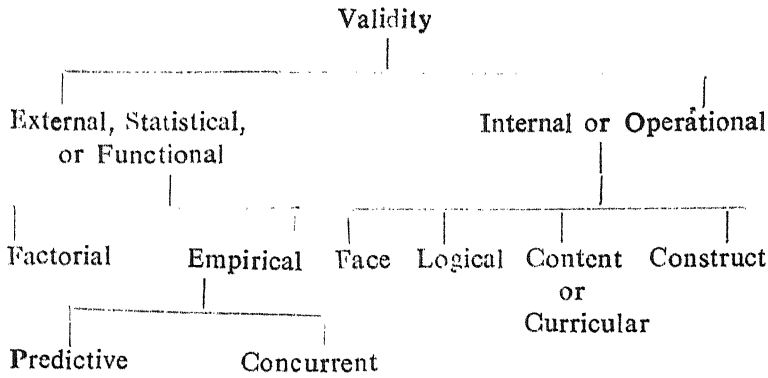
अब हम कुछ मुख्य वैधता-प्रकारों का वर्णन करेंगे और फिर संकार्य एवं कार्यात्मक (Operational and Functional) तथा आन्तरिक एवं वाह्य (Internal and External) वैधताओं के अन्तर को स्पष्ट करेंगे।

१. **विषय-वस्तु या पाठ्यक्रमात्मक वैधता** (Content or Curricular Validity)—

जब कोई परीक्षण पाठ्यक्रम के उद्देश्यों की पूर्ति करता है तो उसमें पाठ्यक्रमात्मक वैधता होती है। जैसे प्रारम्भिक स्कूल में पाठ्यक्रम का उद्देश्य है कि बालक कुछ आधारभूत बातें सीख लें। अतः परीक्षण का उद्देश्य भी इन आधारभूत सीखी हुई बातों का मापन करना होना चाहिए। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें महत्त्वपूर्ण हैं :—

(१) सम्पूर्ण पाठ्यक्रम में से प्रश्न होने चाहिए। कोई भी भाग छूटना नहीं चाहिए।

(२) परीक्षण विद्यार्थियों के स्तर के अनुकूल होना चाहिए। न स्तर से आगे होना चाहिए और न पीछे।

(३) जो विषय पाठ्यक्रम में सम्मिलित न हो, उस पर प्रश्न नहीं होने चाहिए।

(४) प्रश्नों की भाषा परीक्षार्थियों के स्तर के अनुकूल होनी चाहिए।

(५) पाठ्यक्रम के प्रत्येक भाग को उतना ही भार या महत्त्व देना चाहिए जितना कि आवश्यक हो। अधिक महत्वपूर्ण पाठ्यांशों से अधिक प्रश्न-पद होने चाहिए।

किसी परीक्षण की विषयवस्तु वैधता के निश्चयन के लिए विषयवस्तु-वश्लेषण करना आवश्यक है। इतिहास में इस प्रकार के विश्लेषण से पाठ्यक्रम को इन अंशों में बाँटा जा सकता है—सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, कारण-

प्रभाव, ऐतिहासिक जीवन-चरित्र, इत्यादि । वर्ण-विन्यास परीक्षण का उद्देश्य, यदि वह कर्मचारियों के लिए बनाया गया है, यह हो सकता है कि परीक्षण केवल कर्मचारियों के परीक्षण से ही सम्बन्धित हो और वे शब्द ही सम्मिलित किए जा सकते हैं, जो कर्मचारियों के उपयोग में आते हों । पर बोलचाल की भाषा सीखने वाले विद्यार्थियों के वर्ण-विन्यास परीक्षण में समाचार-पत्रों की भाषा के शब्द होने चाहिए । किसी निश्चित उद्योग में प्रवीणता का मापन करने वाले परीक्षण की संरचना करने से पहले उसका कार्य-विश्लेषण (Job Analysis) करना आवश्यक है । परीक्षण-संरचना में अनावश्यक तत्व भी सम्मिलित नहीं करने चाहिए, जैसे गणित में शिक्षण के प्रभाव का मापन करने वाले परीक्षण में फलांक परीक्षार्थी की शाब्दिक निर्देशों को समझने की योग्यता से प्रभावित नहीं होने चाहिए ।

विषयवस्तु वैधता मुख्यत: निष्पत्ति परीक्षणों (Achievement Tests) से सम्बन्धित है, न कि अभियोग्यता या व्यक्तित्व परीक्षणों से, क्योंकि ये परीक्षण पूर्व शिक्षण या किसी निश्चित पाठ्यक्रम पर आधारित नहीं होते ।

२. रूप या अनीक वैधता (Face Validity)—

जब कोई परीक्षण उसी तथ्य का मापन करता हुआ **प्रतीत होता है**, जिसके लिए वह बनाया गया है, तो कहा जाता है कि उसमें अनीक वैधता है । जैसे सेना के लिए बनाए गए परीक्षणों में प्रश्नों की भाषा एवं रचना को देखकर यह ज्ञात हो सकता है कि ये सेना की वस्तुस्थिति से सम्बन्धित हैं या नहीं । गणित के प्रश्न सेना के लिए ऐसे होने चाहिए जिनमें वायुयान की गति, राकेट, आर्मी टेन्ट आदि का जिक्र हो, न कि बाजार में वस्तुओं के भाव का, या बनिए के कम तोलने और डण्डी मारने का, क्योंकि सैनिक को कम तोलने वाले बनिए से अधिक वास्ता नहीं पड़ता । प्रौढ़ों के लिए बनाए गए किसी परीक्षण में इसी प्रकार ऐसे प्रश्न नहीं होने चाहिए—"तुम्हारे हाथ में कितनी अंगुलियाँ हैं ?" क्योंकि यद्यपि बालक ऐसे प्रश्नों में रुचि लेगा, प्रौढ़ इनमें नीरसता का अनुभव करेगा । औद्योगिक एवं सैन्य कर्मचारियों की नियुक्ति के लिए बनाए गए परीक्षणों में सदैव अनीक वैधता का ध्यान रखा जाता है । प्रश्न-पदों को परीक्षण-समूह की आवश्यकता के अनुरूप बनाया जाता है । जल-सेना में नियुक्ति के उद्देश्य से बनाए गए परीक्षण में जल-सेना में प्रयुक्त शब्द-जंजाल होना चाहिए, आदि ।

इस प्रकार अनीक वैधता का सम्बन्ध परीक्षण वास्तव में किस उद्देश्य के लिए बनाया गया है, इससे नहीं है, वरन् वह किस तथ्य का मापन करते हुए

दीखता है, इस बात से है। मोसियर (Mosier) ने चार प्रकार की अनीक वैधता का उल्लेख किया है–(१) मान्यता से (By Assumption)—अर्थात् यह मान लिया जाए कि कोई दिया गया परीक्षण किसी निश्चित गुण या योग्यता का मापन करते हुए दिखाई देता है। (२) परिभाषा से (By Definition)—अर्थात् यदि अध्यापकों के किसी विशिष्ट गुण के प्रति विद्यार्थियों की अभिवृत्ति को मापना है तो 'परिभाषा' से उस उद्देश्य के लिए बनाया गया 'निर्णय मानदण्ड' (Rating Scale) वैध होगा। (३) देखकर (By Appearance)—अर्थात् देखने से परीक्षण उपयुक्त मालूम पड़े। (४) परिकल्पना से (By Hypothesis)—अर्थात् परीक्षण की संरचना करने वाले को यह विश्वास होना चाहिए कि अपूर्ण निष्कर्षों पर भविष्य में भी अनुसधान की संभावना है।

३. **तर्क-संगत वैधता** (Logical Validity)—

जब प्रश्न पद उन्हीं संबोधों (Concepts) या इकाइयों (Units) से सम्बन्धित हों जिन्हें मापन करने का परीक्षण का उद्देश्य हो, तो उसमें तर्क-संगत वैधता होती है। उदाहरण के लिए यदि गणित परीक्षण में उद्देश्य इकाइयों के संबोध का मापन करना है, न कि समस्या का हल करने की सामर्थ्य का, तो प्रश्न भी उसी प्रकार बनाने चाहिए जैसे, "यदि कमरे की लम्बाई, चौड़ाई तथा ऊँचाई १४ फीट, १० फीट, तथा १२ फीट हो, तो उसका आयतन '—' घन फीट होगा।" इस प्रश्न से विद्यार्थी की समस्या को हल करने की योग्यता का पता चलता है क्योंकि इकाई 'घन-फीट' तो दी हुई है। अतः इकाई का मापन करने के लिए निम्न प्रकार से प्रश्न रचना होनी चाहिए : "यदि किसी कमरे की लम्बाई, चौड़ाई तथा ऊँचाई क्रमशः १४ फीट, १० फीट तथा १२ फीट हो तो इसका आयतन १६८० '—' होगा।"

४. **अन्वय वैधता** (Construct Validity)—

जब एक परीक्षण निर्माता यह जानना चाहता है कि किसी फलांक का क्या मनोवैज्ञानिक अर्थ है या किस कारण एक व्यक्ति कोई विशिष्ट फलांक प्राप्त करता है, तो उसका अर्थ यह जानना होता है कि परीक्षण में योग्यता की व्याख्या किन संबोधों (Concepts) के आधार पर की जा सकती है। इस प्रकार के सैद्धान्तिक संबोध को अन्वय (Construct) कहते हैं और इस प्रकार की व्याख्या के वैधकरण को अन्वय वैधकरण कहते हैं। यह ज्ञात करने के लिए कि कोई संबोध या अन्वय परीक्षण पर लागू होता है या उससे सम्बन्ध रखता है या नहीं, परीक्षण के बारे में उपकल्पनाएँ करनी पड़ती हैं, और उनकी प्रयोगात्मक विधि से पुष्टि करनी पड़ती है। उदाहरण के लिए 'चिन्ता' की

प्रवृत्ति का मापन करने से पहले परीक्षण निर्माता को अनेक सिद्धान्त तय करने पड़ते हैं जैसे मनोदौर्बल्य से पीड़ित व्यक्ति अधिक चिन्ताशील होते हैं, कुछ दवाओं के प्रयोग से चिन्ता प्रवृत्ति कम होती है, चिन्ताशील व्यक्तियों की महत्वाकांक्षा का स्तर काफी उच्च होता है, आदि।

अनेक परीक्षणों की अन्वय-वैधता अभी तक ज्ञात नहीं हुई है, क्योंकि काफी लम्बी अवधि में जाकर परीक्षण सम्बन्धी सभी सिद्धान्तों एवं प्रयोगों के बारे में तथ्य एकत्र हो पाते हैं। इसीलिए अभी तक अत्यन्त ख्याति प्राप्त परीक्षणों की सैद्धान्तिक विवेचना भी पूर्ण नहीं हो पाई है। अनेक परीक्षणों की विवरण पुस्तिका में उन मुख्य उपयोगों का उल्लेख रहता है जिनके सम्बन्ध में परीक्षण की वैधता ज्ञात की जा सकी है।

पूर्वकथनात्मक वैधता एकबारगी ही ज्ञात हो सकती है, पर अन्वय वैधता अवलोकन, तर्क एवं कल्पना के आश्रय से एक लम्बे अरसे के बाद पता चलती है। अनेक बार नये अनुभवों के आधार पर पहले से सोचे गए सिद्धान्तों में हेर-फेर करना पड़ता है। वास्तव में अन्वय-वैधकरण की भी वही विधि है, जो वैज्ञानिक सिद्धान्तों के विकास की। क्रॉनबैक ने अन्वय वैधकरण के तीन सोपान बताए हैं—

(अ) कल्पना या अवलोकन के आधार पर: उन प्रत्ययों या अन्वयों के बारे में सुझाव देना, जिन पर परीक्षण में योग्यता निर्भर है।
(ब) ऊपर के आधार पर परीक्षण योग्य उपकल्पना ज्ञात करना।
(स) इस परिकल्पना की परीक्षा या पुष्टीकरण करने के लिए अध्ययन एवं प्रयोग करना।

५. **अवयव-वैधता** (Factorial Validity)—

किसी परीक्षण की अवयव-वैधता का अर्थ है उस परीक्षण तथा अनेक परीक्षणों के समूह या अन्य व्यवहार के समान अवयवों में सह-सम्बन्ध। एना-स्तासी ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है—"The factorial validity of a test is the correlation between that test and the factor common to a group of tests or other measures of behaviour."[1] यह विधि अवयव-विश्लेषण पर आधारित है। अवयव-विश्लेषण (Factor Analysis) में अनेक परीक्षणों में 'अन्तर सहसम्बन्ध' (Inter-correlations) ज्ञात किए जाते हैं और इस प्रकार इस परीक्षण के मुख्य गुणों, तत्वों या घटकों को ज्ञात

1. Anastasi, Anne : *Psychological Testing*, Macmillan Co., 1957, p. 123.

कर लिया जाता है। तत्पश्चात् प्रत्येक अवयव से परीक्षण का सहसम्बन्ध ज्ञात कर लेते हैं। यह सहसम्बन्ध ही परीक्षण की अवयव वैधता है। इसे अवयव उद्भार (Factor Loading) भी कहते हैं, क्योंकि यह उस सीमा का मापन करता है जहाँ तक कोई परीक्षण किसी अवयव से उद्भरित (Loaded) हो। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों में अवयव-विश्लेषण का मुख्य लक्ष्य है मनोवैज्ञानिक लक्षणों (Traits) की पहचान। यदि किसी शब्द-परिग्रहण परीक्षण (Verbal comprehension test) की अवयव-वैधता ·६६ है तो इसका अर्थ यह है कि इस परीक्षण का किसी अध्ययन में प्राप्त शब्द-परिग्रहण अवयव से ·६६ सहसम्बन्ध है। (अनैस्तासी)।

गिलफोर्ड के अनुसार अवयव वैधता कौन सा परीक्षण, क्या मापन करता है, इसका स्पष्टतम संकेत देती है, अतः इसे अन्य प्रकार की वैधताओं की अपेक्षा अधिक महत्व देना चाहिए। उनका कहना है कि सामान्यतया परीक्षण का जिस तथ्य से सहसम्बन्ध हो, वह उसी हेतु वैध है। परीक्षण के फलांक कसौटी निर्देशांकों से अधिक यथार्थ मापन प्रस्तुत करते हैं, अतः परीक्षण फलांकों से वैधता का अधिक सन्तोषजनक अनुमान लग सकता है।

अनैस्तासी ने अवयव विधि की अनेक परिसीमाओं की ओर संकेत किया है--

(१) अभी बहुत कम विषयों या प्रशिक्षण क्षेत्रों का अवयव विधि से विश्लेषण किया गया है। अतः तथ्यों के अभाव में अवयव वैधता निकालना कठिन है, और विश्वास योग्य भी नहीं है।

(२) इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि किसी परीक्षण समूह में किसी दिशा में पूर्वकथन के लिए सभी महत्वपूर्ण अवयव हैं।

(३) इस बात का भी कोई वस्तुगत प्रमाण नहीं है कि किन्हीं निश्चित अवयवों में उच्च वैधता होने पर, वे परीक्षण किसी विशिष्ट तथ्य का पूर्वकथन करेंगे। कुछ परीक्षणों की विवरण-पुस्तिकाओं में ऐसे व्यवसायों का उल्लेख मिलता है जिनमें शाब्दिक परिग्रहण (Verbal comprehension), वरिम मनसेक्षण (Spatial visualisation) आदि की आवश्यकता पड़ती है, पर इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि इन अवयवों में प्रखर व्यक्ति इन व्यवसायों में आगे बढ़ जाते हैं।

(४) विभिन्न अनुसंधानकर्त्ताओं ने जिन अवयवों का नामकरण किया है, उनमें तादात्म्य होना आवश्यक नहीं है।

६. समवर्त्ती वैधता (Concurrent Validity)—

किसी परीक्षण में समवर्त्ती वैधता तब होती है, जब वह वर्तमान योग्यता का मूल्यांकन करे। समवर्त्ती वैधता ज्ञात करने के लिए प्रथमतः परीक्षण प्रशासित करके फलांक प्राप्त कर लेते हैं, तत्पश्चात् किसी अन्य विधि या परीक्षण से योग्यता की जाँच करके फलांक प्राप्त कर लेते हैं; तत्पश्चात् इन दोनों में सहसम्बन्ध ज्ञात कर लेते हैं। उदाहरण के लिए किसी सामूहिक मानसिक परीक्षण की तुलना व्यक्तिगत मानसिक परीक्षण से की जा सकती है। नये परीक्षणों की समवर्त्ती वैधता पूर्व स्थापित ख्यातिप्राप्त परीक्षणों से सहसम्बन्ध निकाल कर की जा सकती है। इसीलिए अनेक नए बुद्धि-परीक्षणों को स्टैनफोर्ड-बिने या वैश्लर बुद्धि-परीक्षण से सहसम्बन्धित किया गया है। जब पूर्व स्थापित परीक्षणों से सहसम्बन्ध निकाला जाए तो यह देख लेना चाहिए कि उनमें स्वयं उच्च वैधता हो।

७. पूर्वकथनात्मक वैधता (Predictive Validity)—

किसी परीक्षण में पूर्वकथानात्मक वैधता तब होती है, जब इसके फलांक किसी भावी योग्यता या सामर्थ्य के बारे में पूर्वकथन करें। पूर्वकथनात्मक वैधता ज्ञात करने के लिए, सर्वप्रथम परीक्षण का प्रशासन करके फलांक प्राप्त कर लेते हैं। कुछ समय पश्चात् किसी कसौटी (Criterion) के आधार पर हम उसी पूर्वपरीक्षित समूह का मूल्यांकन करते हैं और फलांक लिख लेते हैं। इन दोनों फलांकों की श्रेणियों में सहसम्बन्ध ज्ञात कर लिया जाता है। जैसे प्री-मैडिकल परीक्षा (Pre-medical Test) में प्राप्त फलांकों को विद्यार्थियों के बाद की कक्षाओं में प्राप्त फलांकों से एवं विक्रेता या लिपिक अभियोग्यता परीक्षणों के फलांकों को भविष्य में विक्रय की मात्रा या लिपिक योग्यता से सहसम्बन्धित किया जा सकता है। पूर्वकथनात्मक वैधता अभियोग्यता परीक्षणों में व्यावसायिक चुनाव सम्बन्धी तथा वर्गीकरण परीक्षणों में अत्यन्त आवश्यक है।

एक उदाहरण लीजिए; मान लो एक साइकिल पार्टस् का व्यापार करने वाली कम्पनी कुछ योग्य विक्रेताओं (Salesmen) की नियुक्ति करना चाहती है। कम्पनी के अधिकारियों की इस बात में रुचि है कि ये व्यक्ति नियुक्त हो जाने के बाद अधिकतम विक्रय करें। कम्पनी एक विक्रेता अभियोग्यता परीक्षण (Salesman Aptitude Test) में प्राप्त फलांकों के आधार पर नियुक्ति करती है। एक वर्ष या छः महीने के बाद उनकी विक्रय मात्रा के आधार पर इन नियुक्त किए हुए व्यक्तियों का अनुस्थिति क्रम ज्ञात कर लेते

हैं। परीक्षण के फलांकों के साथ अब इनका सहसम्बन्ध ज्ञात कर लेते हैं। यदि सहसम्बन्ध उच्च है तो परीक्षण में पूर्वकथनात्मक वैधता है।

आन्तरिक तथा बाह्य वैधता[1]—

जोर्डन के अनुसार **निष्पति परीक्षणों** में **आन्तरिक वैधता** ज्ञात करने के लिए यह देखना चाहिए कि पद किस प्रकार संकलित एवं व्यवस्थित हैं, वे कितने स्पष्ट हैं, वे कहाँ तक पाठ्यक्रम पर आधारित हैं, अनुभवी व्यक्तियों का उनके बारे में क्या निर्णय है, उनकी सामाजिक उपयोगिता क्या है और उनका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है या नहीं। **बुद्धि-परीक्षणों** में प्रश्न ऐसे होने चाहिए जो सामान्य सांस्कृतिक परम्परा के अनुकूल हों और आयु बढ़ने के साथ-साथ अधिकाधिक परीक्षार्थी उनमें सफल हो सकें। **अभियोग्यता परीक्षणों** में कृत्य विश्लेषण (Job Analysis) करना आवश्यक है।

बाह्य वैधता स्थापित करने के लिए **निष्पत्ति परीक्षणों** को अध्यापकों द्वारा दिए गए अंक या वर्गक्रम तथा बुद्धि-परीक्षणों के फलांकों की कसौटी पर कसना चाहिए। **बुद्धि परीक्षणों** का स्कूल अंक, व्यक्तिगत परीक्षण आदि एवं **अभियोग्यता परीक्षणों** का किसी वास्तविक वस्तुस्थिति या कृत्य में सफलता की कसौटी के साथ सहसम्बन्ध निकालना चाहिए।

कसौटी (Criterion)—

एक उच्च वैधता गुणांक किसी सीमा तक उस कसौटी पर निर्भर है जिसे आधार मानकर परीक्षण का वैधकरण किया गया हो। जब कोई कम्पनी साइकिल पार्ट्स की बिक्री बढ़ाने के लिए विक्रेताओं की नियुक्ति करती है तो विक्रेता की सफलता का मापन "वर्ष भर की बिक्री की मात्रा" से किया जाएगा। सफलता का यह निर्देशांक कसौटी है। इसी प्रकार जब किसी परीक्षण की वैधता ज्ञात करने के लिए किसी अन्य पूर्वस्थापित या ख्यातिप्राप्त परीक्षण से उसका सहसम्बन्ध ज्ञात किया जाता है तो यह अन्य परीक्षण एक कसौटी है। पर कसौटी (Criterion) का चुनाव इतना सरल कार्य नहीं है। यदि कम्पनी अनेक विक्रेताओं की नियुक्ति करे तो उनको अलग-अलग क्षेत्र दिए जायेंगे। कुछ को बहतर क्षेत्र दिए जा सकते हैं। अतः वे उतनी विक्रय योग्यता न होने पर भी अधिक बिक्री न कर पायेंगे और बिक्री की मात्रा ही विक्रेता की योग्यता की कसौटी नहीं रहेगी।

---

1. Jordan : *Measurement in Education.*, McGraw-Hill Book Co., New York, 1953, pp. 15-19.

कुछ विभिन्न प्रकार की कसौटियाँ जिनका निष्पत्ति, बुद्धि, व्यक्तित्व, अभियोग्यता तथा अन्य प्रकार के परीक्षणों के वैधकरणों में उपयोग हुआ है, निम्नलिखित हैं —

(१) **आयु-भेद** (Age Differentiation)—यदि आयु के बढ़ने के साथ-साथ परीक्षण के फलांकों में भी प्रगतिशील बढ़ोतरी हो, तो परीक्षण वैध होता है। मुख्यतः बुद्धि-परीक्षणों में इस प्रकार की कसौटी का उपयोग होता है, जबकि व्यक्तित्व परीक्षणों में ऐसी कसौटी व्यर्थ है। यह कसौटी किसी दी हुई सांस्कृतिक परम्परा के दायरे में ही उपयोगी है, क्योंकि विभिन्न संस्कृतियाँ विभिन्न आयु में अलग-अलग प्रकार का व्यवहार अभिप्रेरित करती हैं। अतः यह कसौटी सांस्कृतिक प्रभावों से मुक्त नहीं है।

(२) **शैक्षिक उपलब्धि** (Academic Achievement)—बुद्धि-परीक्षणों के वैधकरण में इसका व्यापक उपयोग होता है। शैक्षिक उपलब्धियों में स्कूल की कक्षाओं में प्रगति, निष्पत्ति परीक्षणों में प्राप्त फलांक, अध्यापकों द्वारा किए गए निर्णय आदि सम्मिलित हैं। यह आशा की जाती है कि अधिक बुद्धिशील व्यक्ति सापेक्षतया लम्बी अवधि तक अपनी शिक्षा चालू रखेंगे, पर सदैव ही ऐसा नहीं होता।

(३) **विशिष्ट प्रशिक्षण में निष्पादन** (Performance in Specialized Training)—मुख्यतः अभियोग्यता परीक्षणों में इस प्रकार की कसौटी का उपयोग है। उदाहरणतः यान्त्रिक अभियोग्यता परीक्षणों को औद्योगिक प्रशिक्षण में उपलब्धि के साथ सहसम्बन्धित किया जा सकता है। संगीत या कला-अभियोग्यता परीक्षणों को संगीत या कला के स्कूल में योग्यता की कसौटी पर कसा जा सकता है। वायुसेना के वायुचालक नियुक्ति परीक्षणों (Air Force Pilot Selection Tests) का वायुचालन प्रशिक्षण में योग्यता के साथ वैधकरण किया जा सकता है।

(४) **वास्तविक कृत्य में निष्पादन** (Performance on the Job)—अभियोग्यता परीक्षणों में वास्तविक कृत्य का लेखा एक अच्छी कसौटी है। आर० एल० थॉर्नडाइक के अनुसार ये लेखे दो प्रकार के हो सकते हैं—(अ) व्यवहार के सीमित क्षेत्र में निष्पादन का मापन जैसे कार्य का न्यादर्श (Work sample)। (ब) सामान्य मूल्यांकन, जो कर्मचारी के कृत्य में निष्पादन के समस्त लेखे पर निर्भर है।

(५) **वर्गक्रम** (Ratings)—इनमें स्कूल के अध्यापकों, विशेषित प्रशिक्षणों के अनुदेशकों (Instructors), कृत्य-पर्यवेक्षकों (Job supervisors), सैन्य अफसरों, साथियों एवं सहपाठियों द्वारा किए गए वर्ग क्रमांकन सम्मिलित हैं।

इनमें विभिन्न लक्षणों के सम्बन्ध में निरीक्षक या अवलोकन करने वाले का व्यक्तिगत निर्णय रहता है। मुख्यतया व्यक्तित्व परीक्षणों में, पर सामान्यतया सभी प्रकार के परीक्षणों के वैधकरण में वर्गक्रमों का कसौटी के रूप में उपयोग हुआ है। पर वस्तुनिष्ठ बनाने के लिए यह आवश्यक है कि वर्गक्रम प्रशिक्षित निरीक्षकों द्वारा किया जाए, और यदि सम्भव हो सके तो एक से अधिक व्यक्तियों द्वारा। यदि सुसंरचित वर्गक्रम मानदण्डों (Rating Scales) का प्रयोग किया जाए तो इनकी यथार्थता बढ़ाई जा सकती है।

(६) **व्यतिरेक समूह** (Contrasted Groups)—एक समूह पर लागू करने के बाद उसी परीक्षण को किसी व्यतिरेक समूह पर लागू किया जा सकता है और इन दोनों प्रशासनों से प्राप्त फलांकों में सह-सम्बन्ध निकाल कर परीक्षण की वैधता मालूम की जाती है। उदाहरण के लिए किसी बुद्धि-परीक्षण के वैधकरण में मन्द बुद्धि बालकों पर प्राप्त फलांकों की तुलना उसी आयु के स्कूल जाने वाले बालकों के फलांकों के साथ की जा सकती है। संगीत अभियोगिता परीक्षण के फलांकों की तुलना किसी संगीत विद्यालय में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के फलांकों से की जा सकती है। और इस प्रकार का परीक्षण वैध हो सकता है। यह विधि व्यक्तित्व परीक्षणों में अधिक उपयुक्त है, जैसे सामाजिक लक्षणों का मापन करने वाले किसी परीक्षण के वैधकरण में विक्रेताओं के परीक्षण-फलांकों की तुलना क्लर्कों के फलांकों से की जा सकती है। ऐसे विद्यार्थियों की तुलना जिन्होंने पाठ्यक्रम के अलावा स्कूल की अन्य कार्यवाहियों में भाग लिया है, उन विद्यार्थियों से की जा सकती है जिन्होंने ऐसे कार्यक्रमों में भाग न लिया हो।

(७) **अन्य परीक्षणों से सहसम्बन्ध** (Correlation with other Tests)—किसी नये परीक्षण का पूर्वस्थापित परीक्षणों से सहसम्बन्ध ज्ञात करके भी वैधकरण किया जाता है, जैसे एक पत्र-पैन्सिल परीक्षण (Paper and Pencil Test) का वैधकरण एक अधिक विस्तृत एवं समय व्यय करने वाले निष्पादन परीक्षण (Performance Test) से किया जा सकता है और सामूहिक परीक्षण का व्यक्तिगत परीक्षण को आधार मानकर। जब नये परीक्षण का किसी पूर्वस्थापित व्याख्यात परीक्षण से सहसम्बन्ध निकाला जाये तो वास्तव में यह वैधता गुणांक नहीं है, वरन् सहसम्बन्ध गुणांक है। नया परीक्षण तब वैध होगा, जब यह सहसम्बन्ध काफी उच्च हो, पर बहुत अधिक उच्च नहीं, क्योंकि उस परिस्थिति में इसका यह अर्थ होगा कि नये परीक्षण की संरचना की कोई आवश्यकता न थी। पूर्वस्थापित परीक्षण से

सहसम्बन्ध यह बताता है कि नया परीक्षण असम्बन्धित अवयवों के प्रभाव से मुक्त है।

(८) **आन्तरिक संगति विधि** (Internal Consistency Method)—इस विधि में स्वयं परीक्षण के सम्पूर्ण फलांक को कसौटी के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। सम्पूर्ण समूह के अधिक अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों की तुलना निम्न अंक वाले विद्यार्थियों से की जाती है। और इस आधार पर पद-विश्लेषण (Item-Analysis) करके अनुपयुक्त पदों को निकाल दिया जाता है। पर वास्तव में इस प्रकार वैधता का निर्देशांक प्राप्त नहीं होता, वरन् एकरूपता (Homogeniety) का। एकरूपता से फलांकों की अस्पष्टता दूर हो जाती है। अतः किसी भी परीक्षण में यह अत्यन्त जरूरी है।

आर०एल० **थार्नडाइक** ने सभी प्रकार की कसौटियों को तीन मुख्य वर्गों में बाँटा है: (अ) तात्कालिक (Immediate), (ब) अन्तःवर्ती (Intermediate), (स) अन्तिम (Ultimate)।

(अ) **तात्कालिक**—जैसे, किसी विशिष्ट अभियोग्यता परीक्षण के वैधकरण में किसी प्रशिक्षण में प्राप्त अंकों को कसौटी मानना।

(ब) **अन्तवर्ती**—जैसे, पूरे प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में प्राप्त औसत अंक।

(स) **अन्तिम**—जैसे, किसी दिए हुए कृत्य (Job) में सफलता।

विभिन्न प्रकार के परीक्षणों के लिए जिन कसौटियों को प्रायः प्रयुक्त किया जाता है, वे निम्नलिखित हैं—

बुद्धि-परीक्षण—

१. विद्यालय में प्राप्त अंक; विभिन्न विषयों में प्राप्त अंक।
२. परीक्षार्थी की योग्यता के बारे में अध्यापक का निर्णय।
३. अनेक वर्षों में स्कूल में सामान्य प्रगति।
४. स्कूल की कितनी कक्षाएँ पास कीं; सम्पूर्ण शैक्षिक उपलब्धि।
५. कालक्रमागत आयु (वर्षायु)।
६. पूर्व-स्थापित ख्याति-प्राप्त परीक्षणों से सहसम्बन्ध।
७. कृत्य में सफलता।

अभियोग्यता परीक्षण—

१. प्रशिक्षण चर्या (Course of training) में प्राप्त फलांक।
२. वास्तविक कृत्य में सफलता। इसके दो मापन हैं—
   (अ) पर्यवेक्षकों द्वारा वर्गक्रम
   (ब) उत्पादन का मूल्यांकन

निष्पत्ति परीक्षण—

१. स्कूल में प्राप्त अङ्क ।

२. अध्यापकों द्वारा निर्णय ।

व्यक्तित्व परीक्षण—

१. परीक्षार्थियों का वास्तविक व्यवहार ।

२. औपचारिक निदान ।

परीक्षण की वैधता को प्रभावित करने वाले तत्त्व (Factors influencing the Validity of Test)

(१) **सांस्कृतिक प्रभाव** (Cultural influences)—चूँकि सामाजिक-आर्थिक स्तर, वर्ग-रचना, शैक्षिक विभेदों एवं इस प्रकार की अन्य बातों का बुद्धि एवं अभियोग्यता पर प्रभाव पड़ता है, अतः एक सांस्कृतिक परिस्थिति में बना परीक्षण दूसरी परिस्थिति में उपयुक्त नहीं होता । कारण यह है कि प्रश्न-पद सांस्कृतिक अनुभव से उद्भारित हो जाते हैं ।

(२) **प्रतिक्रिया प्रवृत्ति** (Response Sets)—क्रॉनबैक के अनुसार प्रतिक्रिया प्रवृत्तियाँ जैसे गति न कि शुद्धता से कार्य करने की प्रवृत्ति, निश्चय न होने पर अनुमान लगाना आदि का परीक्षणों विशेषकर योग्यता, व्यक्तित्व, अभिवृत्ति एवं रुचि परीक्षणों पर प्रभाव पड़ता है । जब प्रश्न-पद अधिक कठिन या अस्पष्ट हो जाते हैं तो प्रतिक्रिया प्रवृत्ति का प्रभाव भी बढ़ता है और इस प्रकार की प्रवृत्ति से अनुभवजन्य वैधता कम होती है तथा फलांकों में व्यक्तिगत विभेद का प्रसार भी ।

(३) **वैधता के स्थान पर विश्वसनीयता में बढ़ोतरी** (Increase in reliability at the cost of Validity)—इन प्रश्न-पदों की संख्या बढ़ने से परीक्षण की विश्वसनीयता बढ़ेगी, पर ऐसा करने में अनेक ऐसे प्रश्न सम्मिलित हो सकते हैं, जिन्हें परीक्षार्थियों ने याद कर लिया हो । इससे वैधता कम हो सकती है ।

(४) **कठिन या कम स्पष्ट निदेश** (Difficulty or lack of clarity in Directions)—यदि निदेश स्पष्ट न हों, तो परीक्षार्थी जो परीक्षण के निर्माण करने वाले का उद्देश्य है, उसके अलावा कुछ और समझ सकते हैं । इससे वैधता कम होती है ।

(५) **शुद्धता पर आग्रह** (Insisting on Accuracy)—लिपिक योग्यता के कुछ परीक्षणों में अच्छे फलांक गति पर निर्भर करते हैं, पर परीक्षण के निर्माता शुद्धता पर इतना अधिक बल देते हैं कि परीक्षार्थी परीक्षण में अधिक प्रगति नहीं कर सकता । अतः गति के मापन में परीक्षण अवैध हो जाता है ।

(६) **वर्गक्रम में अनुचित वर्ग** (Inappropriate categories on Rating)[1]–कुछ परीक्षणों, जैसे स्ट्रांग वोकेशनल इन्टेरेस्ट ब्लैंक में तीन विकल्प—पसन्द, उदासीन, नापसन्द (L. I. D.)—प्रस्तुत किये जाते हैं। पर कभी-कभी परीक्षार्थी 'पसन्द' या 'नापसन्द' के सम्बन्ध में उचित निर्णय नहीं कर पाता। अतः 'उदासीन' वर्ग में अपने उत्तर दे देता है। इससे भी परीक्षण अवैध हो जाता है।

एक उपयुक्त कसौटी की विशेषताएँ (Qualities of a Criterion Measure)—

थार्नडाइक तथा हेगिन[1] के अनुसार एक अच्छी कसौटी में निम्न गुण होने चाहिए—

(१) **सम्बद्धता** (Relevence)—एक कसौटी तब ही सम्बन्धित होती है जब कसौटी पर फलांकों का निर्धारण उन्हीं अवयवों से होता है, जिनसे कृत्य में सफलता का निर्धारण। कोई विशेष कसौटी सम्बद्ध है या नहीं, इसका कोई अनुभवजन्य प्रमाण नहीं है। निष्पत्ति परीक्षणों में तो हम अध्यापकों के निर्णय से यह जान जाते हैं कि परीक्षण की विषयवस्तु वही है या नहीं जो होनी चाहिए थी।

(२) **पक्षपात का न होना** (Freedom from Bias) इसका यह अर्थ है कि मापन से प्रत्येक परीक्षार्थी को अच्छे फलांक प्राप्त करने का समान अवसर मिलना चाहिए। पक्षपातपूर्ण मापन ये हैं: विक्रेताओं के लिए कुछ विक्रय क्षेत्रों का अन्य की अपेक्षा अधिक सम्पन्न होना, फैक्टरी के कर्मचारियों की कार्य-परिस्थिति में अन्तर, विभिन्न स्कूलों की एक ही कक्षा में पढ़ाने वाले अध्यापकों की अध्यापन योग्यता में अन्तर।

(३) **विश्वसनीयता** (Reliability)—इसका हम पहले वर्णन कर चुके हैं। कसौटी के विश्वसनीय होने का अर्थ है कि इसके फलांकों में पुनर्परीक्षण या अर्द्ध-विच्छेदन से अन्तर न पड़े। बार-बार प्रशासित करने पर जो परिणाम आयें, उनमें संगति हो।

(४) **प्राप्यता** (Availability)—कसौटी का प्राप्य एवं सुविधाजनक होना भी व्यावहारिक दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक है। प्रत्येक परीक्षार्थी का कसौटी फलांक प्राप्त करने में कितना समय लगेगा और इसमें कितना मूल्य लगेगा, इस पर भी ध्यान देना पड़ता है। कसौटी का चुनाव करते समय व्यावहारिक सीमा पर विचार करना भी आवश्यक है।

---

1. *Measurement and Evaluation in Psychology and Education*, John Wiley & Sons, New York, 1958, pp. 118-119.

वैधता गुणांक (Validity Coefficients)

परीक्षण एवं कसौटी में जो सहसम्बन्ध ज्ञात किए जाते हैं उन्हें वैधता गुणांक कहते हैं। अतः समवर्त्ती तथा पूर्वकथनात्मक दोनों प्रकार की वैधता में हम वैधता गुणांक ही प्राप्त करते हैं। अन्य बातें समान होने पर जितना ऊँचा सहसम्बन्ध होगा, उतना ही अच्छा है। परीक्षण का मूल्यांकन करने के लिए कि अमुक परीक्षण किसी दिए हुए मापन उद्देश्य के लिए उचित भी है या नहीं, हम यह भी ज्ञात करते हैं कि उसका वैधता गुणांक क्या है। कुछ परीक्षणों के वैधता गुणांक निम्न हैं—

परीक्षण (Test)	कसौटी (Criterion)	वैधता गुणांक (Validity Coefficient)
Gordon Personality Profile	Rating of Personality	·49 to ·73
California Short-Form Test of Mental Maturity	Wechsler Individual Test	·77
Differential Aptitude Tests :—		
(a) Verbal Reasoning	English Grades 3½ years later	·57
(b) Mechanical Reasoning	English Grades 3½ years later	·17
(c) Space relations	—do—	·01

वैधता का परीक्षण की लम्बाई से सम्बन्ध (Relation of Validity to length of a test)

चूँकि वैधता विश्वसनीयता पर निर्भर है और विश्वसनीयता परीक्षण की लम्बाई पर, अतः वैधता भी अप्रत्यक्ष रूप से परीक्षण की लम्बाई पर निर्भर है। किन्तु जब परीक्षण की लम्बाई बढ़ाई जाए तो प्रश्नों के स्वभाव एवं उनकी विषयवस्तु में परिवर्तन नहीं होना चाहिए। परीक्षण जितना ही लम्बा होगा, उतना ही विश्वसनीय होगा, अतः उतना ही वैध भी होगा। स्पीयरमैन-ब्राउन-

सूत्र लम्बाई एवं वैधता का सम्बन्ध बताता है । इस उद्देश्य के लिए संशोधन के पश्चात् उसका निम्न स्वरूप बनता है :—

$$r_{nxy} = \frac{r_{xy}}{\sqrt{\frac{1-r_{xx}}{n} + r_{xx}}}$$

जिसमें : r_{nxy} = Y परिवर्त्ती का X परीक्षण से सम्बन्ध, जिसकी लम्बाई N अनुपात में बढ़ा दी गई हो ।

r_{xy} = Y परिवर्त्ती का लम्बाई बढ़ाने से पहले X परीक्षण से सम्बन्ध ।

n = अनुपात जिसमें लम्बाई बढ़ाई गई हो ।

r_{xx} = X परीक्षण की विश्वसनीयता ।

यदि परीक्षण को अनन्त रूप से लम्बा कर दिया जाए तो उसकी विश्वसनीयता पूर्ण (Perfect) होती जायेगी, पर वैधता नहीं ।

$$r_{\infty xy} = \frac{r_{xy}}{\sqrt{r_{xx}}}$$

इसी समीकरण (equation) को हल करके 'n' का मूल्य ज्ञात कर सकते हैं ।

$$n = \frac{1-r_{xx}}{\frac{r^2_{xy}}{r^2_{nxy}} - r_{xx}}$$

व्यवहार-योग्यता
या
प्रशासन, फलांकन एवं निर्वचन में सुविधा

रॉस[1] के शब्दों में व्यवहार-योग्यता का अर्थ है परीक्षण का वह गुण जिसके कारण अध्यापक या अन्य परीक्षण-प्रशासनकर्त्ता बिना अधिक शक्ति एवं समय

---

1. "By this (usability) is meant the degree to which the test or other instrument can be successfully employed by classroom teachers and school administrators without an undue expenditure of time and energy in a word, usability means practicability."—Ross, C. C. and Stanley, J. C. : *Measurement in Today's Schools*, (3rd. ed.), Prentice-Hall, U. S. A., 1954., p. 127.

को नष्ट किए इसका ठीक से व्यवहार में उपयोग कर सकें। परीक्षरण की इस प्रकार की व्यवहार योग्यता अनेक बातों पर निर्भर है; जैसे प्रशासन में सुविधा, फलांकन में सुविधा, सरल एवं स्पष्ट निर्वचन आदि। हम इनका अलग-अलग पर संक्षेप में वर्णन करेंगे।

१. प्रशासन में सुविधा—

व्यक्तिगत परीक्षरणों की तुलना में सामूहिक परीक्षरणों को प्रयुक्त करने में अधिक सुविधा होती है। अनेक व्यक्तिगत परीक्षरण विश्वसनीय एवं वैध होने पर भी सुविधापूर्वक व्यवहार-योग्य नहीं हैं, जैसे स्टेनफोर्ड-बिने परीक्षरण। इस परीक्षरण के प्रयोग में असुविधा होने का मुख्य कारण है निदेशों की जटिलता, जिन्हें समझने एवं लागू करने के लिए प्रशिक्षरण आवश्यक है। ये निदेश स्वयं प्रशासनकर्त्ता एवं परीक्षार्थी दोनों के लिए होते हैं। इस विषय पर हम बाद में विस्तार से विवेचना करेंगे। यहाँ इतना कह देना पर्याप्त है कि निदेश सुस्पष्ट एवं पूर्ण होने चाहिए। यदि आवश्यक हो तो अभ्यास के लिए पद देने चाहिए। विवरण-पुस्तिका में परीक्षरण के बारे में पूरा विवरण दिया जाना आवश्यक है। कुछ परीक्षरणों में थोड़े-थोड़े समय के अन्तर पर अवकाश दे दिया जाता है। इनमें समय की निगरानी रखने में विशेष सावधानी की आवश्यकता है।

२. फलांकन में सुविधा—

फलांकन में सुविधा अनेक बातों पर निर्भर है; जैसे परीक्षरण का वस्तुगत होना, फलांकन के लिए विस्तृत निर्देशों की व्यवस्था, आदि। फलांकन सुबिधापूर्वक हो सके, इस हेतु अनेक विधियों का प्रचलन है जैसे स्टेन्सिल 'की,' पन्च-बोर्ड 'की', मशीन-स्कोरिंग आदि। इनका विवरण अन्य अध्यायों में दिया गया है। मशीन-स्कोरिंग से अनेक लाभ हैं, पर यह विधि उतनी सरल नहीं है एवं इस विधि का प्रयोग करते समय विशेष प्रकार की उत्तर-पुस्तिकाओं की आवश्यकता पड़ती है।

३. निर्वचन में सुविधा—

परीक्षा के परिणामों का निर्वचन सरलता से हो सकेगा या नहीं, यह बहुत कुछ परीक्षरण के साथ संलग्न विवरण पुस्तिका की पूर्णता पर निर्भर है। इस विवरण में परिणाम सारिरिणयाँ, आवश्यक गणना-विधियाँ एवं सामान्यक (Norms) दिए रहने चाहिए। आयु एवं कक्षा दोनों के अनुसार सामान्यक दिए जाना आवश्यक है और यदि सम्भव हो तथा बालक एवं बालिकाओं के

अलग-अलग फलांक आयें तो आयु सामान्यक भी । दुःख का विषय है कि अनेक महत्वपूर्ण तथा ख्यातिप्राप्त परीक्षणों में भी इन सामान्यकों को नहीं दिया गया है ।

फलांकन, प्रशासन एवं निर्वचन में सुविधा के अतिरिक्त परीक्षण में कुछ अन्य गुण भी होने आवश्यक हैं; जैसे मूल्य एवं परीक्षण की यांत्रिक रचना । सामूहिक परीक्षण व्यक्तिगत परीक्षणों की अपेक्षा सस्ते होते हैं । क्रियात्मक या निष्पादन (Performance) परीक्षण विशेषकर अधिक मँहगे होते हैं । व्यापक परीक्षण योजना में सामूहिक परीक्षणमालाएँ अधिक सस्ती पड़ती हैं, अतः इनका प्रयोग श्रेयस्कर है । बड़े प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित परीक्षण साज-सज्जा, मुद्रण इत्यादि की दृष्टि से श्रेयस्कर होते हैं । अतः इन बातों का ध्यान रखना चाहिए । विशेषकर छोटे बालकों के परीक्षणों में टाइप बड़ा हो एवं चित्र तथा उदाहरण प्रचुर मात्रा में हों, तो अच्छा रहता है । व्यापारिक परीक्षण प्रकाशन-कर्त्ताओं ने इस ओर अभी विशेष ध्यान नहीं दिया है ।

: ५ :

परीक्षण-रचना के सामान्य सुझाव

दिन पर दिन नवीन प्रकार के परीक्षणों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। स्वयं भारतवर्ष में निबन्धात्मक परीक्षा-प्रणाली अब उतनी श्रद्धा से नहीं देखी जाती, क्योंकि इसमें अनेक दोष हैं। कुछ परिस्थितियों में निबन्धात्मक एवं नवीन दोनों प्रकार की परीक्षा प्रणालियों का मिला-जुला प्रयोग होता है ताकि दोनों के आधार पर परीक्षार्थी की योग्यता का उचित मापन हो सके। परन्तु नवीन प्रकार के परीक्षणों की रचना उतनी सरल नहीं है, इनके निर्माण की एक पूरी प्रक्रिया है और परीक्षण निर्माण-कर्त्ता के लिए इससे परिचित होना एवं इसमें प्रशिक्षण प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है। रॉस[1] के के अनुसार इन परीक्षणों, विशेषकर अध्यापक निर्मित अनौपचारिक परीक्षणों की रचना का ज्ञान होना कम से कम तीन कारणों से महत्वपूर्ण है : (१) विस्तृत पैमाने पर इनका कक्षा में प्रयोग होता है, (२) निबन्धात्मक परीक्षाओं एवं अप्रमापीकृत नवीन परीक्षाओं दोनों के प्रयोग से असन्तोषजनक परिणाम

1. Ross, C. C. and Stanley, J. C. : *Measurement in Today's Schools.*, Prentice-Hall, Englewood Cliffs, N. Y., 1954 (3rd ed.), p. 139.

निकलते हैं, एवं (३) सांख्यिकीय विश्लेषण एवं तर्कसंगत विचार दोनों से प्रकट होता है कि अध्यापकों द्वारा सुनिर्मित परीक्षण उतने ही वैध हैं जितने व्यापक पैमाने पर बने प्रमापीकृत परीक्षण।

परीक्षण-रचना की प्रक्रिया में निम्न मुख्य चरण हैं :

१. परीक्षण की योजना—उद्देश्य एवं पाठ्य-क्रम विश्लेषण।

२. परीक्षण की प्रथम रचना—पद एवं निर्देश।

३. परीक्षण का प्रयोग—प्रशासन, फलांकन, विश्वसनीयता-वैधता एवं पद-विश्लेषण।

४. अन्तिम परीक्षण—पद, प्रशासन, फलांकन, विश्वसनीयता-वैधता।

५. प्रमापीकरण—सामान्यक, लब्धियाँ, निर्वचन।

परीक्षण-निर्माण की प्रक्रिया का वर्णन करते समय हम मुख्यतः **साफल्य-परीक्षण** को ध्यान में रखेंगे।

परीक्षण की योजना
(Planning the Test)

ध्येय-निर्धारण (Determining Objectives)—

सर्वप्रथम इस बात का निर्धारण किया जाता है कि जिस विषय में परीक्षण का निर्माण किया जाना है, उसके ध्येय क्या हैं। निस्संदेह मनोविज्ञानात्मक मापक की रचना एक कठिन कार्य है। अनेक ख्याति-प्राप्त परीक्षणों की रचना में इन जटिल प्रक्रियाओं को ध्यान में रखा गया है। पर अन्य कई परीक्षणों में उद्देश्यों को तिलांजलि दी गई है। सामान्य रूप से किसी परीक्षण की रचना के पहले कम से कम दो-तीन उद्देश्यों को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है। परीक्षण से व्यवहार में जिन परिवर्त्तनों की आशा की जाती है, उनकी ओर संकेत करना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि गणित का परीक्षण बनाना हो तो यह ध्यान में रखना चाहिए कि इस क्षेत्र में ज्ञानोपार्जन से व्यवहार में ये परिवर्त्तन सम्भव हैं—(१) गणित सम्बन्धी समस्याओं के हल करने की सामर्थ्य, (२) तर्क-वितर्क कर सकना, (३) इकाइयों का ज्ञान। व्यवहार में ये परिवर्त्तन केवल विद्यालय में ही नहीं, वरन् वास्तविक भावी जीवन में भी हस्तान्तरित होंगे। इकाइयों का ज्ञान प्राप्त कर लेने से विद्यार्थी छोटी इकाइयों को बड़ी इकाइयों में एवं बड़ी को छोटी में परिवर्तित कर सकेगा। जीवन में क्रय-विक्रय एवं अन्य परिस्थितियों में इस ज्ञान का उपयोग है। प्रारम्भ में ही उद्देश्य

निर्धारण से हम परीक्षणोपरान्त यह जान लेंगे कि व्यवहार में प्रत्याशित परिवर्तन हुआ या नहीं।

शिक्षण के उद्देश्यों का वर्गीकरण कई प्रकार से किया गया है। स्मिथ एवं टेलर, लिन्डक्विस्ट, बोर्डिन, प्रभृत्ति विद्वानों ने इस विषय पर प्रकाश डाला है। स्मिथ एवं टेलर[1] के अनुसार शिक्षण के दस मुख्य उद्देश्य हैं :—

१. चिन्तन की उचित विधियों का विकास,
२. उपयोगी आदतों एवं अध्ययन कुशलताओं का विकास,
३. सामाजिक अभिवृत्तियों का समझना,
४. व्यापक रुचियों का ग्रहण करना,
५. संगीत, कला, साहित्य आदि में रुचि,
६. सामाजिक संवेदनशीलता का विकास,
७. श्रेयस्कर व्यक्तिगत सामाजिक अभियोजन का विकास,
८. महत्वपूर्ण सूचना की प्राप्ति,
९. शारीरिक स्वास्थ्य लाभ,
१०. स्थिर जीवन-दर्शन का विकास।

ग्राइम्स एवं बोर्डिन[2] के अनुसार शिक्षण का आवश्यक उद्देश्य रचना-प्रवृत्ति (Creativeness) है एवं कला में रचनात्मक अभिव्यक्ति से व्यक्तित्व-गुणों में विकास सम्भव है। ये व्यक्तित्व गुण अनेक प्रकार से हैं, जैसे आगे आने की प्रवृत्ति, रुचि एवं प्रेरणा, निर्णय, सहयोग इत्यादि।

सब विषयों के अपने अलग-अलग उद्देश्य होते हैं। **गणित** के उद्देश्यों का हमने ऊपर वर्णन किया था। **सामान्य-विज्ञान** परीक्षण में निम्न उद्देश्य निर्धारित किए जा सकते हैं :—(१) सिद्धान्तों एवं तथ्यों का ज्ञान, (२) विभिन्न पारिभाषिक तथा तक्नीकी शब्दों का ज्ञान, (३) वैज्ञानिक विधियों एवं समस्याओं का ज्ञान, (४) प्रयोगों के परिणामों के आधार पर सामान्यीकरण करने की योग्यता, (५) किसी उपकल्पना की प्रयोग द्वारा पुष्टि या खण्डन, (६) कारण-प्रभाव सम्बन्ध जानने की क्षमता का विकास, (७) प्राकृतिक घटनाओं एवं पदार्थों में रुचि जागृत होना, (८) वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास,

---

1. Smith, E. R., Tayler, R. W., and Evaluation Staff : *Appraising and Recording Student Progress.*, Harper and Brothers, New York, 1942, p. 18.

2. Grimes, J. W., and Bordin, Edward : *A Proposed Technique for Certain Evaluations in Art*, Educatioal Research Bulletin 18, 1-5, 29, Jan. 4, 1939.

इत्यादि । इसी प्रकार मुद्रण (Drawing) शिक्षण में उद्देश्यों का निर्धारण किया जा सकता है :—(१) मुद्रण द्वारा विचारों की अभिव्यक्ति, (२) पूर्ण वस्तु एवं इसके अंशों में सम्बन्ध जानने की क्षमता, (३) व्यावसायिक क्षेत्र में मुद्रण कला के उपयोग की जानकारी, (४) मुद्रण-वस्तु के मूल्यांकन की क्षमता, (५) मुद्रण एवं अन्य क्षेत्रों में या सुनियोजन की आवश्यकता का बोध, (६) इस कला में प्रयुक्त तक्नीकी शब्दों का ज्ञान, (७) वास्तविक समस्याओं में मुद्रण सिद्धान्तों का प्रयोग, (८) स्वच्छता एवं परिशुद्धता की आदतों का विकास ।

पाठ्य-क्रम-विश्लेषण (Curriculum Analysis)

ध्येय-निर्धारण के पश्चात् जिस कक्षा एवं विषय के सम्बन्ध में परीक्षण-रचना करनी हो, तत्सम्बन्धी पाठ्य-पुस्तकों का विश्लेषण करना चाहिए। सम्बन्धित प्रश्न-पत्रों, कक्षा की टिप्पणियों एवं सहायक पुस्तकों का प्रयोग भी इस हेतु कर सकते हैं । इससे यह लाभ होगा कि पाठ्यक्रम के विभिन्न पक्षों को आवश्यक बल दिया जा सकेगा । पाठ्य-क्रम की प्रत्येक इकाई या अध्याय को ध्यान में रखकर यह सोचना चाहिए कि इस इकाई या अध्याय का क्या प्रयोग है ? इससे विद्यार्थी को क्या मिलेगा ? इससे पाठ्य-क्रम के महत्वपूर्ण पक्षों, उसके आधारों आदि पर प्रकाश पड़ेगा । वास्तव में यह ज्ञात करने के लिए कि हमने जो ध्येय निर्धारित किए हैं, वे पाठ्यक्रम के अनुकूल हैं या नहीं, इस प्रकार का विश्लेषण अत्यन्त आवश्यक है । कई परिस्थितियों में सभी स्कूलों में किसी विशेष-कक्षा के निमित्त पाठ्यक्रम समान नहीं होता । पाठ्य-पुस्तकें भी स्कूलों में भिन्न-भिन्न होती हैं। ऐसा होने पर भी प्रायः पाठ्य-वस्तु एवं उसकी अनेक बातों में समानता होती है । अतः इन समान-तत्त्वों के विश्लेषण के आधार पर परीक्षण निर्माण किया जा सकता है ।

पाठ्य-क्रम विश्लेषण के लिए निम्न बातों का उपयोग कर सकते हैं :

१. पाठ्य-पुस्तकें एवं निर्धारित सहायक पुस्तकें ।
२. प्रत्येक अध्याय के अन्त में अभ्यास के लिए दिए गए प्रश्न ।
३. अध्यापक द्वारा दिए गए व्याख्यान की टिप्पणियाँ ।
४. कक्षा में विद्यार्थियों द्वारा किए गए वाद-विवाद एवं विवेचन ।
५. जिस विषय पर परीक्षण बनाना हो, उस पर पूर्व-रचित परीक्षणों का अध्ययन ।
६. अभिवृत्ति परीक्षणों के निर्माण में कृत्य-विश्लेषण (Job Analysis) भी उपयोगी है ।

परीक्षण की प्रथम रचना
(Preparing the First Draft of the Test)

पद-रचना (Item Construction)—

उद्देश्य-निर्धारण एवं पाठ्य-क्रम विश्लेषण के पश्चात् परीक्षण के पदों की रचना की जाती है। प्रारम्भ में हम जितने अधिक पद बन सकें, बना लेते हैं। पद कई प्रकार के हो सकते हैं जैसे, सत्य-असत्य या एकान्तर प्रत्युत्तर पद (Alternate Response Form), बहुनिर्वचन रूप (Multiple Response Form), प्रश्न का सही उत्तर से मिलान (Matching Form), सरल प्रत्यास्मरण रूप (Simple Recall Form), एवं रिक्त स्थानपूर्ति रूप (Completion Form)। हमने इनका वर्णन अन्यत्र किया है। किस प्रकार के कितने पद बनाये जाएँ, किस प्रकार के पद न बनाये जाएँ, इनका क्रम क्या हो, इन सब बातों का निर्णय स्वयं परीक्षण-रचयिता करेगा। यहाँ हम उन सामान्य बातों का वर्णन करेंगे जो पद-रचना के सम्बन्ध में ध्यान में रखनी चाहिए।

१. किसी भी एक परीक्षण में सभी शिक्षण-ध्येयों का मापन सम्भव नहीं है। अतः परीक्षण-रचना एवं इसके परिणामों के निर्वचन में इस परिसीमा का ध्यान रखना चाहिए।

२. परीक्षण को यथासम्भव व्यापक बनाइये पर उसमें व्यर्थ के पद सम्मिलित मत कीजिए।

३. केवल स्मरण, या पहिचान पर बल मत दीजिए। इससे परीक्षार्थियों में रटने की आदत पड़ेगी। पद इस प्रकार बनाइये कि विद्यार्थी में अपने ज्ञान को वास्तविक जीवन में प्रयुक्त करने की आदत पड़े।

४. ऐसे पद मत बनाइये जिनमें गुप्त पद या संकेत हों। ऐसे पद वैध नहीं होते और इन्हें केवल थोड़े से बहुत योग्य विद्यार्थी ही हल कर सकते हैं।

५. स्वयं पुस्तकों से यत्र-तत्र वाक्य या कथन उठाकर उन्हें पद के लिए प्रयुक्त मत कीजिए। यद्यपि काफी अध्यापक ऐसा करते हैं; पर विद्यार्थी बिना सही उत्तर जाने ऐसे पदों को प्रायः हल कर देते हैं। और इससे रटने की प्रवृत्ति को बल मिलता है।

६. यथा सम्भव ऐसे पद मत लीजिए जिनके केवल दो ही प्रतिरूप (Alternatives) हों। 'सत्य-असत्य' ऐसे ही पद हैं। पर इनमें 'अनुमान' का प्रयोग अधिक सम्भव है।

७. इस प्रकार के पद मत बनाइये कि अन्य पदों को देख-समझकर किसी पद का प्रत्युत्तर दिया जा सके। प्रत्येक पद इस प्रकार बनाइये कि वह अपने-आप में पूर्ण एवं स्वतंत्र हो।

८. आपको कुल जितने पद लेने हों, प्रारम्भिक परीक्षण (First Draft of the test) में उससे अधिक पद सम्मिलित कीजिए ताकि बाद में चलकर अनावश्यक पदों को निकाल जा सके।

९. कोई भी ऐसा पद मत लीजिए जिसका उत्तर विषय को न जानने वाला व्यक्ति भी केवल पद-रचना को समझ कर दे सके, जैसे – 'सुवर्ण अत्यन्त महत्वपूर्ण धातु नहीं है।'

१०. पद-रचना में सरलतम शब्दों एवं भाषा का प्रयोग कीजिए।

११. परीक्षण में पदों के उत्तरों के लिए यथोचित स्थान छोड़िए। एवं प्रत्युत्तर देने की प्रक्रिया को यथासम्भव सरल रखिये।

१२. पदों की व्यवस्था इस प्रकार कीजिए कि किसी भी विद्यार्थी को किसी पद का उत्तर देने के लिए एक से अधिक पृष्ठ न उलटने पड़ें।

१३. यदि किन्हीं पदों के उत्तरों के फलांकन में अनुमान सूत्र का प्रयोग करना हो तो निर्देशों में इसकी ओर स्पष्ट संकेत दीजिए।

१४. सभी पदों पर क्रमानुसार अङ्क डालिये एवं महत्वपूर्ण शब्दों को रेखांकित कीजिये।

१५. परीक्षण का उचित शीर्षक डालिये।

१६. किसी एक प्रकार के सभी पद एक ही स्थान पर रखने चाहिए।

१७. यदि परीक्षण गति-परीक्षण न हो तो सभी पदों को कठिनाई के आरोही क्रम (Ascending order) में रखना उचित है।

१८. पदों के प्रत्युत्तर किसी निश्चित क्रम में नहीं होने चाहिए। यदि नियमित विधि से कुछ सत्य एवं कुछ असत्य पद दिए जाएँ तो परीक्षार्थी शीघ्र ही इस क्रम को समझ लेगा और तदनुसार अपने प्रत्युत्तर देगा।

१९. पूर्व-अनुभव के आधार पर पद इस प्रकार बनाना उचित है उनकी विषय-वस्तु के आधार पर प्रत्युत्तर का निर्णय हो, न कि उनकी शब्दावली या भाषा आदि के आधार पर।

पद-रचना हो जाने पर अब इस प्रारम्भिक मसविदे को दुहराने के लिए निर्णायकों के पास भेजना उचित है। निर्णायक मनोवैज्ञानिक एवं अध्यापकगण होते हैं। ये निर्णायक बताएँगे कि वस्तुतः पद निर्धारित ध्येयों का मापन करते हैं या नहीं। इस दृष्टि से अनुचित पदों को निकाल दिया जाता है या उन्हें परिशुद्ध कर लेते हैं।

निर्देश (Directions)—

परीक्षण में पदों से पहले कुछ सामान्य निर्देश (General Directions) दिए जाते हैं। ये निर्देश या आदेश यथासम्भव पूर्ण, स्पष्ट एवं संक्षिप्त होने चाहिए ताकि अत्यन्त अयोग्य विद्यार्थी भी यह समझ सकें कि उन्हें क्या करना है। आदेश में विद्यार्थी को क्या करना है, कितना समय दिया गया है, अनुमान सूत्र के आधार पर किस प्रकार अंक काटे जा सकेंगे, आदि सभी बातें होनी चाहिए। निर्देश का एक उदाहरण निम्नलिखित है :—

"नीचे ४० कथन हैं। प्रत्येक कथन को पढ़कर बताएँ कि वह सत्य है, या असत्य। कथन के पहले कोष्ठक ( ) में यदि कथन सही हो तो (+) तथा गलत हो तो (—) इस प्रकार का चिन्ह लगाए। कुल बीस मिनट में इस प्रकार उत्तर देने हैं। यदि आपने अनुमान लगाया तो अङ्क कट जाएँगे। यदि कोई उत्तर बदलना हो तो रबर से मिटाकर लिखो।"

परीक्षण का प्रथम प्रयोग
(Trying out the Test)

प्रशासन (Administration)—

पद-रचना के बाद जब परीक्षण का प्रथम मसविदा तैयार हो जाता है तो उसका अब विद्यार्थियों के एक बड़े समूह पर प्रयोग करते हैं। इस समूह में उच्च, सामान्य तथा निम्न सभी प्रकार की योग्यता के विद्यार्थी होते हैं। अर्थात् समूह में पर्याप्त विचरणशीलता होती है। विद्यार्थियों की संख्या परीक्षण के उद्देश्य एवं प्रकार को ध्यान में रखकर निश्चित की जाती है। विद्यार्थी एक ही स्कूल के न होकर विभिन्न स्कूलों एवं क्षेत्रों से लिए जाते हैं।

प्रशासन के दौरान सभी विद्यार्थियों के लिए समान परीक्षण-परिस्थितियाँ रखना आवश्यक है, क्योंकि परीक्षार्थी के प्रत्युत्तरों पर उनकी भौतिक दशाओं का प्रभाव पड़ेगा। नकल करने की प्रवृत्ति को रोकने के लिए आरम्भ में ही उचित कदम उठाने चाहिए। तदर्थ बैठने की व्यवस्था उचित होनी चाहिए। उदारता से समय देना चाहिए। इससे कौन-सा प्रश्न कितना कठिन है, यह जानने में एवं पद-विश्लेषण में सहायता मिलेगी। नैदानिक परीक्षणों (Diagnostic Tests) में अपेक्षाकृत और भी अधिक समय देना चाहिए। लिन्डक्विस्ट के अनुसार कम से कम इतना समय देना उचित है कि लगभग पिचहत्तर प्रतिशत विद्यार्थी प्रश्नों पर उचित रूप से विचार कर सकें। परीक्षा का समय समाप्त होने पर विद्यार्थी निर्धारित समय से अधिक समय तक न लिखते रहें,

इस हेतु पर्यवेक्षकों (Supervisors) की पर्याप्त संख्या होनी चाहिए । प्रशासन के सम्बन्ध में विस्तृत वर्णन अन्यत्र किया गया है ।

अंक प्रदान करना (Scoring)—

प्रशासन करने के बाद उत्तर-पुस्तिकाओं को एकत्र करके उन पर अंकन करते हैं। अंक प्रदान करने के लिए कुंजी (Key) का प्रयोग करते हैं । अंक हाथ या मशीन दोनों से दिए जा सकते हैं । प्रत्येक विद्यार्थी को अलग अलग अंक देने के बाद सभी उत्तर-पुस्तिकाओं के अंकों का औसत मान तथा विचलन आदि निकालते हैं । यदि परीक्षण को अनेक कक्षाओं के विद्यार्थियों पर प्रयुक्त किया जाय तो निम्न कक्षा के विद्यार्थियों के मध्यमान अंक उच्च कक्षा के विद्यार्थियों के मध्यमान अंक से कम होना आवश्यक है । तभी परीक्षा वैध होगी । परीक्षा में विद्यार्थियों द्वारा प्राप्त अंकों को सामान्य वक्र पर प्रदर्शित किया जा सकता है । यदि न्यादर्श (Sample) पर्याप्त रूप से विस्तृत है एवं उसमें काफी विचरणशीलता है तो विद्यार्थियों के अंक सामान्य वक्र में वितरित होंगे ।

पद-विश्लेषण (Item Analysis)—

प्रत्येक विद्यार्थी को अलग-अलग अंक प्रदान करने के अतिरिक्त प्रत्येक पद का सम्पूर्ण विद्यार्थियों के कितने प्रतिशत ने सही प्रत्युत्तर दिया है और कितने प्रतिशत ने गलत, यह भी ज्ञात करना चाहिए । इससे यह ज्ञात होगा कि कौन पद विभेदकारी है, और कौन नहीं । यदि किसी पद का योग्य विद्यार्थियों के अधिकांश, अर्थात् सामान्यतया ५०% से अधिक, ने सही प्रत्युत्तर दिया है और अयोग्य विद्यार्थियों के अधिकांश ने गलत, तो यह पद विभेदकारी होगा । पर विभेदकारी मान (Discriminating Value) ज्ञात करने की यह कोई वैज्ञानिक विधि नहीं है । हम नीचे पद-विश्लेषण द्वारा विभेदकारी मान ज्ञात करने की कुछ सरल पर वैज्ञानिक विधियों का संक्षेप में वर्णन करेंगे ।

१. सभी उत्तर-पुस्तिकाओं पर अंक प्रदान करके इन उत्तर-पुस्तिकाओं को क्रम में रख लीजिए । सबसे ऊपर वह उत्तर-पुस्तिका होगी जिस पर सबसे अधिक अंक मिले हैं, उससे नीचे वह उत्तर पुस्तिका जिस पर इससे कम अंक मिले हैं । इसी प्रकार अन्त में, सबसे नीचे, वह उत्तर-पुस्तिका होगी, जिस पर सबसे कम अंक मिले हैं । अब ऊपर एवं नीचे की एक-तिहाई पुस्तकें अलग-अलग ले लीजिए एवं बीच की एक-तिहाई पुस्तकें अलग छोड़ दीजिए । क्योंकि इनकी पदों का विभेदकारी मान (Discriminating Value) निकालने में कोई आवश्यकता नहीं पड़ती । बजाय एक-तिहाई के किसी अन्य क्रम में भी पुस्तिकाएँ ली जा सकती हैं । जैसे ऊपर

एवं नीचे की २७% पुस्तिकाओं का प्रयोग कीजिए एवं बीच की ४६% छोड़ दीजिए। अब ये ऊपर की २७% या एक-तिहाई, पुस्तिकाएँ एवं नीचे की भी इसी प्रकार क्रमशः सुयोग्य एवं अयोग्य विद्यार्थियों की होंगी। अब यह पता लगाया जाता है कि प्रत्येक पद को ऊपर के वर्ग के कितने प्रतिशत विद्यार्थियों ने शुद्ध हल किया है, और नीचे के वर्ग के कितने विद्यार्थियों ने शुद्ध हल किया है। अब इन दोनों वर्गों के कितने प्रतिशत विद्यार्थियों ने प्रत्येक पद को अशुद्ध हल किया है, यह भी ज्ञात किया जा सकता है। तदुपरान्त निम्नलिखित सूत्र से प्रत्येक पद का विभेदकारी मान ज्ञात कर लेतें हैं :—

$$D = \frac{P_1 - P_2}{\sqrt{\frac{P_1Q_1}{N_1} + \frac{P_2Q_2}{N_2}}}$$

जिसमें: D = विभेदकारी मान (Discriminating Value)

P_1 = ऊपर के वर्ग में पद का शुद्ध प्रत्युत्तर देने वाले विद्यार्थियों का प्रतिशत।

P_2 = नीचे के वर्ग में पद का शुद्ध प्रत्युत्तर देने वाले विद्यार्थियों की संख्या।

Q_1 = ऊपर के वर्ग में पद का अशुद्ध प्रत्युत्तर देने वाले विद्यार्थियों का प्रतिशत।

Q_2 नीचे के वर्ग में पद का अशुद्ध प्रत्युत्तर देने वाले विद्यार्थियों का प्रतिशत।

N_1 = ऊपर के वर्ग में विद्यार्थियों की संख्या।

N_2 = नीचे के वर्ग में विद्यार्थियों की संख्या।

उपरलिखित सूत्र से यदि विभेदकारी मान १·९६ से अधिक आए तो हम कहेंगे कि पद विभेदकारी है।

उदाहरणस्वरूप यदि किसी पद को ऊपर के वर्ग के ८०% विद्यार्थियों ने शुद्ध किया है एवं २०% ने गलत, तथा नीचे के वर्ग के ३०% विद्यार्थियों ने शुद्ध किया है एवं ७०% ने अशुद्ध, और प्रत्येक वर्ग में १० विद्यार्थी हैं, तो

$$D = \frac{P_1 - P_2}{\sqrt{\frac{P_1Q_1}{N_1} + \frac{P_2Q_2}{N_2}}} = \frac{८० - ३०}{\sqrt{\frac{८० \times २०}{१०} + \frac{३० \times ७०}{१०}}}$$

$$= \frac{५०}{\sqrt{३७०}} = २·६$$

इस पद का विभेदकारी मान १·९६ से अधिक है। अतः यह सुयोग्य एवं कमजोर विद्यार्थियों में विभेद करने में समर्थ है।

२. रॉस तथा स्टेनले[1] ने पद-विश्लेषण की एक अन्य सरल विधि प्रस्तुत की है। इसके अनुसार उत्तर-पुस्तिकाओं में अंक प्रदान करने के पश्चात् ऊपर की ही भाँति उन्हें तीन ढेरों में बाँट लेते हैं। प्रथम ढेर में योग्य विद्यार्थियों की पुस्तिकाएँ होती हैं, बीच के ढेर में साधारण विद्यार्थियों की एवं सबसे नीचे के ढेर में निम्न विद्यार्थियों की। इन ढेरों में क्रमशः २७%, ४६%, एवं २७% विद्यार्थियों को ले सकते हैं। केवल सुयोग्य एवं कमजोर विद्यार्थियों की पुस्तिकाओं के आधार पर पद-विश्लेषण करते हैं। अब यह पता लगाते है कि इन दोनों वर्गों में क्रमशः प्रत्येक पद को कितने विद्यार्थियों ने अशुद्ध हल किया या छोड़ दिया (Incorrect responses or omissions)। तत्पश्चात् दिए हुए सूत्रों से विभेदकारिता एवं कठिनाई निर्देशांक ज्ञात करते हैं।

इस विधि को कैसे प्रयुक्त करेंगे, यह निम्न सारिणी से समझा जा सकता है।

	१	२	३	४	५	६
पद संख्या	उच्चवर्ग द्वारा अशुद्ध W H	निम्नवर्ग द्वारा अशुद्ध W L	विभेदकारिता (२)−(१) $D_1=WL-WH$	कठिनाई (१)+(२) $D_2=WL+WH$	विभेदकारिता (३) ÷ N	कठिनाई स्तर (४) ÷ २N
१	१	५	४	६	·४	.३
२	२	९	७	११	·७	·५५
३	५	८	३	१३	·३	.६५
४	८	१०	२	१८	·२	.९
५	०	१	१	१	.१	·०५
६	४	८	४	१२	·४	.६
७	७	४	−३	११	.३	·५५
८	५	८	३	१३	.३	.६५
९	६	६	०	१२	·०	·६
१०	२	९	७	११	·७	.५५
—	—	—	—	—	—	—
—	—	—	—	—	—	—
—	—	—	—	—	—	—
—	—	—	—	—	—	—

1. Ross, C. C., and Stanley, J. C. : *Measurement in To-day's Schools*. Prentice-Hall, Englewood, Cliffs, N. Y., 1956, pp. 437-452.

विभिन्न स्तम्भों के शीर्षक इस प्रकार लिखे जा,सकते हैं :—

WL=निम्न वर्ग में परीक्षार्थियों की संख्या जिन्होंने अशुद्ध उत्तर दिए। (Wrong Low)

WH—उच्च वर्ग में परीक्षार्थियों की संख्या जिन्होंने अशुद्ध उत्तर दिए। (Wrong High),

D_1 Discrimination या विभेदकारिता, WL—WH

D_2 Difficulty या कठिनाई, WL+WH

$$\text{विभेदकारिता निर्देशांक} = \frac{WL - WH}{N}$$

$$\text{कठिनाई निर्देशांक} = \frac{WL + WH}{2N}$$

N=प्रत्येक वर्ग में विद्यार्थियों की संख्या

ऊपर की सारिणी एक परीक्षण में विद्यार्थियों की उत्तर-पुस्तिकाओं के परिणामों के आधार पर बनाई गई है। कुल विद्यार्थियों की संख्या ३७ है। चूँकि ३७ का २७% १०, अतः प्रत्येक वर्ग में १० विद्यार्थी हुए। अर्थात् N=१०.

विश्वसनीयता एवं वैधता (Reliability and Validity)—

प्रथम निर्माण में परीक्षण की विश्वसनीयता एवं वैधता भी ज्ञात की जाती है। इनके निकालने की विधियों का अन्यत्र विस्तृत वर्णन किया गया है, एवं विश्वसनीयता तथा वैधता से हम क्या समझते हैं, इसकी भी विवेचना की गई है। विद्यार्थियों को यहाँ इतना अवश्य ज्ञात होना चाहिए कि यदि कोई परीक्षण शुद्धता एवं निपुणता से उसी योग्यता का मापन करने में समर्थ है, जिसके हेतु उसकी रचना की गई है तो उसे वैध परीक्षण कहेंगे। अर्थात् वैधता का अर्थ है शुद्धता या सत्यता (Truthfulness)। वैधता अनेक प्रकार की होती है, जैसे पाठ्यक्रम सम्बन्धी वैधता (Content or Curricular Validity), तर्कसंगत वैधता (Logical Validity), अनुभव-जन्य वैधता (Empirical Validity) तथा पूर्वकथन वैधता (Predictive Validity)। इसी प्रकार विश्वसनीयता का अर्थ है मापन की स्थिरता (Consistency)। यदि किसी परीक्षण को प्रयुक्त करके बार-बार परीक्षण लेने पर या विभिन्न व्यक्तियों द्वारा परीक्षा लिये जाने पर विद्यार्थी के सदैव एक समान अंक आएँ तो वह परीक्षा विश्वसनीय होगी। विश्वसनीयता (Reliability) ज्ञात करने की चार प्रमुख विधियाँ हैं : परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि (Test-Retest Method), अर्द्ध-विच्छेद विधि (Split-

half Method), एकान्तर या समानान्तर प्रतिरूप विधि (Alternate or Parallel Form Method), तथा कूडर-रिचार्डसन की तर्कयुक्त समतुल्य विधि (Method of Rational Equivalence)। इन विधियों को प्रयोग करने की रीति, सम्बन्धित सूत्रों, एवं इनके उपयोग एवं परिसीमाओं का हमने एक अन्य अध्याय में विवेचन किया है।

अन्तिम परीक्षण की रचना
(Preparation of the Final Test)

पद-चयन (Item Selection) —

परीक्षण का प्रथम प्रयोग करके एवं उसका फलांकन, पद-विश्लेषण आदि करके, अन्तिम परीक्षण की रचना की जाती है। इस परीक्षा में पद-विश्लेषण के परिणामों के आधार पर केवल पर्याप्त रूप से विभेदकारी पदों को ले लिया जाता है एवं शेष पदों को परीक्षण से हटा देते हैं। इस प्रकार इस परीक्षण में प्रथम मसविदे की अपेक्षा प्रश्नों की संख्या कम होती है। कुछ पदों का संशोधन करके रख लिया जाता है। यदि किसी उद्देश्य के मापन के लिए अत्यन्त कम संख्या में प्रश्न रह गए हैं तो इनकी संख्या बढ़ा ली जाती है। इनकी कुल संख्या उतनी हो जानी चाहिए जितनी कि अन्तिम परीक्षण में होना आवश्यक हो।

निदेश (Directions) —

प्रथम परीक्षण के प्रशासन के आधार पर यह तो ज्ञात हो ही जाता है कि प्रत्येक प्रकार के पद में मध्यमान समय कितना लगा। इसी आधार पर अन्तिम परीक्षण में जितने पद हों उसके अनुसार समय का निर्धारण कर लेते हैं। यदि प्रथम परीक्षण में २०० प्रश्न हों एवं प्रत्येक में आधा मिनट लगे, और यदि अन्तिम परीक्षण में १२० प्रश्न हों तो इसका समय ६० मिनट या एक घण्टा रखा जायेगा। प्रत्येक पद का किस प्रकार प्रत्युत्तर देना है, इसके लिए निश्चित, स्पष्ट एवं सरल निदेश होंगे। यदि आवश्यकता हो तो अभ्यास के लिए अलग प्रश्न दिए जा सकते हैं एवं प्रत्युत्तर किस प्रकार देने है, यह कुछ उदाहरणों द्वारा समझाया जा सकता है।

प्रशासन एवं अंक देना (Administration and Scoring) —

प्रमापीकृत परीक्षण में अनेक प्रकार के मानक ज्ञात किए जाते है। इस ध्येय से परीक्षण का विद्यार्थियों के एक व्यापक वर्ग पर प्रयोग करते है। कुल विद्यार्थियों की संख्या विभिन्न परीक्षणों में अलग-अलग होती है। पर कम से

कम सहस्त्र-दो सहस्त्र विद्यार्थी होने चाहिए । बड़ा न्यादर्श भी लिया जा सकता है। यह न्यादर्श काफी विचरणशील होना चाहिए । यह भी आवश्यक है कि इस वर्ग में सभी प्रकार की योग्यता के विद्यार्थी हों—उच्च, साधारण, एवं निम्न । इससे निष्कर्ष उचित आएँगे और मानक अधिक विश्वसनीय होंगे । प्रशासन की परिस्थितियाँ सभी विद्यार्थियों के लिए समान होनी चाहिए एवं निर्धारित समय से अधिक समय नहीं देना चाहिए ।

प्रशासन के पश्चात् उत्तर-पुस्तिकाएँ जाँच कर उन पर अंक दिए जाते हैं । तदुपरान्त इनका मध्यमान, प्रमाप-विचलन, प्रसार, आदि ज्ञात करते हैं । यदि आवश्यक समझा जाय तो फिर यह देखा जा सकता है कि प्रत्येक पद विभेद-कारी है या नहीं ।

विश्वसनीयता एवं वैधता (Reliability & Validity)—

अब विश्वसनीयता एवं वैधता निकाली जाती है । इसके लिए प्रयुक्त की गई विधियों का विवेचन हो चुका है । विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए परीक्षण को पुनः प्रशासित किया जा सकता है । अर्द्ध-विच्छेदित विधि भी उपयुक्त है । वैधता ज्ञात करने के लिए किसी अन्य परीक्षण के परिणामों के साथ इसके अंकों की तुलना की जा सकती है । विश्वसनीयता एवं वैधता गुणांक क्या हो, यह परीक्षण की प्रकृति, उद्देश्य आदि पर निर्भर है । पर साधारणतया ये गुणांक ·५ से अधिक हों तो उचित है ।

प्रमापीकरण एवं निर्वचन
(Standardixation and Interpretation)

प्रमापीकरण का अर्थ है विभिन्न प्रकार के मानक या सामान्य स्तर ज्ञात करना । मानक (Norms) अनेक प्रकार के हो सकते हैं, जैसे आयु-मानक(Age Norms), योनि-मानक (Sex Norms), नगरीय एवं ग्रामीण मानक (Urban and Rural Nor.. s), विद्यालय वर्ग या श्रेणी मानक (School Grade Norms), आदि । यदि किसी परीक्षण को अनेक कक्षाओं के विद्यार्थियों पर प्रयुक्त करें तो विभिन्न कक्षाओं में विद्यार्थियों द्वारा प्राप्तांकों के मध्यमान, मध्यांक आदि ज्ञात कर सकते हैं । ये मध्यमान अङ्क उन कक्षाओं के सामान्य स्तर होंगे । प्रत्येक कक्षा के बालक एवं बालिकाओं के अङ्कों के अलग-अलग भी मध्यमान निकाले जा सकेंगे । इसी प्रकार ग्राम एवं नगर के स्कूलों में पढ़ने वाले विद्यार्थियों के अंकों का अलग-अलग सांख्यिकीय विश्लेषण करके नगर-ग्राम मानक (Urban- Rural Norms) बनाए जा सकते हैं । सामान्य

स्तर निकालने के लिए वास्तविक अंकों को प्रतिवर्त्ती अंकों (Derived Scores) में परिवर्तित किया जाता है। ये अनेक प्रकार के होते हैं, जैसे शतांशीय अंक, प्रमाप अंक, टी-अंक, आदि। हम इनका वर्णन अन्यत्र करेंगे। बुद्धि-लब्धि, शिक्षा-आयु, साफल्य-लब्धि आदि की भी गणना की जाती है।

इस प्रकार मानक ज्ञात कर लेने से परीक्षा के परिणामों के निर्वचन में सुविधा होती है। इनके आधार पर विद्यार्थियों के विभिन्न वर्गों, विभिन्न स्कूलों के विद्यार्थियों, बालक एवं बालिकाओं की समान आयु में साफल्य आदि की प्रत्यक्ष तुलना की जाती है। निदान (Diagnosis) में भी इनका उपयोग है।

: ६ :

नवीन प्रकार के परीक्षण-पद

निबन्धात्मक परीक्षाओं में अनेक दोष होने के कारण अब सामान्य रूप से नवीन प्रकार के लघु एवं वस्तुनिष्ठ परीक्षण-पदों कर प्रचलन है। इन पदों में प्राचीन निबन्ध प्रश्नों के अनेक दोषों को दूर कर दिया गया है। पर आवश्यक नहीं है कि इनमें केवल गुण ही हों। नीचे हम इस प्रकार के विभिन्न पदों का वर्णन कर रहे हैं। इनके गुण-दोषों का विवेचन भी यथास्थान किया गया है।

नवीन प्रकार के परीक्षण-पद मुख्यतः दो प्रकार के हैं :—(१) अभिज्ञान रूप परीक्षण पद (Recognition Type Test Items), (२) प्रत्यास्मरण रूप परीक्षण पद (Recall Type Test Items)। इनमें से प्रथम के अन्तर्गत (अ)विकल्प प्रत्युत्तर या सत्य-असत्य परीक्षण पद(True-False or Alternate Response Items), (ब) बहुविकल्प परीक्षण पद (Multiple Response Items), (स) मिलान पद (Matching Items), तथा (द) वर्गीकरण पद Classification Items) आते हैं। प्रत्यास्मरण परीक्षण पदों के अन्तर्गत (अ) साधारण प्रत्यास्मरण पद (Simple Recall Items), तथा (ब) पूर्त्ति पद (Completion Items) आते हैं।
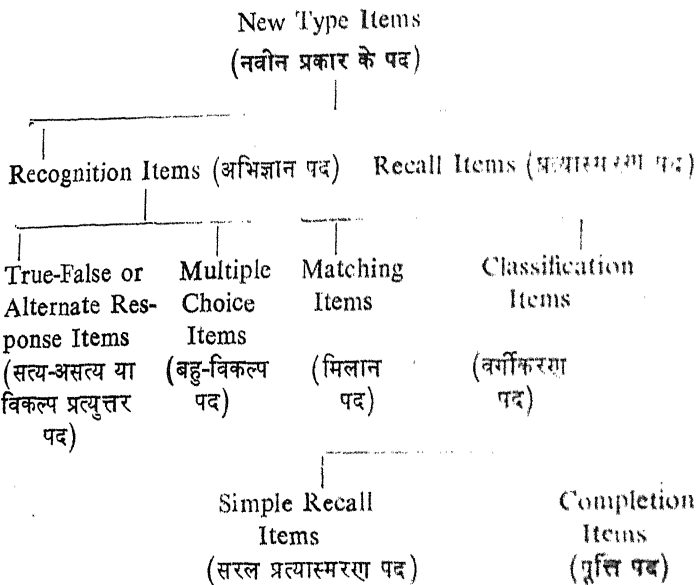
इनमें से प्रत्येक प्रकार के पदों की रचना, उनके लाभ, तथा सुधार के उपायों पर नीचे संक्षेप में प्रकाश डाला गया है।

सत्य-असत्य या विकल्प प्रत्युत्तर परीक्षण-पद

(True-False Alternate Response Items)

ये प्रश्न-पद सम्भवतया विभिन्न प्रकार के वस्तुनिष्ठ परीक्षण-पदों में सबसे अधिक प्रचलित हैं। इनकी रचना अत्यन्त सरल है पर इनका दुरुपयोग भी खूब होता है। मौलिक रूप से इनमें एक वर्णनात्मक कथन या वस्तुस्थिति दी होती है जो या तो सत्य होती है और या असत्य। विद्यार्थी बताना है कि यह सही है या अशुद्ध। इनेक मुख्य प्रकार ये हैं:—

(१) **सत्य-असत्य या दो प्रत्युत्तर पद** (True-False or Two-Response Items)—इनमें अनेक सरल कथन दिए होते हैं जो सही हो सकते हैं या गलत। विद्यार्थी को कौन-सा कथन सत्य है और कौन असत्य यह बताना पड़ता है।

निदेश—निम्नलिखित में से प्रत्येक कथन पर ध्यान दीजिये और यदि कथन सत्य है तो 'स' के चारों ओर, असत्य हो तो 'अ' के चारों ओर घेरा

खींचिये (परीक्षार्थी से 'अ' या 'स' के नीचे रेखा खींचने, +- तथा -- के निशान लगाने या 'हाँ' तथा 'नहीं' लिखने को भी कहा जा सकता है)।

१. मध्यमान केन्द्रीय प्रवृत्ति का सबसे अधिक विश्वसनीय मापक है। **(स)** (अ)

२. +·७५ के सहसम्बन्ध का वही मूल्य है जो—·७५ का। (स) (अ)

३. अमरीका एक औद्योगिक देश है। (स) (अ)

४. $२^३$ का अर्थ है २ × ३ (स) (अ)

५. विनय-पत्रिका के रचियता सूरदास हैं। (स) (अ)

(२) **सरल तीन प्रत्युत्तर पद** (Simple Three Response Items)—इन पदों का रूप भी सत्य-असत्य या हाँ-नहीं पदों की भाँति होता है। पर इनमें परीक्षार्थी को तीन बिन्दुओं पर उत्तर देना होता है।

निदेश—निम्नलिखित कथनों पर ध्यान दीजिए। यदि कथन सत्य है तो 'स,' असत्य है तो 'अ' और यदि आपको उसका उत्तर ज्ञात नहीं तो 'ज्ञा. न' के नीचे रेखा खींचिए।

१. यदि दो विद्यार्थियों की बु०ल० क्रमशः १२० और ११० है। तो पहला अधिक अच्छी प्रकार स्कूल का कार्य करेगा। (स) (अ) **(ज्ञा.न)**

२. **प्रसिद्ध** बुद्धि-परीक्षणों का विश्वसनीयता गुणांक ·६ के लगभग है। (स) (अ) (ज्ञा.न.)

३. गिरी का तेल पानी से अधिक भारी होता है। (स) (अ) (ज्ञा. न.)

इस प्रकार के प्रश्न पदों में ५ बिन्दुओं में उत्तर लेने के लिए इस प्रकार प्रत्युत्तर ले सकते हैं—पूर्ण सत्य, सम्भवतया सत्य, अनिश्चित, सम्भवतया असत्य, पूर्ण रूप से असत्य।

(३) **शुद्धीकरण पद** (Corrective Items)—इनमें कथन में दिए गए अशुद्ध उत्तर को शुद्ध करना पड़ता है।

निदेश—यदि नीचे के कथन सत्य हैं तो 'स' के नीचे एवं असत्य हों तो 'अ' के नीचे रेखा खींचिए, पर साथ ही कथन के नीचे दी हुई सूची में से देखकर गलत उत्तर को काटकर ठीक भी कर दीजिए।

१. संसार में सबसे अधिक तेल **भारतवर्ष** में उत्पन्न होता है। (स) (अ)
(रूस, अमरीका, मैक्सिको, ईराक, सीरिया, अरब, मिश्र)

२. **जापान** में कम्युनिष्ट सरकार है। (स) **(अ)**
(चीन, अमरीका, ब्राजील, भारत, मैक्सिको)

३. सबसे अधिक टेलीविजन सेट अमरीका में हैं। **(स)** (अ)
(भारत, रूस, जापान)

(४) **समुदाय रूप पद** (Cluster Form Items)—इनमें प्राय: एक अपूर्ण कथन दिया जाता है और फिर अनेक वाक्यांश। परीक्षार्थी को वे वाक्यांश छाँटने पड़ते हैं जो अपूर्ण कथन के बारे में सत्य होते हैं और वे जो असत्य होते हैं। ये बहु-विकल्प परीक्षाओं से मिलते-जुलते हैं।

निदेश—नीचे द्वितीय विश्वयुद्ध के सम्बन्ध में अनेक कथन दिए हैं। इनमें जो कथन सत्य हैं उनके नीचे क्रॉस (×) और जो असत्य हैं उनके नीचे, रेखा खींचो।

द्वितीय विश्व युद्ध के कारण

१. राष्ट्र संघ की नींव पड़ी।

२. जर्मनी का विभाजन हुआ।

३. ऐटम बम का निर्माण हुआ।

४. भारत एवं अमरीका में मित्रता बढ़ी।

५. भारतवर्ष में शरणार्थियों की संख्या बढ़ी।

(५) **अपरिवर्तित सत्य-असत्य पद** (Modified True-False Items)—इनमें परीक्षार्थी से सत्य एवं असत्य कथनों को छाँटने के लिए कहा जाता है पर साथ ही गलत पद को शुद्ध करने के लिए भी। ऐसा वह कोई नया शब्द लिखकर कर सकता है।

निदेश—नीचे के कथनों में कुछ सत्य हैं और कुछ असत्य। कथन सत्य हो तो 'स' के नीचे रेखा खींचो और असत्य हो तो 'अ' के नीचे। पर असत्य होने पर पहले कोष्टक में वह शब्द लिखो जिसके कारण यह असत्य है और दूसरे कोष्टक में शुद्ध शब्द लिखो।

१. भारत की राजधानी कलकत्ता है। स. अ. ( ) ( )

२. स्वामी दयानन्द ने आर्यसमाज चलाया। स. अ. ( ) ( )

सत्य-असत्य परीक्षा के गुण—

१. अध्यापक एवं विद्यार्थी इनसे परिचित हैं अत: ये परीक्षण उन्हें विचित्र नहीं लगते।

२. इनकी रचना सापेक्षतया सरल है एवं इनका विस्तृत रूप से प्रयोग होता है।

३. विषय-वस्तु के विस्तृत क्षेत्र में मापन के लिये इन्हें प्रयुक्त किया जा सकता है, क्योंकि कम समय में पद का उत्तर दिया जा सकता है, पद-सूची में अनेक पद सम्मिलित किए जा सकते हैं और एक मिनट में औसत ३ से लेकर ५ पदों का उत्तर दिया जा सकता है।

४. वस्तुनिष्ठ विधि से इनकी फलांक-गणना सम्भव है।
५. संक्षिप्तता एवं मितव्ययता के कारण ये दिन-प्रतिदिन के छोटे-छोटे परीक्षणों में प्रयुक्त हो सकते हैं ताकि विद्यार्थियों को प्रेरित किया जा सके।
६. सामुदायिक सत्य-असत्य पदों का किसी बात के विभिन्न पक्षों पर विवेचना के लिये या उस सम्बन्ध में विद्यार्थी का ज्ञान बढ़ाने के लिए प्रयोग सम्भव है।

सत्य-असत्य पदों की परिसीमाएँ—

१. निष्पत्ति परीक्षण में इनका उपयोग संदेहास्पद है। इनसे अनुमान-प्रवृत्ति बढ़ती है। यद्यपि कई परिस्थितियों में शुद्धि-सूत्र का प्रयोग किया जाता है तथापि विद्यार्थी अनुमान लगाना नहीं छोड़ते। फिर अनुमान का सूत्र इस प्रकार निर्धारित है कि जिन परीक्षार्थियों ने अनुमान नहीं लगाया उन्हें हानि रहती है।
२. पूर्णतया सत्य या पूर्णतया असत्य कथन की रचना करना एक दुष्कर कार्य है। कथनों में द्विअर्थक, अस्पष्ट, महत्वहीन बातें आ ही जाती हैं।
३. विवादास्पद बातों पर सत्य-असत्य पद बनाना अत्यन्त कठिन है। अनेक प्रश्नों का उत्तर केवल 'हाँ' या 'न' में नहीं दिया जा सकता।
४. जब तक इस प्रकार के अनेक कथन न बनाए जाएँ, परीक्षण अधिक विश्वसनीय नहीं होता।

सत्य-असत्य पदों की रचना के सुझाव—

१. लगभग आधे कथन सत्य और आधे असत्य बनाइए और इन्हें अनियमित क्रम से रखिए। पदों को किसी भी निश्चित क्रम में प्रस्तुत नहीं करना चाहिए।
२. प्रतिक्रिया करने की विधि यथासम्भव सरल रखिए।
३. प्रत्यक्ष कथन प्रयोग कीजिए। सामान्य अर्थ वाले कथनों को मत लीजिए। पुस्तक से यत्र-तत्र कथन उठाकर मत रखिए।
४. सत्य पदों को असत्य पदों की तुलना में कठिन मत बनाइये।
५. जहाँ तक सम्भव हो सरल सत्य-असत्य प्रश्नों के स्थान पर अपरिवर्तित सत्य-असत्य पद बनाइये।
६. यदि अनुमान सूत्र का प्रयोग करें तो निर्देशों में बता दीजिए।
७. कथन इस प्रकार बनाइए कि एक कथन में एक ही विचार हो।

८. कोष्ठक या कौमा में लिखे ऐसे वाक्यांशों को मत लीजिए जिनका मुख्य विचार से कोई सम्बन्ध न हो। जैसे, आगरा, ताज का नगर, एक प्रसिद्ध नगर है।

बहु-विकल्प परीक्षण पद
(Multiple Choice Items)

वस्तुनिष्ठ पदों में आजकल इनका सबसे अधिक प्रचलन है। इसमें एक प्रश्न या अपूर्ण कथन दिया होता है और उसके अनेक उत्तर। दिए हुए निदेशों के अनुसार परीक्षार्थी को इसका सही, सर्वश्रेष्ठ या आदर्श उत्तर छाँटना पड़ता है। बहु-विकल्प पद अनेक प्रकार के हो सकते हैं :—

(१) **एक सही उत्तर** (One Right Answer)—यह बहुविकल्प पदों की सबसे सरल प्रकार है। इसमें एक प्रस्तावित कथन के पश्चात् अनेक कथन दिये होते हैं जिनमें एक शुद्ध होता है एवं अन्य गलत। परीक्षार्थी को सही उत्तर बताना पड़ता है।

निदेश—नीचे के शब्दों में केवल एक शब्द का वर्ण-विन्यास ठीक लिखा है। उसका क्रम पता लगाकर कोष्ठक में लिखा।

( ) (अ) January (ब) Crist (स) Stor (द) Heigt

ये प्रश्नपद अनेक प्रकार से बनाए जा सकते हैं। इनके कुछ रूप ये हैं :—

(i) **परिभाषा**—निस्रोत ग्रन्थि के स्राव को (अ) रस, (ब) नियमन, (स) हारमोन कहते हैं। ( )

(ii) **उद्देश्य**—भोजन में पर्याप्त मात्रा में विटामिन 'सी' होने से निम्न रोग नहीं होते : (अ) बेरीबेरी, (ब) बौनापन, (स) स्कर्वी। ( )

(iii) **कारण**—निम्न से ईंधन जलने में सहायता मिलती है : (अ) ऑक्सीजन (ब) कार्बन-डाइ-ऑक्साइड (स) सल्फ्यूरिक ऐसिड। ( )

(iv) **प्रभाव**—यदि मौमबत्ती की जलती हुई लौ पर एक काँच का बीकर उल्टा रख दें, तो मौमबत्ती की लौ : (अ) और अधिक तेज हो जाएगी, (ब) वैसी ही रहेगी, (स) धीमी पड़ जाएगी, (द) बुझ जाएगी। ( )

(v) **अशुद्ध-पहिचान**—निम्न में से क्या गलत है :
(अ) ४०–३६=४, (ब) १८×०=० (स) ४०÷१०=४
(द) $\frac{1}{4}+\frac{1}{4}=\frac{1}{2}$, (य) १२×(–२)=२४ ( )

(vi) **मूल्यांकन**—निम्न में से कौन सा वजन सब से कम है :—
(अ) २१$\frac{१}{२}$ ग्राम, (ब) १ किलो, (स) २०$\frac{५}{८}$ ग्राम. (द) $\frac{७}{८}$ किलो
(य) $\frac{५}{८}$ किलो। ( )

(vii) **समानता**—हिन्दुस्तान टाइम्स का किससे सबसे अधिक साम्य है ?
(अ) धर्मयुग, (ब) सरिता, (स) फिल्मफेयर, (द) टाइम्स ऑफ इण्डिया, (य) ईस्टर्न इकॉनॉमिस्ट। ( )

(viii) **पुनर्व्यवस्था**—समाज के विकास की अवस्थाएँ निम्न क्रम में हैं :—
(अ) प्रागैतिहासिक साम्यवाद, (ब) पूँजीवाद, (स) सामन्तवाद, (द) साम्यवाद, (य) समाजवाद। ( )

(ix) **विवादास्पद विषय**—व्यक्तित्व तालिकाओं में अनेक त्रुटियाँ होने पर भी उनका प्रयोग होता है, क्योंकि (अ) उनका निदान में उपयोग है, (ब) वे प्रक्षेपी विधियों से अधिक वैध हैं, (स) छानन विधियों के रूप में उनका उपयोग होता है, (द) विद्यार्थी ईमानदारी से उनका उत्तर देते हैं। ( )

(x) **अपूर्ण अंक व्यवस्था**—निम्नलिखित अंक-शृंखला में कौन सी संख्या इसके बाद आयेगी—
१७, १५, १८, १६, १९ — ( )
(a) ० (b) १० (c) १७, (d) २२, (e) २१

(२) **सर्वोत्तम उत्तर-पद** (Best Answer Type)—इनमें प्रश्न के उत्तर में जो कथन दिए होते हैं, वे सभी सही होते हैं। अतः परीक्षार्थी को इनमें से सर्वश्रेष्ठ उत्तर छाँटना होता है।

निदेश—निम्नलिखित कथनों में जो उत्तर आपको सर्वश्रेष्ठ लगे उसका क्रम कोष्टक में लिखिए :—

सन् १८५७ के सिपाही विद्रोह का तात्कालिक कारण था— ( )
(अ) भारतीय सामन्तों का अंग्रेजों से असन्तुष्ट होना।
(ब) बारूद में गाय का गोश्त प्रयोग होता है, ऐसी अफवाह।
(स) भारतीय सामन्तों की सेनाओं का अंग्रेज सेनाओं से अधिक कार्यकुशल होगा।
(द) ईस्ट इण्डिया कम्पनी के अफसरों का दुर्व्यवहार।

(३) **सर्वनिकृष्ट उत्तर पद** (Worst Answer Type Items)—ये ऊपर के पदों के उल्टे हैं। परीक्षार्थी को सर्वश्रेष्ठ उत्तर के स्थान पर निकृष्टतम उत्तर छाँटना पड़ता है।

निदेश—निम्न कथन के अनेक उत्तर दिए हैं। इनमें से आपको जो सबसे अधिक अनुपयुक्त लगे उसका क्रम कोष्ठक में लिखिये।

निम्नलिखित आधारभूत जीवन प्रक्रियाएँ हैं :

(अ) रक्त संचालन[1], (ब) श्वास संचालन[2], (स) उपापचय[3]

(द) ग्रन्थिस्राव[4], (य) पाचन। ( )

(४) **अनुपात-पूर्ति पद** (Analogy Items)—ये गणित के अनुपात सिद्धान्त पर आधारित हैं। इनमें चार भाग होते हैं। प्रथम दो भागों में जो सम्बन्ध दिया रहता है, उसे ज्ञात करके परीक्षार्थी अन्तिम दो भागों का सम्बन्ध ज्ञात करता है। तीसरा भाग दिया होता है, पर चौथा भाग विद्यार्थी अनेक दिए हुए विकल्पों में से स्वयं ज्ञात करता है। बुद्धि एवं निष्पत्ति परीक्षणों में व्यापक रूप से इस प्रकार के पदों का प्रयोग होता है।

निदेश—निम्नलिखित पदों में इस प्रकार अनुपात पूर्ति करो कि जो सम्बन्ध-प्रथम भाग का दूसरे भाग से है वही सम्बन्ध तीसरे का चौथे से हो। दिए हुए कोष्टक में सही उत्तर लिखो :—

नगर : मेयर : : राज्य : ?

(अ. शैरिफ, ब. गवर्नर, स. राजधानी, द. राष्ट्रपति)

बहु-विकल्प परीक्षण-पदों के गुण

१. ये प्रभावपूर्ण ढंग से परीक्षार्थी की निर्वचन एवं विभेद शक्ति तथा सीखे हुए विषय के उपयोग की सामर्थ्य का मापन करते हैं। समझ, निर्णय तथा तर्क-योग्यता के मापन में ये अद्वितीय हैं।
२. इनकी फलांक-गणना पूर्णतया वस्तुनिष्ठ विधि से सम्भव है। मशीनों का प्रयोग भी हो सकता है।
३. बिना किसी जोर-जबरदस्ती या कठिनाई के विद्यार्थी शीघ्रता से इस प्रकार की पद-रचना को समझ लेते हैं।
४. सत्य-असत्य पदों की भाँति अनुमान-तत्व इन्हें अधिक प्रभावित नहीं करता।

बहु-विकल्प परीक्षण-पदों की परिसीमाएँ

१. इस प्रकार के पदों की रचना अत्यन्त कठिन है। कथनों के उत्तरों को कितनी ही सावधानी से बनाया जाए, उनमें ऐसे संकेत परीक्षार्थी

---

१. **रक्त संचालन** (Circulation), २. **श्वास-संचालन** (Respiraton), ३. **उपापचय** (Metabolism), ३. **ग्रन्थि-स्राव** (Gland Secretion).

ज्ञात कर ही लेते हैं कि सही या गलत' उत्तर कौन-सा है, इसका आभास हो जाता है।

२. इनमें सत्य-असत्य प्रश्नों की अपेक्षा अधिक समय एवं धन का अपव्यय होता है।

३. ऐसे बहु-विकल्प पद बनाना दुष्कर कार्य है जिनके अनेक उत्तरों में केवल एक ही सही हो या सर्वोत्तम हो। और यदि सावधानी से न बनाया जाए तो वे केवल प्रत्यास्मरण शक्ति का मापन करते हैं, न कि अभिज्ञान का।

बहु-विकल्प पदों की संरचना के सुझाव

१. स्तम्भ (Item) अर्थात् प्रस्तावित प्रश्न या कथन में केन्द्रीय समस्या होनी चाहिए, न कि केवल अपूर्ण वाक्य।

२. पद व्यावहारिक तथा विश्वसनीय हों, न कि केवल शैक्षिक।

३. केन्द्रीय समस्या को स्पष्ट करने के लिए कभी-कभी उदाहरण दिए जा सकते हैं।

४. अनुमान के प्रभाव को कम करने के लिए चार और यदि सम्भव हो तो पाँच विकल्प देने चाहिए।

५. ऐसे उत्तरों को सम्मिलित मत कीजिए जो देखने से ही सत्य प्रतीत हों, अन्यथा परीक्षार्थी शीघ्र ही गलत और सही उत्तरों में विभेद कर लेगा।

६. सही तथा गलत उत्तरों को किसी पूर्व-निश्चित क्रम में प्रस्तुत मत कीजिए।

मिलान पद

इनमें परीक्षार्थियों को एक ओर दी हुई विषय-वस्तु का दूसरी ओर दी हुई विषय-वस्तु के साथ मिलान करना पड़ता है। प्रायः इसमें शब्दों, सूत्रों, प्रतीकों, वाक्यांशों या कथनों के दो स्तम्भ दिए रहते हैं। एक स्तम्भ के पदों का संबंध दूसरे स्तम्भ के पदों के साथ होता है पर इनका क्रम अव्यवस्थित होता है। परीक्षार्थी को स्तम्भ के प्रत्येक पद का दूसरे स्तम्भ के पदों से मिलान करके क्रम में रखना पड़ता है।

निर्देश—सीधे हाथ की ओर दिए गए स्तम्भ में से प्रत्येक सूत्र के लिए बाँए हाथ के स्तम्भ में से छाँटकर जो उपयुक्त शब्द है, उसका क्रम कोष्ठक में लिखो। पहला पद उदाहरणस्वरूप है :—

(C)	१. $\frac{\Sigma X}{N}$		A. Standard Deviation
( )	२. $\sqrt{\frac{\Sigma X^2}{N}}$		B. Quartile Deriation
( )	३. $\frac{Q_3 - Q_1}{2}$		C. Mean
( )	४. $\frac{\Sigma X^2}{N}$		D. Spearman Correlation
( )	५. $1 - \frac{6 \times \Sigma D^2}{N(N^2 - 1)}$		E. Median
( )	६. $L + \left(\frac{\frac{N}{2} - f}{fm}\right) \times i$		F. Variance

मिलान पदों में अनेक प्रकार के प्रश्न पूछे जा सकते हैं, जैसे

(१) पद और उनकी परिभाषाएँ, (२) एक स्तम्भ में प्रतीक एवं दूसरे में उनके नाम, (३) समस्या एवं उनके हल, (४) एक स्तम्भ में चित्र एवं दूसरे में नाम द्वारा उनका परिचय, (५) वर्गीकरण, (६) कारण एवं प्रभाव ।

मिलान परीक्षण-पदों के गुण—

१. ये विभिन्न प्रकार की विषय-वस्तु, विशेषकर सम्बन्ध तथा साहचर्य पता लगाने की योग्यता का मापन करने में अत्यन्त उपयुक्त है ।
२. इनकी संरचना अत्यन्त सरल है । अत्यन्त कम स्थान में अनेक प्रश्नों का प्रत्युत्तर सम्भव है ।
३. ये पूर्णरूप से वस्तुनिष्ठ होते हैं अतः इनकी फलांक-गणना भी अत्यन्त विश्वसनीय होती है ।
४. यदि इनकी रचना ठीक से की जाए तो अनुमान तत्त्व का पूर्ण रूप से निष्कासन सम्भव है ।

मिलान परीक्षण-पदों की परिसीमाएँ—

१. इनमें पद, शब्द या वाक्यांश अत्यन्त संक्षिप्त होने के कारण, परीक्षार्थी की पूर्ण समझ या जानकारी का उचित मापन नहीं होता ।

२. इसमें तथ्यों के स्मरण पर अनावश्यक बल दिया जाता है ।
३. संरचना अत्यन्त सरल होने से ऐसे पदों को वहाँ भी प्रयुक्त करते हैं जहाँ अन्य प्रकार की पद-रचना अधिक उपयुक्त होती है ।
४. इनमें सही उत्तर क्या है, कभी-कभी इसके संकेत मिल जाते हैं । प्रयत्न करने पर भी पद-निर्माता इस प्रकार के संकेतों का निरसन नहीं कर पाता ।

मिलान पदों की संरचना के सुझाव--

१. प्रत्येक मिलान पद में ५ से कम और १२ से अधिक प्रतिक्रियाएँ नहीं होनी चाहिए । यदि पदों की संख्या कम हो तो बहु-विकल्प पद-रचना उपयुक्त रहती है ।
२. एक पद में पारस्परिक सम्बन्धित तथा एक ही क्षेत्र की विषय-वस्तु होनी चाहिए, क्योंकि यदि असम्बन्धित विषय-वस्तु को सम्मिलित कर लिया जाए तो निरसन प्रक्रिया (Elimination Process) से सही उत्तर का पता चल जाता है ।
३. स्तम्भों को तर्कसंगत क्रम से व्यवस्थित कीजिए ।
४. पूरा मिलान पद एक ही पृष्ठ पर मुद्रित होना चाहिए ।

वर्गीकरण परीक्षण-पद

इनमें कुछ ऐसे शब्द या प्रतीक होते हैं जिनमें एक को छोड़कर बाकी सब का पारस्परिक कोई न कोई सम्बन्ध होता है । परीक्षार्थी से कहा जाता है कि वह उस असम्बन्धित शब्द या प्रतीक को छाँटे ।

निदेश—नीचे की पंक्तियों में प्रत्येक में कुछ शब्द हैं । इनमें से एक शब्द अन्य शब्दों से असम्बन्धित है । अतः उनके वर्ग में नहीं रखा जा सकता । प्रत्येक पंक्ति में इस प्रकार के असम्बन्धित शब्द के नीचे रेखा खींचिए । पहला पद उदाहरणस्वरूप है ।

१. चमेली, बेला, गुलाब, गेंदा, **अनार** ।
२. आगरा, अलीगढ़, दिल्ली, गाय, कलकत्ता ।
३. पुस्तक, कलम, कागज, नदी, दावात ।
४. सुनार, बढ़ई, दर्जी, लुहार, विद्यार्थी ।

सरल प्रत्यास्मरण परीक्षण-पद

इस प्रकार के वस्तुनिष्ठ परीक्षण-पदों में कथन में पूछी गई सूचना देनी

पड़ती है। ये अनेक प्रकार के होते हैं । कुछ में एक शब्द में पूरे प्रश्न की सूचना या उत्तर देना पड़ता है, कुछ अन्य में अनेक वाक्यों में ।

निदेश—नीचे के प्रश्नों के उत्तर उनके सामने दिए हुए कोष्ठकों में लिखो । पहला प्रश्न उदाहरणस्वरूप है ।

१. भारत की राजधानी क्या है ? (दिल्ली)
२. भारत का मुख्य निर्यात क्या है ? ( )
३. स × अ × अब किसके बराबर है ? ( )
४. ४०° सेन्टीग्रेड का फेहरनहाइट में क्या मान होगा । ( )
५. द्वितीय महायुद्ध कब प्रारम्भ हुआ ? ( )
६. रामायण के रचयिता कौन हैं ? ( )

प्रत्यास्मरण परीक्षण पदों के कुछ रूप ये हैं :—

(१) **सरल प्रत्यास्मरण**—इसमें प्रश्न या कथन के उत्तर में दिये हुए स्थान पर संक्षिप्त प्रत्युत्तर लिखना पड़ता है, जैसे 'भारत का प्रधानमन्त्री कौन है ? (————)

(२) **प्रत्युत्तर सूची**—इसमें दिए हुए प्रश्न के उत्तर में प्रत्युत्तर सूची देनी पड़ती है, जैसे नीचे दिए हुए स्थान में फूल के भाग लिखिए :—

१.——, २.——, ३.——, ४.—— ।

(३) **समस्या या वस्तुस्थिति**—इनमें कुछ तथ्य प्रस्तुत रहते हैं और हस्त-कौशल के द्वारा परीक्षार्थी सही उत्तर प्राप्त करता है, जैसे यदि एक वृत्त का व्यास १० इंच हो तो उसका क्षेत्रफल बताओ ।

प्रत्यास्मरण पदों के गुण—

१. ये विशिष्ट बातों की धारणा के मापन में अत्यन्त उपयुक्त हैं । इनके उत्तर में यथार्थ सूचना देना आवश्यक होता है ।
२. इनकी संरचना अत्यन्त सरल है, और ये निष्पत्ति के प्रत्येक क्षेत्र में प्रयुक्त हो सकते हैं ।
३. इनका पर्याप्त विभेदकारी मूल्य है ।
४. यदि पद-संरचना ठीक से की जाए तो अनुमान के प्रभाव को कम किया सकता है ।
५. कुछ विषयों जैसे इतिहास, भूगोल, गणित, भाषा, सूत्र आदि के क्षेत्र में ज्ञान का मापन करने में ये पद विशेष रूप से उपयोगी हैं ।
६. इस प्रकार के पद वैध तथा विश्वसनीय होते हैं ।

प्रत्यास्मरण पदों की परिसीमाएँ

१. यदि प्रत्यास्मरण पदों की संरचना में सावधानी न बरती जाए, तो इनकी फलांक-गणना आत्मनिष्ठ हो जाती है।
२. इनका उत्तर देने में परीक्षार्थी अधिक समय ले सकता है। सम्भव है कि उसे उत्तर पता हो, पर उसका प्रत्यास्मरण करने में उसे कठिनाई का अनुभव हो सकता है।
३. इनमें वाक्शक्ति, शब्द-सुविधा एवं रटने की प्रवृत्ति पर बल दिया जाता है।
४. इन पदों से यह पता नहीं चलता कि विद्यार्थी वास्तव में विषय को ठीक से समझते हैं या नहीं।

प्रत्यास्मरण पदों की संरचना के सुझाव—

१. पद-रचना इस प्रकार कीजिए कि उसका एक ही सही उत्तर हो।
२. सूची-पदों में एक पद के उत्तर में ६ से अधिक सूची शब्द नहीं होने चाहिए।
३. प्रतिक्रियाओं के लिए उचित स्थान दीजिए और यह स्थान प्रायः प्रश्न के अन्त में छोड़िए।
४. प्रश्नों को पाठ्यक्रम पर आधारित रखिए।

रिक्त-स्थान-पूर्ति पद

इनमें कथन में एक या अधिक रिक्त स्थान छोड़ देते हैं और परीक्षार्थी से कहा जाता है कि वह इन रिक्त स्थानों की पूर्ति करे।

निदेश--निम्नलिखित कथनों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :—

१. भारतवर्ष एक कृषि-प्रधान———है।
२. भारत के प्रधान मन्त्री————हैं।
३. पसीना————की ऋतु में अधिक निकलता है।
४ ————ने ताजमहल बनवाया।

रिक्त-स्थान-पूर्ति पदों के भी लगभग वे ही गुण तथा परिसीमाएँ हैं जो प्रत्यास्मरण पदों में हैं।

नवीन परीक्षण-पदों की संरचना के सामान्य सुझाव

पीछे प्रत्येक प्रकार के परीक्षण-पदों का वर्णन करते समय इनके निर्माण

के कुछ सुझाव भी यथा-स्थान दिए गए हैं। यहाँ हम सभी प्रकार के नवीन पदों की रचना में कुछ आम सुझाव दे रहे हैं।

(१) प्रश्न इस प्रकार बनाने चाहिए कि उनके निश्चित उत्तर हों। सत्य-असत्य पदों में द्विअर्थकता या संदेहात्मकता नहीं होनी चाहिए। बहु-विकल्प पदों में यदि सही उत्तर की प्रतिक्रिया करनी है तो केवल एक ही सही उत्तर होना चाहिए।

(२) अनुमान के प्रभाव को कम करने के लिए बहु-विकल्प पदों में कम से कम ४-५ विकल्प देने उचित हैं। मिलान पदों में भी क्रमसंख्या १०- १२ होनी चाहिए ताकि निरसन प्रक्रिया से परीक्षार्थी सही उत्तर ज्ञात न कर सके।

(३) एक पद में एक ही विषय-वस्तु से सम्बन्धित वाक्यांश या कथन होने चाहिए ताकि असंगति दोष न आने पाए। मुख्यतः बहु-विकल्प तथा मिलान पदों में इस बात का ख्याल रखना चाहिए।

(४) पद-संरचना करते समय ही यह निश्चय करना चाहिए कि फलांक-गणना किस विधि से करनी है—हाथ से, स्टेन्सिल से, पन्च-बोर्ड विधि से, मशीन से या किसी अन्य विधि से। इसी आधार पर कुञ्जी बनानी चाहिए। फलांक-गणना वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए। अनुमान के प्रभाव को ठीक करने के लिए शुद्धि-सूत्र का प्रयोग श्रेयस्कर है।

(५) नवीन परीक्षण-पद अत्यन्त छोटे होते हैं और निबन्ध प्रश्नों के उत्तरों की भाँति इनमें बहुत देर नहीं लगती। अतः पूरे परीक्षण में काफी नवीन पद होने चाहिए। एक घण्टे में १००-१५० प्रश्नों का उत्तर सरलता से दिया जा सकता है। अतः कम से कम इतने पद तो होने ही चाहिए।

(६) किसी भी दशा में पदों के कथनों या उनके उत्तरों को निश्चित या नियमित क्रम में प्रस्तुत नहीं करना चाहिए। अन्यथा परीक्षार्थी यह अनुमान लगाने में सफल हो सकते हैं कि कौन सा उत्तर सही है और कौनसा गलत। उदाहरणतया सत्य-असत्य परीक्षण में एक कथन सही और एक गलत, यह क्रम कभी नहीं रखना चाहिए।

(७) निदेश निश्चित एवं स्पष्ट होने चाहिए एवं प्रारम्भ में प्रत्येक प्रकार के पदों को स्पष्ट रूप से समझाने के लिए उदाहरण दे देने चाहिए।

(८) परीक्षण को वस्तुगत बनाने के लिए पदों की संरचना पाठ्यक्रम में से होनी चाहिए। कोर्स के बाहर की बातें नहीं पूछनी चाहिए।

नवीन प्रकार के परीक्षण-पद
[संक्षिप्त सारिणी]

सत्य-असत्य या विकल्प प्रत्युत्तर पद

१. दो प्रत्युत्तर पद
२. तीन प्रत्युत्तर पद
३. शुद्धीकरण पद
४. समुदाय रूप-पद
५. अपरिवर्त्तित सत्य-असत्य पद

बहुविकल्प पद

१. एक सही उत्तर-पद :—
  परिभाषा
    उद्देश्य
    कारण
    प्रभाव
    शुद्धि-पहिचान
    मूल्यांकन
    समानता
    पुनर्व्यवस्था
    विवादास्पद विषय
    अपूर्ण अंक व्यवस्था
२. सर्वोत्तम उत्तर-पद
३. सर्वनिकृष्ट उत्तर-पद
४. अनुपात-पूर्त्ति-पद

मिलान पद

वर्गीकरण परीक्षण-पद

सरल प्रत्यास्मरण परीक्षण-पद

१. सरल प्रत्यास्मरण
२. प्रत्युत्तर-सूची
३. समस्या या वस्तुस्थिति

रिक्त-स्थान पूर्ति पद

: ७ :

परीक्षणों का प्रशासन

यद्यपि प्रशासनिक समस्याएँ किसी भी परीक्षण के कार्यक्रम में उठती हैं, पर यदि कार्यक्रम काफी बड़ा है एवं बड़े समूह पर प्रशासन किया जाता है तो इनका और भी अधिक महत्व होता है। किसी भी कार्यकुशल परीक्षण-प्रशासन के दो उद्देश्य हैं—(अ) प्रशासन, फलांक-गणना आदि की क्रिया-विधि में एकरूपता (Uniformity), ताकि किसी व्यक्ति की योग्यता का सदैव एक ही प्रकार से मूल्यांकन किया जा सके, चाहे वह कहीं भी एवं किसी भी व्यक्ति के द्वारा किया जाए; (ब) संकार्य की कार्यकुशलता, अर्थात् तत्परता जिससे परिणाम प्राप्त हों और उनका उपयोग किया जा सके। कार्यकुशलता का अर्थ समय एवं धन की मितव्ययता से भी है।

कुछ परीक्षणों का प्रशासन अत्यन्त सरल है, पर अन्य का दुष्कर। कुछ परीक्षणों का प्रशासन इतना कठिन है कि इनके लिए लम्बे प्रशिक्षण की आवश्यकता पड़ती है। सामान्यतया सामूहिक परीक्षणों के प्रशासन में व्यक्तिगत परीक्षणों की अपेक्षा कम दक्षता चाहिए। व्यक्तिगत परीक्षणों में केवल निर्देश ही नहीं पढ़ने होते, अनेक अन्य भी कार्य करने हैं, जैसे एकतानता स्थापित करना, व्याख्या देना, व्यवहार का निरीक्षण करना, इत्यादि। प्रशासन की मुख्य समस्या है एकरूपता ताकि विभिन्न केन्द्रों के परीक्षार्थियों की परीक्षा लेने

में कोई अन्तर न आए, एक समूह को दूसरे की अपेक्षा लाभ न रहे एवं मानकों का सभी समूहों पर एक समान उपयोग हो सके।

सामूहिक परीक्षण में एक मुख्य प्रशासनिक कार्य समूह का नियंत्रण भी है। किन्तु यह अत्यन्त कठोरता से नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे परीक्षण की वस्तुस्थिति में एक अस्वाभाविकता उत्पन्न होगी। यदि परीक्षक मित्रता का वातावरण बनाए रखे एवं उसकी परीक्षार्थियों से सहानुभूति हो तो एकतानता के माध्यम से समूह पर नियंत्रण रखा जा सकता है। यदि आवश्यकता समझे तो परीक्षक प्रारम्भ में कठोर रहकर बाद में अधिक लचीला दृष्टिकोण अपना सकता है।

परीक्षण के प्रशासन में यह ध्यान रखना पड़ता है कि वातावरण परीक्षार्थी के अनुकूल है या नहीं। वह उपस्थित उद्दीपकों के साथ अभियोजन कर सका है या नहीं और परीक्षार्थी उसे किस रूप में लेता है।

अब हम प्रशासन सम्बन्धी विभिन्न बातों पर अलग-अलग पर संक्षेप में प्रकाश डालेंगे।

परीक्षण की परिस्थितियाँ (Conditions of Testing)—

सभी परीक्षणों के प्रशासन में कुछ समान समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। इनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :—

१. उचित वातायन तथा प्रकाश की व्यवस्था होनी आवश्यक है, अन्यथा परीक्षार्थियों को असुविधा रहेगी। विशेषकर गति-परीक्षणों में लिखने का उचित स्थान न होने के कारण फलांकों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

२. परीक्षार्थियों के बैठने की व्यवस्था इस प्रकार करनी चाहिए कि वे निदेश सुन सकें। अत्यन्त बड़े आकार के कमरे सामूहिक परीक्षणों के लिए उपयुक्त नहीं होते, क्योंकि इनमें परीक्षार्थी समझ में न आने पर भी प्रश्न पूछने में संकोच कर सकता है।

३. परीक्षण ऐसे अवसर पर देना चाहिए जब परीक्षार्थी थका हुआ न हो या जब वह संवेगात्मक रूप से असन्तुलित, परेशान या अस्थिर न हो, क्योंकि ऐसी परिस्थिति में परीक्षण में वह अपनी वास्तविक योग्यता को व्यक्त करने में समर्थ नहीं होगा। थकान के प्रभाव का निवारण करने के लिए परीक्षणों में काफी मध्यान्तर दिया जा सकता है और परीक्षण के एक दिन पूर्व पर्याप्त विश्राम एवं निद्रा की व्यवस्था भी की जा सकती है।

४. जिस कमरे में परीक्षण किया जाए वह शान्त तथा बाह्य कोलाहल से मुक्त होना चाहिए। इसमें अन्य सुविधाएँ होनी चाहिए जैसे पानी एवं हवा की व्यवस्था।

५. परीक्षक को निष्पक्ष एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। यद्यपि परीक्षक का उद्देश्य यह होना चाहिए कि परीक्षार्थी अधिकतम प्रयास करें। पर इस उद्देश्य की पूर्त्ति के लिए उसे स्वयं फलांकों को अनुकूल दिशा में प्रभावित करने का प्रयास नहीं करना चाहिए।

६. केवल प्रशिक्षित एवं समर्थ व्यक्ति ही परीक्षण दे सकें, ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए। प्रत्येक स्कूल या विद्यालय में कम से कम एक व्यक्ति तो ऐसा होना ही चाहिए जो परीक्षण का प्रशासन कर सके एवं उस के परिणामों का निर्वचन कर सके। पर सामान्य बुद्धि एवं निष्पत्ति परीक्षणों का प्रशासन कक्षा के अध्यापक भी कर सकते है, यदि उन्हें इसका अभ्यास हो और उन्होंने परीक्षण की विवरण-पुस्तिका ठीक से पढ़ ली हो।

परीक्षण का समय (Schedule or time of Testing)

परीक्षण किस समय दिया जाता है, इसका फलांकों पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। दोपहर के बाद थकान आने लगती है एवं कार्यकुशलता कम होती है। अतः प्रश्नों का उत्तर देने में परीक्षार्थी इस समय ठीक से प्रेरित नहीं होंगे। पर समय कितना रखा जाए और उसकी पाबन्दी किस प्रकार हो, यह बहुत कुछ परीक्षण की व्यावहारिक परिस्थितियों पर निर्भर है। यदि कोई विशिष्ट या असाधारण बात न हो तो परीक्षा तब लेनी चाहिए जबकि परीक्षार्थी स्वस्थ एवं प्रेरित हों। यदि दो परीक्षणों के मध्य उचित समयान्तर हो तो सर्वश्रेष्ठ है। संक्षिप्त गति-परीक्षणों को लम्बे शक्ति-परीक्षणों के साथ रखा जा सकता है। इससे नीरसता नहीं रहेगी एवं परीक्षण-सामग्री के वितरण एवं संकलन में भी सुविधा रहेगी। परीक्षार्थी में अभिरुचि एवं प्रयास जाग्रत करने के लिए भी इस प्रकार परीक्षण देना उपयुक्त है।

स्वयं परीक्षण कितना समय ले, यह अनेक बातों पर निर्भर है। गति अधिक महत्वपूर्ण होने पर समय अपेक्षाकृत कम देना चाहिए ताकि दी हुई समयावधि में सब परीक्षार्थी परीक्षण-कार्य पूरा न कर सकें। तथ्यात्मक ज्ञान का मापन करने में समय पर्याप्त एवं उदारता से देना चाहिए। पर इसके लिए कोई कठोर नियम नहीं बनाया जा सकता। समय-अवधि को निर्धारित करने वाले कुछ तथ्य निम्नलिखित हैं—

(अ) व्यक्ति की स्वाभाविक वाचन गति ।
(ब) प्रश्नों की औसत लम्बाई ।
(स) प्रश्नों की प्रकृति ।
(द) उत्तर देने में आवश्यक मानसिक प्रक्रिया ।

ऐतिहासिक घटनाओं से सम्बन्धित प्रश्न-पदों में अधिक समय नहीं लगता। अतः ऐसे परीक्षणों का समय कम निर्धारित करना चाहिए। किसी अत्यधिक उत्तरदायित्व के तकनीकी या प्रशासनिक कार्य के लिए परीक्षा लेते समय ७-८ घण्टे तक लम्बा परीक्षण दिया जा सकता है। ऐसी परिस्थिति में बीच में दो-एक बार कॉफी, नाश्ता या अन्य वस्तुएँ दी जा सकती हैं ताकि कार्यकुशलता अक्षुण्ण बनी रहे।

परीक्षणों, विशेषकर बुद्धि-परीक्षणों, को वर्ष में किस समय प्रयुक्त किया जाए, इस पर मनोवैज्ञानिकों में मतभेद है। यदि वर्गीकरण के लिए प्रशासन करना हो तो वर्ष का आरम्भ ठीक रहेगा और क्रमोन्नति के लिए तो वर्ष का अन्त। इसी प्रकार निष्पत्ति परीक्षण कब और कितनी बार प्रयुक्त हों, यह उद्देश्य पर निर्भर है।

परीक्षार्थी को दिये जाने वाले निदेश (Directions given to the Examinee)—

परीक्षण के प्रशासन का सबसे महत्वपूर्ण कार्य परीक्षार्थी को निदेश देना है, क्योंकि वस्तुगत परीक्षण एक बड़े पैमाने पर प्रयुक्त होते हैं और इनका उद्देश्य विभिन्न केन्द्रों पर परीक्षार्थी की योग्यता की तुलना करना है। यदि अलग-अलग केन्द्रों पर अलग-अलग निदेश दिए जाएँगे, तो परीक्षांकों में इसके कारण अन्तर आजाएगा। अतः योग्यता का मूल्यांकन परीक्षण की विवरण-पुस्तिका में दिए गए मानकों (Norms) के आधार पर उचित रूप से नहीं हो सकेगा। अतः इस सम्बन्ध में क्या सावधानियाँ बरती जाएँ, उनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है :—

(१) परीक्षक को स्वयं निदेशों से भली-भाँति परिचित होना चाहिए। आकस्मिक परिस्थितियों का उचित नियंत्रण करने की योग्यता एवं आकर्षक आवाज होना भी वांच्छनीय है।

(२) निदेश स्पष्ट हों। किसी बात को समझाने के लिए निदेश दुहराए भी जा सकते हैं। पर निदेश अत्यन्त सरल भाषा में होने चाहिए। वाक्य संक्षिप्त होने चाहिए एवं शब्द-भण्डार से परीक्षार्थी परिचित हो। निदेशों में पर्याप्त उदाहरण होने चाहिए। मूल निदेश स्वयं परीक्षा-पत्र में छपे हों।

(३) निदेश प्रत्यक्ष रूप से देने चाहिए, न कि घुमा-फिरा कर। आदर्श-विधि कुछ इस प्रकार है—"उत्तर पुस्तिका निकालो; पृष्ठ पलटो; अब सबसे ऊपर अपना नाम लिखो।" यदि आवश्यक हो तो निदेशक को चाहिए कि वह स्वयं अपने हाथ में एक उत्तर-पुस्तिका ले ले और स्वयं करके बताए।

(४) सभी केन्द्रों पर एकसमान निदेश दिया जाना सम्भव हो सके, इसके लिए आवश्यक है कि 'निदेश' जैसे कि विवरण-पुस्तिका में लिखे हैं, बिल्कुल वैसे ही दिये जाए। निदेशक कुछ अपनी ओर से घटाए या बढ़ाये नहीं, जब तक कि विवरण-पुस्तिका में लिखा न हो।

(५) यदि निदेश पढ़े जाने के बाद परीक्षार्थी कोई प्रश्न पूछे तो उसकी शंका का समाधान तो किया जा सकता है, पर ऐसा करने में कोई भी अतिरिक्त सूचना नहीं दी जानी चाहिए।

(६) निदेश जोर से बोलकर पढ़े जाने चाहिए, विशेषकर 'सामूहिक परीक्षण' में, ताकि दूर बैठे विद्यार्थी भी सुन सकें एवं कम श्रवण-शक्ति वाले विद्यार्थी घाटे में न रहें।

(७) विभिन्न प्रकार के प्रश्नों के लिए अलग-अलग निदेश दिए जा सकते हैं। अभ्यास के रूप में भी कुछ प्रश्नों के उदाहरण देने चाहिए। यदि परीक्षार्थी वस्तुगत परीक्षण विधि से भली-भाँति परिचित हैं तो विस्तृत निदेश देना आवश्यक नहीं है।

(८) निदेश द्विअर्थक न हों ताकि विभिन्न परीक्षार्थी उनका अलग-अलग प्रकार से विवेचन न करें।

परीक्षण एवं अन्य परीक्षण-सामग्री की सुरक्षा (Security of Tests and Testing Materials)—

१. परीक्षण के साथ पूर्व परिचय के प्रभाव को नष्ट करने के लिए परीक्षण की प्रतिलिपियाँ नष्ट की जा सकती हैं और जब भी परीक्षा ली जाए, एक नए प्रतिरूप की रचना करनी चाहिए।
२. परीक्षण की सामग्री को ताले-कुंजी में रखना आवश्यक है। केवल अधिकृत व्यक्तियों की ही इस सामग्री तक पहुँच होनी चाहिए।
३. सभी परीक्षण-सामग्री की एक सूची बनाकर रखनी चाहिए। केवल उतनी ही पत्रिकाएँ या परीक्षण-पत्र निकालने चाहिए जितने तत्काल आवश्यकता की पूर्ति कर सकें। तत्पश्चात् इनका उचित हिसाब लिख लेना चाहिए।

४. वे पत्रिकाएँ जिनका अब कोई उपयोग नहीं है, नष्ट कर देनी चाहिए।

५. परीक्षार्थियों को परीक्षा-भवन में कोई कागज, टिप्पणियाँ, इत्यादि ले जाने की स्वतंत्रता नहीं होनी चाहिए। सभी आवश्यक सहायक सामग्री, जैसे ग्राफ, लॉग-टेबिल्स् आदि परीक्षकों की ओर से दी जानी चाहिए। बाद में इस अतिरिक्त सामग्री को एकत्र कर लेना चाहिए।

परीक्षार्थियों को प्रेरित करना (Motivating the Subjects)---

किसी नौकरी, उद्योग में चयन, प्रतियोगिता आदि के लिए परीक्षण का प्रशासन किया जाता है तो परीक्षार्थी स्वयं सन्तोषजनक रूप से प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयास करते हैं और उन्हें प्रेरित किया जाय यह समस्या नहीं रहती, पर परीक्षण की अनेक परिस्थितियों में सन्तोषजनक रूप से परिक्षार्थी उत्तर देने के लिए प्रेरित हों, इसका ध्यान रखना पड़ता है। ऐसा विशेषकर तब होता है जब परीक्षाएँ या तो वर्गीकरण के लिए प्रयुक्त हों या अनुसन्धान के लिए। इसके लिए कई विधियाँ अपनाई जा सकती हैं, जैसे (अ) परीक्षा से पूर्व परिचय देते समय इस बात पर बल दिया जाए कि परीक्षण में सन्तोषजनक उत्तर दिए जाएँ। (ब) परीक्षार्थियों को परीक्षण की महत्ता का बोध कराया जाए। (स) अतिरिक्त प्रेरणा दी जाए।

परीक्षा के फलांकों पर विभिन्न प्रकार के प्रेरणा-उद्दीपकों का क्या प्रभाव पड़ता है, इस सम्बन्ध में अनेक अनुसन्धान हुए हैं। हम इनमें से कुछ का संक्षेप में वर्णन करेंगे।

अनेक उत्तेजक (Incentives) फलांकों में वृद्धि करते हैं, जैसे अहं-संयोग (Ego-Involvement) या आत्म-सम्मान तथा दूसरों के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने की इच्छा के कारण कार्य में रुचि बढ़ती है और निष्कर्षतः फलांकों में वृद्धि होती है। सामान्य प्रलोभनों, जैसे पुरस्कार, आर्थिक लाभ आदि से परीक्षणों में विशेष फलांक वृद्धि नहीं होती। पर यदि प्रयोज्य को यह विश्वास हो जाए कि फलांक-वृद्धि में उसका हित है तो अवश्य वृद्धि होगी। परीक्षण में सफल होकर दूसरों को प्रभावित करने की प्रेरणा जन्म से ही नहीं आती। मध्यम वर्ग में प्रायः पुरस्कार पाने, अवसरों से लाभ उठाने एवं इसी प्रकार के अन्य प्रलोभन परीक्षा में फलांक बढ़ाने का प्रयास करने की ओर प्रेरित करते हैं।

अनेक प्रकार की प्रेरणाएँ परीक्षण में फलांकों को कम करती हैं। जैसे

विद्यालय में वर्गीकरण के उद्देश्य से जो परीक्षाएँ दी जाती हैं, उनमें योग्य विद्यार्थी को कभी-कभी ऐसा आभास हो सकता है कि अधिक फलांक आने पर उसे अधिक उत्तरदायित्व सौंपा जा सकेगा। अतः वह परीक्षा में जान-बूझकर कम अंक लाने का प्रयास कर सकता है। अत्यधिक फलांक लाने की तीव्र इच्छा से उत्पन्न तनाव (Tension) के कारण भी फलांक पर उल्टा असर पड़ना सम्भव है, क्योंकि तनाव के कारण निष्पादन परीक्षणों में उसकी एकाग्रीकरण तथा कार्य की गति उचित नहीं रहेगी एवं शाब्दिक परीक्षणों में आलोचना के भय से परीक्षार्थी उचित उत्तर नहीं दे पायेगा। उपचार-सम्बन्धी मानसिक परीक्षण में अत्यधिक चिन्ता के कारण प्रयोज्य अनुचित उत्तर देगा। कभी-कभी जब परीक्षक परीक्षार्थियों को प्रेरित करने के लिए जो विधि अपनाता है, उससे परीक्षण में घबराहट (Test Anxiety) बढ़ जाती है। परीक्षण की वस्तुस्थिति में सन्निहित अनेक आतंक (Threats) के कारण भी फलांक कम हो सकते हैं। एक बाल-अपराधी के मन में यह आतंक बैठ सकता है कि परीक्षा-परिणामों से उसे दण्ड मिलेगा। एक अन्य बालक के मन में यह भय सम्भव है कि परीक्षा-परिणाम सुनकर उसके माता-पिता का उसके प्रति स्नेह कम हो जाएगा।

इस प्रकार अनेक प्रकार के प्रेरक परीक्षण के फलांकों को प्रभावित करते हैं। **हरलाक**[1] के एक अध्ययन में प्रशंसा एवं निन्दा दोनों से एक बुद्धि-परीक्षण में बालकों के फलांकों में वृद्धि हुई। उपहास, प्रतियोगिता, सामूहिक प्रतिस्पर्द्धा, परिणामों का ज्ञान, अवलोककों की उपस्थिति, पुरस्कार इस प्रकार के अन्य प्रेरक हैं। **गोर्डन**[2] के अनुसार जब दो सप्ताह पश्चात् पुनर्परीक्षण में बालकों को निरुत्साहित किया गया तो उनके फलांक कम हो गए। प्रयोज्य किस प्रकार के हैं, इसका भी उनके फलांकों पर प्रभाव पड़ता है। हमारे देश में अभी तक लाखों मध्यवर्गीय व्यक्ति परीक्षण-कला में योग्य नहीं हैं और न परीक्षण कार्य से वे ठीक से अभियोजन ही कर पाते हैं। स्पष्ट है कि इनके फलांकों पर इसका उल्टा असर पड़ेगा। संवेगात्मक रूप से कुसंयोजित या अस्थिर व्यक्तियों, अत्यन्त कम अवस्था के बालकों, निम्न आर्थिक-सामाजिक स्तर के व्यक्तियों या

1. Hurlock, E. B. : *The Value of praise and reproof as incentives for children.* Arch. Psychol. 1924, No. 71. p. 78.
2. Gordon, L. V. and Durea.. M. A. : *The effect of discouragement on the revised Stanford Binet Scale*, J. Genet. Psychology, 1948. No. 73. pp. 201-206.

अन्य प्रकार के मनोदौर्बल्य से पीड़ित व्यक्तियों का फलांक कम रहेगा। सामान्य व्यक्तियों के फलांकों पर असुरक्षा की भावना का प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। छोटे बालकों पर कुछ अवधि के उपरान्त किसी परीक्षण करने पर फलांक बढ़ जाते हैं, क्योंकि इस अवधि में उनकी शारीरिक वृद्धि हो जाती है और उनका शर्मीलापन भी कम हो जाता है।

एकतानता स्थापित करना (Establishing Rapport)—

स्वयं परीक्षण के प्रशासन में अनेक बातें परीक्षांकों पर प्रभाव डालती हैं। यह अनुकूल भी हो सकता है और प्रतिकूल भी। विरामघड़ी लेकर परीक्षार्थी के पास खड़े हो जाना, आलोचना या प्रशंसा में कुछ शब्द कह देना, या परीक्षार्थी को कितना समय शेष है, यह बताना, परीक्षण के उचित उत्तर देने में बाधक हो सकता है। अतः परीक्षण के प्रशासन से पहले एकतानता स्थापित करना अत्यन्त आवश्यक है। पर इसके लिए कौन सी विधि अपनायी जाए, यह स्वयं परीक्षण एवं परीक्षार्थियों के स्वभाव पर निर्भर है। छोटे बालकों के परीक्षण में मुख्य कठिनाई है शर्मीलापन, ध्यान का बट जाना, इत्यदि। अतः परीक्षक की ओर से मित्रता एवं प्रसन्नता का रुख काफी सहायक सिद्ध होगा, क्योंकि इससे बालक अपने वातावरण से अधिक परिचय प्राप्त कर सकेगा। बड़े बालकों में प्रतियोगिता एवं प्रतिस्पर्द्धा के माध्यम से एकतानता स्थापित कर सकते हैं। पर प्रतियोगिता से पूर्व बालक की असफल होने की आशंका को दूर कर देना चाहिए। उदाहरण के लिए बालक को यह बताया जा सकता है कि सभी व्यक्ति सफल नहीं होते, हमें तो केवल प्रयास करना चाहिए। या फिर यह कि कोई भी परीक्षार्थी परीक्षण के सब प्रश्नों को तो हल कर ही नहीं सकता। अत: हताश होने की आवश्यकता नहीं है।

कुछ दिन पूर्व परीक्षण की सूचना देकर या उसके बारे में कुछ तथ्यों की व्याख्या करके औपचारिकता भी कम की जा सकती है। कुछ सामूहिक परीक्षणों में इस बात की व्यवस्था होती है कि परीक्षक एक प्रारम्भिक व्याख्यानात्मक कथन परीक्षार्थियों को पढ़ कर सुना दे। युवकों और प्रौढ़ व्यक्तियों के साथ एकतानता स्थापित करना उतनी महत्वपूर्ण समस्या नहीं है। अतः यह विश्वास दिलाकर कि परीक्षण सफल होने में ही उसका हित है, सहयोग प्राप्त किया जा सकता है।

यदि प्रशासन की पूर्व तैयारी करके परीक्षार्थियों को उससे परिचित करा दिया जाए तो एकतानता स्थापित करने में सहायता मिलेगी। इसमें शाब्दिक

निदेशों को स्मरण कराया जा सकता है या निष्पादन परीक्षाओं में प्रयुक्त सामान को परीक्षार्थियों को दिखाया सकता है। पूरी कार्यविधि का रिहर्सल भी किया जा सकता है।

नकल करने और धोखा देने की प्रवृत्ति की रोक (To Check Copying and Cheating)

यदि परीक्षार्थी सामान्य प्रवृत्ति के हों, उनकी पृष्ठभूमि एवं वातावरण ठीक हो, परीक्षणों से वे पूर्व-परिचित हों, परीक्षण में सन्तोषजनक फलांक प्राप्त करने में उनका हित हो, एवं परीक्षक योग्य तथा प्रशिक्षित हों एवं उचित एकतानता स्थापित कर सकें तो प्रायः यह समस्या उत्पन्न नहीं होती। पर यह एक आदर्श बात है। व्यवहार में सम्पूर्ण परीक्षण की वस्तुस्थिति में कोई न कोई त्रुटि रह ही जाती है। अतः नकल करने एवं अन्य विधियों से परीक्षण में सफल होने के लिए अनेक परीक्षार्थी प्रयास करते हैं। यह प्रवृत्ति अनेक प्रकार व्यक्त होती है :—

(१) **निश्चित से अधिक समय लेना** (To Increase the Time Limit)—या तो परीक्षार्थी तभी से पदों के उत्तर देना प्रारम्भ कर देता है जब परीक्षक निर्देश दे रहा हो या वह तब भी लिखता रहता है जब अन्य परीक्षार्थी समय समाप्त हो जाने के कारण अपनी उत्तर पुस्तिकाएँ वापस कर रहे होते हैं। इस प्रवृत्ति का निराकरण करने के लिए पर्यवेक्षण और भी अधिक सावधानी से करना चाहिए एवं पद इस प्रकार से व्यवस्थित रूप से लिखने चाहिए कि निदेशों को पढ़ कर वास्तविक परीक्षण प्रारम्भ करने में परीक्षार्थी को कुछ समय लगे।

(२) **पूर्व ज्ञान** (Prior Knowledge)—परीक्षार्थियों का ऐसे व्यक्तियों के सम्पर्क में आने के कारण जो पहले परीक्षण दे सके हैं, पदों का पूर्व ज्ञान हो सकता है। इसे रोकने के लिए एक ही परीक्षण के अनेक प्रतिरूप बनाए जा सकते हैं और समय इस प्रकार निर्धारित किया जा सकता है कि परीक्षार्थी पूर्व परीक्षितों के साथ सम्पर्क स्थापित न कर सकें।

(३) **साथी की कापी देखकर नकल करना** (To Copy from a Neighbour)—प्रायः यह एक सर्वाधिक प्रचलित विधि है और इसे रोकने के लिए कोई पूर्ण रूप से कारगर विधि नहीं है। सिवाय इसके कि पर्यवेक्षण उचित रूप से किया जाय, उचित रूप से बैठने की व्यवस्था (Seating Arrangement) हो; और इसमें पर्याप्त अन्तर हो।

(४) **परीक्षा भवन में टिप्पणियाँ ले जाना** (To Take Notes in the

Examination Hall)–अनेक परीक्षार्थी परीक्षा-भवन में सम्भावित प्रश्नों पर टिप्पणियाँ ले जा सकते हैं; पर ऐसा निबन्धात्मक परीक्षाओं में अधिक सम्भव है, क्योंकि वस्तुगत परीक्षण के प्रश्न इतने अधिक होते हैं कि यह विधि उपयोग में नहीं लाई जा सकती । उचित पर्यवेक्षण ही इसके निवारण की एक विधि है ।

(५) **मिथ्या उत्तर देना** (Faking)–ऐसा व्यक्तित्व परीक्षणों में होता है, विशेषकर प्रश्नावलियों में जब परीक्षार्थी अनुकूल प्रभाव डालने के लिये जान-बूझ कर असत्य उत्तर देते हैं । इन प्रश्नावलियों के अनेक प्रश्न ऐसे होते हैं जिनका कोई न कोई ऐसा उत्तर होता है जो समाजिक दृष्टि से मान्य हो । परीक्षार्थी इसी उत्तर को व्यक्त कर देता है, चाहे यह उसके व्यक्तित्व के अनुरूप हो या नहीं । पर शैक्षिक तथा बौद्धिक दृष्टि से श्रेष्ठतर व्यक्ति ऐसा करने में अधिक समर्थ होते हैं । प्रक्षेपण विधियों में भी इस प्रकार के असत्य उत्तर देकर अपने व्यक्तित्व के वास्तविक रूप को प्रकट न होने देना कुछ सीमा तक सम्भव है । बुद्धि-परीक्षणों में जहाँ परीक्षण का उद्देश्य विभिन्न उद्योगों या व्यवसायों के लिए व्यक्तियों का वर्गीकरण है, परीक्षार्थी जान-बूझकर अपने फलांकों को कम करने का प्रयास कर सकता है ताकि उसे किसी वांच्छनीय व्यवसाय में वर्गीकृत किया जा सके ।

इस प्रकार की प्रवृत्ति को रोकने के लिए जो प्रयास किया जा सकते हैं, उनमें से कुछ महत्वपूर्ण ये हैं : (अ) परीक्षण के वास्तविक उद्देश्य को छिपा दिया जाए, जैसा कि अभिरुचि या अभिवृत्तियों के परीक्षण में कभी-कभी किया जाता है । पर यह विधि अधिक प्रभावशाली नहीं है, क्योंकि परीक्षार्थी परीक्षण का उद्देश्य समझ ही लेते हैं । (ब) ऐसे प्रश्न चुने जाएँ जिनके एक से अधिक उत्तर हों जो सामाजिक दृष्टि से मान्य भी हों । (स) एक ऐसी विशिष्ट फलांक कुंजी बनाई जाए जिससे जान-बूझकर दिए गए असत्य उत्तरों का बोध हो सके ।

अनुमान लगाना (Guessing)—

परीक्षण के प्रश्न-पद प्रायः दो प्रकार के सामान्य वर्गों में बाँटे जा सकते हैं : एक वे जिनका उत्तर परीक्षार्थी जानता है और दूसरे वे जिनका उत्तर वह नहीं जानता । यदि प्रश्न में दो विकल्प (Choices) हों तो परीक्षार्थी अनेक उन प्रश्नों के भी सही उत्तर देगा, जिनका उत्तर उसे ज्ञात नहीं है । ऐसा वह अनुमान के आधार पर करेगा । दो विकल्प होने पर वह अनुमान के आधार पर सामान्यतः ५०% प्रश्नों के ठीक विकल्प चुनेगा और ५०% के गलत ।

उस प्रश्न-पद में जिसमें चार विकल्प हैं अनुमान से केवल २५ प्रतिशत विकल्प ही वह सही चुनेगा। अतः यह आवश्यक है कि सैद्धान्तिक रूप से कोई ऐसी विधि निकाली जाए कि अनुमान के प्रभाव को नष्ट किया जा सके एवं अनुमान के आधार पर ही परीक्षार्थी अपने फलांक बढ़ाने में सफल न हो सके। इसके लिए निम्न सूत्र बनाया गया है—

$$\text{Score} = \text{Right} - \frac{\text{Wrong}}{\text{Choices}-1} \quad \text{Or} \quad S = R - \frac{W}{N-1}$$

यदि दो विकल्प हैं तो यह सूत्र होगा : $S = R - \frac{W}{2-1}$ Or $S = R - W$

तीन विकल्प होने पर यह सूत्र होगा : $S = R - \frac{W}{2}$

चार विकल्प होने पर : $S = R - \frac{W}{3}$

पाँच विकल्प होने पर : $S = R - \frac{W}{4}$ इत्यादि।

शुद्धि-सूत्र (Correction Formula) की आवश्यकता क्यों पड़ती है, इसे स्पष्ट करने के लिए एक उदाहरण लीजिए। मान लीजिए किसी परीक्षण में ४० प्रश्न-पद हैं। परीक्षार्थी इनमें से केवल २० के ही सही उत्तर जानता है। अतः इन २० के तो वह सही उत्तर दे ही देता है। पर वह १२ प्रश्नों के उत्तर और देता है। पर अनुमान लगाने के कारण इनमें से ६ के उत्तर सही दे पाता है और ६ के गलत। इस प्रकार उसके २६ प्रश्न शुद्ध हुए। यदि प्रत्येक प्रश्न का एक अंक हो तो बिना अनुमान सूत्र के प्रयोग के हम उसे २६ अंक देंगे जो अनुचित है, क्योंकि वह केवल २० प्रश्नों के सही उत्तर जानता था। पर यदि हम उसे अनुमान सूत्र का प्रयोग करके अंक दें तो उसके अंक : $S = R - W$ के सूत्र से २६—६=२० होंगे, जोकि उचित है।

इस प्रकार यह सूत्र अनुमान के प्रभाव को नष्ट कर देता है। पर इसका सिद्धान्त इतना सरल नहीं है। इसकी कुछ त्रुटियाँ ये हैं :—

(१) अनुमान सूत्र इस मान्यता पर निर्भर है कि एक व्यक्ति केवल अनुमान के आधार पर जितने सही उत्तर लिखेगा, उतने ही गलत। पर यह बात केवल सामान्य रूप से पूरे समूह के लिए ही उपयुक्त है, प्रत्येक परीक्षार्थी के लिए नहीं। प्रश्न-पदों को केवल दो वर्गों में इसी प्रकार विभाजित नहीं किया जा सकता : एक वे जिन्हें परीक्षार्थी जानता है और एक वे जिन्हें वह नहीं जानता। ऐसे भी प्रश्न हैं जिनके उत्तर परीक्षार्थी जानता तो है, पर निश्चय

के साथ नहीं। वह इन पर अनुमान लगाएगा। कुछ ऐसे प्रश्नों पर भी जिनके उत्तर वह बिल्कुल नहीं जानता, वह अनुमान से उत्तर देगा। और सम्भव है वह सही उत्तर दे।

(२) कुछ व्यक्ति अनुमान लगाने की कला में अधिक निपुण होते हैं, कुछ कम। हम सभी को इसमें बराबर योग्य मानकर यह नहीं कह सकते कि सभी केवल अनुमान से ५० प्रतिशत उत्तर सही देंगे और ५० प्रतिशत गलत। कुछ परीक्षार्थी केवल उन्हीं के उत्तर देते हैं जिनके बारे में उन्हें ५० प्रतिशत विश्वास है; कुछ उनके भी उत्तर दे देते हैं जिनके बारे में उनकी अत्यन्त जानकारी रहती है; और कुछ उनके भी जिन्हें वे बिल्कुल नहीं जानते। एक सामान्य सूत्र से इन सभी प्रकार के व्यक्तियों के साथ न्याय नहीं होगा। वह व्यक्ति जो सभी सन्देहयुक्त प्रश्नों पर अनुमान लगाएगा, लाभ में रहेगा।

(३) अनुमान लगाने की प्रवृत्ति यथार्थ मापन की शुद्धता को कम करती है। इसीलिए अनेक परीक्षणों में बजाय प्रश्नों के उत्तर में अनेक विकल्प देने के खुले हुए (open ended) प्रश्न देते हैं। इनमें परीक्षार्थी स्वयं उत्तर देता है।

अनुमान के प्रभाव को नष्ट-प्राय या कम करने के लिए कुछ विधियों का सुझाव दिया गया है। एक विधि यह है कि निदेश में स्वयं परीक्षार्थियों से अनुमान लगाने को कहा जाए और जहाँ भी शंका हो वे अधिक से अधिक तर्कसंगत उत्तर देने का प्रयास करें। इससे कुछ परीक्षार्थियों को अन्य की अपेक्षा अधिक लाभ नहीं रहेगा। थर्सटन के अनुसार अशुद्ध उत्तरों के लिए अंक काटे जायँ, यह अनुभव के आधार पर निर्धारित करना चाहिए, न कि अनुमान सूत्र के आधार पर। विकल्पों की संख्या को भी काफी बढ़ाया जा सकता है, क्योंकि इससे प्रतिशत अनुमान कम हो जाएगा। ५ विकल्पों में अनुमान केवल २० प्रतिशत ही रह जाता है। बजाय पहिचान (Recognition) पदों के पूर्ति-पद (Completion Items) भी दिए जा सकते हैं ताकि परीक्षार्थी स्वयं उत्तर लिखे।

परीक्षक द्वारा लिए जाने वाले निर्णय (Decisions to be Taken by the Test-user)—

यद्यपि निदेश परीक्षण के प्रश्नों की भाँति ही प्रमापीकृत होते हैं, परीक्षक द्वारा प्रयुक्त विधि को बहुत कठोर बनाना उपयुक्त नहीं है। परीक्षण कितना ही प्रमापीकृत क्यों न हो, अनेक ऐसी बातें होती हैं जो विवरण पुस्तिका में लिखना सम्भव नहीं है। अतः स्वयं परीक्षक को अनेक निर्णय लेने पड़ते हैं। जैसे—

१. यदि समय अवधि का उल्लेख न हो, यह आवश्यक है कि आवश्यकता

से अधिक समय लगाने वाले परीक्षार्थी को रोक दिया जाए क्योंकि एक निश्चित समय में उसे जो कुछ करना है वह कर लेगा। तत्पश्चात् अपना समय व्यर्थ ही व्यय करेगा।

२. कभी-कभी किसी परीक्षण में सफलता का श्रेय उसी दशा में दिया जाता है जब परीक्षार्थी निश्चित समय में कार्य कर ले। पर परीक्षण की विवरण पुस्तिका में यह नहीं लिखा रहता कि उस समय-अवधि के बाद परीक्षार्थी को रोक दिया जाए। ऐसी दशा में स्वयं परीक्षक को निर्णय लेना पड़ता है।

३. जब परीक्षार्थी संभ्रमित या परेशान नजर आए तो सर्वोत्तम यह है कि समस्या का अन्त कर दिया जाए और नए सिरे से कार्य शुरू किया जाए, क्योंकि उसी कार्य को करते रहने देने से वह बुरी तरह से हताश तथा निरुत्साहित न होने पाए।

४. अनेक परीक्षणों में परीक्षक स्वयं परीक्षण के प्रश्नों-पदों का क्रम बदल देता है; जैसा कि स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण में। विशेषकर छोटे बालकों के परीक्षण में अनेक बार परीक्षक को ऐसे निर्णय लेने पड़ते हैं।

५. परीक्षक का कार्य है कि वह परीक्षार्थी को उत्साहित रखे और उसे हताश न होने दे। किन्तु इसका उद्देश्य होना चाहिए बालक में परीक्षण के लिए प्रयास जाग्रत करना, न कि उसे सफल करवाने की चेष्टा करना।

६. परीक्षक में उच्च श्रेणी की निर्णय शक्ति, बुद्धि, संवेदनशीलता एवं अन्य गुण होने चाहिए।

७. परीक्षक के लिए यह आवश्यक है कि वह जबरदस्ती परीक्षार्थी को खदेड़कर या उससे विवाद करके उत्तर निकलवाने का प्रयास न करे।

प्रशिक्षण का परीक्षण-फलांकों पर प्रभाव (Influence of Coaching or Test Scores)—

सामान्य या विशिष्ट रूप से परीक्षण-पदों पर प्रशिक्षण देने से फलांकों में वृद्धि होती है, ऐसा कई अध्ययनों से ज्ञात हुआ है। इससे बालक उन अनेक पदों का उत्तर देने में समर्थ हो जाता है जिनसे वह पहले अनभिज्ञ था। परीक्षण की सामग्री में और प्रशिक्षण में जितना साम्य होगा, उतनी ही फलांकों में वृद्धि होगी। फलांकों के बढ़ने का एक अन्य कारण यह भी है कि प्रशिक्षण के कारण परीक्षार्थी का आत्म-विश्वास बढ़ जाता है और औप-

चारिकता कम हो जाती है। पर प्रशिक्षण किस सीमा तक फलांकों को प्रभावित करते हैं, यह एक विवादास्पद विषय है। कुछ परीक्षणों में जबकि परीक्षार्थी परीक्षण से पूरी तरह अपरिचित था, फलांकों में आशातीत वृद्धि हुई। येट्स[1] के अनुसार अभ्यास एवं प्रशिक्षण का फलांकों पर ८-१० बुद्धि-लब्धि-बिन्दु (I. Q. Points) तक प्रभाव पड़ता है।

किन्तु क्या परीक्षार्थियों को परीक्षण से पहले प्रशिक्षण दिया जाय, यह एक विचारणीय प्रश्न है। परीक्षण के निष्कर्षों पर लाखों व्यक्तियों का भावी जीवन, उद्योग, सरकारी नौकरी एवं कुछ सीमा तक सैन्य सेवा निर्भर है। प्रशिक्षित व्यक्तियों का फलांक बढ़ जाने से अप्रशिक्षित व्यक्तियों की तुलना में उन्हें लाभ रहेगा, जो न्यायोचित नहीं है। यदि प्रशिक्षण से उनकी सामान्य योग्यता में वृद्धि होगी, जो बाद में उनके काम आ सके तो कोई बन्धन नहीं है। पर ऐसा प्रशिक्षण जिसका उद्देश्य केवल परीक्षण में अधिक फलांक लाना हो, अनुचित है। अतः परीक्षण से पूर्व परिचित हो जाना एक प्रकार की धोखादेही या मिथ्यावादिता है।

प्रशिक्षण केवल उसी सीमा तक मान्य होना चाहिए कि परीक्षार्थी में परीक्षण के प्रति भय दूर हो जाए, एकतानता स्थापित हो, परीक्षक को वह अजनबी न समझे, उसमें आत्म-विश्वास पैदा हो और वह उसके साथ ठीक से अभियोजन कर सके।

---

1. Yates, Alfred, & Others : *Effects of Coaching and Practice in Intelligence Tests.*, Brit. J. Educational Psychology. 1953, 23. pp. 147-162; 1954, 24, pp. 57-63.

: ८ :

फलांक, मानक एवं लब्धियाँ

फलांक-गणना
(Scoring)

किसी मानसिक परीक्षण में 'फलांक' एक संख्यात्मक परिमाण है। पर यह परिमाण किस प्रकार का है, यह परीक्षण की सामग्री पर निर्भर है, और इस बात पर कि इस सामग्री का संगठन किस प्रकार हुआ है। रॉस[1] के अनुसार किसी परीक्षण में वास्तविक फलांक उस परीक्षण में व्यक्ति के निष्पादन का संख्यात्मक वर्णन है। किन्तु यदि किसी व्यक्ति का किसी परीक्षण में अच्छा फलांक नहीं है तो इसका यह अर्थ नहीं है कि उस व्यक्ति की योग्यता कम है। फलांक कई बातों पर निर्भर हैं। कम फलांक प्राप्त करना बजाय योग्यता की कमी के शारीरिक रोग, दृष्टि की क्षीणता, संवेगात्मक व्यवधान या अन्य किसी कारण भी सम्भव है।

---

1. "A score on any test is simply a numerical description of an individual's performance on that task." –Ross. C. : *Measurement in To-day's Schools*, Prentice Hall., N.J. 1956, p. 276.

वास्तविक फलांक (Raw Scores)—

वास्तविक फलांक (Raw Score) जिन इकाइयों में मापदण्ड बना है, उनमें व्यक्ति की निष्पत्ति की अभिव्यक्ति है। इसकी अपने आप में कोई महत्ता नहीं है। विभिन्न परीक्षणों में एक ही वास्तविक फलांक का अलग-अलग अर्थ सम्भव है। यह एक उदाहरण से स्पष्ट किया जा सकता है। यदि किसी परीक्षण में एक व्यक्ति ने ५० में से ५० प्रश्न हल किए और प्रत्येक प्रश्न एक अंक का है तो इसके वास्तविक फलांक ५० होंगे। इसी प्रकार एक व्यक्ति १०० प्रश्नों के परीक्षण में ५० प्रश्न हल करे तो भी वास्तविक फलांक ५० अंक होगा। पर इन दोनों ५० अंकों में बहुत अन्तर है। यदि एक विद्यार्थी के गणित में ६० अंक हैं और वर्ण-विन्यास में ६८ तो इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि वह गणित की अपेक्षा वर्ण-विन्यास में अधिक योग्य है। सम्भव है गणित का परीक्षा-पत्र कठिन हो और वर्ण-विन्यास का सरल। जब तक हमें अन्य सम्बन्धित बातें पता न हों, हम नहीं कह सकते कि अन्य विद्यार्थियों की अपेक्षा व्यक्ति की निष्पत्ति क्या है। सम्भव है गणित के ३० अंक भाषा के ८० अंकों से अधिक महत्वपूर्ण हों या भाषा के ३० अंक गणित के ८० अंकों की अपेक्षा।

'**वास्तविक फलांक**' कोई विशिष्ट घटना कितनी बार घटी है, कितने प्रश्नों के सही उत्तर दिए गए हैं, कितनी पुस्तकें पढ़ी गईं, किसी समस्या को हल करने में कितनी अशुद्धियाँ हुईं, किसी प्रश्नावली के कितने कथन मान्य हुए आदि की प्रत्यक्ष गणना है। कभी-कभी ये फलांक समय-फलांक (Timed Scores) हैं; जैसे किसी कार्य की पूर्ति में लगाया गया समय; और कभी बिन्दु फलांक हैं, जैसे किसी परीक्षण में निश्चित समय में उत्तर दिए गए प्रश्न। इनके मुख्य प्रकार ये हैं :—

१. किसी निश्चित समयावधि में किये गए कार्य का परिमाण—जैसे किसी मुद्रित गद्यांश में काटे गए अक्षरों की संख्या, अक्षर-प्रतिस्थापन परीक्षण में अक्षर के नीचे कितने अंक लिखे गए, उनकी संख्या।

२. बिना गति का ख्याल किए कितनी कठिनता का कार्य सम्पादित हो सका, इसका परिमाण। जैसे ध्यान-विस्तार परीक्षण में प्रयोज्य ने कितने अक्षर एक साथ देखे।

३. किसी कार्य को करने में कितना समय लगाया। ऐसा प्रायः गति-परीक्षणों में होता है।

४. विभेदित इकाइयों का परिमाण, जैसे मनोभौतिकी विधि में वजन का विभेद (Weight Discrimination).

५. बिन्दु-फलांक, अर्थात् सही उत्तरों की संख्या।

६. मानसिक आयु-स्तर।

इन सभी प्रकार के फलांकों में कुछ न कुछ त्रुटियाँ रह ही जाती है एवं प्राप्त फलांक परीक्षार्थी की योग्यता का वास्तविक मापन नहीं करते। होल्जिगर[1] के अनुसार इसके निम्न कारण हैं :—

१. **मापदण्ड की त्रुटियाँ** (Scale Errors)—ये स्वयं परीक्षण में अनुपयुक्त सामग्री के चुनाव या गलत संगठन के कारण होती हैं।

२. **फलांक-गणना की त्रुटियाँ** (Scoring Errors)—ये परीक्षक के गलत निर्णय के कारण होती हैं और इनकी सम्भावना उन परीक्षणों में होती है जिनमें आत्मगत मूल्यांकन की गुंजाइश रहती है।

३. **प्रत्युत्तर की त्रुटियाँ** (Response Errors)—इसका कारण है एक परिस्थिति से दूसरी परिस्थिति में परीक्षार्थी के प्रत्युत्तरों में परिवर्त्तन, जो संवेगात्मक वस्तुस्थिति, अभिरुचि एवं प्रयास का एक से न रहने से है।

४. **न्यादर्श की त्रुटियाँ** (Sampling Errors)—जब हम एक समूह के फलांकों को दूसरे का प्रतिनिधिकारी मान लेते हैं तो यह त्रुटि होती है।

५. **अन्य त्रुटियाँ** (Sporadic Errors)—ये हैं फलांक-गणना में गलती हो जाना, निदेशों का ठीक से न समझना इत्यादि।

परीक्षण फलांकों का भारण (Weighting Test of Scores)—

फलांकों का भारण दो दृष्टियों से किया जाता है :—

१. **सम्पूर्ण फलांकों में परीक्षण के कुछ पदों के फलांकों का भाग बढ़ाने के लिए**—परीक्षण के अनेक उपपरीक्षणों में पदों की संख्या समान नहीं होती और न उनका महत्व ही। ऐसी स्थिति में परीक्षण के प्रश्नों के फलांक भारित किये जा सकते हैं। उदाहरण के लिए मान लीजिए कि किसी परीक्षण में पाँच उपपरीक्षण हैं और उनमें इस प्रकार पद हैं: प्रथम उपपरीक्षण ६० पद, द्वितीय उपपरीक्षण ३०, तृतीय १५, चतुर्थ १२, पंचम १०। ऐसी परिस्थिति में प्रथम उपपरीक्षण का सम्पूर्ण फलांकों में सबसे अधिक भाग है। जब तक हम प्रथम परीक्षण को अन्य परीक्षणों से अधिक महत्वपूर्ण न समझें,

1. Holzinger, K. J. : *An Analysis of the Errors in Mental Measurement.*, Journal of Educational Psychology, XIV, May 1923, pp. 278-88.

इसके वास्तविक फलांकों के प्रयोग से सम्पूर्ण परीक्षण का सन्तुलन बिगड़ जाएगा। पर यदि बाकी उपपरीक्षणों के फलांकों को भी किसी ऐसे गुणक से गुणा कर दिया जाए कि सभी के वास्तविक फलांक लगभग बराबर हो जाँए तो इस परिस्थिति का निवारण किया जा सकता है। इस उद्देश्य के लिए द्वितीय परीक्षण के फलांकों को २ से, तृतीय को ४ से, चतुर्थ उपपरीक्षण को ५ से और पंचम को ६ से गुणा करना पड़ेगा। यह स्पष्ट रूप से नहीं कहा जा सकता कि सम्पूर्ण परीक्षण में बराबर भाग देने के लिए परीक्षण का भारण आवश्यक तथा वाञ्छनीय भी है या नहीं। ऐसा करना तभी उपयुक्त है जब ये उपपरीक्षण अपेक्षाकृत अलग-अलग मानसिक क्षमताओं का मापन करते हैं। पर यदि वे एक ही प्रकार की मानसिक योग्यता का मापन करें तो 'भारण' आवश्यक नहीं है।

२. **उपपरीक्षण या पदों के फलों को असमान बनाना**—यह तब किया जाता है जब पदों या उपपरीक्षणों की महत्ता बराबर न हो। कठिन प्रश्नों का महत्व सरल प्रश्नों की अपेक्षा अधिक होता है। अतः कठिनाई के स्तर के अनुसार उनके फलांकों का भारण करना चाहिए। पर अब इस विधि का प्रयोग प्रायः नहीं ही किया जाता, क्योंकि कितना भारण किया जाए इसका निर्धारण करना सरल कार्य नहीं है और अनुभव यह बताता है कि 'भारित फलांक' (Weighted Scores) वास्तविक फलांक (Raw Scores) की अपेक्षा उत्तम नहीं होते।

व्युत्पन्न फलांक (Derived Scores)—

जब किसी परीक्षण-पत्र का निदेशों के अनुसार अंकन हो चुकता है तो प्राप्तांकों को वास्तविक फलांक (Raw Score or Crude Score) कहते हैं। मुख्यतः निष्पत्ति परीक्षणों में यदि यह फलांक बिन्दुओं में हो तो इसे बिन्दु-फलांक (Point Score) भी कहते हैं। किन्तु स्वयं वास्तविक फलांक का, जैसा कि ऊपर बताया गया है, कोई अर्थ नहीं है। एक परीक्षण के वास्तविक फलांकों की दूसरे परीक्षण के फलांकों से प्रत्यक्ष रूप से तुलना नहीं की जा सकती। अतः ऐसे फलांकों को किसी समान आधार पर परिवर्तित कर लेते हैं। इन्हें व्युत्पन्न फलांक कहते हैं। अतः व्युत्पन्न फलांक मानकों को आधार मानकर परीक्षार्थी की योग्यता का संख्यात्मक विवरण है। और स्वयं मानक समूह की औसत या निरूपणात्मक (Typical) योग्यता है।

प्रमापित फलांक
(Standard Scores)

जैड-फलांक (Z-Scores)—

प्रमाप फलांक वितरण के प्रमाप-विचलन के आधार पर मध्यमान से व्यक्ति के फलांकों की दूरी व्यक्त करते हैं। प्रमाप-विचलन प्रसार का एक मापक है। उदाहरण के लिए यदि किन्हीं फलांकों का मध्यमान ५५ है और प्रमाप विचलन १० तो जिस व्यक्ति का फलांक ६५ है वह मध्यमान से एक प्रमाप विचलन ऊपर हुआ, जिसका फलांक ३० है वह २.५ प्रमाप-विचलन नीचे हुआ। प्रमाप-विचलन इकाइयों में हम इन्हें केवल +१ और −२.५ कहेंगे। मान लीजिए हम किसी समूह को दो परीक्षण देते हैं। इन दोनों समूहों के फलांकों का मध्यमान तथा प्रमाप-विचलन निम्नलिखित है। अब यदि हमें व्यक्तियों के फलांक अलग-अलग पता हो तो हम उनके प्रमाप फलांक ज्ञात कर सकते है।

	परीक्षण 'अ'	परीक्षण 'ब'
मध्यमान	५५	३५
प्रमाप-विचलन	१०	७
सुरेश का फलांक	६०	४२
शैलजा का फलांक	५०	२८
नीलम का फलांक	७५	५६.

अब हमें यह देखना है कि इन दोनों परीक्षणों पर हम किसी व्यक्ति के फलांकों की तुलना किस प्रकार करेंगे। प्रथम परीक्षण में सुरेश का फलांक ६० या मध्यमान से ५ आगे है अर्थात् $\frac{५}{१०}$ या ·५ प्रमाप-विचलन आगे। द्वितीय परीक्षण में उसका फलांक ४२ है अर्थात् मध्यमान से ७ फलांक या $\frac{७}{७}$ १ प्रमाप विचलन आगे। इस प्रकार सुरेश द्वितीय परीक्षण में अधिक योग्य है। शैलजा प्रथम परीक्षण में $\frac{५०-५५}{१०}$ = −·५ तथा द्वितीय परीक्षण में $\frac{२८-३५}{७}$ = −१·० प्रमाप फलांक प्राप्त करती है। नीलम इसी विधि से प्रथम परीक्षण में $\frac{७५-५५}{१०}$ = +२·० तथा द्वितीय परीक्षण में $\frac{५६-३५}{७}$ = +३·० प्रमाप-फलांक प्राप्त करती है। इन निष्कर्षों के आधार पर हम कह सकते है कि दोनों परीक्षणों में नीलम सर्वाधिक योग्य है।

इन प्रमाप-फलांकों (Standard Scores) के अन्य भी कई नाम हैं, जैसे सिग्मा फलांक (Sigma Scores), जैड-फलांक (Z-Scores), आदि। किसी भी व्यक्तिगत फलांक का प्रमाप-फलांकों में परिवर्तन सम्भव है यदि हमें वितरण के फलांकों का मध्यमान तथा प्रमाप-विचलन ज्ञात हो। पर निम्न सूत्र सुविश्वाजनक रहेगा :—

$$Z = \frac{X-M}{\sigma} \text{ या } Z = \frac{X}{\sigma}$$ जिसमें Z = प्रमाप फलांक,

X = मौलिक या वास्तविक फलांक, M = मध्यमान, σ प्रमाप-विचलन।

इस सूत्र के उपयोग को समझने में निम्न उदाहरण सहायक होगा। मान लीजिए किसी व्यक्ति का भूगोल के परीक्षण में ४० फलांक आता है एवं पूरे समूह के व्यक्तियों के फलांकों का माध्यमान ६४ है तथा प्रमाप-विचलन १५,

तब उसका Z-Score होगा : $Z = \frac{४०-६४}{१५} = \frac{-२४}{१५} = -१.६$

अब मान लीजिए दो अन्य परीक्षणों में भी इस व्यक्ति द्वारा प्राप्त फलांक ज्ञात कर लिए गए हैं। इतिहास में इस व्यक्ति का प्रमापांक +१.६ है और व्याकरण में +०.८ तो हम इन तीनों विषयों में उसकी उपलब्धि की तुलना कर सकते हैं, और तीनों का औसत निकाल कर उसकी सामान्य निष्पत्ति ज्ञात कर सकते हैं जो प्रस्तुत उदाहरण निम्न प्रकार है :

$$\frac{-१.६+१.६+०.८}{३} = +.२७।$$

टी-फलांक (T–Scores)—

सन् १९२२ में **मैकाल** कई स्थानों पर विद्यार्थियों की संख्या के सम्बन्ध में आँकड़े एकत्र करते समय इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि स्कूलों में पढ़ने वाले बच्चों में सबसे अधिक बालक १२ वर्ष की अवस्था के थे। अत: १२ वर्ष के बच्चों पर आधारित तथ्य समग्र (Population) के अधिक प्रतिनिधिकारी होंगे। इसीलिए मैकाल ने १२ वर्ष की इकाई को आधार मानकर शेष सभी अवस्था के बालकों का मापन करने की चेष्टा की। और अपनी विधि को T-Score (or Twelve-Year Score) कहा। मैकाल ने जिस प्रकार T–Score विधि का प्रयोग किया था, उसमें अब काफी संशोधन हो चुका है, पर अब भी विधि उसी नाम से पुकारी जाती है। इसमें प्रमाप-फलांकों को दशमलव से मुक्ति पाने के लिए किसी स्थिरांक (Constant)

जैसे १० से गुणा करते हैं और फिर एक अन्य स्थिरांक जैसे ५० का योग कर देते हैं। अतः T-Score बनाने का सूत्र हुआ :—

$$T = 50 + 10\frac{(X - M)}{\sigma}$$

जिसमें : T = टी फलांक, X = मौलिक या वास्तविक फलांक, M = समूह के फलांकों का मध्यमान, σ = फलांकों का प्रमाप-विचलन। ऊपर के उदाहरण में टी-फलांक इस प्रकार निकलेंगे :

	परीक्षण 'अ'	परीक्षण 'ब'
मध्यमान	५५	३५
प्रमाप-विचलन	१०	७
सुरेश का फलांक	६०	४२
शैलजा का फलांक	५०	२८
नीलम का फलांक	७५	५६

परीक्षण अ

	प्रमाप-फलांक	टी-फलांक
सुरेश	$\frac{६०-५५}{१०} = \cdot५$	$५० + \frac{१०(६०-५५)}{१०} = ५५$
शैलजा	$\frac{५०-५५}{१०} = -\cdot५$	$५० + \frac{१०(५०-५५)}{१०} = ४५$
नीलम	$\frac{७५-५५}{१०} = +२$	$५० + \frac{१०(७५-५५)}{१०} = ७०$

परीक्षण ब

	प्रमाप-फलांक	टी-फलांक
सुरेश	$\frac{४२-३५}{७} = १$	$५० + \frac{१०(४२-३५)}{७} = ६०$
शैलजा	$\frac{२८-३५}{७} = -१$	$५० + \frac{१०(२८-३५)}{७} = ४०$
नीलम	$\frac{५६-३५}{७} = ३$	$५० + \frac{१०(५६-३५)}{७} = ८०$

यदि फलांकों का मध्यमान ५५ हो और प्रमाप-विचलन १० तो इसी प्रकार अन्य वास्तविक फलांकों (Raw Scores) के भी प्रमाप-फलांक तथा टी–फलांक ज्ञात किए जा सकते हैं। नीचे की सारिणी में इस प्रकार के कुछ प्रमाप तथा टी-फलांक दिए गए हैं।

फलांकों का मध्यमान=५५, प्रमाप-विचलन १०.

वास्तविक फलांक	प्रमाप-फलांक	टी-फलांक
९०	३.५	८५
८०	२.५	७५
७०	१.५	६५
३५	—२	३०
८५	३	८०
७५	२	७०
४०	—१.५	३५
९५	४	९०
६५	१	६०

यद्यपि टी-फलांक निकालने में परिवर्त्तित फलांकों का मध्यमान ५० और विचलन १० रखा जाता है पर अन्य मूल्य भी प्रयोग किए जा सकते हैं। कॉलेज एन्ट्रान्स एक्जामिनेशन बोर्ड ने अपने अनेक परीक्षणों में ५०० का मध्यमान तथा १०० का विचलन रखा है; सेना ने कई परीक्षणों में १०० का मध्यमान एवं २० का विचलन।

हल फलांक (Hull Scores)—

यह विधि भी टी-फलांक जैसी ही है। इसमें प्रमाप-फलांक को १० से गुणा न करके १४ से गुणा करते हैं और फिर ५० का योग। अतः सूत्र है :—

$$H = ५० + १४ \frac{(X - M)}{\sigma}$$

जिसमें : H=हल फलांक, X=वास्तविक फलांक, M= फलांकों का मध्यमान, तथा σ =फलांकों का प्रमाप-विचलन।

यदि M=४० हो, σ = ५, X=५५,

$$\text{तब } H = \left(\frac{५५ - ४०}{५}\right) \times १४ + ५० = ९२$$

विचलन-लब्धि (Deviation I. Q.)—

ये एक प्रकार के फलांक हैं, जिनमें मध्यमान १०० तथा विचलन, स्टेन्फोर्ड-बिने बुद्धि-लब्धि के विचलन के अनुसार, १६ होता है। इससे यह लाभ है कि परीक्षण के फलांकों की व्याख्या उसी प्रकार की जा सकती है जैसे स्टेन्फोर्ड-बिने के फलांकों की। स्टेन्फोर्ड-बिने का प्रयोग अनेक वर्षों से होते रहने के कारण परीक्षक इससे परिचित हैं। अतः किसी भी परीक्षण के फलांकों को इसी आधार पर निर्वचित करने में उन्हें सुविधा रहती है। वेश्लर बैल्यू बुद्धि-परीक्षण के फलांकों को विचलन-लब्धि में ही परिवर्तित करते हैं। इसमें सर्व-प्रथम सभी उप-परीक्षणों के फलांकों का योग करके पूरे परीक्षण का फलांक ज्ञात कर लेते हैं। तत्पश्चात् परीक्षार्थी की आयु के मानकों के अनुसार इन फलांकों को विचलन-लब्धि में बदल लेते हैं।

प्रमाप-फलांकों का मूल्यांकन करते समय निम्न बातें महत्वपूर्ण हैं :

१. यदि हमें यह ज्ञात हो जाए कि कोई व्यक्ति मध्यमान से कितने प्रमाप-विचलन ऊपर या नीचे है तो हम समूह में उसकी स्थिति का सन्तोषजनक रूप से यथार्थ मूल्यांकन कर सकते हैं। अतः ये फलांक भी शतांशीय फलांकों की तरह हैं। इनमें एक अतिरिक्त लाभ यह है कि इन पर गणितीय क्रियाएँ, जैसे जोड़, बाकी, गुणा, भाग आदि सम्भव हैं।

२. जैड-या सिग्मा फलांकों में जो अन्तर होता है, वह वास्तविक फलांकों के अनुपात में होता है। अतः सहसम्बन्ध आदि की गणना में वही परिणाम निकलते हैं जो वास्तविक फलाकों के प्रयोग से।

३. इन फलांकों को अन्य प्रकार के फलांकों में परिवर्तित किया जा सकता है, जैसे शतांशीय मानकों में।

४. यदि परीक्षार्थियों के किसी समूह पर अनेक निष्पत्ति परीक्षण प्रशा-सित किए जाएँ और फिर परिणामों को टी-फलाकों में परिवर्तित कर लिया जाए तो प्रत्येक विद्यार्थी की प्रत्येक विषय को व्यक्त करने वाली प्रोफाइल बना कर विद्यार्थी की कमजोरियों का अध्ययन किया जा सकता है।

५. विभिन्न विषयों में प्राप्त प्रमाप-फलांकों का योग करके व्यक्ति का सम्पूर्ण फलांक ज्ञात किया जा सकता है।

प्रतिशत स्थापन विधि (Percent Placement Method)—

मानसिक परीक्षण में इस विधि का भी विस्तृत रूप से प्रयोग हुआ है।

इसका सर्वाधिक प्रचार एम० जे० वान वागेनन (M. J. Van Wagenen) ने किया, जिसने इसे मुख्यतः निष्पत्ति परीक्षणों में व्यक्ति की स्थिति को स्पष्ट करने के लिए प्रयुक्त किया। इसमें किसी विशिष्ट अवस्था या कक्षा-क्रम के १०० चुने हुए व्यक्तियों के प्रतिनिधिकारी न्यादर्श में सर्वश्रेष्ठ एवं निकृष्टतम परीक्षार्थियों के बीच के अन्तर को १०० बराबर भागों में विभाजित कर लेते हैं। इन्हें १ से लेकर १०० तक क्रमित कर लेते हैं। प्रत्येक भाग से सम्बन्धित फलांकों को लिख लेते हैं। इस प्रकार फलांक के अनुसार परीक्षार्थी का प्रतिशत स्थापन कर लेते हैं। अतः व्यक्ति के फलांक की अन्य व्यक्ति के फलांकों से तुलना हो जाती है। पर यह विधि शतांशीय श्रेणी-क्रम विधि से भिन्न है।

मध्यांक मानसिक आयु विधि (Median Mental Age Method)—

सर्वप्रथम पिन्टनर-पैटर्सन ने यह विधि प्रस्तुत की। १९१७ में पिन्टनर-पैटर्सन ने अनेक अशाब्दिक परीक्षण बनाए। प्रत्येक परीक्षण के मानक अंकों की एक सारिणी के प्रयोग से वास्तविक फलांकों को मानसिक आयु में परिवर्तित कर लेते हैं। इन मानसिक आयुओं के मध्यांक को बालक की मानसिक आयु का सर्वश्रेष्ठ उपसन्न (Approximation) माना जाता है। इस मध्यांक मानसिक आयु के आधार पर सामान्य विधि से बुद्धि-लब्धि ज्ञात कर लेते हैं। कूह्लमैन-एन्डर्सन सामूहिक बुद्धि-परीक्षण में इस विधि का प्रयोग हुआ है। इस विधि से मानसिक क्षमता के अनेक पक्षों का मापन करने के लिए बने उपपरीक्षणों के परिणामों को एक संख्या या गुणांक से व्यक्त कर सकते हैं। जैसे स्वयं पिन्टनर पैटर्सन के परीक्षणों में कुछ उपपरीक्षणों की फलांक-गणना समय के आधार पर होती है, कुछ की त्रुटियों के आधार पर और कुछ की सफलता के आधार पर। इन फलांकों के संख्यात्मक मूल्य, विचलन-शीलता एवं मध्यमान इतने भिन्न हैं कि इनका मिश्रण असम्भव सा लगता है। इनमें से प्रत्येक को मानसिक आयु में परिवर्त्तित करके और फिर मध्यांक निकाल लेने से सभी उपपरीक्षणों का समान भारण हो जाता है। मध्यांक के स्थान पर मध्यमान के प्रयोग का भी सुझाव दिया गया है। इस विधि का प्रयोग तभी अधिक उपयुक्त है जब उपपरीक्षणों की संख्या अधिक हो और १० से कम न हो।

मानक तथा प्रतिमान
(Norms and Standards)

'**प्रतिमान**' शब्द में लक्ष्य या उद्देश्य का भाव निहित है। अर्थात्

'प्रतिमान' शब्द यह संकेत करता है कि क्या होना चाहिए, क्या उपादेय है। पर **'मानक'** शब्द केवल वर्त्तमान उपलब्धि क्या है इसकी ओर संकेत करता है। अतः निष्पत्ति परीक्षणों के मानक परिवर्तित होते रहते हैं। ये कोई स्थिर परिमाण नहीं है। पर प्रतिमान स्थिर लक्ष्य हैं, यद्यपि अनेक परीक्षणों में इनकी स्पष्ट व्याख्या नहीं रहती। यह आवश्यक है कि प्रतिमानों को भी परिमाणात्मक मूल्यों में व्यक्त किया जाए। पर यह भी आवश्यक है कि सभी परिस्थितियों के लिए एक समान प्रतिमान (Uniform Standards) न हों, वरन् प्रतिमान निर्धारित करते समय व्यक्तिगत विभेदों का ध्यान रखा जाए।

अब हम मानक का क्या अर्थ है एवं मानक कितने प्रकार के होते हैं, इसका वर्णन करेंगे।

मानक का अर्थ (Meaning of Norms)—

'मानक' शब्द दो अर्थों में प्रयुक्त होता है। प्रथमतः, इसका अर्थ है तुलना का वह प्रतिमान समूह के विभिन्न व्यक्ति जिसके समनुरूप हों। दूसरे, इसका अर्थ है किसी विशिष्ट समूह के फलांकों की केन्द्रीय प्रवृत्ति जिससे समूह के व्यक्तियों के फलांकों का समनुरूप होना आवश्यक नहीं है। हम यहाँ बाद के अर्थ में इस शब्द का प्रयोग करेंगे।* आयु-मापदण्ड बनाने में हम 'मानक' के इस अर्थ का उपयोग करते हैं, क्योंकि मानसिक आयु में व्यक्ति के फलांक एवं समूह के मध्यमान फलांक में सम्बन्ध निहित है। पर आयु-मानकों के निर्धारण में प्रमुख समस्या है न्यादर्श का चुनाव, क्योंकि यह न्यादर्श किसी न किसी अर्थ में संकीर्ण ही होता है, पूर्ण रूप से प्रतिनिधिकारी नहीं। कोई भी आयु मानक उस आयु के संसार के समग्र बालकों का प्रतिनिधित्व नहीं करता, क्योंकि अनेक राष्ट्रों में बालकों के समूहों में अनेक विभिन्नताएँ होती है। स्वयं एक ही राष्ट्र के बालकों के एक ही आयु के समूहों में अनेक विभिन्नताएँ होती है। यही बात ग्रेड-मानक, यौनि-मानक, सामाजिक मानक तथा अन्य मानकों के साथ है। अतः आवश्यक यह है कि बजाय विस्तृत समग्र पर आधारित मानकों के, छोटे समग्र पर आधारित स्थानीय मानक प्रयुक्त किए जाएँ। आजकल परीक्षणों का जिस प्रकार अनेक परिस्थितियों में प्रयोग होता है, उससे यह आवश्यक है कि व्यक्तियों के एक समूह की दूसरे से तुलना की जाए। इस प्रकार के तुलनात्मक मूल्यांकन तब अधिक सुविधा से किए जा सकते हैं जबकि मानक समूह की औसत क्षमता पर आधारित हो। विस्तृत मानकों का प्रयोग केवल बड़े पैमाने पर प्रमापीकृत परीक्षणों में ही सुविधाजनक है। सामान्य बुद्धि के मूल्यांकन में इस प्रकार के मानकों का प्रयोग किया जा सकता है, पर निष्पत्ति परीक्षणों में नहीं

कुछ मुख्य प्रकार के मानक जैसे आयु-मानक, कक्षा-मानक आदि निम्नलिखित हैं :—

आयु-मानक (Age Norms)—

किसी भी गुण में यदि आयु के साथ बढ़ोतरी हो तो हम आयु-मानक ज्ञात कर सकते हैं। इस अर्थ में किसी अवस्था के लिए मानक का अर्थ है उस विशिष्ट अवस्था के व्यक्तियों के लिए गुण का औसत मूल्य। यदि हम १२ वर्ष के लड़कों का एक प्रतिनिधिकारी न्यादर्श लें, प्रत्येक की लम्बाई नापें, और इन मापों का औसत निकाल लें तो इस प्रकार बालकों की लम्बाई का मानक निकल आयेगा। पर इस उदाहरण में मानक का अर्थ है केवल औसत मूल्य। जिस प्रकार १२ वर्ष के लड़के की औसत लम्बाई ज्ञात की जाती है, उसी प्रकार ८,९,१०,१६ एवं अन्य अवस्था के बालकों की औसत लम्बाई भी। इस आधार पर हम एक मापदण्ड बना सकते हैं, जैसे यह ज्ञात होने पर कि १२ वर्ष के लड़कों की औसत आयु ५८ इंच है, १३ वर्ष के लड़कों की ६२ इंच आदि। हम इस आधार पर यह कह सकते हैं कि जिस लड़के की लम्बाई ५८ इंच है वह इतना ही लम्बा है जितना १२ वर्ष का लड़का। इसी प्रकार यदि कोई लड़का ६० इंच लम्बा हो पर उसकी आयु केवल ११ वर्ष हो तो हम कहेंगे कि वह अपनी आयु से अधिक लम्बा है।

जिस प्रकार विभिन्न अवस्थाओं के लिए लम्बाई का मानक निर्धारित होता है, उसी प्रकार मानसिक योग्यता का मानक भी। इसे मानसिक आयु कहेंगे। 'मानसिक आयु' का सिद्धान्त सन् १९०८ में बिने-साइमन परीक्षण के पुनसंस्करण के समय प्रारम्भ हुआ। बिने एवं इस प्रकार के अन्य परीक्षणों में प्रश्न-पदों को आयु के स्तर के अनुसार समूहों में वर्गीकृत कर देते हैं। उदाहरण के लिए वे प्रश्न-पद जिनका १० वर्ष की अवस्था के अधिकांश व्यक्ति उत्तर दे देंगे, वे इस स्तर के समकक्ष रखे जा सकते हैं। १२ वर्ष की आयु के बालक जिनका उत्तर दे देंगे, ऐसे प्रश्नों को १२ वर्ष की आयु-स्तर के समकक्ष रखा जाता है। यदि एक १० वर्ष का बालक १२ वर्ष की अवस्था के प्रश्नों का उत्तर दे दे तो उसकी मानसिक आयु १२ वर्ष हुई। यदि १० वर्ष का बालक ११ वर्ष के सब प्रश्न करे, पर १२ वर्ष की अवस्था के ६ में से केवल ३ प्रश्न करे तो उसकी मानसिक आयु ११ वर्ष ६ महीने होगी।

आयु-मानकों के सम्बन्ध में कुछ मुख्य बातें ये हैं—

१. मानसिक आयु-मानक उन परीक्षणों में भी प्रयुक्त हो सकते हैं, जिन्हें आयु-स्तरों में वर्गीकृत नहीं किया गया है। ऐसी परिस्थिति में सर्व-

प्रथम परीक्षार्थी के वास्तविक फलांक का निर्धारण करते है । प्रत्येक आयु के बालकों द्वारा प्राप्त मध्यमान वास्तविक फलांक उस परीक्षण के आयु-मानक हुए, जैसे १० वर्ष की आयु के बालकों द्वारा प्राप्त मध्यमान वास्तविक फलांक १० वर्ष का मानक हुआ ।

२. मानसिक आयु की इकाइयाँ आयु के बढ़ने पर भी स्थिर नहीं रहती । पर आगे की अवस्थाओं में वे संकीर्ण हो जाती हैं जैसे ४—५ वर्ष की अवस्था में जो मानसिक विकास होता है वह १०—११ वर्ष की अवस्था के मानसिक विकास से तीन गुना होता है । इसका कारण यह है कि प्रारम्भ में मानसिक तथा शारीरिक दोनों प्रकार के विकास की गति अपेक्षाकृत अधिक तीव्र होती है ।

३. कुछ गुणों में मानसिक विकास नहीं होता । उदाहरण के लिए शाब्दिक भण्डार का विकास २० वर्ष की अवस्था के बाद भी होता रहता है, पर पथजाल-अंकन (Maze Tracing) में सीखने की प्रगति निरन्तर नहीं होती वरन् किशोरावस्था में ही रुक जाती है । अतः इन दो विभिन्न परीक्षणों पर आयु-फलांकों की तुलना करना सम्भव नहीं है । यही बात कुछ अन्य परीक्षणों के सम्बन्ध में है ।

४. अतः आयु-मानक निकालने का विधि केवल उन्हीं गुणों के लिए उपयुक्त है जिनका विकास सामान्य गति से होता है । ऐसे किसी भी गुण के लिए जिसका आयु के साथ-साथ सामान्य विकास नहीं होता, जैसे दृष्टि की तीक्ष्णता (Acuity of Vision), तो इसे आयु की इकाइयों के मापदण्ड में व्यक्त नहीं किया जा सकता ।

५. आयु-मानकों के प्रयोग में अनेक व्यावहारिक कठिनाइयां है । किसी दी हुई आयु के व्यक्तियों का प्रतिनिधिकारी न्यादर्श प्राप्त करना अत्यन्त कठिन कार्य है । जैसे २० वर्ष के व्यक्तियों का न्यादर्श लेने के लिए कुछ व्यक्ति स्कूल से, कुछ कॉलिज से, कुछ सेना से एवं कुछ व्यक्ति अन्य संस्थानों से लेने पड़ेंगे ।

६. किशोरावस्था एवं युवावस्था में योग्यता के स्तर को व्यक्त करने के लिए आयु की इकाई अनुपयुक्त है । ये केवल प्रारम्भिक आयु के व्यक्तियों के लिए उपयुक्त हैं । दैहिक गुण, जिनका विकास आयु पर निर्भर है, आयु-मानकों पर भली-भाँति व्यक्त किए जा सकते हैं जैसे लम्बाई, वजन, बुद्धि एवं कुछ अन्य मनोवैज्ञानिक गुण ।

कक्षा-क्रम मानक (Grade Norms)—

कक्षा-क्रम मानक भी अनेक बातों में उसी प्रकार हैं जैसे आयु-मानक। पर इनमें निष्पत्ति का मापन कक्षा-स्तर को आधार मानकर करते हैं, न कि आयु-स्तर को आधार मानकर। प्रत्येक कक्षा-स्तर के एक प्रतिनिधिकारी समूह पर परीक्षण का प्रशासन करते हैं और इस आधार पर प्रत्येक कक्षा-स्तर का मध्यमान फलांक ज्ञात कर लेते हैं। दो क्रमिक कक्षाओं के स्तरों के बीच में जो फलांक आता है उसके लिये स्तर का अंश (Fraction) मूल्य ज्ञात कर लेते हैं। जैसे यदि ५ वीं कक्षा के प्रारम्भ में विद्यार्थियों का जो मध्यमान फलांक होगा, उसे ५·० स्तर कहेंगे, ८ वीं कक्षा के बीच में ८·५ मूल्य देंगे। इसी प्रकार अन्य कक्षा-स्तरों के मानक भी दिए जाते हैं। उदाहरण के लिये मैट्रोपोलिटन निष्पत्ति परीक्षण (Metropolitan Achievement Test) में वास्तविक फलांक २० हो तो कक्षा-मानक ४·६ है, २१ होने पर ४·७, ४८ होने पर ७·४, ५८ होने पर १०·१ तथा ६० होने पर ११·२ है।

इन मानकों के सम्बन्ध में कुछ मुख्य बातें ये हैं:—

१. इनका प्रयोग शैक्षिक या निष्पत्ति परीक्षाओं में अधिक होता है, बुद्धि परीक्षणों में कम।
२. इनका निर्धारण अत्यन्त सरल है, क्योंकि ये विद्यालय के संगठन में पहले से ही वर्गीकृत समूहों पर निर्धारित हैं। निष्पत्ति के मापन में आयु-स्तरों की अपेक्षा इनका प्रयोग अधिक श्रेयस्कर है, क्योंकि कक्षा-स्तर के अनुसार ही विद्यालय में बालक की योग्यता का निर्वचन सम्भव है। कक्षा के बाहर कक्षाक्रम-मानकों का कोई प्रयोग नहीं है।
३. पर कक्षा-मानकों की भी वे ही परिसीमाएँ हैं जो आयु-मानकों की। आयु-स्तर की भाँति कक्षा-स्तर भी समान नहीं होते। उदाहरण के लिए कुछ शैक्षिक क्षेत्रों, जैसे गणित या वर्ण-विन्यास की दक्षता में, प्रारम्भिक कक्षाओं में अधिक प्रगति होती है और बाद की कक्षाओं में कम।
४. कक्षा-मानकों का निर्वचन उतना स्पष्ट नहीं है। इसका कारण यह है कि विद्यालयों में किसी एक कक्षा में समान आयु के बालक नहीं पढ़ते। फिर किस आधार पर कक्षा-मानक बनाए जाते हैं, यह विद्यालय के स्वरूप एवं उसकी नीति पर निर्भर है। अतः विभिन्न विद्यालयों में समान कक्षास्तर के विद्यार्थी समान नहीं होते।

अक्षरों द्वारा श्रेणी-विभाजन (Assigning Letter Grades)

अक्षरों के प्रयोग से श्रेणी-विभाजन की विधि में व्यक्तियों को उनकी सापेक्षिक योग्यता के अनुसार वर्गों में बाँट देते हैं। जैसे यदि तीन वर्ग लिए जाएँ तो मध्यमान के आसपास अंक प्राप्त करने वाले व्यक्ति को 'B', उससे काफी अधिक अंक प्राप्त करने पर A, तथा कम अंक प्राप्त करने पर 'C' दिया जा सकता है।

वर्गीकरण करने के लिए मध्यांक तथा चतुर्थांश विचलन (Median and Quartile Deviation) या फिर अधिक शुद्ध तथा वैज्ञानिक वर्गीकरण करने के लिए मध्यमान तथा प्रमाप-विचलन (Mean and Standard Deviation) का प्रयोग करते हैं। व्यवहार में सभी फलांक + ३.७५ तथा − ३.७५ चतुर्थांश विचलन के बीच पड़ते हैं। अतः वितरण की आधार रेखा ७.५ चतुर्थांश विचलन होती है। अब यदि हम विद्यार्थियों को पांच वर्गों में बाँटना चाहें तो यह रेखा ५ से विभाजित कर देंगे, अतः विचलन : $\frac{७.५}{५}$ = १.५ आयेगा। अब यदि फलांकों का मध्याङ्क (Median) ४० है और चतुर्थांश विचलन ८ तो ८ को १.५ से गुणा करके (= १२) विभिन्न वर्गों में किस
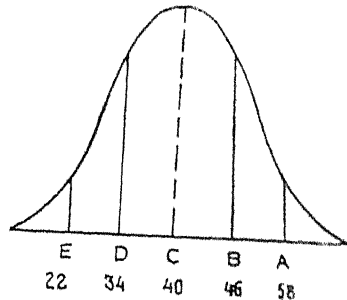
सीमा तक फलांक आयेंगे, यह निर्धारित किया जा सकता है। मध्यम वर्ग की सीमाओं का निर्धारण करने के लिए मध्याङ्क के दोनों ओर चतुर्थांश विचलन का आधा जोड़ देते हैं।

डायग्राम में ये सीमाएँ हैं। यदि वर्गों की संख्या ६, ७, ८ हो तो उसी प्रकार आधार रेखा ७.५ को ६, ७, ८ से भाग देते हैं।

लिन्डक्विस्ट ने अक्षरों द्वारा श्रेणी-विभाजन की एक अन्य विधि का सुझाव दिया है जो व्यवहार में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुई है। फलाङ्कों को एक स्तम्भ में लिखिये। इनका योग करके औसत निकालिये। इस औसत से बाकी फलाङ्कों का औसत विचलन (Average Deviation) निकालिये। फलाङ्कों के मध्यमान में औसत विचलन का दुगुना जोड़िए। यह 'A' की सीमा

हुई । फलांकों के मध्यमान में औसत विचलन का $\frac{2}{3}$ जोड़िये । यह 'B' की निम्न सीमा हुई । औसत में से औसत विचलन का $\frac{2}{3}$ घटाइये । यह 'C' की निम्न सीमा हुई । औसत में से औसत विचलन का दुगुना घटाइए । यह 'D' की निम्न सीमा हुई ।

यह निम्न उदाहरण के द्वारा समझाया गया है :—

	फलांक	विचलन
	१२०	२३
	१४३	०
	९१	५२
	१३७	६
	११०	३३
	१४०	३
	१२०	२३
	१५०	७
	१६०	१७
	१६५	२२
	१६४	२१
	१६०	१७
	१६२	१९
	१६०	१७
	१६३	२०
योग	२१४५	२८०

फलांकों का औसत $= \frac{२१४५}{१५} = १४३$

औसत विचलन $= \frac{२८०}{१५} = १८\frac{२}{३}$

औसत विचलन का दुगुना $= ३७\frac{१}{३}$ या ३७

औसत विचलन का $\frac{२}{३} = १२\cdot४४$ या १२·५

'A' की निम्न सीमा = १४३ + ३७ = १८०

'B' की निम्न सीमा = १४३ + १२·५ = १५५·५

'C' की निम्न सीमा = १४३ – १२·५ = १३०·५

'D' की निम्न सीमा = १४३ – ३७ = १०६

'E' की सीमा = १०६ के नीचे ।

यह विधि छोटे समूहों में अधिक उपयुक्त है, क्योंकि व्यवहार में इस विधि को प्रयुक्त करने पर विभिन्न वर्गों में फलांकों का वितरण लगभग इस प्रकार आता है : A = ५ to ६, B = २४ to २५, C = ४० to ४१, D = २४ to २५, E = ५ to ६. ये अनुपात सामान्य वितरण के काफी अनुरूप हैं ।

शतांशीय मानक (Percentile Norms)—

शतांशीय मानक निकालने में व्यक्ति की तुलना उस समूह से करते हैं जिसका कि वह सदस्य है। सबसे सरलतम विधि यह है कि सबसे अधिक से लेकर सबसे कम तक फलांकों का श्रेणी-क्रम कर लिया जाए। तत्पश्चात् इनके शतांशीय मान निकाले जाएँ। शतांशीय फलांकों का अर्थ है शतांशों में व्यक्त व्यक्ति की श्रेणी। किसी व्यक्ति के शतांशीय फलांक से यह पता चलता है कि समूह के कितने प्रतिशत सदस्य उस व्यक्ति से नीचे हैं। यदि किसी व्यक्ति का शतांशीय फलाङ्क ७५ है तो इसका यह अर्थ है कि समूह के ७५% व्यक्ति उसके नीचे हैं। हम शतांश (Percentiles) निकालने की विधि नीचे उदाहरण देकर समझायेंगे।

मान लीजिये वास्तविक फलांक इस प्रकार हैं :

२४, २५, २४, २५, ३१, २२, ३०, २४, २५, २७, २८, २९, १९, २८, २७, २५, ३०, ३१, २६, ३०, ३२, ३०, २५, ३२, २६, २४, २१, २९, २४, १७, २९, २९, २७, ३०, २६, २५, ३०, २८, २६, २६, २३, २०, २५, १५, ३०.

फलाङ्क	आवृत्ति	सं आ०	सं प०
३२	२	४५	१००
३१	२	४३	९६
३०	७	४१	९१
२९	४	३४	७५
२८	३	३०	६७
२७	३	२७	६०
२६	५	२४	५३
२५	७	१९	४२
२४	५	१२	२६
२३	१	७	१५
२२	१	६	१३
२१	१	५	११
२०	१	४	९
१९	१	३	७
१८	०	२	४
१७	१	२	४
१६	०	१	२
१५	१	१	२

ऊपर के उदाहरण से स्पष्ट है कि ३० फलांक का शतांशीय मान १०० है और १६ का केवल २। ५० वें शतांशीय मान का अर्थ है मध्याङ्क, जो वितरण का मध्य फलांक है। प्रस्तुत उदाहरण में यह २६ है। ऊपर के आधार पर एक ऑजाइव (Ogive) खींचा जा सकता है।

शतांशीय मानक के बारे में कुछ मुख्य बातें ये हैं—

१. यह विधि अत्यन्त सरल है। वे व्यक्ति भी जो सांख्यिकीय विधियों में अत्यन्त पारंगत नहीं हैं, केवल प्रारम्भिक सांख्यिकीय ज्ञान से ही इसे सरलता से समझ लेते हैं।

२. इनकी सहायता से ऐसे फलांक भी जिनकी इकाइयाँ समान नहीं हैं, और जिनके संख्यात्मक प्रतिमान भी असमान हैं, अर्थपूर्ण ढंग से व्यक्त किये जा सकते हैं।

३. शतांशीय मानक निकालने में यह आवश्यक नहीं है कि पहले एक प्रतिनिधिकारी न्यादर्श लिया जाए, जैसा कि बुद्धि-लब्धि निकालने में होता है। अतः इसमें पहले से ही कुछ बातों की अभिधारणा नहीं करनी पड़ती। अतः अत्यन्त विस्तृत रूप से इनका व्यवहार होता है। प्रौढ़ों एवं बालकों दोनों पर शतांशीय मानक समान रूप से उपयोगी हैं। शैक्षिक, औद्योगिक, सैन्य, सभी प्रकार की परिस्थितियों में ये समान रूप से उपयोगी हैं।

४. शतांशीय मानक प्रायः प्रतिशत फलांक से भ्रमित (Confused) हो जाते हैं।

५. सांख्यिकीय विश्लेषण में इनका सरलता से उपयोग नहीं हो सकता, क्योंकि अनेक गणितीय क्रियाएँ जैसे जोड़, बाकी, गुणा, भाग आदि इन पर सम्भव नहीं हैं।

६. इनसे केवल समूह में व्यक्ति की सापेक्षिक स्थिति ज्ञात होती है और व्यक्ति की वास्तविक योग्यता या सामर्थ्य का तब तक पता नहीं चलता जब तक शतांशीय मान के अतिरिक्त उसके बारे में कुछ अन्य सूचना न मिले।

७. विभिन्न परीक्षणों के शतांशीय फलांकों की तुलना तब तक नहीं की जा सकती जब तक कि वे समूह भी जिन पर उनका प्रशासन हुआ है, तुलनात्मक न हों। एक समूह में ३६ फलांक का शतांशीय मान ८० हो सकता है और दूसरे में ४०।

८. दो शतांशीय फलांकों का औसत करने से वही परिणाम नहीं आता जो उनके वास्तविक फलांकों का औसत निकाल कर और फिर शतांशीय मान निकालने से आता है। जैसे ऊपर के उदाहरण में २० एवं २८ इन दो फलांकों का औसत २४ है जिसका शतांशीय मान २६ है। पर २० का शतांशीय मान ९ है और २८ का ६७। इन दोनों का औसत $\frac{९ + ६७}{२} = \frac{७६}{२} = ३८$ है।

९. शतांशीय फलांकों की इकाइयाँ समान नहीं होतीं। यदि वास्तविक फलांकों का वितरण लगभग सामान्य हो तो मध्यांक के समीप फलांकों को शतांशीय मान में परिवर्त्तन करने पर काफी अन्तर रहता है, जबकि वितरण के छोर में परिवर्त्तन करने पर उतना अन्तर नहीं रहता। ऊपर के उदाहरण में २ तथा १५ शतांशीय मान के बीच वास्तविक फलांक में अन्तर २३–१५ = ८ है, जबकि ४२ तथा ६० शतांशीय मान के बीच केवल २७ – २५ = २ का।

१०. सामान्य दशाओं में शतांशीय फलांक से प्रत्येक व्यक्ति की श्रेणी या सापेक्षिक स्थिति का ज्ञान हो जाता है, पर किसी अन्य व्यक्ति से उसके फलांक का वास्तविक अन्तर कितना है, यह पता नहीं चलता।

लब्धियाँ
(Quotients)

जब अनेक वर्षों तक मानसिक परीक्षणों में आयु-मानकों का प्रयोग होता रहा, तो इस बात की आवश्यकता अनुभव हुई कि इन आयु-मानकों को किसी प्रगति व्यक्त करने वाले देशनांक में बदला जाए। यदि कोई १० वर्ष का बालक १२ वर्ष के परीक्षण में सफल हो जाता है तो वह उत्तम तो है पर कितना, इसे व्यक्त करने के लिए जो देशनांक बनाया गया, उसे बुद्धि-लब्धि कहते हैं। बिने-परीक्षणों में बुद्धि-लब्धि निकालने का सूत्र है :

$$\text{I. Q.} = १०० \times \frac{\text{M. A.}}{\text{C. A.}}$$

जिसमें I. Q. = Intelligence Quotient या बुद्धि-लब्धि, M. A. = Mental Age या मानसिक आयु; C. A. = Chronological Age या वर्षायु। यदि कोई विद्यार्थी जिसकी वर्षायु १० वर्ष है पर जो १३ वर्ष की मानसिक आयु के सभी प्रश्नों में सफल हो जाता है, उसकी बुद्धि-लब्धि है।

$$\frac{१००\times१३}{१०} = १३०$$

स्टेन्फोर्ड-बिने बुद्धि-लब्धि के अतिरिक्त अन्य प्रकार की लब्धियाँ भी प्रयुक्त होती हैं। हम इनमें से कुछ का वर्णन यहाँ करेंगे :—

हीनिस व्यक्तिगत स्थिरांक (Heinis Personal Constant)—

वरमीलेन ने सन् १९२२ में पैरिस में ६ से लेकर ११ वर्ष तक के बालकों पर एक मानसिक मापदण्ड प्रशासित किया। इसमें विभिन्न प्रकार के १५ कार्य थे। उसके परिमाणों से ज्ञात हुआ कि ६ से १० वर्ष तक फलांकों में क्रमशः

प्रगति होती है। हीनिस ने इन परिणामों को १९२४ में लौगेरिथ्म में परिवर्त्तित किया और तदुपरान्त कूह्लमैन के बुद्धि - परीक्षणों पर लागू किया । हीनिस इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि मानसिक विकास के वक्र का रूप एकेन्द्र (Parabolic) होता है । बुद्धि-लब्धि में इन परिणामों को व्यक्त करने से पता चला कि यह बाद में अवस्था के साथ कम होती है और यह कि आयु के बढ़ने के साथ बुद्धि-लब्धि के ह्रास की गति भी बढ़ जाती है । किन्तु यदि बालक की मानसिक आयु को वर्मीलेन के प्रदत्तों पर आधारित परीक्षण की समान अन्तराल वाली इकाइयों में परिवर्त्तित कर दिया जाए और इसे वर्षायु का प्रतिनिधित्व करने वाले फलांक से विभाजित कर दें तो इस प्रकार प्राप्त लब्धि आयु के साथ परिवर्त्तित नहीं होगी । हीनिस ने ऐसा ही किया और इस लब्धि का नाम 'व्यक्तिगत स्थिरांक' (Personal Constant or Personal Coefficient) रखा । हीनिस ने व्यक्तिगत स्थिरांक को इस प्रकार परिभाषित किया है—"किसी व्यक्ति का व्यक्तिगत गुणांक बुद्धि-परीक्षण के परिणाम में उसकी आयु-स्तर की सामान्य बौद्धिक सीमा का विभाजन करने से प्राप्त होता है, जबकि ये दोनों मापन निरपेक्ष क्रम-भाजन में दिए जाने चाहिए ।"[1]

व्यक्तिगत गुणांक की गणना कोई सरल कार्य नहीं है । इसीलिए बाद में चलकर हीनिस ने एक सारिणी प्रस्तुत की जिससे केवल मानसिक आयु तथा वर्षायु ही ज्ञात होने पर व्यक्तिगत गुणांक (Persnoal Coefficient) निर्धारित किये जा सकते हैं । पर इस विधि के सम्बन्ध में अधिक अन्वेषण तथ्य उपलब्ध नहीं हैं । यह विधि अत्यन्त वैज्ञानिक भी नहीं है, क्योंकि आयु-विकास के वक्र एक सीधी रेखा के अधिक समान होते हैं न कि एक छेदावक्र (Logarithmic Curve) के समान । **व्यक्तिगत गुणांक** की विधि का अधिक प्रचलन नहीं है ।

मैकनीमर का बुद्धि-लब्धि समतुल्य फलांक[2] (McNemar's I. Q. Equivalent Scores)—

प्रमाप-विचलन में बुद्धि-लब्धि की विचलन-शीलता क्या है, यह प्रश्न

---

1. "The personal coefficient of any given individual is equal to the result of the intelligence examination divided by the normal degree of intelligence corresponding to his age, both measures being given in absolute graduation." –Heinis H. : *A Personal Constant.*, Journal of Educational Psychology, March 1926, 17, pp. 163-186.
2. McNemar, Quinn, : *The Rvision of the Stanford-Binet Scale.*, Houghton Mifflin Co., 1942.

अभी तक तय नहीं हो पाया है। सन् १९१६ के बिने परीक्षण में अमरीकी नगरों में पढ़ने वाले बालकों के प्रतिनिधिकारी समूह में विचलनशीलता १६-१७ बु० ल० बिन्दु है । पर यह विचलनशीलता सभी अवस्थाओं में स्थिर (Constant) नहीं है। मैकनीमर ने १९३७ के स्टेनफोर्ड-बिने परीक्षण में प्राप्त बुद्धि-लब्धियों को शुद्ध करके उनकी विचरणशीलता को स्थिर बनाने के लिए एक सारिणी दी है। उसके अनुसार १९१६ के परीक्षण की तुलना में यह विचरणशीलता अधिक है--१७ या १७.५ बिन्दु। इस प्रकार उनकी विधि में बुद्धि-लब्धि समतुल्य फलांक निकल आता है। उसका सूत्र है :

$$\text{बुद्धि-लब्धि समतुल्य फलांक} = १०० \pm १७ \frac{X}{S.D.\ dist}$$

जिसमें X = परीक्षार्थी के फलांक तथा समूह के फलांकों के मध्यमान में अन्तर तथा SD. dist = वितरण का प्रमाप विचलन ।

बुद्धि समतुल्य फलांकों का भी उसी प्रकार निर्वचन सम्भव है जिस प्रकार सामान्य बुद्धि-लब्धि गुणांकों का। उदाहरण के लिए १२० समतुल्य फलांक औसत से उतना ही ऊपर है, जितना १२० बुद्धि-लब्धि। और ७० उतना ही नीचे है, जितनी ७० बुद्धि-लब्धि।

आर्थर तथा वुडरो की विभेदात्मक मूल्य विधि[1] (Discriminative Value Method of Arthur and Woodrow)--

सन् १९१९ में आर्थर तथा वुडरो ने परीक्षण के फलांकों को प्रमाप इकाइयों में वर्णन करने की यह विधि निकाली। उन्होंने ज्ञात किया कि फॉर्म-बोर्ड परीक्षणों, चित्र-पहेलियों तथा अन्य परीक्षणों में, जिसमें फलांक-गणना समय-अशुद्धियों आदि के आधार पर की जाती है, एक आयु से दूसरी आयु तक प्रगति की मात्रा समान नहीं होती। अतः फलांकों के वितरण का प्रमाण-विचलन भी सभी आयुओं में समान नहीं होता। अतः वुडरो तथा आर्थर ने दो क्रमिक आयुओं की विचलनशीलता को अपने माप का आधार माना और दो क्रमिक आयुओं के फलांकों के मध्यमानों के अन्तर को अंश (Numerator)। उनका सूत्र है :

$$D.V. = \frac{M_2 - M_1}{\frac{PE_1 + PE_2}{2}}$$

1. Arthur and Woodrow : *An Absolute Intelligence Scale : A Study in Method.*, Journal of Applied Psychology, 1919, 3, pp. 118-137.

यह विधि आर्थर के बिन्दु-निष्पादन परीक्षण (Arthur's Point Performance Scale), नॉक्स के घन परीक्षण (Knox Tube Test) आदि में उपयुक्त हुई है।

शैक्षिक आयु एवं शैक्षिक लब्धि (Educational Age and Educational Quotient—E.A. And E. Q.)—

बुद्धि परीक्षणों में जिस प्रकार मानसिक आयु तथा बुद्धि-लब्धि का प्रयोग होता है, उसी प्रकार निष्पत्ति परीक्षणों में शैक्षिक आयु एवं शैक्षिक लब्धि का। **शैक्षिक आयु** शैक्षिक परिपक्वता या **शैक्षिक विकास के स्तर** की द्योतक है। इसी प्रकार **शैक्षिक लब्धि शैक्षिक विकास की गति** की। अतः $E.Q = \frac{E.A.}{C.A.} \times १००$। उदाहरण के लिए यदि एक १० वर्ष की आयु का बालक १३ वर्ष की आयु के बालक के स्तर के सभी ज्ञानोपार्जन से सम्बन्धित प्रश्न हल कर लेता है तो उसकी शैक्षिक लब्धि $१०० \times \frac{१३}{१०} = १३०$ हुई। यदि परीक्षार्थी केवल एक हो तो शैक्षिक आयु एवं शैक्षिक लब्धि के स्थान पर परीक्षार्थी आयु एवं परीक्षार्थी लब्धि (Subject Age and Subject Quotient) इन शब्दों का प्रयोग श्रेयस्कर है।

शैक्षिक आयु एवं शैक्षिक लब्धियों के मूल्यांकन में निम्न बातें महत्व की हैं :—

१. इनके प्रयोग से एक सापेक्षिक रूप से स्थिर इकाई वर्षायु में फलांकों की अर्थपूर्ण व्याख्या कर सकते हैं। अन्य समान समूहों पर प्रमापीकृत परीक्षणों, बुद्धि परीक्षणों एवं व्यक्ति की अपनी मानसिक आयु एवं वर्षायु के साथ तुलना करने में भी इनका महत्व है।

२. एक परीक्षण की वार्षिक इकाइयाँ दूसरे परीक्षण की वार्षिक इकाइयों के समकक्ष नहीं होतीं, क्योंकि ये परीक्षण विद्यालय की नीति एवं कक्षोन्नति के आधार पर बनाए जाते हैं।

३. शैक्षिक आयु एवं शैक्षिक लब्धि अनेक परीक्षणों एवं विषयों में निष्पत्ति के आधार पर निर्धारित की जाती है। अतः यह आवश्यक नहीं है कि समान शैक्षिक आयु के बालकों की समान शैक्षिक उपलब्धि भी हो। १२·५ शैक्षिक आयु के दो बालकों में सम्भव है कि एक गणित, अंग्रेजी तथा नागरिक शास्त्र में अधिक योग्य हो एवं दूसरा हिन्दी, अर्थशास्त्र एवं संस्कृत में।

४. शैक्षिक आयु तथा शैक्षिक लब्धि में वे सभी त्रुटियाँ हैं जो मानसिक आयु तथा मानसिक लब्धि में।

परिपूर्ति लब्धि (Accomplishment Quotient or A. Q.)—

परिपूर्त्ति लब्धि निर्धारित करने का सुझाव सन् १९२० में फ्रान्जेन[1] ने दिया। इसका सूत्र है : $A.Q. = १०० \times \frac{E.A.}{M.A.}$ १०० परिपूर्ति लब्धि आदर्श मानी जाती है। यदि किसी बालक की शैक्षिक आयु ८ वर्ष ९ महीने हो और मानसिक आयु १० वर्ष, तो उसकी परिपूर्त्ति लब्धि $१०० \times \frac{८\frac{३}{४}}{१०} = ८७.५$ हुई। इसका अर्थ यह है कि बालक अपनी मानसिक क्षमता के अनुसार शैक्षिक प्रगति नहीं का रहा है। पर यदि उसकी शैक्षिक १२ आयु वर्ष हो और मानसिक आयु १० वर्ष, तो उसकी परिपूर्त्ति लब्धि है : $\frac{१२}{१०} \times १०० = १२०$, इसका यह अर्थ है कि वह अपनी मानसिक क्षमता से आगे है। पर यह बात बड़ी असंगत लगती है कि कोई व्यक्ति अपनी मानसिक क्षमता से आगे कैसे हो सकता है। अतः परिपूर्त्ति लब्धि की काफी आलोचना हुई है और अब इसका प्रयोग प्रायः नहीं किया जाता।

बुद्धि-गुणांक (Coefficient of Intelligence) —

इस अनुपात का प्रयोग पर्कस्, ब्रिजिस तथा हार्डविक ने अपने बिन्दु-परीक्षण में किया। इसे ज्ञात करने के लिए व्यक्ति के बिन्दु-फलांक में उसकी आयु के सामान्य व्यक्ति के फलांक से भाग देते हैं।

सूत्र है : $C.\ I. = \frac{\text{Score of the individual}}{\text{Mean score of the group}}$

उदाहरण के लिए यदि किसी बालक का परीक्षण में फलांक ७५ है, पर उसकी आयु का मानक-फलांक (Norm) १०० है तो बुद्धि-गुणांक $\frac{७५}{१००} = .७५$ हुआ। बुद्धि-गुणांक का अधिक प्रयोग नहीं हुआ है और इसका बुद्धि-लब्धि से क्या सम्बन्ध है, इसका अधिक विवेचन नहीं हुआ है। पर यह गुणांक आयु-विकास के वक्र से प्रभावित नहीं होता है। बुद्धि के बढ़ने के साथ-साथ बुद्धि-

---

1. Franzen, Raymond. : *The Accomplishmnet Quotient*, Teachers' College Record, 21 Nov. 1920, pp. 432–440.

लब्धि में विचरणशीलता बढ़ती जाती है, पर यह बुद्धि-गुणांक में कम हो जाती है।

फलांक-गणना की प्रविधियाँ (Methods or Techniques of Scoring)—

फलांक-गणना की अनेक विधियाँ हैं। हम निम्न विधियों का संक्षिप्त विवरण दे रहे हैं :—

१. निकृन्त कुञ्जी से (By Stencil key)
२. निकृन्त-पत्र से (By Stencil papers)
३. प्रांगार-पत्र से (By Carbon papers)
४. सुई वेध से (By Pin pricks)
५. छिद्रक-पत्र से (By Punchboard)
६. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मशीनों से (By I. B. M. Machines)
७. विद्युतणु यन्त्रों से (By Electronic Machines)

(१) **निकृन्त कुंजी से**—फलांक गणना में जिन अनेक विधियों का प्रयोग होता है, उनमें यह एक अत्यन्त प्राचीन विधि है। इसमें पत्र के एक निकृन्त पर सही उत्तर दिए रहते हैं। यदि कई पृष्ठों का परीक्षण-पत्र है तो प्रत्येक पत्र के लिए अलग-अलग निकृन्त कुञ्जी बनाई जा सकती है। परीक्षण-पत्र के समीप इस कुञ्जी को रखकर यह देख लेते हैं कि परीक्षार्थी ने कितने प्रश्नों का उत्तर सही दिया है और कितनों का गलत। यदि परीक्षण-पत्र ८ पृष्ठों का है तो ८ अलग-अलग व्यक्ति एक साथ कुञ्जियों का प्रयोग करके फलांक दे सकते हैं और एक नवाँ व्यक्ति इन सभी फलांकों का योग कर सकता है।

(२) **निकृन्त-पत्र से**—जब इस विधि से फलांक-गणना की योजना होती है तो स्वयं परीक्षण-पत्र के साथ निकृन्त-पत्र दे दिए जाते हैं। उत्तर-पुस्तिका में इसे लगा देते हैं और सही उत्तरों की संख्या इसके छेदों में से गिन लेते हैं। यदि अनुमान सूत्र का प्रयोग किया जाए तो इसमें गलत उत्तरों की गणना भी करनी पड़ेगी। जिन प्रश्नों का उत्तर परीक्षार्थी ने न दिया हो, उनकी अवहेलना करते हैं। पर कितने प्रश्नों का बिल्कुल उत्तर नहीं दिया गया है, इसकी जाँच कर लेना ठीक रहता है।

(३) **प्रांगार-पत्र से**—इसमें सबसे पुरानी विधि का नाय क्लैप-यंग अंकन विधि (Clapp-Young Self-scoring Device) है, जिसे हफटन-मिफ्लिन कम्पनी ने शुरू किया। इस विधि का उपयोग नेल्सन के मानसिक योग्यता परीक्षण में किया गया है। परीक्षण-पत्र दो पृष्ठों का है एवं प्रश्न-पद दोनों ओर मुद्रित हैं। प्रश्न के आगे कुछ चौकोर खाने (Boxes) से बने होते हैं।

परीक्षार्थी इनमें से जो खाना सही उत्तर के लिए है, उसमें '×' इस प्रकार का चिन्ह लगा देता है। खाने सीधे हाथ की तरफ होते हैं और इनके नीचे कार्बन लगा रहता है। अतः विद्यार्थी द्वारा लगाए गए चिन्ह इस कार्बन पर आ जाते हैं। इन चिन्हों को गिन लिया जाता है।

(४) **छिद्रक-पत्र से**---इस विधि में विद्यार्थी जो उत्तर उचित समझता है, उसमें पैन्सिल चलाता है। प्रश्नों के विकल्पों के अनुसार छिद्रक-पत्र में छेद होते हैं। यदि छिद्र करने पर लाल रंग निकले तो उत्तर सही होता है, किन्तु सफेद रंग निकलने पर गलत। गलत होने पर विद्यार्थी दुबारा पत्र में छेद करता है। यह विधि 'साइन्स रिसर्च एसोशियेट्स' द्वारा कुछ वर्ष पूर्व प्रकाश में आई। इस विधि में सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि परीक्षण की अवधि में ही विद्यार्थी सीखने लगता है।

(५) **सुई वेध से**— इस विधि का विकास टूप्स (Toops) ने ओहियो राज्य मनोवैज्ञानिक परीक्षणों में प्रयोग करने के लिए किया। इसमें विद्यार्थियों को ऐसी उत्तर-पुस्तिकाएँ दे दी जाती हैं जिसमें कुछ खाने होते है और उनके बीच गोले बने रहते हैं। प्रत्येक उत्तर के लिए एक खाना होता है। विद्यार्थी जिस उत्तर को ठीक समझता है उसी के लिये दिये गये खाने में पिन चुभो देता है। उत्तर-पुस्तिका के पृष्ठ समान आकार के नहीं होते। सबसे ऊपर का पृष्ठ सबसे बड़ा होता है, पर इसके नीचे वाले पृष्ठ क्रमशः छोटे होते हैं ताकि ऊपर के सुई के निशान इन पर न आ सकें। उत्तर-पुस्तिका के नीचे कार्डबोर्ड या कोई अन्य कठोर वस्तु रख दी जाती है ताकि पिन का निशान ठीक से डाला जा सके। सही उत्तरों के खानों में जितने पिन के निशान होते है उन्हें गिन लिया जाता है और इस प्रकार परीक्षार्थी के फलाङ्कों की गणना कर ली जाती है। 'साइन्स रिसर्च एसोशियेट्स (Science Research Associates) नामक संस्था के अनेक परीक्षणों में इस विधि का उपयोग होता है।

(६) **अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार यन्त्रों से**---इस प्रकार की मशीनों से गणना करने में विशिष्ट प्रकार की उत्तर-पुस्तिकाओं की आवश्यकता पड़ती है एवं पैन्सिल ग्रेफाइट मिश्रित पदार्थ की बनाई जाती है। प्रत्येक विद्यालय की सामर्थ्य नहीं है कि इस प्रकार की मशीन रख सके। अतः फलांक-गणना के लिए अमरीका में विद्यालय अपनी पुस्तिकाओं को ऐसे केन्द्रों में भेज देते हैं जहाँ मशीनें उपलब्ध हों। केवल बड़े विद्यालयों या शिक्षण संस्थाओं के लिए ही जिनके पर्याप्त आर्थिक साधन हों, इस प्रकार की मशीनें रखना मितव्ययतापूर्ण है। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार यन्त्र के प्रयोग की विधि यह है कि मशीन में एक

स्टेन्सिल रख देते हैं । इससे उत्तर-पुस्तिका में सही स्थान पर लगे हुए निशान का मशीन के विद्युत-गणक के साथ सम्पर्क स्थापित हो जाता है और मशीन के ऊपर एक बटन के दबाने से मशीन चलने लगती है । कुल फलांक एक डायल (Dial) पर आ जाता है । इस विधि में एक त्रुटि यह है कि कभी-कभी विद्यार्थी द्वारा लगाए गए निशान गहरे नहीं होते । अतः मशीन के गणक के साथ इनका सम्पर्क नहीं हो पाता और सम्पूर्ण फलांकों में ये सम्मिलित नहीं होते । पर इसके लिए विशिष्ट निदेश दिए जा सकते हैं । पद-विश्लेषण में यह विधि अत्यन्त उपयोगी है ।

(७) **विद्युतणु यंत्रों से**—फलांक गणना की यह एक नवीनतम विधि है । लिण्डक्विस्ट एवं अन्य व्यक्तियों ने इस पर काफी कार्य किया है । स्ट्रॉन्ग-वोकेशैनल इन्टरेस्ट ब्लैंक (Strong Vocational Interest Blank) एवं अन्य परीक्षणों में इस विधि की सहायता से अत्यन्त शीघ्रता के साथ फलांक गणना सम्भव है । पर इस विधि में भी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मशीनों की भाँति विशिष्ट प्रकार की उत्तर-पुस्तिकाएँ प्रयुक्त की जाती हैं । अभी तो केवल प्रारम्भ है । इस विधि में प्रगति की काफी सम्भावनाएँ हैं । सम्भव है कि निकट भविष्य में ही अनेक परीक्षणों की फलांक-गणना इस विधि से होने लगे ।

: ९ :

निबन्धात्मक एवं नवीन प्रकार की परीक्षा-प्रणाली

प्रचलित निबन्धात्मक परीक्षाएँ एवं नवनिर्मित परीक्षा-प्रणाली दोनों के ही पक्ष-विपक्ष में अनेक तर्क प्रस्तुत किए गए हैं। इन दोनों ही प्रकार के तर्कों में कुछ न कुछ सत्य है। किस प्रकार की विधि का प्रयोग श्रेयस्कर है, यह वास्तव में परिस्थिति एवं आवश्यकता पर निर्भर है। प्रस्तुत अध्याय में हम दोनों ही प्रकार की परीक्षा-प्रणाली के गुण-दोषों की अलग-अलग विवेचना करेंगे।

निबन्धात्मक परीक्षाएँ

निबन्धात्मक परीक्षाओं की परिसीमाएँ—

१. **परीक्षण-निपुणता का लाभ**—कुछ व्यक्ति या परीक्षार्थी परीक्षा की कला में निपुण होते हैं। वे जानते हैं कि किस प्रकार उत्तर लिखें, अनुमान लगाएँ एवं परीक्षक को प्रभावित करें। अतः ज्ञान न होने पर भी वे अन्य परीक्षार्थियों की अपेक्षा अच्छे अंक प्राप्त कर लेते हैं।

२. **प्रतिनिधित्व की कमी**—पूरे प्रश्न-पत्र में कुल मिलाकर १०-११ प्रश्न होते हैं और विद्यार्थी को इनमें से भी ४-५ प्रश्न करने होते हैं। ये थोड़े से

प्रश्न सम्पूर्ण पाठ्यक्रम का प्रतिनिधित्व नहीं करते। पाठ्यक्रम के अनेक अंश बिल्कुल ही छूट जाते हैं। न्यादर्श (Sample) अपर्याप्त रहता है। इसके अतिरिक्त इन चार-पाँच प्रश्नों में भी यदि विद्यार्थी केवल ३३% या ३६% या किसी अन्य स्तर पर फलांक प्राप्त करले तो उसे सफल समझा जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि हम उससे पाठ्यक्रम के केवल एक अंश का ज्ञान रखने की ही आशा करते हैं।

३. **अपर्याप्त न्यादर्श**—न्यादर्श अपर्याप्त होने के कारण सफलता बहुत कुछ संयोग पर निर्भर रहती है। जब केवल पाठ्यक्रम के एक भाग से प्रश्न दिए हों तो निश्चित ही वह व्यक्ति जिसने अवसरवश केवल वही भाग पढ़ा हो, भलीभाँति सफल होगा, जबकि अन्य विद्यार्थी जिसने बाकी सब कुछ तो पढ़ा है, पर दुर्भाग्य वश वही भाग जिसमें से प्रश्न संकलित हैं, नहीं पढ़ा है, तो उसमें कितना ही ज्ञान क्यों न हो, जहाँ तक परीक्षा का प्रश्न है, वह असफल रहेगा। कभी-कभी हम परीक्षा में इसीलिए महा अज्ञानी, मूर्ख एवं अध्ययन से जी चुराने वाले व्यक्तियों को अच्छी श्रेणी में सफल होते एवं अनेक पठनशील एवं परिश्रमी विद्यार्थियों को असफल होते हुए पाते हैं।

४. **एकरूपता की कमी**—निबन्धात्मक परीक्षाओं में परीक्षा का स्तर सदैव एकसा नहीं रखा जा सकता। कुछ परीक्षक अत्यन्त कठिन प्रश्न-पत्र बनाते हैं, जबकि अन्य अत्यन्त सरल प्रश्न-पत्र बनाने के आदी होते हैं। प्रश्न-पत्र का कठिनता-स्तर एक कॉलिज से दूसरे कॉलिज में, एक विश्वविद्यालय से दूसरे विश्वविद्यालय में एवं एक वर्ष से दूसरे वर्ष में भिन्न होता है। एकरूपता न होने से सम्भव है किसी वर्ष प्रथम श्रेणी में मनोविज्ञान में एम० ए० करने वाले छात्र से किसी अन्य वर्ष द्वितीय श्रेणी में एम० ए० करने वाला छात्र श्रेष्ठतर हो। एक परीक्षक प्रश्न-पत्र की रचना करते समय एक भाग को महत्व देता है, जबकि दूसरा परीक्षक दूसरे भाग को। अतः हम यह भी नहीं कह सकते कि दो विभिन्न वर्षों या विश्वविद्यालयों में एक ही एक प्रश्न पत्र लेकर एक श्रेणी में एम० ए० पास करने पर उनका ज्ञान एक ही प्रकार का होगा।

५. **तोता-रटन पर बल**—वास्तव में निबन्धात्मक परीक्षाएँ ज्ञानोपार्जन या निष्पति का मापन नहीं करतीं, वरन् वे स्मरण-शक्ति या रटने की योग्यता का मापन करती हैं। अनेक विद्यार्थी जो सम्पूर्ण पाठ्यक्रम न पढ़कर कुछ महत्व-पूर्ण एवं सम्भावित प्रश्नों के उत्तर बार-बार रट कर याद कर लेते हैं, वे उन विद्यार्थियों से अधिक अंक प्राप्त कर लेते हैं जो रटने की कला में निपुण नहीं हैं। ऐसे रटने वाले विद्यार्थी साल भर तो समय व्यर्थ करते हैं, पर परीक्षा के

एक माह पहले अतिशय अध्ययन में जुट जाते हैं और इस प्रकार अपना स्वास्थ्य नष्ट करते हैं।

६. आत्मनिष्ठ फलांक-व्यवस्था—निबन्धात्मक परीक्षाओं में फलांक-व्यवस्था वस्तुगत नहीं होती। यदि हम शैक्षिक परिणामों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करें तो ज्ञात होगा कि एक ही उत्तर-पुस्तिका को अलग-अलग परीक्षक अलग-अलग प्रकार से फलांकित करते हैं एवं प्रत्येक विषय में प्राप्त औसत फलांक भी एक समान नहीं हैं। उदाहरण के लिए गणित में औसत प्राप्त अंक अंग्रेजी के औसत प्राप्तांकों से काफी अधिक हैं। हमारे लिए विभिन्न विषयों में प्राप्त अंकों की प्रत्यक्ष तुलना करना सम्भव नहीं है। डॉ० डी० एन० मुकर्जी के एक अध्ययन में फलांकों के सम्बन्ध में निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त हुए हैं:—

(अ) एक विषय में प्राप्त अंकों की तुलना दूसरे विषय में प्राप्त अंकों से नहीं की जा सकती। जैसे ७५% फलांक गणित और अँग्रेजी दोनों में प्राप्त हो तो अँग्रेजी में उनका महत्व गणित के अङ्कों के महत्व से अधिक है।

(ब) प्रत्येक विषय में फलांकों का विचलन अलग-अलग होता है।

(स) विभिन्न विषयों में उच्च फलांक प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों का प्रतिशत एक समान नहीं है।

फलाकों की आत्मनिष्ठता के अनेक कारण हैं। हम यहाँ उनमें से कुछ पर विचार करेंगे :—

(अ) एक बाह्य परीक्षक को विद्यार्थी के औसत कार्य का ज्ञान नहीं होता। अतः वह उन परीक्षार्थियों को जिन्होंने सामान्य स्तर से निकृष्ट लिखा है, अच्छे फलांक नहीं देगा; लेखन-शैली, अभिव्यक्ति एवं हस्तलेख इन सभी का परीक्षार्थी द्वारा प्राप्त अंकों पर प्रभाव पड़ेगा।

(ब) विभिन्न परीक्षकों का अंक देने का स्तर अलग-अलग होता है। कुछ परीक्षक पहले से ही अपना प्रसार-क्षेत्र (Range) बना लेते हैं; जैसे १०० कुल योग होने पर ४० एवं ७० के बीच अंक देते हैं, या ५० और ८० के बीच। कितने प्रतिशत परीक्षार्थियों को फेल करना है, या प्रथम श्रेणी में रखना है, कुछ परीक्षक यह भी निश्चित कर लेते हैं। इस सम्बन्ध में अलग-अलग परीक्षकों के निर्णयों में भी काफी अन्तर होता है।

(स) विभिन्न परीक्षक अलग-अलग अवसरों पर अपने मूड, पारिवारिक स्थिति, अपनी मानसिक स्थिति, थकान आदि के अनुसार अलग-अलग अंकीकरण करते हैं।

(द) किस उत्तर में कौन से तथ्य सही हैं, कौन से गलत; प्रश्न के उत्तर

में कौनसा तथ्य वांछनीय था, कौनसा नहीं; इस सम्बन्ध में अलग-अलग परीक्षकों का निर्णय भी अलग होता है। एक परीक्षक तथ्यों की यथार्थता एवं प्रमाणों को अधिक महत्व देता है, जबकि दूसरा परीक्षक मौलिकता एवं सामान्य सिद्धान्तों को। अंकीकरण भी इसी आधार पर किया जाता है।

(य) प्रश्नों के उत्तरों में व्यक्त परीक्षार्थी की राय एवं अभिवृत्तियाँ कभी-कभी परीक्षक की अभिवृत्तियों, विचारों एवं राय से मेल नहीं खातीं। विरोधी विचारों के व्यक्त किये जाने पर अपने अचेतन से प्रभावित परीक्षक परीक्षार्थी को कम अंक दे सकता है।

(र) किसी भी उत्तर में अनेक जटिल बातें होती हैं, जैसे विषयवस्तु, मूल विचार, भाषा, शैली व्यक्त करने की विधि, निर्वचन आदि। परीक्षक प्राय: कम समय में अधिक से अधिक उत्तर-पुस्तिकाओं को जाँचने की प्रवृत्ति रखते हैं। अत: इन अलग-अलग बातों पर ध्यान न देकर वे सामान्य प्रभाव के आधार पर फलांक देते हैं। अत: परीक्षार्थी के साथ न्याय नहीं करते।

७. **अपने उत्तरों के मूल्यांकन से विद्यार्थी अनभिज्ञ**—निबन्धात्मक परीक्षाओं में बोर्ड एवं यूनीवर्सिटी की प्राय: सभी परीक्षाओं में परीक्षार्थी को फलांक देने के बाद उत्तर-पुस्तिकायें दिखाने की व्यवस्था नहीं रहती। अत: विद्यार्थी यह नहीं जान पाते कि उन्हें किस आधार पर फलांक दिए गए हैं। यदि उत्तर-पुस्तिकाएँ दिखा भी दी जाएँ, जैसा कि छ:माही एवं तिमाही परीक्षाओं में होता है, तो परीक्षक के लिए फलांक किस आधार पर दिए हैं, यह समझाना आसान नहीं रहता। विद्यार्थी प्राय: असन्तुष्ट ही रहते हैं।

८. **विश्वसनीयता एवं वैधता का अभाव**—निबन्धात्मक परीक्षाओं में अच्छी परीक्षा का कोई भी गुण नहीं होता। न तो वे वस्तुगत (Objective) होती है और न विश्वस्त (Reliable) या वैध (Valid)। फलांक-गणना के सम्बन्ध में हम बता चुके हैं कि अलग-अलग व्यक्ति अलग-अलग प्रकार से अंक देते हैं अत: फलांकों में संगति नहीं होती। परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि से कई परीक्षकों द्वारा यदि फलांक-गणना कराई जाए और इनमें सहसम्बन्ध निकाला जाए तो **विश्वसनीयता गुणांक** अधिक नहीं आता। चूँकि फलांक-गणना केवल उत्तर के गुण पर निर्भर न रहकर परीक्षक के स्वयं के विचार, भावनाओं, मानसिक परिस्थिति पर निर्भर है, अत: परीक्षा वस्तुगत नहीं होती। जहाँ तक वैधता का प्रश्न है, हम ऊपर बता आए हैं कि प्रश्न-पत्र पूरे पाठ्य-क्रम पर आधारित नहीं होता। अत: उसमें विषयवस्तु या पाठ्यक्रमात्मक (Content or Curricular) वैधता का अभाव पाया जाता है। निबन्धात्मक परीक्षाओं में पूर्वकथनात्मक वैधता (Predictive Validity) भी नहीं होती,

क्योंकि इन परीक्षाओं में सफलता के आधार पर विद्यार्थी भविष्य में भी शैक्षिक या अन्य क्षेत्रों में सफल होगा या नहीं इसकी भविष्यवाणी नहीं की जा सकती।

९. **प्रशासन में अनेकरूपता**—निबन्धात्मक परीक्षाएं काफी अधिक समय लेती हैं। परीक्षार्थी लिखते-लिखते थक जाते हैं। इनका प्रशासन प्रमापीकृत (Standardized) नहीं होता। एक केन्द्र पर परीक्षार्थी अधिक सुविधा पाते हैं, दूसरे में कम। पर्यवेक्षण भी सभी स्थानों पर एकसा नहीं हो पाता। इन सब बातों का प्रभाव विद्यार्थियों के फलांकों पर पड़ता है।

१०. **निदानात्मक उपयोग नहीं**—निबन्धात्मक परीक्षाओं का निदानात्मक (Diagnostic) महत्व नहीं है। प्रश्नों के उत्तर अत्यधिक लम्बे होते हैं। उन्हें विभिन्न घटकों या तत्त्वों में बाँटकर परीक्षार्थी की विशिष्ट कमजोरियों को जान लेना आसान कार्य नहीं है। अनेक विद्यार्थी प्रश्न का उत्तर न जानने पर भी इधर-उधर की गप लगाकर कुछ न कुछ लिख ही आते हैं। इससे पूरी परीक्षा का उद्देश्य ही नष्ट हो जाता है।

निबन्धात्मक परीक्षाओं के गुण—

कुछ समय से परीक्षण-निर्माता नवीन प्रणाली की परीक्षाओं के प्रति अत्यधिक उत्सुक दिखाई पड़ते हैं। निबन्धात्मक परीक्षाओं का परित्याग करके नवीन प्रकार की परीक्षा-प्रणाली को अपनाया जाए तो अनेक दोष दूर हो सकते हैं, ऐसा उनका विश्वास है। पर उनकी ऐसी धारणा पूर्णतया सत्य नहीं है। नवीन परीक्षाओं की खोज तो केवल एक औषधि की खोज की भाँति है। नयी औषधि के निर्माता ऐसा विज्ञापन करते हैं, मानों सभी सम्बन्धित व्याधियों की रामबाण दवा खोज ली गई है। पर जैसे ही इस नई औषधि की परिसीमाओं का पता चलता है, हमारी भ्रान्ति हटती जाती है। भली-भाँति रचना करने पर निबन्धात्मक परीक्षाओं के भी अनेक गुण हैं। इनमें से कुछ निम्नलिखित हैं :—

१. **गुणात्मक मूल्यांकन सम्भव**—निबन्धात्मक परीक्षाओं से ज्ञान का गुणात्मक मूल्यांकन सम्भव है, जिसे अब नवीन प्रकार की परीक्षा-प्रणाली के प्रशंसकों ने बिल्कुल ही निःसरित कर दिया है। स्याही के धब्बों एवं चित्र-परीक्षणों की विधि से यह सिद्ध हो चुका है कि परीक्षण के प्रत्युत्तरों के गुणात्मक निर्वचन में भी व्यक्तियों का एकमत होना सम्भव है। जो आत्मनिष्ठता इस प्रकार के निर्वचन में शेष है, उसके भविष्य में निःसरित होने की सम्भावना है। विशेषकर शाब्दिक अभिव्यक्ति, साहित्यिक शैली, विचारों की व्यवस्थित

प्रस्तुति के गुणात्मक पक्षों का मूल्यांकन करने के लिए निबन्धात्मक परीक्षाओं के अतिरिक्त अन्य कोई विधि नहीं है।

२. **उच्च मानसिक प्रक्रियाओं का मापन**—केवल निबन्धात्मक परीक्षाएँ ही विचारों के समाह्वान करती हैं; एवं इनमें सन्तोषजनक उत्तर देने के लिए उच्च मानसिक प्रक्रियाओं की आवश्यकता पड़ती है। मौलिकता का मापन केवल निबन्धात्मक परीक्षाओं से ही सम्भव है।

३. **व्यक्तित्व एवं चिन्तन-विधि पर प्रकाश**—यदि कोई अध्यापक ध्यान से निबन्धात्मक उत्तरों का अध्ययन करे तो उसे परीक्षार्थी के व्यक्तित्व एवं उसकी चिन्तन-विधि के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण ज्ञान हो सकता है, क्योंकि इनमें विद्यार्थी को स्पष्ट एवं प्रभावशील विधि से अपने विचारों को व्यक्त करने का अवसर मिलता है।

४. **भावों की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति सम्भव**—विद्यार्थी प्रश्नों का उत्तर देने में स्वतन्त्र होता है। किसी भी प्रश्न के उत्तर में जितने तथ्य वह प्रस्तुत करना चाहता है, उन्हें वह बिना काटे-छाँटे कर सकता है। सभी सम्बधित सूचना का संगठन वह स्वयं कर सकता है। उसके उत्तरों से उसके भावों की अभिव्यक्ति का पता चलता है।

५. **वांछनीय अध्ययन-विधियों के विकास में सहायक**—अनेक अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि अध्यापक मापन की जो प्रणाली अपनाते हैं, उसका विद्यार्थियों की अध्ययन विधियों पर प्रभाव पड़ता है। जब विद्यार्थी को पता रहता है कि निबन्धात्मक प्रणाली से परीक्षा ली जानी है तो वे अध्ययन की अनेक वांछनीय विधियाँ अपनाते है, जैसे रूपरेखा बनाना, सारांश लिखना, मुख्य प्रवृत्तियों एवं सम्बन्धों का पता लगाना। नवीन प्रकार की वस्तुगत मापन-विधि में ऐसा होना सम्भव नहीं है।

६. **विश्वसनीयता एवं वैधता में बढ़ोतरी सम्भव**—यदि निबन्धात्मक प्रश्नों की रचना, उनके प्रशासन एवं फलांकन में सुधार हो जाए तो ये परीक्षाएँ भी उतनी ही विश्वसनीय एवं वैध हो सकती हैं जितनी वस्तुगत परीक्षाएँ। कुछ उद्देश्यों के लिए तो ये नवीन शिक्षा-पद्धति की अपेक्षा अधिक वैध हैं, जैसे तथ्यों की तुलना करने, उनकी विवेचना करने, भाषा-शैली के बारे में निर्णय करने एवं उनकी व्याख्या करने में। रॉस के अनुसार ये परीक्षाएँ चार प्रकार के उद्देश्यों का मापन करने में अधिक उपयोगी हैं—(अ) सूचना, (ब) चिन्तन के कुछ पक्ष, (स) अध्ययन की दक्षता, एवं (द) कार्य करने की आदतें।

७. **उचित अध्ययन-विधि को प्रोत्साहन**—निबन्धात्मक परीक्षाएँ वस्तुगत

परीक्षाओं की अपेक्षा अध्ययन के अच्छे ढंग सीखने के लिए अधिक प्रोत्साहित करती हैं, क्योंकि ये केवल पहिचान की अपेक्षा प्रत्यास्मरण, तथ्यों एवं उनके सम्बन्धों का अवगम करने एवं उच्च स्तर पर सोचने की प्रेरणा देती है।

८. **प्रश्न-रचना अत्यन्त सरल**—निबन्धात्मक प्रश्नों की रचना अत्यन्त सरल है। केवल थोड़े से प्रश्नों की सहायता से विस्तृत पाठ्यक्रम पर आधारित ज्ञान का मापन किया जा सकता है, एवं परीक्षार्थियों को लम्बी अवधि के लिए कार्य-संलग्न रखा जा सकता है। यदि परीक्षा के अन्तिम समय तक प्रश्नों की रचना करने का समय न मिले तो थोड़ी देर पहले ही प्रश्नों की रचना की जा सकती है। प्रशासन, पद-विश्लेषण, मूल्यांकन, प्रमाणीकरण एवं विश्वसनीयता तथा वैधता निर्धारण की लम्बी प्रक्रिया की इसमें आवश्यकता नहीं पड़ती।

९. **कुछ पाठ्यक्रम पर केवल निबन्धात्मक प्रश्न ही सम्भव**—विद्यालयों में पढ़ाए जाने वाले पाठ्यक्रम का काफी अंश इस प्रकार का होता है कि अनेक तथ्यों पर केवल निबन्धात्मक प्रश्न ही भली-भाँति बनाए जा सकते हैं, नवीन प्रणाली के परीक्षा-प्रश्न नहीं। शिक्षा एवं चिन्तन के अनेक पक्षों का मापन नए प्रकार के प्रश्न नहीं कर सकते।

१०. **नकल की कम सम्भावना**—निबन्धात्मक प्रश्न अत्यन्त बड़े एवं उनमें भाषा-शैली एवं विषय-वस्तु की गहनता होने से इस प्रकार के प्रश्नों में नकल करने की सम्भावना अत्यन्त कम रहती है, जबकि नए प्रकार के प्रश्न अत्यन्त छोटे होने से उनके उत्तर में एक-आध शब्द, संख्या या वाक्यांश परीक्षक के जरा भी पीठ मोड़ने पर आसानी से उतारा जा सकता है। निबन्धात्मक परीक्षाओं में पूरे एक-आध पैराग्राफ का आँख बचाकर नकल कर लेना उतना आसान कार्य नहीं है।

निबन्धात्मक परीक्षा में प्रश्नों के प्रकार—

निबन्धात्मक परीक्षाओं के आत्मनिष्ठ होने का एक मुख्य कारण यह भी है कि विद्यार्थियों को विभिन्न प्रश्नों में प्रयुक्त महत्वपूर्ण शब्दों एवं पदों का ज्ञान नहीं होता। कभी-कभी श्रेष्ठ बालक भी शब्द या भाव को परिभाषित करने के लिए पूछे जाने पर विवेचना करने लगते हैं। सारांश बताने पर वे विस्तृत व्याख्या करने लगते हैं। अतः कुछ मुख्य-मुख्य पदों का संक्षिप्त ब्यौरा नीचे दिया जा रहा है :—

१. **सूची देना (List)**—अपने सरल रूप में इस प्रकार के पद वस्तुगत

होते हैं और इनमें विषय का प्रत्यास्मरण करना पड़ता है। जैसे, संयुक्तराष्ट्र अमरीका के आठ मित्र-राष्ट्रों की सूची दीजिए।

२. **क्रम में रखना** (Arrange)—इसमें प्रत्यास्मरण किए हुए तथ्यों को किसी निश्चित क्रम में रखना पड़ता है। क्रम का कोई भी आधार हो सकता है: कालक्रम, मूल्यों का बढ़ना या घटना आदि, जैसे पाँच देशों को गेहूँ के उत्पादन के अनुसार क्रम में रखिए।

३. **छाँटना या नाम बताना** (Select or Name)—इसमें किसी निश्चित या वर्गीकृत विधि में तथ्यों का उल्लेख करना पड़ता है, जैसे ऐसे ५ महान व्यक्तियों के नाम बताइये जिन्होंने विश्व-शान्ति में महत्वपूर्ण योगदान किया हो।

४. **वर्णन करना** (Describe)—इसमें किसी तथ्य, घटना, वस्तु या प्रक्रिया के महत्वपूर्ण गुण बताने पड़ते हैं। वर्णन विस्तृत भी हो सकता है और संक्षिप्त भी। जैसे, राष्ट्र का वर्णन कीजिए या एक राष्ट्र की विशेषताएँ बताइए।

५. **विवेचन करना** (Discuss)—इस प्रकार के पदों में परीक्षार्थी केवल वर्णन ही नहीं करता या विशेषताएँ ही नहीं बताता, वरन् व्याख्या भी करता है। उसका विकास या अन्य तथ्यों से उसका सम्बन्ध भी बताता है। इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर देने में प्रसंग-सन्धार (Frame of Reference) अत्यन्त आवश्यक है। जैसे, वर्तमान परिस्थितियों में 'सहयोगी खेती' आन्दोलन का विवेचन कीजिए।

६. **व्याख्या करना** (Explain)—व्याख्या करने में कारण-प्रभाव सम्बन्ध बताना पड़ता है। अतः उत्तर में निदान, निराकरण आदि के बारे में अनेक महत्वपूर्ण तथ्यों को प्रस्तुत करना आवश्यक है। जैसे, परीक्षण की रचना में पद-विश्लेषण विधि की व्याख्या कीजिए, या तपैदिक के टीकों का विरोध किस आधार पर होता है, व्याख्या कीजिए।

७. **तुलना करना** (Compare)—इसमें दो तथ्यों या विचारों के गुण-अवगुणों तथा समानता एवं अन्तर की तुलना करनी पड़ती है। जैसे, निबन्धात्मक परीक्षाओं की नवीन प्रकार की परीक्षा-प्रणाली से तुलना कीजिए।

८. **परिभाषा बताना** (Define)—इसका अर्थ है कम से कम शब्दों में किसी दिए हुए तथ्य के सभी पक्षों पर प्रकाश डालकर दूसरे तथ्यों से उसका अन्तर बताना। अतः यह विवेचन करने से अधिक कठिन है। अनेक विद्यार्थियों से जब परिभाषित करने को कहा जाता है तो वे वर्णन या विवेचन करने लगते हैं। उदाहरण, सहसम्बन्ध की परिभाषा दीजिए।

९. **निदर्शन करना** (Illustrate)—इसमें उदाहरण देकर किसी तथ्य

को समझाना होता है और यह सीखने वाले की ज्ञान को व्यवहृत करने की योग्यता का वास्तविक परीक्षण है। जैसे, द्विनेत्रीय प्रतिस्पर्द्धा का एक उदाहरण दीजिए।

१०. **निर्वचन करना** (Interpret)—इसमें किसी अविविक्त (Obscure) या अस्पष्ट उद्धरण का विस्तृत अर्थ बताना पड़ता है या सामान्य सिद्धान्तों का अर्थ स्पष्ट करके बताना पड़ता है। जैसे, सम्बन्ध प्रत्यावर्त्तन का सिद्धान्त बालकों के डर पर किस प्रकार लागू होता है।

११. **समालोचना करना** (Criticize)—इसका अर्थ है किसी विचार की शुद्धता एवं पर्याप्तता का मूल्यांकन करना एवं इसके सुधार के लिए सुझाव बताना या इस विचार के परित्याग करने के लिए तर्क प्रस्तुत करना। जैसे, पाकिस्तान के प्रति भारत सरकार की नीति की समालोचना कीजिए।

१२. **रूपरेखा बताना** (Outline)—इसका अर्थ है शीर्षकों एवं उपशीर्षकों में विषय-वस्तु का संगठन करना। इसमें विस्तृत वर्णन नहीं किया जाता। जैसे, भारतीय स्वातंत्र्य आन्दोलन की प्रगति की रूपरेखा दीजिए।

१३. **सारांश बताना** (Summarize)—इसका अर्थ है संक्षेप में किसी तथ्य या घटना की मुख्य बातों को बताना। जैसे, सारांश में खेतिहर उत्पादन पर चकबन्दी का प्रभाव बताइए।

मनरो तथा कार्टर[1] ने निबन्धात्मक परीक्षा में निम्न प्रकार के प्रश्नों का सुझाव दिया है :—

१. चयनात्मक प्रत्यास्मरण
२. मूल्यांकन प्रत्यास्मरण
३. किसी निश्चित आधार पर तुलना
४. सामान्य रूप से तुलना
५. पक्ष या विपक्ष में निर्णय
६. कारण या प्रभाव
७. व्याख्या करना
८. सारांश बताना
९. विश्लेषण करना
१०. सम्बन्ध बताना
११. उदाहरण देना

1. Quoted from Ross : *Measurement in To-day's Schools*, Englewood Cliffs, N. J. Prentice Hall, 1956. pp. 198—9.

१२. वर्गीकरण
१३. सिद्धान्तों को नई परिस्थितियों में व्यवहृत करना
१४. विवेचन
१५. उद्देश्य बताना
१६. समालोचना
१७. रूपरेखा
१८. तथ्यों का पुनर्संगठन
१९. नये प्रश्नों की रचना
२०. नई विधियाँ

निबन्धात्मक परीक्षाओं में सुधार के सुझाव—

यद्यपि एक लम्बे अर्से से निबन्धात्मक परीक्षाओं का उपयोग होता रहा है, पर इनके सम्बन्ध में अन्वेषण कार्य नहीं के बराबर है। इनमें सुधार किया जा सकता है। इस पर अधिक तथ्य एकत्र नहीं हैं, तथापि किन विधियों से निबन्ध-परीक्षाओं की उपयोगिता बढ़ सकती है इस पर हम संक्षेप में लिखेंगे।

रचना एवं प्रयोग में सुधार

१. निबन्ध परीक्षाओं का उपयोग केवल उन्हीं कार्यों का मापन करने के लिए किया जाना चाहिए, जिनके लिए वे विशेष रूप से उपयुक्त हों। जब यह स्पष्ट न हो कि किसी विशेष परिस्थिति में निबन्ध-परीक्षा प्रयुक्त हो सकती है, तो वस्तुगत परीक्षा प्रयुक्त करनी चाहिए। निबन्ध-परीक्षा विशेषकर दो प्रकार की परिस्थिति के लिए अधिक उपयुक्त हैं : (अ) किसी क्षेत्र में योग्यता की अभिव्यक्ति का मापन करने के लिए, (ब) किसी विषय में योग्यता का समालोचनात्मक मूल्यांकन करने के लिए।[1]

२. अत्यन्त सरल भाषा में प्रत्यक्ष प्रश्न पूछने चाहिए। प्रश्नों की संख्या

1. The essay type examination would appear to be particularly valuable in two situations. The first of these is obviously in such courses as English Composition and Journalism, where the student's ability to express himself effecting is the major objective of instruction. The second situation is in advanced courses of other subjects, where critical evaluation and the ability to assimilate and organise large amounts of material constitute important objectives.—Ross : *Measurement in To-day's Schools.* p. 200.

बढ़ा देनी चाहिए, पर प्रत्येक प्रश्न के उत्तर में विवेचन की मात्रा कम होनी चाहिए। इससे वैषयिकता बढ़ेगी। इससे परीक्षार्थी के ज्ञान का अधिक प्रतिनिधिकारी न्यादर्श लिया जा सकेगा। प्रश्न की भाषा ऐसी हो कि वांछित उद्देश्य को स्पष्ट किया जा सके।

३. परीक्षा कैसे दी जाए, इस सम्बन्ध में परीक्षार्थियों को निश्चित प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। इससे मापन की यथार्थता बढ़ेगी। प्रश्न-पत्र हल प्रारम्भ करने से पूर्व परीक्षार्थियों को विस्तृत निर्देश दिए जा सकते हैं। ये निदेश परीक्षा की वैधता बढ़ाने में सहायक होंगे। विशेष पदों या शब्दों में अन्तर बताने के लिए प्रशिक्षण भी दिया जा सकता है जैसे विवेचन, व्याख्या, वर्णन आदि में। उल्टे-सीधे उत्तरों की अपेक्षा सुनियोजित उत्तरों की महत्ता पर बल देकर विद्यार्थियों को अच्छी प्रकार से उत्तर देना बताया जा सकता है। इससे विद्यार्थी समझ जाएँगे कि परीक्षा देना सीखने की सम्पूर्ण क्रिया का एक आवश्यक अंग है, न कि एक कष्टप्रद संकट।

फलांकन में सुधार

(१) परीक्षा-रचना से पूर्व ही फलांकन किस प्रकार करना है, इस बात को महत्व देना होगा। प्रश्नों की भाषा एवं निर्देशों से यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि उत्तर किस प्रकार के होंगे। कोई अस्पष्टता न रहे। जहाँ तक सम्भव हो विकल्प प्रश्नों (Optional questions) की संख्या कम से कम होनी चाहिए। पहले से ही उत्तर-कुंजी बनाई जा सकती है जिसका निम्न आधार हो सकता है :—

(अ) उत्तर में जो मुख्य बातें होनी चाहिए, उनका मानिर्धारण।

(ब) प्रत्येक वाञ्छनीय तथ्य के लिए अलग-अलग अंक देना।

(स) अतिरिक्त तथ्यों के लिए कुछ अंक छोड़ देना, जो विस्तृत व्याख्या, महत्वपूर्ण तथ्यों पर अलग से दिए जा सकें।

(२) **रॉस** ने 'आज के स्कूलों में मापन' नामक पुस्तक में तीन बातों को महत्ता दी है:—(अ) परीक्षण के उद्देश्य की पूर्ति के लिए पर्याप्त समझे जाने वाले उत्तरों की सारिणी बनाना, (ब) उत्तर के प्रत्येक महत्वपूर्ण भाग के लिए अलग-अलग अंक देना, (स) बजाय इसके कि पहले एक कॉपी के सभी प्रश्न पढ़कर फिर दूसरी, तीसरी एवं अन्य कॉपियों को पढ़ा जाए, फलांकन की विधि यह रखना कि पहले एक प्रश्न को सभी उत्तर-पुस्तिकाओं में जाँच लिया जाए, फिर दूसरे प्रश्न को एवं इसी प्रकार अन्य प्रश्नों को भी।

(३) **कोचरन तथा वीडमैन** ने निबन्धात्मक परीक्षणों के फलांकन की

निम्न विधि प्रस्तुत की है : हमें पहले सभी उत्तर-पुस्तिकाओं का एक न्यादर्श लेकर परीक्षार्थियों के बारे में एक सामान्य धारणा बना लेनी चाहिए। फिर प्रत्येक प्रश्न लेकर सभी उत्तर-पुस्तिकाओं में उसे जाँच लेना चाहिए। पर ऐसा करने से पहले वास्तव में उत्तर क्या होना चाहिए, पुस्तकों एवं कक्षा की टिप्पणियों को पढ़ और उत्तर के किस भाग पर कितने अङ्क देने आवश्यक हैं, यह निश्चय कर लेना उचित है। फलांक देते समय गलतियों के लिए अङ्क भी काट लेने चाहिए।

(४) फलांकन की एक अन्य विधि में उत्तर पुस्तिकाओं को सामान्य मूल्यांकन के आधार पर पहले ही कुछ चट्टों (Piles) में छाँट लेते हैं। जैसे, अत्यन्त उत्तम (Very Superior), उत्तम (Superior), सामान्य (Average), घटिया (Inferior) एवं अत्यन्त घटिया (Very Inferior) छाँटते इस प्रकार से हैं कि प्रत्येक वर्ग में कॉपियों का प्रतिशत सामान्य वितरण के आधार पर रहे। अर्थात् औसत वर्ग में सबसे अधिक कॉपियाँ रहें एवं अन्य वर्गों में कम। अब इन पर वास्तविक फलांक दिए जाएँ। इससे फलांक वितरण असंमित (Skewed) नहीं होगा।

(५) कितने प्रतिशत अङ्क प्राप्त करने पर विद्यार्थी सफल हो इसका पहले से निर्णय नहीं करना चाहिये, वरन् पहले उत्तर-पुस्तिकाओं पर फलांक देकर उन्हें प्रतिशत में परिवर्तित कर देना चाहिए। तत्पश्चात् 'पास' होने के लिए कम से कम फलांक प्रतिशत क्या हो, इसका निर्णय किया जा सकता है। जैसे यदि फलांकों का प्रसार क्षेत्र ३० एवं ७० प्रतिशत के मध्य है, तो ४०% फलांक पास करने को आधार माना जा सकता है।

नई प्रकार की परीक्षा-प्रणाली

नई प्रकार की परीक्षाओं के गुण—

१. **वस्तुगत फलांकन**—नवीन प्रकार की परीक्षा-प्रणाली में फलांकन अधिक वस्तुगत होता है, क्योंकि परीक्षार्थियों के प्रत्युत्तर नियंत्रित होते हैं और उनके शुद्ध या अशुद्ध होने में सन्देह नहीं होता। मशीन से भी फलांक-गणना सम्भव है। दूसरी ओर निबन्धात्मक परीक्षाओं में फलांक-गणना आत्मनिष्ठ होती है। परीक्षक के मूड, उसके विचार स्तर, सभी का फलांकों पर प्रभाव पड़ता है।

२. **व्यापकता**—नवीन प्रकार की परीक्षा अत्यन्त व्यापक हो सकती है और प्रश्नों की संख्या अधिक होने से इनमें निबन्धात्मक परीक्षाओं की अपेक्षा

अधिक सामग्री आ सकती है। परीक्षार्थी को अधिक नहीं लिखना पड़ता। अत वह अपना समय चिन्तन में लगा सकता है और उतने ही समय में अधिक प्रश्नों के उत्तर दे सकता है।

३. **समय की मितव्ययता**—इनके फलांकन में कम समय लगता है और एक दी हुई समयावधि में निबन्धात्मक परीक्षा की अपेक्षा अधिक सामग्री जाँची जा सकती है। फलांक कुंजियों की सहायता से स्वयं विद्यार्थी या आफिस के कर्मचारी भी फलांक गणना कर सकते हैं।

४. **पक्षपात की सम्भावना कम**—नवीन परीक्षाओं में अध्यापक को किसी विद्यार्थी विशेष के साथ पक्षपात करने का अवसर नहीं मिलता। उसके अपने विचार, पूर्वाग्रह, अभिवृत्तियों के कारण किसी विद्यार्थी को हानि नहीं उठानी पड़ती।

५. **रुचि की प्रचुरता**—नवीन परीक्षाओं में अपेक्षाकृत कम समय लगता हैं। अनेक प्रमापीकृत परीक्षाएं आधे घण्टे से लेकर डेढ़ घण्टे तक की होती हैं। अतः इनमें परीक्षार्थी थकता नहीं। परीक्षा एक दिलचस्प पहेली सी लगती है।

६. **विद्यार्थियों की पारस्परिक जाँच सम्भव**—नई परीक्षाओं में विद्यार्थियों को फलांकन करने, एक-दूसरे की कॉपियों को जाँचने और बाद में अपनी त्रुटियों के बारे में विवेचन करने का अवसर मिलता है। इसका शैक्षिक महत्व है।

७. **एक ही परीक्षा का विविध प्रयोग**—नई प्रकार की परीक्षाओं को प्रमापीकृत किया जा सकता है, अतः अनेक वर्षों तक तथा अनेक केन्द्रों में समान स्तर बनाया रखा जा सकता है। निबन्धात्मक परीक्षाओं में यह सम्भव नहीं है।

८. **तोता-रटन पर बल नहीं**—नई परीक्षाओं में केवल रट कर काम चलाने वाले विद्यार्थी को विशेष लाभ नहीं होता। अन्तिम समय पर कुछ प्रश्न याद कर लेने से ही नई परीक्षा में प्रश्नों का उत्तर ढंग से नहीं दिया जा सकता। पर निबन्धात्मक परीक्षाओं में केवल रटने से ही अनेक विद्यार्थी पास होते हैं।

९. **प्रतिनिधिकारी न्यादर्श**—नवीन प्रकार की परीक्षा-प्रणाली में १०० या अधिक प्रश्नों से ज्ञान के सम्पूर्ण क्षेत्र का मापन सम्भव है। इतने अधिक प्रश्न होने से न्यादर्श अधिक प्रतिनिधिकारी होता है और विश्वसनीयता भी बढ़ जाती है। निबन्धात्मक परीक्षण के आधा दर्जन प्रश्नों में यह सम्भव नहीं है।

१०. **केवल गप हाँक कर उत्तर देना सम्भव नहीं**—नवीन प्रकार की परीक्षा-प्रणाली में केवल गप हाँकने वाले परीक्षार्थी को कोई लाभ नहीं रहता।

पर निबन्धात्मक परीक्षा में यदि परीक्षार्थी को कुछ ज्ञात न भी हो, तो भी वह 'स्वतन्त्र साहचर्य' की विधि से काफी पृष्ठ लिख सकता है और उसे अंक मिल सकते हैं।

११. **गति एवं सुन्दर लेखन ही पर्याप्त नहीं**—नवीन परीक्षा में अच्छी गति एवं सुन्दर हस्तलेख के कारण ही किसी परीक्षार्थी को अच्छे अंक प्राप्त नहीं हो जाते।

१२. **कम व्यय**—किसी परीक्षण का एक बार प्रमापीकरण करके उसकी अनेक प्रतियाँ छपवाई जा सकती हैं। अनेक अवसरों पर एवं अनेक क्रमों में एक साथ इसका प्रयोग सम्भव है। अतः इनका मूल्य भी अधिक नहीं पड़ता।

नई प्रकार की परीक्षाओं की परिसीमाएँ—

१. **विचार-संगठन सम्भव नहीं**—इनमें परीक्षार्थी को अपने विचारों को संगठित करने का अवसर नहीं मिलता। उसे केवल यह ज्ञात करना होता है कि दिए हुए प्रश्नों में से कौन सा सत्य है, कौन असत्य या कुछ अंकों, शब्दों या वाक्यांशों की सहायता से रिक्त स्थानों की पूर्त्ति करनी पड़ती है। तुलना करने, व्याख्याएँ या परिभाषाएँ प्रस्तुत करने तथा उदाहरण देकर किसी विचार या सिद्धान्त को समझाने का मूल्यवान अवसर उन्हें नहीं मिलता।

२. **सब परीक्षणों का निदानात्मक महत्व नहीं**—यद्यपि अब कुछ ऐसे नवीन प्रणाली के परीक्षण बने हैं जिनका मुख्य उद्देश्य विद्यार्थी की कमजोरियों का निदान करना है। पर प्रायः इन परीक्षणों से यह पता नहीं चलता कि किस स्थान पर विद्यार्थी की तर्क-प्रक्रिया गलत है एवं वह किस स्थान पर केवल अनुमान का सहारा ले रहा है।

३. **परीक्षा से पूर्व परिचय हो जाना**—एक बार नवीन प्रकार की परीक्षा के प्रमापीकृत हो जाने पर सब लोग उससे परिचित हो जाते हैं। अतः फिर अध्यापक अपने विद्यार्थियों को उस पर प्रशिक्षण देने लगते हैं और भविष्य में इसका प्रयोग वैध नहीं रहता। यदि किसी विषय पर इस प्रकार के कम प्रमापीकृत परीक्षण उपलब्ध हों तो अध्यापक इन सभी परीक्षणों पर दीक्षा दे सकेंगे। अतः विद्यार्थियों के फलांक अनावश्यक रूप से बढ़ जाएँगे। इस कारण अध्यापकों को स्वयं अनौपचारिक (Informal) परीक्षण बनाने पड़ेंगे, जिसमें पर्याप्त कुशलता तथा प्रविधि की आवश्यकता पड़ेगी।

४. **परीक्षण-रचना जटिल**—नए प्रकार की परीक्षाओं में रचना एवं मुद्रण व्यय पर्याप्त होता है। अतः सभी शिक्षा-संस्थाएँ इनका भार वहन नहीं कर सकतीं।

५. **परीक्षण निर्माण में दीक्षा**—एक अच्छे नए प्रकार के परीक्षण की रचना में काफी दक्षता एवं समय की आवश्यकता होती है। अतः अध्यापकों को परीक्षण रचना में दीक्षा लेनी पड़ती है।

६. **अनुमान लगाना सम्भव**—इन परीक्षाओं में केवल अनुमान से भी विद्यार्थी अनेक प्रश्नों के उत्तर दे सकता है। यदि बिना कुछ सोचे केवल अनियमित रूप से ही उत्तर दिए जाएँ तो दो विकल्प दिए होने पर ५०% प्रश्नों के उत्तर सच दिए जाएँगे और ५०% के गलत। अतः परीक्षार्थी को ज्ञान न होने पर भी अंक प्राप्त हो जाएँगे। अनुमान सूत्र का प्रयोग किया जा सकता है, पर इस सूत्र के प्रयोग से सभी विद्यार्थियों के साथ समान रूप से न्याय नहीं होता।

७. **असत्य कथन देने से हानि**—प्रश्नों के वे उत्तर जो स्वयं परीक्षा-पत्र में विकल्पों के रूप से दिए रहते हैं, सत्य भी हो सकते हैं और असत्य भी। असत्य उत्तरों को प्रस्तुत करना शैक्षिक दृष्टि से अनुचित है, क्योंकि निर्देश ग्रहणशील बालकों के मन पर इनका गलत प्रभाव पड़ना सम्भव है। कालान्तर में वे इन गलत उत्तरों को सही मान सकते हैं।

८. **परमाणुवादी प्रवृत्ति**—नवीन परीक्षाओं में परमाणुवादी (Atomistic or Elementaristic) प्रवृत्ति पाई जाती है। ये बुद्धि या ज्ञान की केवल ऊपरी या यत्र-तत्र बिखरी हुई बातों का मापन करते हैं। इनकी गहराई तथा यथार्थता से इसका कोई सम्बन्ध नहीं होता। विषय के बारे में परीक्षार्थी की सामान्य समझ का इनसे पता नहीं चलता।

९. **प्रशासन के दोष**—इन परीक्षाओं में भी निबन्धात्मक परीक्षाओं के अनेक दोष हैं। जैसे, बाह्य उद्दीपकों का परीक्षार्थी की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति पर प्रभाव, परीक्षा-पत्र की रचना करते समय परीक्षक की मनोवृत्ति, उसके विचार, सांख्यिकीय त्रुटियाँ आदि।

१०. **व्यक्तित्व पर कोई प्रकाश नहीं डालते**—अनेक विषयों या व्यक्तित्व के अनेक पक्षों के बारे में मापन करने में इनका बिल्कुल उपयोग नहीं है। जैसे, भाषा-शैली, निबन्ध-रचना आदि के मापन में।

: १० :

निष्पत्ति या ज्ञानोपार्जन परीक्षण

प्रमापीकृत बनाम अध्यापक-निर्मित अनौपचारिक परीक्षण

ज्ञानोपार्जन परीक्षणों का वर्णन करते समय हम मुख्यतः व्यापारिक रूप से प्राप्य प्रमापीकृत परीक्षणों को महत्व देंगे। ये परीक्षण अध्यापक-निर्मित परीक्षणों से भिन्न होते हैं। पर प्रमापीकृत एवं अध्यापक-निर्मित परीक्षणों को किसी स्पष्ट सीमा-रेखा से विभाजित करना अनुपयुक्त है। ये दोनों सगे भाई हैं। दोनों में एक ही प्रकार के प्रश्न-पद प्रयुक्त होते हैं और ये दोनों समान ज्ञान-क्षेत्रों पर बनाए जा सकते हैं। तथापि दोनों प्रकार के परीक्षणों में कुछ मुख्य अन्तर निम्नलिखित हैं :—

(१) प्रमापीकृत परीक्षण पूरे देश या राज्य के अनेक विद्यालयों में पढ़ाये जाने वाले समान पाठ्यक्रम पर आधारित रहते हैं, जबकि अध्यापक-निर्मित परीक्षण किसी विशिष्ट विद्यालय या कक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए बनाए जाते हैं।

(२) प्रमापीकृत परीक्षण ज्ञान या दक्षता के विस्तृत क्षेत्र से सम्बन्धित रहते हैं, जबकि अध्यापक-निर्मित परीक्षण किसी विशिष्ट एवं सीमित पाठ्य-विषय पर बनाए जाते हैं।

(३) प्रमापीकृत परीक्षणों में विभिन्न समूहों के लिये ऐसे मानक दिये रहते हैं जो सामान्य रूप से पूरे देश या प्रान्त भर में कार्य या निष्पादन का किसी विशिष्ट स्तर पर प्रतिनिधित्व करें; अध्यापक-निर्मित परीक्षणों में तुलना के लिये ऐसा कोई बाह्य मापदण्ड नहीं होता।

(४) प्रमापीकृत परीक्षण का विकास लेखकों, प्रश्न-पदों के सम्पादकों एवं प्रशिक्षित परीक्षण-निर्माताओं की सहायता से होता है, जबकि अध्यापक-निर्मित परीक्षण एक-दो अध्यापकों की अपनी योग्यता एवं दक्षता पर ही निर्भर रहते हैं।

इन सब कारणों से प्रमापीकृत परीक्षणों का अपना महत्व है। इनको बनाने से पहले जो उद्देश्य निर्धारित किए जाते हैं, वे पाठ्यपुस्तकों में व्यक्त सामान्य निष्कर्षों, अध्ययन-कार्यक्रमों एवं व्यावसायिक संस्थाओं के चिन्तन पर आधारित रहते हैं। अतः इस बात का निश्चय रहता है कि परीक्षण की योजना में विभिन्न विशेषज्ञों की राय का उपयोग कर लिया गया है। पर इन परीक्षणों की एक मुख्य परिसीमा है इनका एक लम्बी अवधि तक सामयिक आवश्यकताओं की पूर्ति किए बिना ही प्रयोग करते रहना। पर इनसे विभिन्न विद्यालयों की पारस्परिक तुलना सम्भव है। विभिन्न समूहों की आपस में तुलना करना या एक ही समूह के व्यक्तियों का ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में क्या स्तर है, यह ज्ञात करना सम्भव है। प्रमापीकृत परीक्षणों के साथ जो मानक दिए रहते हैं, उनके आधार पर इस प्रकार की तुलना करना सरल हो जाता है। किसी विशिष्ट स्कूल की प्रगति की राष्ट्रीय मानकों से भी तुलना की जा सकती है। इन उद्देश्यों के लिए अध्यापक-निर्मित परीक्षणों का उपयोग नहीं हो सकता।

कुछ परिस्थितियों में, जिनका हम ऊपर वर्णन कर रहे थे, प्रमापीकृत परीक्षण उपयोगी हैं और कुछ अन्य परिस्थितियों में अध्यापक निर्मित परीक्षण अधिक उपयुक्त रहते हैं।

प्रमापीकृत परीक्षण	**अध्यापक-निर्मित परीक्षण**
(१) व्यक्तियों या समूहों के ज्ञानोपार्जन की पारस्परिक तुलना करने में।	(१) यह जानने के लिए कि शिक्षा की विशिष्ट इकाई का विद्यार्थी ने उपार्जन किया है या नहीं।
(२) ज्ञान या क्षमता के विभिन्न क्षेत्रों में ज्ञानोपार्जन की तुलना करने में।	(२) यह निर्धारण करने के लिए कि किस सीमा तक शिक्षा के विशिष्ट एवं स्थानीय उद्देश्यों को पूरा कर कर लिया गया है।

(३) विभिन्न कक्षाओं एवं विद्यालयों में पारस्परिक तुलना करने के लिए।

(४) किसी विशिष्ट समयावधि में विद्यार्थी की प्रगति का अध्ययन करने के लिए, ताकि यह जाना जा सके कि जितनी आशा थी, उसकी अपेक्षा प्रगति धीमी है या तीव्र।

(३) विद्यार्थियों का उनके ज्ञानोपार्जन के आधार पर श्रेणीकरण करने के लिए।

इस प्रकार शिक्षा जगत में दोनों प्रकार के परीक्षणों का उपयोग है। उनके कार्य अलग-अलग हैं, पर वे दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। किस विशिष्ट अवसर पर इनमें से कौन से परीक्षण प्रयुक्त किये जाएँ, इसका निर्णय करना अध्यापक एवं विद्यालय के अधिकारियों का काम है।

अनौपचारिक वस्तुगत परीक्षण
(Informal Objective Tests)

ऊपर के विवेचन से ज्ञात होता है कि प्रमापीकृत एवं अध्यापक निर्मित दोनों प्रकार के परीक्षणों में विषय-वस्तु के निर्धारण में एक ही प्रकार के सामान्य सिद्धान्तों का उपयोग होता है। दोनों ही प्रकार के परीक्षणों में काफी प्रश्न-पद सम्मिलित किए जा सकते हैं ताकि व्यापक मापन सम्भव हो सके। पर इन अध्यापक-निर्मित वस्तुगत अनौपचारिक परीक्षणों एवं निबन्धात्मक परीक्षणों में निस्सन्देह अन्तर है। कई प्रकार से ये अध्यापक निर्मित परीक्षण निबन्धात्मक परीक्षाओं के दोषों से मुक्त हैं। इनका सर्व प्रमुख यह लाभ है कि इनमें व्यापक न्यादर्श का लिया जाना सम्भव है। अतः इसके आधार पर प्राप्त परिणाम काफी विश्वसनीय होते हैं। इन परीक्षणों में अंकीकरण भी वस्तुगत होता है। प्रश्न-पद इस प्रकार बनाए जाते हैं कि उनके उत्तर अत्यन्त संक्षिप्त हों। कोई भी व्यक्ति किसी भी अवसर पर अंक दे, इन अंकों में असमानता नहीं होती। प्रतिक्रियाओं का मूल्यांकन करने में परीक्षक के व्यक्तिगत विचारों, निर्णय आदि का कोई महत्व नहीं है। अनौपचारिक परीक्षणों में भी प्रमापीकृत परीक्षणों की भाँति समय की बचत होती है, क्योंकि प्रश्नों के उत्तर निश्चित होते हैं। कम समय में पाठ्यक्रम के व्यापक क्षेत्र से प्रश्न पूछा जाना सम्भव है। इन परीक्षणों में लिखने की प्रक्रिया उतनी नहीं होती, जितनी कि निबन्धात्मक परीक्षणों में। पर इन परीक्षणों के अनेक दोष भी हैं। समय कम होने के

कारण परीक्षार्थी को चिन्तन का अवसर नहीं मिलता। वाक्य रचना, कण्डिका के संगठन, शब्दों के चयन आदि बातों की ओर वह अधिक ध्यान नहीं दे सकता। इन परीक्षणों में तथ्यात्मक ज्ञान को अधिक महत्व देते है। अनुमान लगाने की प्रवृत्ति भी बढ़ती है। निबन्धात्मक परीक्षा-पत्रों की तुलना में इन परीक्षणों के निर्माण में भी अधिक समय लगता है।

अनौपचारिक परीक्षणों की रचना एवं प्रयोग

अब हम अनौपचारिक परीक्षणों की रचना का अत्यन्त संक्षिप्त विवेचन करेंगे। रचना करते समय सर्व प्रथम परीक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण करते हैं। इससे विषयवस्तु के विभिन्न भागों में सन्तुलन कायम रहता है। परीक्षण का उद्देश्य अन्ततः व्यवहार में परिवर्तन है। यह परिवर्तन कई प्रकार से हो सकता है : दक्षता, ज्ञान, समझ, प्रत्यय आदि में। एक अन्य मुख्य उद्देश्य यह भी हो सकता है कि विद्यार्थी शिक्षा के परिणामों का तार्किक चिन्तन एवं समस्या के सुलझाने में प्रयोग करें। उद्देश्य का निर्धारण करने के पश्चात् विषयवस्तु का विश्लेषण करके प्रश्न लिखने चाहिए। पदों के चुनाव में यह ध्यान रखना चाहिए कि न्यादर्श व्यापक हो। एक ही परीक्षण में अनेक प्रकार के पद रखने चाहिए। छोटे परीक्षणों में दो-तीन प्रकार के पद एवं बड़े परीक्षणों में चार-पाँच प्रकार के। अब इस परीक्षण का प्रशासन कर देते हैं। प्रशासन में अनेक बातों का ध्यान रखते हैं, जैसे निर्देश स्पष्ट हों, किसी परीक्षार्थी को अन्य की अपेक्षा कोई सुविधा न दी जाए। प्रशासन के पश्चात् फलांकन वस्तुगत होना चाहिए। यदि अनुमान लगाये जाने की सम्भावना हो तो निम्न सूत्र का प्रयोग करना चाहिए :—

$$\text{फलांक} = \text{शुद्ध} - \frac{\text{अशुद्ध}}{N-१}$$

$$\text{या} \quad S = R - \frac{W}{N-१}$$

इसमें S=अनुमान के लिए अंक काट लेने के पश्चात् शेष बचे अंक, R=परीक्षार्थी द्वारा दिए गए सही उत्तरों की संख्या, W=परीक्षार्थी द्वारा दिए गए अशुद्ध उत्तरों की संख्या, N=विकल्पों (Alternates) की संख्या। शुद्ध-उत्तर प्रश्न-पदों (True-False Items) में केवल दो विकल्प होते हैं—शुद्ध (True or Yes) तथा अशुद्ध (False or No)। अतः N=२, और सूत्र हुआ

$$S = R - \frac{W}{२-१} = R - W$$

प्रमापीकृत परीक्षण
(Standardised Tests)

प्रमापीकरण का अर्थ--

प्रमापीकृत एवं अध्यापक निर्मित अनौपचारिक वस्तुगत परीक्षणों (Informal Objective Tests) में अन्तर स्वयं 'प्रमापीकरण' (Standardization) शब्द से स्पष्ट हो जाता है। इसका अर्थ है तुलनात्मक मानक प्राप्त करने की प्रक्रिया। प्रमापीकरण के किसी भी कार्यक्रम में पाठ्यवस्तु का समालोचनात्मक विश्लेषण किया जाता है, पदों का चयन अत्यन्त सावधानी से किया जाता है, पदों में गुणों के अनुसार समानता रहती है एवं अनौपचारिक परीक्षणों की अपेक्षा सांख्यिकीय विश्लेषण भी अधिक कड़ाई के साथ होता है।

'प्रमापीकृत' शब्द का अर्थ है, 'किसी प्रमाप अथवा स्तर तक लाया हुआ।' अतः प्रमापीकृत परीक्षण वह परीक्षण है जिसे किसी प्रमाप अथवा स्तर तक ला दिया गया हो। श्री थोमस[1] के अनुसार प्रमापीकृत परीक्षण वह है, जिसमें परीक्षण निर्माता पर्याप्त परिशुद्धता के साथ यह निर्धारित कर सके कि किसी निश्चित आयु या कक्षा का व्यक्ति इसमें कितना सफल होगा।

"...a standardised test is one which has been given to so many people that the test makers have been able to determine fairly accurately how well a *typical* person of a particular age or grade-in-school will succeed in it."

न्यूकिर्क तथा ग्रीन[2] के अनुसार एक परीक्षण तब प्रमापीकृत कहा जाता है जब इसके प्रश्न-पद अध्यापन की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर चुने गए हों और इसमें ऐसे मानक तथा प्रमाप दिए गए हों, जिनसे निष्पादन के स्तरों में परिणामों का निर्वचन सम्भव हो।

"A test is standardized (i) if it is composed of exercises that have been selected in the light of usual teaching practice and evaluated as to innate difficulty, and (2) if it is accompanied by norms or standards permitting the interpretation of results in levels of accomplishment."

---

1. Thomas, R. H. : *Judging Student Progress*, Longmans, London, 1955, p. 70.
2. NewKirk, L. V., and Greene, H. A. : *Tests and Measurement in Industrial Education*, John Wiley and Sons, 1949.

इसी प्रकार सी०वी० गुड[1] के शिक्षा-कोष में भी इसी आधार पर प्रमापीकरण की व्याख्या की गई है। इसके अनुसार एक प्रमापीकृत परीक्षण वह है, जिसमें विषयवस्तु अनुभव से चुनी या जाँची गई हो, जिसमें मानक स्थापित किए गए हों, जिसमें प्रशासन एवं अंकन की एक समान रीतियों का विकास किया गया हो एवं जिसका अंकन सापेक्षतया वस्तुगत विधि से हो सके।

"**Test, Standardised** : a test for which content has been selected and checked empirically, for which norms have been established, for which uniform methods of administering and scoring have been developed, and which may be scored with a relatively high degree of objectivity".

अत: वे परीक्षण जिनका प्रमापीकरण कर लिया गया हो, और जिसमें प्रक्रिया, फलांकन आदि इस प्रकार निश्चित किए गए हों कि उसी परीक्षण को विभिन्न समय एवं अवसर पर दिया जा सके, प्रमापीकृत परीक्षण कहलाते हैं।[2] इन परीक्षणों में मानकों की सारिणी दी रहती है और किस समूह के प्रतिनिधिकारी परीक्षार्थियों का क्या फलांकन सम्भावित है, बताया रहता है। आधुनिक परीक्षणों में, विशेषकर ज्ञानोपार्जन एवं बुद्धि-परीक्षणों में, प्रमापीकरण की प्रक्रिया को काफी महत्व दिया जाता है। अनेक व्यक्तित्व परीक्षण अवश्य इस प्रकार के हैं, जिनका ठीक से प्रमापीकरण नहीं हुआ।

सर्वे एवं नैदानिक परीक्षण--

प्रमापीकृत ज्ञानोपार्जन परीक्षणों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है : (१) सामान्य ज्ञानोपार्जन परीक्षण या सर्वे परीक्षण (General Achievement Tests), एवं (२) नैदानिक परीक्षण (Diagnostic Tests)। इन दोनों प्रकार के परीक्षणों में कोई स्पष्ट सीमा-रेखा खींचना उपयुक्त नहीं है। सामान्य ज्ञानोपार्जन या निष्पत्ति परीक्षण, जैसा कि नाम से ही विदित है, ज्ञान के किसी सम्पूर्ण क्षेत्र में मापन करते हैं और उस क्षेत्र में परीक्षार्थी के ज्ञान के लिये केवल एक ही फलांकन (Single Score) उपलब्ध करते हैं, जबकि नैदानिक परीक्षण एक या अनेक क्षेत्रों में परीक्षार्थी की कमियों एवं उसकी शक्ति का बोध कराते हैं। ये परीक्षण अध्यापक को यह निर्धारित करने में सहायता देते हैं कि शिक्षण कहाँ सफल हुआ है और कहाँ असफल।

---

1. Good, C. V. : *Dictionary of Education*, McGraw Hill. 1945.
2. Cronbach, Lee J. *Essentials of Psychological Testing*, Harper and Brothers, New York, 1960.

लिंडक्विस्ट एवं मन[1] के अनुसार एक सामान्य निष्पत्ति परीक्षण वह है जो एक ही फलांक द्वारा निष्पत्ति के किसी दिए हुए क्षेत्र में विद्यार्थी के सापेक्षिक ज्ञान का बोध कराए।

A general achievement test is "One designed to express in terms of a single score a pupil's relative achievement in a given field of achievement."

यह आशा की जाती है कि नैदानिक परीक्षण में प्राप्त विस्तृत विश्लेषण से परीक्षार्थी की आम कमजोरियों के कारणों का भी पता चलेगा और उनके प्रतिकार की विधियों की ओर संकेत भी। उदाहरण के लिए वाचन की किसी नैदानिक परीक्षा में हमें किसी परीक्षार्थी के बारे में यह ज्ञात हो सकता है कि उसका सामान्य शब्दों का भण्डार काफी अच्छा है, पर परिचित शब्दों का ज्ञान परिमित है। उसकी वाचन गति धीमी है। अक्षरों को मिलाकर शब्द बनाने में कठिन ध्वनि होने पर वह अटकता है आदि। इन कमियों का ज्ञान होने पर इस दिशा में विशेष प्रयत्न किया जा सकता है। नैदानिक परीक्षणों के विकास में दो महत्वपूर्ण चरण हैं : (१) जटिल क्रिया का विश्लेषण, (२) विश्लेषण कर चुकने पर प्रत्येक उपभाग के लिए परीक्षण-रचना।

स्वयं 'निष्पत्ति का क्षेत्र' इस शब्द की निश्चित सीमा नहीं है। इसका निर्णय मनमाने ढंग से होता है। गणित, विज्ञान या समाजशास्त्रों के पूरे क्षेत्र के लिए 'निष्पत्ति का क्षेत्र' निर्धारित किया जा सकता है या अंग्रेजी, इतिहास आदि विषयों के लिए अलग-अलग। विज्ञान के पूरे क्षेत्र को न लेकर उसके किसी एक अंश—भौतिकशास्त्र, विद्युत, रसायन—आदि के लिए अलग-अलग भी निष्पत्ति का क्षेत्र निर्धारित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त एक ही परीक्षण को निष्पत्ति एवं निदान, दोनों उद्देश्यों के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है यदि परीक्षण में इस प्रकार की व्यवस्था हो कि प्रत्येक उपपरीक्षण का अलग-अलग फलांकन किया जा सके एवं पूरे परीक्षण का एक साथ और सम्पूर्ण फलांक ज्ञात हो सके। एक ही परीक्षण अनेक मात्राओं एवं सीमा तक नैदानिक हो सकता है। यह इस बात पर निर्भर करता है कि परीक्षण में सम्पूर्ण फलांकनों को महत्त्व दिया गया है या अंश फलांकनों को, एवं किस सीमा तक। अनेक परिस्थितियों में परीक्षण का प्रयोग करने वाले एक ही परीक्षण का दोनों प्रकार से उपयोग करना चाहते हैं। और कभी-कभी ऐसे परीक्षण

1. Hawkes, H. E., Lindquist, E. F. and Mann, C. L. : *The Constructon and Use of Achievement Examinations*, Houghton Mifflin Co., Boston, 1936, p. 23.

की जो इन दोनों आवश्यकताओं की पूर्त्ति न कर सके, अनावश्यक रूप से उपेक्षा एवं आलोचना की जाती है, यह उचित नहीं है।

फिलहाल में जिस किसी भी परीक्षण को नैदानिक कहना एक फैशन हो गया है। साधारण तौर से कोई भी परीक्षण जिसमें एक से अधिक फलांक हैं नैदानिक है, चाहे केवल दो ही उपफलांक हों। उदाहरण के लिए यदि किसी परीक्षण में शब्द-ज्ञान (Word knowledge) एवं कण्डिका बोध (Paragraph Comprehension) इन दो उपभागों के लिये अलग-अलग फलांक हों, तो इनके आधार पर कोई परीक्षार्थी शब्द-ज्ञान में अधिक योग्य है या कण्डिका के बोध में, यह बताना सम्भव हो सकेगा। और इस अर्थ में हम परीक्षण को नैदानिक कह सकेंगे। पर नैदानिक परीक्षण वास्तव में वे ही हैं जिनमें अनेक उपभागों से नैदानिक संकेत (Diagnostic Clue) मिलें। एक अच्छे निदान का सार यह है कि व्यक्ति के बारे में स्पष्ट और सम्बन्धित तथ्य मिल सकें एवं ये नैदानिक संकेत विश्वसनीय हों। नैदानिक परीक्षण का विश्वसनीय होना दो दृष्टिकोणों से अधिक महत्वपूर्ण है। एक तो इसलिए कि इसमें हम स्वयं व्यक्ति में दिलचस्पी रखते हैं, उसकी व्यक्तिगत कमियों और शक्तियों से हमारा सम्बन्ध है, समूह में अनेक व्यक्तियों के फलांकनों के मध्यमान के आधार पर हम तुलना नहीं करते। और दूसरे इसलिए कि निष्पत्ति के अनेक सम्बन्धित क्षेत्रों में हम व्यक्ति की क्षमता कहाँ अधिक है कहाँ कम, यह ज्ञात करते हैं। अतः प्रत्येक उपभाग के फलांक की उच्च विश्वसनीयता होना आवश्यक है ताकि इनमें अन्तर्सहसम्बन्ध निकाला जा सके।

नैदानिक परीक्षणों के निष्कर्षों का अत्यन्त सावधानी से प्रयोग करना चाहिये। फलांक से केवल व्यक्ति की कमियों एवं शक्तियों का अपूर्ण ज्ञान ही मिलता है। इनसे वर्त्तमान कठिनाइयों के सम्भावित कारणों का पता चलता है ताकि उनका निराकरण किया जा सके। इनके आधार पर यदि उचित रूप से उपचार (Remedy) किया जा सके, तो ठीक है, अन्यथा निदान में कहाँ भूल हुई है यह ज्ञात करना चाहिये।

परीक्षण के कार्य या उद्देश्य (Functions or Purposes of Exams.)

जब हम निष्पत्ति परीक्षणों के कार्य पर विचार करते हैं तो हमें यह देखकर आश्चर्य होता है कि हम किस सीमा तक परीक्षण कार्य में व्यस्त हैं और कितने प्रकार की परीक्षाओं का हम उपयोग करते हैं। प्रतिवर्ष लाखों

व्यक्ति कोई न कोई परीक्षा देते हैं और इन पर करोड़ों रुपया व्यय होता है। हमारी संघीय तथा राज्य सरकारों के बजट का एक महत्वपूर्ण भाग शिक्षा के लिए है और परीक्षाएँ शिक्षा का अभिन्न अङ्ग हैं। फिर परीक्षा की विविधताओं का भी तो अन्त नहीं है। तिमाही, छःमाही तथा वार्षिक परीक्षाएँ; प्री-मैडीकल परीक्षाएँ; नर्सों, वकीलों, सरकारी प्रतियोगितायें, अध्यापकों के लिए और अनेक अन्य प्रकार की व्यावसायिक तथा अव्यावसायिक परीक्षाओं का हम नित्यप्रति प्रयोग करते हैं। इससे परीक्षाओं के उपयोग का हमें कुछ आभास होता है। हम यहाँ परीक्षाओं के मुख्य कार्यों का उल्लेख करेंगे[1] :—

(१) स्तर बनाये रखना, (२) चयन, (३) अध्ययन के लिए उत्तेजित करना, (४) शिक्षण विधि में सहायक, (५) शिक्षण में सुधार, (६) अध्यापकों एवं विभागों का मूल्यन, (७) विद्यालयों की अधिस्वीकृति में सहायक, (८) शैक्षिक मार्ग-प्रदर्शन, (९) अन्वेषण के लिये सामग्री प्रस्तुत करना।

१. **स्तर बनाए रखना** (Maintenance of Standards)—सदैव से शैक्षिक स्तर बनाना, उन्हें कार्यान्वित करना और भविष्य में उन स्तरों को तुलना का आधार बनाना, यह शिक्षाविदों का एक मुख्य उद्देश्य रहा है। किसी युग में ये स्तर इस आधार पर बनाये जाते थे कि सभी व्यक्तियों में समान बुद्धि एवं सामर्थ्य है। अतः स्तर बनाने का आधार भी स्कूल की पढ़ाई और विद्यार्थी की शैक्षिक अभियोग्यता थी। सभी परीक्षार्थियों पर एक समान सामान्यीकृत स्तर लागू होते थे। परिणामस्वरूप शिक्षण के उद्देश्य की पूर्ति में इससे लाभ के बजाय हानि हुई। अनेक परीक्षार्थी स्तर के समकक्ष न आने से असफल एवं निराश हुए। आज भी किसी सीमा तक यह बात सच है। हमने अनेक परिस्थितियों में अब भी अत्यन्त कठोर तथा अनाम्य (Rigid) परीक्षा-स्तर बना रखे हैं, जिसके कारण अनेक परीक्षार्थी हतोत्साहित, किंकर्त्तव्य एवं दुखी रहते हैं। इस अवस्था में सुधार सम्भव है यदि हम एक समान (Uniform) स्तरों के स्थान पर ध्यान पूर्वक क्रमित (Graded) तथा विभेदकारी स्तर बनायें जिसमें निष्पत्ति के अधिक से अधिक स्तर समन्वित हो सकें और प्रत्येक स्तर के लिये अलग-अलग परीक्षायें लें। शिक्षा का उद्देश्य किसी सामान्य ध्येय की प्राप्ति करना नहीं है, वरन् इस बात की खोज करनी है कि हम किन विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति कर सकते हैं।

कुछ परिस्थितियों में एक समान स्तरों का बनाना अवश्य उपयोगी है,

1. Lindquist and Mann : *The Construction and use of Achievement Exams.* Houghton Mifflin Co., Cambridge, U. S. A., 1936. pp. 445—

जैसे वकीलों, अध्यापकों, डाक्टरों, नर्सों आदि की परीक्षाओं में, क्योंकि ऐसी परीक्षाओं का शिक्षा या व्यक्ति के कल्याण से सम्बन्ध नहीं है, वरन् विभिन्न व्यवसायों के लिए निपुण कर्मचारियों की व्यवस्था करने में है।

२. **अध्ययन के लिए उत्तेजित करना** (An Incentive to Study)—परीक्षाएँ परीक्षार्थियों को अधिक प्रयास से शिक्षा ग्रहण करने की प्रेरणा देती हैं। पर आधुनिक परीक्षाएँ कभी-कभी इसका उल्टा कार्य करती है। वे विद्यार्थियों में ऐसे व्यवहार और आदतों का निर्माण करती है जो केवल शिक्षा प्राप्ति में ही हानिकारक नहीं हैं, वरन् बौद्धिक निकृष्टता की ओर ले जाती है, क्योंकि शैक्षिक प्रेरणा व्यक्ति की योग्यता एवम् रुचि दोनों पर निर्भर है।

३. **शिक्षण-विधि में सहायक** (As Method of Instruction)—परीक्षाएँ विद्यार्थी को एक लम्बी अवधि में एकत्र सामग्री को संगठित करने का अवसर प्रदान करती हैं। यदि उत्तर-पुस्तिकाओं को जाँच कर उन्हें फिर वापस कर दिया जाय तो वे अपनी त्रुटियों को जान जायेंगे। अध्यापक भी यह जान जायेंगे कि विद्यार्थी क्या बात नहीं समझ पाये हैं और वे तदनुसार अध्यापन विधि अपना लेंगे।

४. **शिक्षण में सुधार** (Improvement in Teaching)—इसका अर्थ यह है कि केन्द्रीय परीक्षण विधि में अध्यापक को वाञ्छनीय सामग्री का चयन करना पड़ता है। अतः कालान्तर में उसका स्वयं का ज्ञान बढ़ता है और उसके शिक्षण में सुधार होता है। बोर्ड, विश्वविद्यालयों में केवल एक केन्द्रीय स्थान पर बने प्रश्न-पत्रों के आधार पर हजारों विद्यार्थियों की योग्यता का मापन होता है। अतः विभिन्न विद्यालयों के अध्यापक इन्हीं पत्रों के अनुरूप अपनी अध्यापन विधि में सुधार कर लेते हैं।

५. **अध्यापकों एवं विभागों का मूल्यन** (Appraisal of Teachers and Departments)—परीक्षा परिणामों के आधार पर यह ज्ञात किया जा सकता है कि विभिन्न शिक्षा केन्द्रों में अध्यापन कितना प्रभावशील है एवं विभिन्न विभागों की स्थिति कैसी है। इस प्रकार शिक्षकों की कार्यकुशलता का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। अध्यापकों की कार्यकुशलता के आधार पर ही उनका चयन एवं पदोन्नति की जा सकती है। स्वयं अध्यापक परीक्षा परिणामों का प्रयोग स्वयं अपनी कमजोरियों का पता लगाने और अपने अध्यापन का मूल्यांकन करने के लिये कर सकते हैं।

६. **विद्यालयों की अभिस्वीकृति में सहायक** (Aid in the Recognition of Institutions)—परीक्षाओं के आधार पर स्वयं शिक्षा संस्थाओं का मूल्यांकन किया जा सकता है। पर अनेक परिस्थितियों में विद्यालय की कार्य-

कुशलता का पता लगाने के लिये जो विधियाँ प्रयुक्त होती हैं, वे अत्यन्त अपरिष्कृत हैं। इसके अतिरिक्त विद्यालय का उद्देश्य क्या है, मूल्यांकन करते समय इस बात का भी ध्यान नहीं रखा जाता। परीक्षा के परिणामों से विद्यालय के सभी उद्देश्यों पर प्रकाश नहीं पड़ता। विद्यालय का सामाजिक जीवन, इसकी अर्थव्यवस्था, ये इसी प्रकार की बातें हैं।

७. **शैक्षिक मार्ग-प्रदर्शन** (Educational Guidance)—परीक्षाओं के आधार पर शैक्षिक मार्ग-प्रदर्शन के लिए सामग्री उपलब्ध होती है। जब तक हम विद्यार्थी की योग्यता, अभिरुचियाँ, व्यक्तित्व, निष्पत्ति, पृष्ठभूमि, परिस्थितियों आदि से बारे में ज्ञान प्राप्त नहीं करते, हम ठीक से यह नहीं बता सकते कि उसके लिए कौन सा विषय उपयुक्त होगा। उसे किस उद्देश्य की पूर्ति करनी है आदि। बिना किन्हीं तथ्यों पर आधारित मार्ग-प्रदर्शन बजाय विद्यार्थी की सहायता करने के, उसके मार्ग को अवरुद्ध करके उसे हतोत्साहित करेगा।

लिन्डक्विस्ट तथा **मन** द्वारा बताए गए इन उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त परीक्षाओं के अनेक अन्य उपयोग भी हैं। जैसे:—

८. **प्रशासनात्मक उपयोग** (Use in Administration)—शासन, सेना और प्रतियोगिताओं में परीक्षाओं के आधार पर ही व्यक्तियों का चयन, पदोन्नति आदि होती है। छात्रवृत्तियों, पुरस्कारों, आदि का वितरण भी इन्हीं के आधार पर होता है।

९. **विचार करने का अवसर प्रदान करना** (Provide Material for Thought)—परीक्षाओं में विद्यार्थी तीव्रगति से कार्य करता है। अत्यन्त अल्प समय में उसे सभी सम्बन्धित तथ्यों को सोचना पड़ता है और उन्हें व्यक्त करना पड़ता है। अतः कालान्तर में अभ्यास के कारण उसकी विचार-शक्ति प्रबल होती है।

१०. **विभेद-शक्ति बढ़ाना** (Increase Discriminative Power)—अत्यधिक सामग्री का संकलन होने पर परीक्षा-प्रश्न के अनुरूप परीक्षार्थी को उसमें काँट-छाँट करनी पड़ती है। अतः वह अधिक आवश्यक तथ्यों को लेता है और कम आवश्यक सामग्री का परित्याग करना पड़ता है। यह निर्णय करना पड़ता है कि कौन से तथ्य आवश्यक हैं, कौन से नहीं; और इस प्रकार उसकी विभेदकारी शक्ति बढ़ती है।

ऐनास्तासी[1] के अनुसार निष्पत्ति परीक्षाओं के निम्नलिखित उपयोग हैं—

(१) **निम्नतम कार्य-स्तर का मापन** (To Measure Minimum

1. Anastasi Anne : *Psychological Testing*, The Macmillan Co, New York., 1957. pp. 455-457.

Performance Standards)—अर्थात् यह ज्ञात करना कि कोई औद्योगिक या सैन्य शिक्षार्थी किसी विशिष्ट दत्त कार्य के लिये तैयार है या नहीं।

(२) **चयन** (Selection) विभिन्न प्रकार के औद्योगिक क्रमों में नियुक्ति के लिए, सिविल सर्विस में एवं विद्यालयों में प्रवेश के लिये विद्यार्थियों का चुनाव करने में इनका उपयोग होता है।

(३) **वर्गीकरण** (Classification) पूर्व कृत्य, प्रशिक्षण एवं अनुभव के आधार पर सैनिकों के वर्गीकरण, प्रारम्भिक विद्यालयों में बालकों के वर्गीकरण, सर्वतोमुखी शैक्षिक उपलब्धि एवं अभियोग्यता के आधार पर व्यक्तियों के वर्गीकरण में इन परीक्षाओं का उपयोग है।

(४) **संदर्शन** (Counselling) उचित संदर्शन तभी सम्भव है जब व्यक्ति की वर्तमान दक्षता एवं योग्यता का पता लगाया जा सके। अतः संदर्शन, उपचार, व्यक्ति की अयोग्यता एवं विशिष्ट कमजोरियों के निदान में परीक्षाओं का उपयोग अवश्यम्भावी है।। कुछ परीक्षण तो केवल निदान के लिए ही बनाए गये हैं।

(५) **क्रम या वर्ग-निर्धारण** (Assignment of Grades)—स्कूल या विद्यालय में ये परीक्षण विद्यार्थियों को कक्षाओं या क्रमों में वितरित करने एवं एक कक्षा से दूसरी में पदोन्नति करने में सहायक हैं।

(६) **प्रत्युपाय अध्यापन कार्यक्रम** (Remedial Teaching Programme) शैक्षिक उपलब्धियों में विशेष रूप से पिछड़े हुए विद्यार्थियों की पहिचान में एवं प्रत्युपाय की प्रगति जानने में ये परीक्षाएँ सहायता करती हैं।

(७) **शिक्षा में सुविधा** (Facilitate Learning) सभी प्रकार के शिक्षार्थियों को ठीक से बनाए गए परीक्षणों के प्रशासन से अवगम में सुविधा रहती है। इन परीक्षणों से क्या पढ़ना बाकी है, ज्ञात हो जाता है। आगे पढ़ने की प्रेरणा मिलती है और किस दशा में पढ़ना है, इसका उचित आभास मिलता है।

(८) **अध्यापन के मूल्यांकन एवं पाठ्य-वस्तु के दुहराने में सहायता** (Aid in the Evaluation of Teaching & Revision of Curriculum)—परीक्षाओं से ज्ञात होता है कि पाठ्य-वस्तु का कितना भाग पढ़ा गया है और याद रहा है। एवं कौन सी पाठ्य सामग्री अधिक स्मरण रहती है।

वर्नन[1] ने अपनी पुस्तक 'योग्यताओं के मापन' में निष्पत्ति परीक्षाओं के कार्य पर विस्तार से प्रकाश डाला है। हम साररूप में कुछ मुख्य तथ्य यहाँ दे रहे हैं :—

---

1. Vernon : *Measurement of Abilities.*

१. इनसे पता चलता है कि किसी व्यक्ति ने **किस विषय का कितना ज्ञान प्राप्त** किया है।
२. इनसे **अध्यापकों की कार्यकुशलता** का पता लगाया जा सकता है और किस संस्था को कितना अनुदान देना है, इसका निश्चय।
३. **भावी निष्पत्ति के बारे में पूर्वकथन** करने एवं केवल समर्थ व्यक्तियों की ही पदोन्नति करने में इनसे सहायता मिलती है।
४. इनसे विद्यार्थियों में **धैर्य, विनय, श्रम की प्रवृत्ति आदि गुणों का विकास** होता है। ये किसी भी भावी कार्य में सहायक हैं।
५. ये विद्यार्थियों को **पढ़ने एवं कार्य करने की प्रेरणा** देती हैं उन्हें अध्ययन की ओर उन्मुख करती हैं।
६. अध्यापक को स्वयं अपने **अध्यापन का मूल्यांकन** करने एवं भविष्य में अध्यापन विधि का सुधार करने में सहायता करती हैं।
७. शैक्षिक उपलब्धि एवं योग्यता में धनात्मक सहसम्बन्ध है। अतः शैक्षिक परीक्षा के आधार पर परीक्षार्थी की **सर्वतोमुखी मानसिक योग्यता का भी पता चलता है।**

सामान्य निष्पत्ति-परीक्षण-मालाएँ
(General Achievement Test Batteries)

कदाचित् निष्पत्ति परीक्षण के क्षेत्र में सर्वाधिक विस्तृत कार्य-क्रम निष्पत्ति-परीक्षण-मालाओं पर आधारित है। ये परीक्षण-मालाएँ स्कूल में उपयोग के लिए सहज में प्राप्त हो जाती हैं। एक प्रारूपिक परीक्षणमाला में चार, छः, आठ, दस या इससे भी अधिक अलग-अलग परीक्षण होते हैं, जो पाठ्यक्रम के विभिन्न भागों पर आधारित रहते हैं। हम प्रस्तुत अध्याय में अमरीका में निर्मित कुछ परीक्षण-मालाओं का संक्षेप में वर्णन करेंगे। पर इसके पहले हम इनके लाभ पर प्रकाश डालेंगे।

(१) **मापन की तुलनात्मक इकाइयाँ**—किसी परीक्षणमाला में जो विभिन्न परीक्षण समुचित रहते हैं, उनकी इकाइयों में एक समानता होती है। इससे परीक्षण के परिणामों के निर्वचन में तथा विभिन्न परीक्षार्थियों के परिणामों के तुलनात्मक अध्ययन में सहायता मिलती है।

(२) **प्रशासन एवं फलांकन में सुविधा**—परीक्षणमालाओं के रचियता प्रायः सम्पूर्ण परीक्षणमाला में एक ही प्रकार की प्रशासन विधियों का प्रयोग करते हैं। इससे प्रशासन में सुविधा रहती है। परीक्षार्थियों की प्रतिक्रियाओं का लेखा रखने में एक समान विधियों का प्रयोग करने से फलांकन

की समस्या भी सरल हो जाती है। यद्यपि परीक्षणमालाएँ काफी लम्बी होती हैं, और इनके प्रशासन एवं फलांकन में काफी समय लगता है, तथापि विश्वसनीय एवं वैध मापन और विस्तृत न्यादर्श के हित में ऐसा करना अनुचित नहीं है।

(३) **मितव्ययता**—परीक्षणमालाओं में प्रायः विस्तृत निदानात्मक संकेत मिलते हैं। अनेक अलग-अलग परीक्षणों की अपेक्षा किसी एक परीक्षणमाला के उपयोग से कम समय एवं धन का व्यय होता है।

(४) **एक ही समग्र पर पूरी परीक्षणमाला का प्रमापीकरण**—परीक्षणमाला में समुचित सभी अलग-अलग विषयों के परीक्षणों का प्रायः एक ही समग्र पर प्रमापीकरण होता है। इससे विभिन्न विषयों में परीक्षार्थी की योग्यता का तुलनात्मक अध्ययन सम्भव हो जाता है।

(५) **निर्वचन में सरलता**—एक ही समान इकाइयों का प्रयोग करने, तथा प्रशासन एवं फलांकन की विधियों में एकरूपता होने के कारण, परिणामों के तुलनात्मक अध्ययन एवं निर्वचन में सरलता रहती है। वास्तविक फलांकों को अत्यन्त सुविधा से प्रमाप फलांकों, शैक्षिक आयु एवं अन्य मानकों में बदला जा सकता है।

सामान्य निष्पत्ति परीक्षणमालाओं की रचना विभिन्न स्तर के परीक्षार्थियों के लिए की गई है। हम जूनियर हाई स्कूल, छः वर्षीय हाई स्कूल, एवं सीनियर हाईस्कूल के निमित्त बनी कुछ अमरीकी परीक्षणमालाओं का वर्णन करेंगे।

जूनियर हाई स्कूल की परीक्षणमालाएँ—

जूनियर हाईस्कूल के निमित्त बने परीक्षणों में प्रायः गणित, वाचन, विज्ञान, समाज-विज्ञानों—इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र—आदि विषयों पर परीक्षण सम्मिलित रहते हैं। दो प्रमुख परीक्षणमालाएँ ये हैं : (१) मैट्रोपॉलिटिन निष्पत्ति परीक्षण, एवं (२) स्टेनफोर्ड निष्पत्ति परीक्षण।

(१) **मैट्रोपॉलिटिन निष्पत्ति परीक्षण**—इसका प्रथम प्रकाशन १९२० के पश्चात् हुआ, पर बाद में कई परिवर्द्धन हुए हैं। इसकी अग्रिम माला (Advanced battery) सात से लेकर नवीं कक्षाओं तक के लिए है और इसमें विज्ञान एवं सामाजिक अध्ययनों के क्षेत्र सम्मिलित हैं। इसमें २२५ मिनट लगते हैं।

(२) **स्टेनफोर्ड निष्पत्ति परीक्षण**[1]—इसका प्रथम प्रकाशन सन् १९२३

1. Kelley, T. L. and others : *Stanford Achievement Tests.* Advanced World Book Co., New York, 1953.

में हुआ। छः वर्ष पश्चात् १६२६ में इसका परिवर्द्धन हुआ। इसके अन्य अनेक परिवर्द्धन भी हुए हैं। वर्त्तमान अग्रिम माला में सात से लेकर नवीं कक्षाओं के निमित्त नौ परीक्षण हैं और कुल २२७ मिनट लगते हैं।

छः वर्षीय हाई स्कूल के लिए दो मुख्य परीक्षण हैं : (१) कैलीफोर्निया निष्पत्ति परीक्षण, एवं (२) कॉऑपरेटिव निष्पत्ति परीक्षण।

(१) **कैलीफोर्निया निष्पत्ति परीक्षण**[1] में ७ से लेकर १४ वीं कक्षाओं के लिए छः परीक्षण हैं। प्रत्येक परीक्षण के लिए अलग-अलग फलांकन व्यवस्था है। साल में एक सुलेखन परीक्षण भी दे दिया गया है।

शब्द-भण्डार में गणित, विज्ञान, समाज-अध्ययन एवं सामान्य विषय हैं। समझ में निर्देशों को समझना, संदर्भ दक्षता एवं अर्थों का निर्वचन, तर्क में अंक प्रत्यय, प्रतीक एवं नियम, तथा समीकरण, गणित के मूलधार में योग, बाकी, गुणा एवं भाग; भाषा में शब्द एवं वाक्य, विराम-चिन्ह आदि हैं।

(२) **कॉम्रॉपरेटिव निष्पत्ति परीक्षण**—ये ७-६, ७-१२, एवं १०-१३ इन कक्षाओं (Grades) के लिए बने हैं। इनमें अंग्रेजी, वाचन, गणित, विज्ञान एवं सामाजिक अध्ययन इन क्षेत्रों को लिया गया है। इन क्षेत्रों पर छः परीक्षण हैं। प्रत्येक परीक्षण के अनेक भाग हैं।

सीनियर हाई स्कूल की परीक्षणमालाएँ—

सीनियर हाई स्कूल के लिए बनी निष्पत्ति परीक्षण-मालाओं में 'आयोवा हाईस्कूल कन्टैन्ट एक्ज़ामिनेशन'[2] (Iowa High School Content Examination) काफी प्रसिद्ध है। इसका प्रथम प्रकाशन १६२५ में हुआ एवं तत्पश्चात् अनेक परिवर्द्धन एवं संस्करण। यह चार क्षेत्रों में मापन करती है : गणित, विज्ञान, सामाजिक अध्ययन एवं अंग्रेजी। प्रत्येक क्षेत्र के लिए एक परीक्षण है जिसमें प्रत्येक के लिए एक भाग है। पूरी माला में कुल ७५ मिनट लगते हैं।

---

1. Tiegs, E. W. & Clark, W. W. : *California Achievement Tests*, Intermediate and Advanced, California Test Bureau, Los Angles, 1950.
2. Stuit D. B., and Ruch, G. M. : *Iowa High School Content Examination.* Bureau of Educational Research and Service, State Universtity of Iowa, Iowa City, 1943.

इन विभिन्न स्तरों के अतिरिक्त 'सामान्य शैक्षिक विकास' का मापन करने के लिए भी परीक्षण बने हैं। इनमें 'आयोवा शैक्षिक विकास परीक्षण'[1] (Iowa Tests of Educational Development) अधिक प्रसिद्ध है। इसका प्रथम प्रकाशन १९४२ में एवं परिवर्द्धन १९५२ में हुआ। ९-१३ कक्षाओं के निमित्त बने इस माला में नौ परीक्षण सम्मिलित हैं एवं इसमें लगभग ८ घंटे लगते हैं। यह माला किसी विशिष्ट पाठ्यक्रम पर आधारित नहीं है एवं सामान्य चिन्तन-योग्यता एवं दक्षता में शैक्षिक विकास का मापन करने के उद्देश्य से बनी है। नौ सम्मिलित परीक्षण हैं : (१) आधार-भूत सामाजिक प्रत्ययों की समझ, ५५ मिनट; (२) प्राकृतिक विज्ञान, ६० मिनट; (३) अभिव्यक्ति की शुद्धता एवं यथार्थता, ६० मिनट; (४) परिमाणात्मक चिन्तन की योग्यता, ६५ मिनट; (५) सामाजिक अध्ययन में निर्वचन की क्षमता, ६० मिनट; (६) प्राकृतिक विज्ञानों में निर्वचन की क्षमता, ६० मिनट; (७) साहित्यिक विषय-वस्तु के निर्वचन की योग्यता, ५० मिनट; (८) सामान्य शब्द-भण्डार, २२ मिनट; (९) सूचना के स्रोत का उपयोग, २७ मिनट। इसकी विश्वसनीयता उच्च है— .८१ से .९४ तक।

1. Lindquist, E. F. (Editor), *Iowa Tests of Educational Development*, Science Research Associates, Chicago, 1942, 1952.

:१२:

विभिन्न विषयों में निष्पत्ति परीक्षण

वाचन परीक्षण
(Reading Tests)

विद्यालय के पाठ्यक्रम में प्रारम्भिक कक्षाओं में वाचन का अत्यन्त महत्व है। किसी भी अन्य विषय की अपेक्षा वाचन के बारे में अधिक अनुसंधान, विश्लेषण एवं मूल्यांकन हुआ है। अमरीका में विभिन्न शैक्षिक पत्रिकाओं में पिछले कई वर्षों में इस बारे में लेख एवं अन्य साहित्य प्रकाशित हुआ है। अनेक अनुसंधानों से निष्कर्ष निकला है कि पढ़कर केवल सुनने की अपेक्षा अधिक शीघ्रता से सीखना सम्भव है। वाचन का महत्व विद्यालय में इसलिए भी है कि ज्ञान एवं सूचना के लिए पुस्तकों पर निर्भर रहना पड़ता है। शीघ्र वाचन की क्षमता से ही सूचना के श्रोत के रूप में पुस्तकों एवं पुस्तकालयों का समुचित प्रयोग सम्भव है। वाचन का इतना अधिक महत्व होने के कारण ही वाचन एवं विद्यालय की अन्य क्रियाओं में घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो गया है। सूचना प्राप्त करने के लिए किसी भी विषय, जैसे इतिहास, भूगोल, साहित्य, विज्ञान आदि में वाचन-क्षमता का होना अत्यन्त आवश्यक है। सामाजिक जीवन में भी वर्त्तमान घटनाओं एवं सामाजिक,

जातीय, राजनीतिक, राष्ट्रीय समस्याओं को समझने के लिए वाचन-योग्यता का होना अनिवार्य है। वाचन-योग्यता से ही साहित्य के द्वार खुल सकते हैं और व्यक्ति जीवन एवं उसकी सार्थकता से परिचित रहता है।

वाचन का विश्लेषण करने पर इसके निम्न **उद्देश्यों** का पता चलता है :—

१. **आनन्दप्रेरक परिस्थितियों में अभियोजन करना**—दिन-प्रतिदिन के अनुभव में आनन्द लेना; अपरिचिति समय, स्थान, आदि के सम्बन्ध में जिज्ञासा पूर्ति करना; अन्य व्यक्तियों द्वारा अभिव्यक्त आदर्शों एवं विचारों में आनन्द लेना; रोमांचकारी घटनाओं, भावनात्मक कविता, रहस्यपूर्ण कहानियों आदि का पढ़ना।

२. **विभिन्न ज्ञान के स्रोतों, अभिवृत्तियों आदि को पढ़कर समझना**—शब्दों का परिशुद्धता से एवं प्रवाहपूर्ण ढङ्ग से प्रत्यक्षीकरण करना; पढ़ी या सुनी विषयवस्तु का समझना; विचारों के महत्व एवं पारस्परिक सम्बन्ध को समझना; असामान्य शब्दों, उनके क्रम, जटिल वाक्य-रचनाओं एवं अमूर्त्त विचारों को पढ़कर समझना; सम्पूर्ण संदर्भ को महत्व देकर शब्दों, वाक्यों एवं विचारों का निर्वचन करना; नए शब्दों एवं अर्थों की पहचान; पढ़ी हुई विषय-वस्तु की समालोचना करना; प्रस्तुत विचारों की विश्वसनीयता एवं वैधता समझना; पूर्व अनुभव के साथ विचारों एवं अनुभवों को सम्बन्धित करना; आलोचनात्मक समस्याओं का सुलझाना; रुचि बढ़ाना।

३. **शान्त वाचन में दक्षता बढ़ाना**—जो कुछ पढ़ा है, उसे शीघ्रता से समझना; शीघ्रता से एवं लयपूर्वक नेत्र-संचालन करना; पढ़ने में ओष्ठ का प्रयोग न करना; प्रतीकों, शब्दों एवं अर्थों में परिशुद्धता से साहचर्य स्थापित करना; शब्द-कोष का प्रयोग करना; संदर्भ पुस्तकों का प्रयोग, मान-चित्रों, सारिणीयों आदि का प्रयोग करना; विशिष्ट प्रश्नों के उत्तर का पता लगाना; निर्देश समझना; समस्या से सम्बन्धित तथ्यों का चयन करना; शीर्षक का अर्थ समझना; लेखक के विचार-संगठन को ग्रहण करना; विषय-वस्तु का सारांशीकरण करना एवं रूपरेखा बनाना; शीघ्रता एवं शुद्धता से पढ़े हुए विषय का स्मरण करना; सापेक्षिक रूप से कठिन विषय-वस्तु को समझने के लिए मन्दगति से सावधानीपूर्वक पढ़ना।

४. **मौखिक वाचन में दक्षता बढ़ाना**—लेखक के अर्थ को समुचित रूप से ग्रहण करना; स्पष्ट एवं सुरुचिकर ध्वनि का विकास; शब्दों का स्पष्ट उच्चा-रण; जिन श्रोताओं को पढ़कर सुनाया जा रहा है, उन्हें अर्थ स्पष्ट कर देना; श्रोताओं, कक्ष के आकार एवं विषयवस्तु की प्रकृति के आधार पर ध्वनि का

अभियोजन करना; कविता पढ़ते समय वाचन-गति एवं शब्दों का कविता की लय से अभियोजन करना; उचित मुखाभिव्यक्तियों एवं हाव-भाव का प्रयोग; श्वास-गति का नियंत्रण एवं उचित शरीर-संचालन।

वाचन में कठिनाई के कारण—वाचन का उचित शिक्षण, और इसकी कठिनाइयों का सन्तोषजनक निराकरण तभी सम्भव है, जब हम यह जान सकें कि वाचन में बालकों को किन कारणों वश कठिनाइयाँ होती हैं। **हैरिस**[1] ने वाचन की कठिनाइयों के निम्न कारण बताए हैं—(१) निम्न बुद्धि-स्तर, (२) दृष्टिक कमियाँ, (३) श्रवण-सम्बन्धी कमियाँ, (४) अन्य शारीरिक कमियाँ—ग्रन्थियों में गड़बड़ी होना, स्वरों में मांसपेशीय समन्वय न कर पाना; (५) मस्तिष्क का ठीक से नियन्त्रण न होना, (६) विद्यालय की मन्द प्रगति, (७) गणित, वर्णविन्यास एवं सुलेखन में कमजोरी, (८) संवेगात्मक एवं सामाजिक समस्याएँ।

निदान करते समय स्पष्ट रूप से इस बात का पता लगाना चाहिए कि इनमें से कौन-सा कारण बालक की वाचन-योग्यता में बाधक है।

शान्त वाचन-क्षमता के मापन में प्रयुक्त उपकरण—अनेक यन्त्रों एवं उपकरणों की सहायता से बालक की वाचन सम्बन्धी कठिनाई ज्ञात करने में सहायता मिलती है; जैसे—ऑफथैल्मोग्राफ, मैट्रोनोस्कोप, ड्यूरैल-परीक्षण आदि। **ऑफथैल्मोग्राफ** से वाचन की प्रक्रिया के समय नेत्र-संचालन का मापन करते हैं। कितनी बार नेत्र स्थिर किए, कितना अक्षर-विस्तार है, लय, वाचन-गति, नेत्र-समन्वय आदि का लेखा एक फिल्म पर आ जाता है। **मैट्रोनोस्कोप** की सहायता से मुद्रित वाचन-विषयवस्तु को किसी निश्चित गति से प्रस्तुत कया जा सकता है। ड्यूरैल के परीक्षण में, जिसका नाम 'ड्यूरैल-वाचन-कठिनाई-विश्लेषण' है, एक टैचिस्टोस्कोप होती है, जिसमें शब्दों पर वाक्यांशों को एक निश्चित गति से प्रस्तुत करते हैं।

सर्वे-वाचन परीक्षण—

वाचन के सर्वे-परीक्षण वाचन-विकास के सामान्य स्तर का मूल्यन करते हैं, ताकि विभिन्न पाठ्य-क्रमों में सफलता का पूर्वकथन किया जा सके एवं वाचन में पिछड़ेपन को दूर करना सम्भव हो। वाचन-विकास के मापन में वाचन की गति एवं पठित वस्तु की समझ दोनों को महत्व दिया जाता है। कुछ परीक्षणों

1. Harris, A. J : *How to Increase Reading Ability, A Guide to Individualised and Remedial Methods,* 2nd edition. Longmans, Green & Co, New York, 1947 (Chapter 7th.)

में इन दोनों का अलग-अलग स्वतन्त्र रूप से मापन होता है, एवं कुछ में मिलाकर। वास्तव में इन दोनों को अलग करना कठिन है। मापन के लिए, जब समझ का मापन किया जाय तो, गति स्थिर कर ली जाती है। इस हेतु ऐसा वाचन-परीक्षण दिया जाता है जिसमें कोई समय-अवधि निर्धारित नहीं रहती। वास्तव में गति का नियन्त्रण करना कठिन है।

'समझ' का मापन करने के लिए इस प्रकार जो परीक्षण बनाए जाते हैं, उनमें परीक्षार्थी से पढ़ी हुई विषयवस्तु के सम्बन्ध में प्रश्न पूछे जाते हैं। कुछ निश्चित लम्बाई के पैराग्राफ दे दिए जाते हैं। फिर तत्सम्बन्धी प्रश्न दे दिए जाते हैं। पैराग्राफ की विषयवस्तु के विभिन्न पक्षों—शब्दों का अर्थ, तथ्यात्मक प्रश्नों का उत्तर, गद्यांश में दी गई सूचना पर आधारित संदर्भ, गद्यांश के मूल विचार, एवं अन्य बातों में किस पर कितने प्रश्न हों, यह परीक्षण-निर्माता की मौलिकता, सूझ, एवं कुशाग्रता पर निर्भर करता है।

वाचन-गति का मापन करने के लिए बनाए गए परीक्षणों में निश्चित समय-अवधि निर्धारित रहती है। गति का मापन आवश्यक इसलिए है कि श्रमसाध्य, अनिपुण एवं समय-अपव्ययी पाठन विद्यार्थी की प्रगति में बाधक है। अतः एक निश्चित अवधि में बालक एक समान कठिनाई के कितने शब्द पढ़ता है, इसका पता लगाते हैं।

कुछ प्रमुख सर्वे-वाचन परीक्षण हैं : कक्षा ३ से १० तक गेट्स वाचन सर्वे-परीक्षण (Gates Reading Survey Tests for Grades 3 to 10), मिशीगन वाचन गति परीक्षण (Michigan Speed of Reading Tests), ट्रैक्सलर हाईस्कूल वाचन परीक्षण (Traxler High School Reading Test) आदि।

अनेक विद्वानों के अनुसार पाठन में मुख्य तत्त्व 'प्रवाह' है। किन्तु आधुनिक अनुसंधानों से ज्ञात हुआ है कि पाठन में मुख्य तत्त्व विषय-वस्तु का चयन एवं उसकी समझ है और गति का केवल गौण स्थान ही है। इस प्रकार के निष्कर्ष चुपचाप पाठन तथा बोलकर पाठन दोनों से प्राप्त हुए हैं। इसकी तुलना में अभिव्यक्ति एवं विरामों को उतना महत्वपूर्ण नहीं समझा जाता। अतः अब स्कूलों में जोर-जोर से पढ़ने की अपेक्षा समझकर आनन्द पूर्वक पढ़ने पर अधिक बल दिया जाने लगा है। पर समझ का मापन अत्यन्त दुष्कर कार्य है। समझ दृश्य प्रतीकों को ध्वनि में बदलने की क्षमता से सम्बन्ध रखती है। यह ध्वनि वास्तविक रूप से उत्पादित हो सकती है या केवल काल्पनिक।

बैलर्ड ने अपने परीक्षण में दृश्य प्रतीकों को ध्वनि में बदलने की इसी क्षमता का मापन करने का प्रयत्न किया है। इस प्रकार के मापन से सम्पूर्ण

पाठन-क्रिया का अध्ययन तो नहीं होता, पर उसके महत्वपूर्ण पक्ष का अध्ययन अवश्य होता है। इस परीक्षण में एक कागज पर छपा परीक्षण दे दिया जाता है और परीक्षार्थी से जितनी शीघ्रता के साथ या जितनी सावधानी से सम्भव हो, पढ़ने को कहा जाता है। वह तब तक पढ़ता है, जब तक कि उससे विराम न कहा जाए। एक मिनट में कुल शब्दों में से अशुद्ध शब्द निकाल कर परीक्षार्थी जितने शुद्ध शब्द पढ़ता है, वही उसका प्राप्तांक (Score) होता है। यदि परीक्षार्थी किसी शब्द को बोलने में संकोच करता है और पाँच सैकिन्ड या उससे अधिक समय तक उसे नहीं बोल पाता तो परीक्षार्थी से आगे बढ़ने को कहा जाता है। यह परीक्षण बुद्धि से सम्बन्ध नहीं रखता। इसका उद्देश्य तो केवल पाठन की यान्त्रिक कला—अर्थात् मातृभाषा के शब्दों के प्रतीकों को ध्वनि शब्दों में बदलने की क्षमता—का मापन करना है। इसीलिए सब शब्द अलग-अलग हैं, ताकि एक ही शब्द पढ़कर वह आगे के शब्दों को केवल स्मरण से न कह सके।

इस परीक्षण के अनेक लाभ हैं। चूँकि इसमें सभी शब्द अलग-अलग हैं और विषय-वस्तु में कोई क्रमिकता नहीं है, अतः परीक्षार्थी उससे पूर्व परिचय नहीं कर सकता। केवल सामान्य रूप से प्रचलित शब्द ही लिए गए हैं, ताकि यदि परीक्षार्थी में पढ़ने की क्षमता हो तो शब्द की क्लिष्टता उसके पाठन में कोई बाधा उत्पन्न नहीं करेगी। स्वयं बैलर्ड के अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि निरन्तर गद्य (Continuous Prose) में बैलर्ड के परीक्षण में प्रति मिनट जितने शब्द पढ़े जाते हैं, उससे ३२% शब्द अधिक पढ़े जा सकते हैं। पर विच्छिन्न शब्दों को रखने से एक लाभ यह है कि इनमें अभ्यास से केवल ७ प्रतिशत सुधार होता है, जबकि निरन्तर शब्दों में २२% तक। अतः यह परीक्षण अधिक विश्वसनीय है। अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि प्रौढ़ लोगों की पाठन-गति जोर-जोर से पढ़ने की अपेक्षा चुपचाप पढ़ने में अच्छी होती है। किन्तु युवा बालकों के साथ ऐसा नहीं होता। बैलर्ड के अध्ययनों से निष्कर्ष निकला है कि बोलने में या प्रवाह-स्वर में ७ वर्ष के बालकों की गति १७० शब्द प्रति मिनट तक होती है, जबकि परीक्षण शब्दों के पाठन में केवल ४० शब्द प्रति मिनट। इसी प्रकार ९½ वर्ष की लड़कियों की बोलने में शब्द-प्रवाह गति २२० शब्द प्रति मिनट होती है, जबकि परीक्षण पाठन में केवल ८० शब्द प्रति मिनट। ४९ स्कूलों पर परीक्षण प्रयुक्त करके कुछ निम्न अंक प्राप्त किए गये[1] :—

1. Quoted from *Mental Tests* by Ballard.

अवस्था	६ वर्ष	७ वर्ष	८ वर्ष	९ वर्ष	१० वर्ष	१४ वर्ष
लड़के	१३	३३	५३	७२	८५	११५
लड़कियाँ	१५	३८	५८	७६	८८	१२२

इस प्रकार उसके परीक्षण में लड़कियों की पाठन-गति लड़कों की अपेक्षा श्रेष्ठतर थी। किन्तु ऐसा विशेषकर अच्छे परिवारों में ही होता है। प्रवाह-पूर्वक पढ़ना अभ्यास पर भी निर्भर है।

वाचन के नैदानिक परीक्षण—

वाचन के क्षेत्र में अनेक प्रकार के नैदानिक परीक्षणों का निर्माण हुआ है।

आयोवा शान्त वाचन परीक्षणों (Iowa Silent Reading Tests) से शान्त वाचन योग्यता का विस्तृत एवं विश्लेषणात्मक मापन सम्भव है। इसके सात उपपरीक्षण हैं जो वाचन-दक्षता के विभिन्न पक्षों से सम्बन्धित हैं :—

१. गद्य में गति एवं समझ—वैज्ञानिक विषय-वस्तु, सामाजिक अध्ययन की वस्तु।
२. निर्देशित वाचन—वैज्ञानिक विषय-वस्तु में तथ्यात्मक प्रश्नों का उत्तर।
३. पद्य में समझ—अलंकार आदि।
४. शब्द-अर्थ—सामाजिक विषय, विज्ञान, गणित, अँग्रेजी।
५. वाक्य-अर्थ—संदर्भ से बाहर संक्षिप्त वाक्यों का अर्थ।
६. कण्डिका-बोध—केन्द्रीय विचार एवं आवश्यक बातों का समझना।
७. सूचना-स्थान निर्धारण—निर्देशिका का प्रयोग, मुख्य शब्दों का कथन।

ग्रे मौखिक वाचन गद्यांश (Gray's Oral Reading Passages) में सरल से प्रारम्भ करके कठिन तक कुछ गद्यांश दिए जाते हैं। परीक्षार्थी बालक इन गद्यांशों को जोर से पढ़ता है। परीक्षक परीक्षार्थी की भूलों एवं संदेह-स्थलों को लिख लेता है। अशुद्ध रूप से उच्चारित शब्दों को रेखांकित कर लिया जाता है। बालक ने जो शब्द नहीं बोले उनके चारों ओर वृत्त खींच लेते हैं। जिन नए शब्दों को पुराने के स्थान पर स्थानापन्न किया, उन्हें लिख लेते हैं। इस परीक्षण से वाचन की वास्तविक प्रक्रिया में बालक की कमियों का मापन हो जाता है। बालक किन विशेष स्थलों पर भूल करता है, यह भी ज्ञात हो जाता है।

गेट्स वाचन नैदानिक परीक्षणों (Gates Reading Diagnosis Tests)

में वाचन जैसी जटिल प्रक्रियाओं का विश्लेषण सम्भव है। इसमें शब्दों की पहचान, शब्दांशों की पहचान, संयुक्त अक्षरों में ध्वनि-मिश्रण, अलग-अलग अक्षरों की पहचान आदि से सम्बन्धित परीक्षण हैं।

कैली-ग्रीन-वाचन-बोध परीक्षण (Kelley-Green Reading Comprehension Test) से हाई स्कूल के स्तर के विद्यार्थियों की वाचन-योग्यता, समझ एवं विषय-वस्तु को स्मरण रखने की क्षमता का मापन होता है। इसमें विशेष रूप से बनाए गए कुछ पैराग्राफ होते हैं, जिनमें विभिन्न प्रकार की विषय-वस्तु होती है। प्रत्येक पैराग्राफ में वाक्यों की संख्या गिन ली जाती है। प्रत्येक पैराग्राफ से सम्बन्धित प्रश्नों का परीक्षार्थी उत्तर देता है।

वाचन क्षमता का मापन करने के लिए अन्य अनेक परीक्षण भी बने हैं। कुछ अन्य प्रमुख अमरीकी परीक्षण हैं :—स्पित्ज़र अध्ययन दक्षता परीक्षण (Spitzer Study Skills Tests), नैदानिक वाचन परीक्षण (Diagnostic Reading Tests), कॉऑपरेटिव वाचन-समझ परीक्षण (Cooperative Reading Comprehension Tests), कैलीफोर्निया वाचन परीक्षण (California Reading Tests) आदि।

हस्तलेखन मापदण्ड
(Handwriting Scales)

हस्तलेखन का मूल्यांकन करते समय हम प्रायः यह देखते हैं कि यह सुस्पष्ट एवं वाचन-योग्य है, या नहीं। कुछ लोग कलात्मक लेखन पसन्द करते हैं, पर व्यावहारिक संसार में लेखन किसी पढ़ने के लिये लिखी गई वस्तु का लेखा ही है। अतः सौन्दर्य, कलात्मकता एवं अलंकारिकता का वास्तविक व्यवहार में अधिक महत्व नहीं है।

देखते ही प्रायः हम हस्तलेखन के सम्बन्ध में अपना निर्णय कर देते हैं कि यह वाचन-सुलभ (easy to read) है, सन्तोषप्रद है, पढ़ने में कठिन है, या इसका पढ़ना असम्भव है। अनेक अध्यापक पर्याप्त रूप से सन्तोषजनक मात्रा में हस्त-लेखन के सम्बन्ध में अपना निर्णय दे देते हैं। किन्तु अनेक बार उनके निर्णय पूर्णतया ठीक नहीं होते। एक ही प्रकार का हस्तलेखन विभिन्न अवसरों पर अनेक श्रेणियों में रखा जा सकता है। इसका एक ही प्रकार का मूल्यांकन न करना सम्भव है। इसके अतिरिक्त सब व्यक्तियों के निर्णय समान भी नहीं होते। अतः अब हस्तलेखन के सम्बन्ध में निर्णय करने के लिये हस्तलेखन-मापदण्ड (Writing Scales) की सहायता ली जाती है। इस प्रकार के माप-दण्डों की सहायता से हस्तलेखन में बालक की प्रगति या अवगति का लेखा-

जोखा रखना सम्भव हो जाता है। विद्यालय के सत्र (Session) में बालक के हस्तलेखन में परिवर्तन होते रहते हैं; और आवश्यक नहीं है कि उसका लेखन श्रेष्ठतर ही होता जाए। मापदण्ड की सहायता से विभिन्न अवसरों पर हस्त-लेखन का मापन कर लेने से अध्यापक इन परिवर्त्तनों के बारे में जान सकता है।

हस्तलेखन मापदण्ड की रचना उतनी सरल नहीं है जितना कि समझा जाता है। तुलना करने के लिए अनेक हस्तलेखन एकत्र करके जब उनका श्रेणीकरण किया जाये, तो यह देखना चाहिये कि 'सर्वश्रेष्ठ' हस्तलेखन वास्तव में सर्वश्रेष्ठ हो, एवं उसके बाद श्रेणीकरण उचित हो। एक व्यक्ति के निर्णय के आधार पर ही हम हस्तलेखन के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय नहीं कर सकते। अतः अनेक व्यक्तियों—कभी-कभी सौ-दोसौ तक—के निर्णय के आधार पर श्रेणीकरण करते हैं। प्रतिरूपों (Specimens) की संख्या अलग-अलग मापदण्डों में अलग-अलग होती है। प्रायः दस-पन्द्रह प्रतिरूप पर्याप्त हैं। हस्तलेखन मापदण्डों की रचना एवं इनका प्रयोग प्रमापीकृत होता है। अतः हम इन्हें प्रमापीकृत परीक्षणों के समकक्ष रख सकते हैं। पर ये पूर्ण रूप से वस्तुगत नहीं कहे जा सकते, क्योंकि अनेक व्यक्तियों की राय लेते समय उनके अपने आत्मगत अनुभव, पसन्द-नापसन्द से मुक्त होना सम्भव नहीं है।

हस्तलेखन मापदण्डों में विभिन्न कक्षाओं के अनुरूप मानक (Norms) दिये जाते हैं। ये लेखन गुण, अर्थात् हस्तलेखन की सुस्पष्टता के आधार पर होते हैं। पर कुछ मापदण्डों में लेखन-गति के अनुरूप मानकों की व्यवस्था रहती है। गति-मानकों की व्यवस्था करना इस दृष्टिकोण से आव-श्यक है कि व्यावहारिक जीवन में गति को महत्व दिया जाता है। किसी भी व्यापारिक, औद्योगिक या शैक्षिक कार्यालय में यह सम्भव नहीं है कि सुरुचि-पूर्ण बनाने के लिए घण्टों एक-दो पत्रों को ही लिखते रहें। केवल सुरुचिपूर्ण एवं कलात्मक हस्तलेखन का मूल्य तो प्रदर्शनी या चित्रकार के कक्ष में ही है। अतः मापदण्डों में गति को आवश्यक महत्व देना चाहिए।

सामाजिक एवं व्यापारिक जीवन में हस्तलेखन का तभी महत्व है जब यह सुस्पष्ट, मोहक एवं सरलता से पढ़ने योग्य हो। साथ ही सामान्य गति पर इसका उत्पादन हो सके। अतः यह बात अत्यन्त आवश्यक है कि विद्यालय में हस्तलेखन की शिक्षा दी जाये। इसके अनेक उद्देश्य हो सकते हैं, जैसे—

१. सामाजिक आवश्यकता की पूर्ति के लिये पर्याप्त रूप से दक्ष, सरल, स्पष्ट एवं सरल हस्तलेखन का विकास।

२. व्यक्तिगत लेखन की कठिनाइयों का निदान।
३. बालक को इस प्रकार का अनुभव कराना कि वह अधिकतम गति से सुलेखन की प्रवृत्ति का विकास कर सके।
४. सुलेखन में शरीर के अङ्गों का उचित अभियोजन।
५. सभी लेखन-परिस्थितियों में आवश्यक सामाजिक प्रेरणा का विकास।
६. बालक में इस प्रकार की कार्य-विधि का विकास कि वह अपनी लेखन समस्याओं का बुद्धिपूर्वक सामना कर सके।
७. सुस्पष्ट एवं सुन्दर लेखन में, यदि गति भी प्रगतिपूर्ण हो तो, दृष्टि एवं माँसपेशीय समन्वय आवश्यक है।

सुलेखन में दो महत्वपूर्ण तत्व हैं : (१) सुस्पष्टता का गुण एवं मात्रा, (२) गति, अर्थात् निश्चित समय में लेखन की मात्रा।

हस्तलेखन के गुण का मापन करने के लिए इसकी निश्चित प्रमाप में दिए हुए प्रतिरूपों (Specimens) के साथ तुलना करते हैं। ऐसे अनेक प्रमाप बने हैं, जैसे आयर्स मापदण्ड (Ayres Scale)। इन्हें दो वर्गों में बाँट सकते हैं:—(१) सामान्य श्रेष्ठता मापदण्ड (General Merit Scales), (२) विश्लेषणात्मक एवं नैदानिक चार्ट (Anaytical and Diagnostic Charts)।

कुछ सामान्य श्रेष्ठता मापदण्ड निम्नलिखित हैं:—

१. **थार्नडाइक मापदण्ड**— यह प्रथम सुलेखन मापदण्ड है एवं पाँच से लेकर आठवीं कक्षाओं (Grades) के लिये बना है। इसमें सुलेखन के विभिन्न प्रतिरूप (Specimen) इस प्रकार से व्यवस्थित किये गये हैं कि बालक के सुलेखन का तीन आधारों-सुन्दरता, सुस्पष्टता, एवं प्रकृति पर श्रेणीकरण सम्भव हो सके।

२. **अमरीकन हस्तलेखन मापदण्ड**—वैस्ट द्वारा विकसित इस मापदण्ड में दो से लेकर आठ कक्षाओं (Grades) तक प्रत्येक के लिए एक अलग मापदण्ड है; एवं इन पर गुण तथा गति दोनों का मापन होता है।

३. **आयर्स हस्तलेखन मापदण्ड**—इसका प्रमापीकरण सुस्पष्टता के आधार पर हुआ। सुस्पष्टता का निर्धारण इस आधार पर किया गया कि किस गति एवं सरलता से सुयोग्य एवं प्रशिक्षित निर्णायक दिया हुआ सुलेखन पढ़ लेते हैं।

जहाँ तक सुलेखन के विश्लेषण एवं निदान का सम्बन्ध है, फ्रीमैन ने हस्तलेखन में कमियों का निदान करने के लिये एक चार्ट (Freeman's Chart for Diagnosing Faults in Handwriting) बनाया है। इससे हस्तलेखन के विभिन्न पक्षों का अलग-अलग मापन सम्भव है। यह विशेषकर उन परीक्षार्थियों के लिये अधिक उपयुक्त है, जिनका हस्तलेखन स्तर सामान्य से निम्न कोटि का है। लेखन के दोष एवं उनके कारणों का विश्लेषण इस प्रकार है—

दोष	कारण
(१) अधिक स्थान छोड़ना	(१) अधिक शीघ्रता से पैन चलाना ।
(२) अत्यधिक जोर से लिखना	(१) अंगुली का बहुत जोर से दबाना । (२) गलत पैन का प्रयोग ।
(३) बहुत हल्के लिखना	(१) पैन को बहुत टेढ़ा या बहुत सीधा पकड़ना । (२) पैन-होल्डर का व्यास अधिक होना ।
(४) अत्यधिक सीधा लिखना	(१) भुजा को शरीर से दूर रखना । (२) अंगुलियाँ पाते के अधिक समीप होना ।
(५) अत्यधिक टेढ़ा लिखना	(१) अंगूठा कड़ा रखना । (२) कागज गलत स्थिति में रखना । (३) गलत दिशा में पैन चलाना । (४) पाते की नोंक अंगुलियों से अधिक दूर होना ।

अंकगणित परीक्षण
(Arithmatic Tests)

अंकगणित एक आधारभूत विषय है, जिसका ज्ञान वास्तविक जीवन में अत्यन्त आवश्यक है । विद्यालय की प्रारम्भिक कक्षाओं में अंकगणित शिक्षण को इसीलिए पर्याप्त महत्व देते हैं । आधुनिक प्रमापीकृत अंकगणित परीक्षण भी परम्परागत परीक्षणों की भाँति ही हैं । अन्तर है तो इतना कि ये परीक्षण अधिक व्यापक एवं विश्वसनीय होते हैं ।

अंकगणित के दो पक्ष हैं : (१) **गणना** (Computation), एवं (२) **अंकगणितीय समस्याएँ** या तर्क (Arithmatical Problems or Reasoning) । **गणना** के अन्तर्गत अनेक प्रक्रियाएँ पढ़ाई जाती हैं, जिनमें से कुछ तो अत्यन्त जटिल होती हैं । ये सभी अत्यन्त यान्त्रिक एवं वस्तुगत होती हैं । कुछ सामान्य नियम होते हैं । यदि इन नियमों को उचित रूप से एवं परिशुद्धता के साथ प्रयुक्त करें तो प्रत्येक दशा में एक ही उत्तर आयेगा । पर **समस्या** का हल उतनी यान्त्रिकता के साथ नहीं किया जा सकता । सर्वप्रथम समस्या को समझना पड़ता है । इसके लिए बुद्धि की आवश्यकता पड़ती है । तत्पश्चात् तथ्यों एवं प्रदत्तों को

सुव्यवस्थित करके यह निश्चय करना पड़ता है कि किस प्रकार की गणना से इच्छित सूचना या हल प्राप्त होगा। यह आवश्यक नहीं है कि किसी व्यक्ति में गणित सम्बन्धी ये दोनों प्रकार की क्षमताएँ हों। प्रथम एक यान्त्रिक दक्षता है, जब कि दूसरी सामान्य बुद्धि एवं भाषा योग्यता पर आधारित है। इसी कारण 'गणना' की दक्षता शिक्षण द्वारा विकसित की जा सकती है, पर 'गणितीय समस्या' का शिक्षण उतना सरल एवं सम्भव नहीं है। समस्या का हल बहुत कुछ जन्मजात प्राकृतिक योग्यता पर निर्भर है।

प्रायः यह माना जाता है कि 'गणना' की दक्षता कुछ मूलभूत तथ्यों के ज्ञान पर निर्भर है। गणितीय दक्षता में समन्वित कुछ तथ्य इस प्रकार हैं—

१. **पूर्ण संख्याएँ** (Whole Numbers) :

सरल योग, बाकी, गुणा, भाग की प्रक्रियाएँ, जिनमें हासिल का प्रयोग न हो। स्तंम्भ योग, कठिन बाकी, गुणा एवं भाग की प्रक्रियाएँ, जिनमें हासिल का प्रयोग हो।

२. **भिन्न की प्रक्रियाएँ** (Fractions) :

भिन्नों का बदलना, समान हर वाली भिन्न बनाना।
भिन्नों के योग, बाकी, गुण एवं भाग।
भिन्नों का काटना, भाग का गुणा में एवं गुणा का भाग के रूपों में परिवर्तन।

३. **दशमलव** (Decimals) :

दशमलव के अर्थ, दशमलव की इकाइयाँ।
भिन्नों का दशमलव में एवं दशमलव का भिन्नों में परिवर्तन।
दशमलव के योग, बाकी, गुणा, भाग।

४. **क्षेत्रमिति** (Mensuration) :

समतल धरातलों एवं घन की नाप।
क्षेत्रफल एवं आयतन।
क्षेत्रमिति में प्रयुक्त सूत्र।
वृत्त का व्यास एवं क्षेत्रफल, आदि।

५. **प्रतिशत** (Percentage) :

भिन्न एवं दशमलव में प्रतिशत।
क्षेत्रफल को प्रतिशत में व्यक्त करना।

६. **ब्याज** (Interest) :

सरल ब्याज, ब्याज दर-ब्याज।
ब्याज की सारिणीयों का प्रयोग।

७. **अनुपात एवं समानुपात** (Ratio and Proportion) :

सीधा एवं उलटा समानुपात ।

८. **वर्गमूल** (Square Root) :

गुणनखण्डों द्वारा; भाग की रीति से ।

दशमलव का वर्गमूल ।

साधारण भिन्नों का वर्गमूल ।

९. **मध्यमान—औसत** (Average) :

सरल प्रश्न; कठिन प्रश्न ।

गणनात्मक दक्षता के प्रमापीकृत परीक्षण—

गणित के अनेक प्रमापीकृत परीक्षणों में 'गणना' एवं 'समस्या का हल' इनका अलग-अलग मापन होता है । कुछ परीक्षण तो विशेषकर इनमें से किसी एक का मापन करने के लिए बनाए गए हैं । 'गणना' के मापन के लिए बनाए गए परीक्षणों में, यदि गति-परीक्षण है तो, निश्चित समयावधि में करने के लिए कुछ सरल प्रश्न दिए जाते हैं, और यदि शक्ति परीक्षण है तो ऐसे प्रश्न दिए रहते हैं जो क्रमशः कठिन होते हैं । यह निश्चित है कि शीघ्रता से अनेक प्रकार के सरल प्रश्नों की गणना करने में अधिक योग्यता की आवश्यकता पड़ती है । गति परीक्षणों में यह देखा जाता है कि निश्चित समयावधि में लगभग समान कठिनाई के कितने प्रश्नों को परीक्षार्थी परिशुद्धता से हल कर लेता है एवं शक्ति परीक्षणों में यह कि परीक्षार्थी किस स्तर तक कठिन प्रश्नों को हल करने में समर्थ है । गति को अब पहले से अधिक महत्व दिया जाने लगा है, क्योंकि गति अच्छी होने से केवल समय की बचत ही नहीं होती, वरन् कार्य करने में सुविधा एवं दक्षता भी बढ़ती है । बालक से यह आशा की जाती है कि वह सरल 'गणना' एक अच्छी गति से परिशुद्धता के साथ हल कर सकेगा, क्योंकि इसी के आधार पर वह कठिन गणना कर सकेगा ।

गणनात्मक दक्षता के मापन में सरल प्रत्यास्मरण या बहुनिर्वचन पदों का प्रयोग होता है । जैसे—

सरल प्रत्यास्मरण पद :

जोड़ो	घटाओ	गुणा करो	भाग दो
१५ ४४ ५६	९५ −४६	२५४ ८	६३ ९

बहुनिर्वचन पद :

जोड़ो　५४६　(१) १२५३, (२) ११४३, (३) १३५८, (४) ११४६
　　२५८
　　२२२
　　११७

घटाओ　८०१७　(१) २८९९, (२) ५६८८, (३) ३७९९, (४) ४७०३
　　४२१८

अमरीका में जो अनेक अंकगणित परीक्षण बने, जैसे कूर्टिस परीक्षण (Courtis Tests), उनका आधार कक्षा (Grades) है, न कि आयु। पर १९१३-१९१४ में इंग्लैण्ड में बैलर्ड द्वारा बनाए गए परीक्षण में आयु को आधार बनाया गया है और उसमें गणना पौण्ड, शिलिंग, पैन्स के आधार पर हुई है। १९१९ में बैलर्ड ने इन परीक्षणों का परिवर्द्धन किया। इसमें कुल समय तीन मिनट है और कोई भी बालक इस अवधि में सभी प्रश्न हल नहीं कर सकता। इसमें प्रत्येक ३ मिनट के जोड़, बाकी, गुणा तथा भाग के प्रश्न हैं। बैलर्ड के अध्ययनों से निम्न फल निकले हैं :—

तीन मिनट में सही प्रश्नों की संख्या :—

अवस्था	९ वर्ष	१० वर्ष	११ वर्ष	१२ वर्ष	१३ वर्ष	१४ वर्ष
जोड़	३	४	५	६	७	८
बाकी	२	३$\frac{१}{२}$	४$\frac{१}{२}$	५$\frac{१}{२}$	६$\frac{१}{२}$	७
गुणा	१$\frac{१}{२}$	३	४$\frac{१}{२}$	५$\frac{३}{४}$	६$\frac{३}{४}$	७$\frac{३}{४}$
भाग	१	२$\frac{३}{४}$	४	५$\frac{१}{४}$	६$\frac{१}{४}$	७

इंगलैण्ड में एक अन्य परीक्षण सिरील बर्ट (Cyril Burt) ने बनाया है। इसका नाम है 'नॉर्थम्बरलैण्ड अँकगणित परीक्षण' (Northumberland Arithmatic Test) है। इसमें जोड़, बाकी, गुणा, भाग सम्बन्धी कुछ प्रश्न हैं। अमरीका में निर्मित 'मनरो सर्वे परीक्षण' (Monroe Survey Test) में निश्चित कठिनाई के प्रश्न दी हुई समयावधि में करने होते हैं। चार मिनट के अन्तर पर विराम है। जोड़ के चौदह प्रश्न हैं। इसी प्रकार बाकी गुणा, एवं भाग के प्रश्न हैं। सरल भिन्न एवं दशमलव के भी प्रश्न हैं। भारतवर्ष में पटना ट्रेनिंग कॉलिज के श्री एन० सी० चटर्जी, पॉल हाई स्कूल, रायपुर के श्री जे० डब्लू० नरसैया, डेविड-हेयर ट्रेनिंग कॉलिज, कलकत्ता के श्री एस० सी० चक्रवर्त्ती एवं अन्य व्यक्तियों ने परीक्षण बनाए हैं।

गणितीय समस्या-सम्बन्धी प्रमापीकरण परीक्षण—

गणनात्मक-दक्षता सम्बन्धी प्रश्नों की भाँति गणितीय समस्या-सम्बन्धी परीक्षणों में भी सरल प्रत्यास्मरण या बहुनिर्वचन पद होते हैं।

सरल प्रत्यास्मरण—ऐसे प्रश्न-पदों में परीक्षार्थी को दी हुई गणितीय समस्या का हल करना पड़ता है। यदि समस्या का ठीक हल करके वह ठीक उत्तर निकाल लेता है तो उसे पूर्ण अंक मिल जाते हैं, अन्यथा बिल्कुल नहीं। जैसे—

मैंने ४ आने के अमरूद खरीदे, १३ आने का नारियल का तेल एवं २ आने के केले। बताओ कुल कितने आने हुए ?

बहुनिर्वचन पद—ऐसे प्रश्न-पदों में समस्या के हल स्वरूप उत्तर दिए रहते हैं। अनेक विकल्पों में परीक्षार्थी यह बताता है कि कौन सा ठीक है। जैसे—

एक पेड़ पर २३२ आम हैं। हवा चलने से ४६ पके आम गिर जाते हैं। शेष में से ३४ तोड़ लिए जाते हैं। बताओ कितने बचे ?

(१) १४०, (२) १४६, (३) १२६, (४) १६८.

भारतवर्ष में डेविड-हेयर ट्रेनिंग कॉलिज कलकत्ता के श्री एस० सी० चक्रवर्ती ने सन् १६३७ में एक इस प्रकार का परीक्षण बनाया था। बर्ट एवं बैलर्ड ने इंग्लैण्ड में गणितीय समस्या के परीक्षण बनाए हैं। इनका विस्तृत वर्णन बर्ट की पुस्तक 'मानसिक एवं शिक्षात्मक परीक्षण'[1] तथा बलर्ड की पुस्तक 'मानसिक परीक्षण'[2] में दिया गया है। अमरीका में भी अनेक परीक्षण बने हैं।

गणित में नैदानिक परीक्षण—

अन्य विषयों की भाँति गणित के क्षेत्र में भी विद्यार्थियों की कमजोरियाँ जानने के लिए नैदानिक परीक्षण बनाए गए हैं। ऐसा करने से पहले गणित शिक्षण के उद्देश्यों को निर्धारित करना पड़ता है एवं गणितीय समस्याओं को समझने एवं हल करने में जिस प्रकार की दक्षता की आवश्यकता पड़ती है, उसका विश्लेषण करते हैं। जॉन डिवी[3] ने गणितीय समस्या के पाँच आधारभूत तत्व बताए हैं—

---

1. Cyril Burt : *Mental and Scholastic Tests.*
2. Ballard : *Mental Tests.*
3. John Dewey : *How We Think*, D. C. Heath and Co., Boston, 1910.

(१) बोध (Comprehension), (२) विश्लेषण एवं संगठन (Analysis and Organisation), (३) पहिचान (Recognition), (४) हल (Solution), एवं (५) प्रमाण या सत्य-निर्णय (Verification) ।

बोध का अर्थ है समस्या में निहित तत्वों एवं प्रक्रियाओं को जान लेना । इसके लिए समुचित वाचन गति, संख्याओं का पढ़ लेना एवं शाब्दिक तथा भाषात्मक योजना आवश्यक है । **विश्लेषण एवं संगठन** करने में व्यक्ति अनावश्यक तथ्यों को छोड़कर महत्व की बातों पर ध्यान देता है । **पहिचान** करने में विद्यार्थी हल के लिए आवश्यक प्रक्रियाओं को समझता है एवं सम्बन्धित तथ्यों का निर्धारण करता है । **हल** में वह इन प्रक्रियाओं का वास्तविक प्रयोग करता है और गणना करता है । इसके द्वारा वह निश्चित सूचना या हल प्राप्त करता है । **प्रमाण या सत्य-निर्णय** में वह अपने हल या निष्कर्षों की जाँच करता है, एवं इसके सत्य या असत्य होने की क्या सम्भावना है, इसका निर्णय करता है ।

गणित के नैदानिक परीक्षणों की रचना करते समय इन बातों का ध्यान रखना चाहिए ।

भाषा-परीक्षण
(Language Tests)

भारतवर्ष में मातृभाषा का अर्थ है भारत की कोई प्रादेशिक-भाषा, जैसे हिन्दी, गुजराती, मराठी, बंगला, तामिल, मलयालम, तेलगू आदि । थोड़े से व्यक्तियों की मातृभाषा अंग्रेजी भी है । पर प्रादेशिक भाषाओं के अतिरिक्त भारत में अनेक उपभाषाएँ (Dialects) भी हैं । विद्यालय में ये उपभाषाएँ नहीं पढ़ाई जातीं । अतः जिनकी मातृभाषा कोई उपभाषा है, उनके लिए स्कूल में पढ़ाई जाने वाली भाषा मातृभाषा न होकर एक नई भाषा ही है । उदाहरण के लिए ब्रजभाषी व्यक्ति के लिए हिन्दी या खड़ी-बोली मातृभाषा नहीं है । अब यदि किसी हिन्दी परीक्षण में हम ब्रजप्रदेश एवं खड़ी-बोली प्रदेश के व्यक्तियों के लिए समान मानक बनाएँ तो यह न्यायोचित नहीं होगा, क्योंकि दोनों का नगरों में बोली जाने वोली एवं स्कूल में पढ़ाई जाने वाली साहित्यिक हिन्दी भाषा पर समान रूप से अधिकार नहीं होगा । जिन व्यक्तियों की स्कूल एवं घर की भाषा समान है, उन्हें निस्संदेह लाभ रहेगा ।

भाषा के अन्तर्गत अनेक बातें सम्मिलित हैं, जैसे वाचन, लेखन, शब्द-अर्थ, उपसर्ग-विसर्ग, विदेशी एवं अन्य भाषाओं के शब्दांश तथा मुहावरे, साहित्यिक पुस्तकों के लेखक, साहित्यिक पुस्तकों की विषय-वस्तु, भाषा की तान्त्रिक शब्द-

रचना, व्याकरण आदि। हमने वाचन एवं लेखन का अलग से वर्णन केवल उनके महत्व एवं उनकी अलग समस्याओं को ध्यान में रखकर किया है।

विदेशी भाषा : अंग्रेजी—

भारतवर्ष में सबसे अधिक महत्वपूर्ण विदेशी भाषा अंग्रेजी है, यद्यपि यह उतनी विदेशी नहीं लगती जितनी कि फ्रेंच, रूसी या जर्मन। इसका कारण यह है कि वर्षों तक अंग्रेजी भाषा हमारी शिक्षा का माध्यम रही है। सरकारी एवं व्यापारिक पत्र-व्यवहार, सैनिक आदेश, विज्ञापन, प्रमुख समाचार-पत्र एवं पत्रिकाएँ सभी अंग्रेजी में निकलती रही हैं। कुछ व्यक्ति तो अपनी मातृभाषा की अपेक्षा अंग्रेजी भाषा में अपने विचारों को अधिक सुन्दर एवं स्पष्ट रीति से व्यक्त कर सकते हैं। भारतीयकरण या मातृभाषा के उत्थान का नारा कितना ही जोर से क्यों न बुलन्द किया जा रहा हो, अब भी सभी विज्ञानों में अनुसंधान-कार्य का प्रकाशन प्राय: अंग्रेजी भाषा में ही होता है। इसका कुछ भी कारण क्यों न हो—लम्बी दासता से उत्पन्न प्रवृत्ति, प्रयोग न होने से भारतीय भाषाओं में भाव-अभिव्यक्ति में असुविधा, कुछ लोगों का निहित स्वार्थ—यह सत्य है कि अभी एक लम्बी अवधि तक हम अंग्रेजी से पूर्ण रूप से मुक्ति नहीं पा सकेंगे। अत: आवश्यक है कि अंग्रेजी हमारे विभिन्न कक्षाओं के पाठ्यक्रम में सम्मिलित रहे। ऐसी अवस्था में अंग्रेजी के परीक्षणों का निर्माण एवं प्रयोग आवश्यक है। अंग्रेजी पर परीक्षण बनाना अपेक्षाकृत अधिक उपयोगी भी है, क्योंकि सम्पूर्ण भारत में उस परीक्षण का प्रयोग सम्भव है। प्रादेशिक भाषाओं के परीक्षणों के साथ यह बात नहीं है। इनका प्रमापीकरण एवं प्रयोग एक निश्चित क्षेत्र में ही सीमित रहेगा। पर यह परीक्षण ऐसा होना चाहिए कि भारतीय बालकों की आवश्यकता की पूर्ति करता हो। अंग्रेजी जिनकी मातृभाषा है, उन बालकों के लिए बनाए गए इंगलिश एवं अमरीकी परीक्षण हमारे देश में उपयुक्त नहीं हैं, क्योंकि ऐसे बालकों का स्तर भारतीय बालकों के अनुरूप नहीं हो सकता।

विभिन्न भाषाओं में शब्द-गणना—

भाषा का विकास बालक में क्रमश: होता है। प्रारम्भ में वह थोड़े से शब्द ही जानता है। पर सामाजिक विकास एवं शिक्षा के साथ-साथ वह अधिक शब्द सीखता है। उसका शब्द-भण्डार बढ़ता जाता है। आगे चलकर व्यक्ति के व्यवसाय एवं प्रशिक्षण के अनुरूप उसका शब्द-भण्डार बढ़ता है। कानून-विशेषज्ञों, डाक्टरों, व्यापारियों, शिक्षकों सबका अपना अलग क्षेत्र है। किसी विशिष्ट अवस्था या कक्षा के स्तर पर परीक्षण की रचना करते समय

भी यह ध्यान रखना पड़ता है कि उस अवस्था या कक्षा तक कितने शब्द-भण्डार की आशा की जाती है। इस सम्बन्ध में अनेक अध्ययन हुए हैं। यह ज्ञात किया गया है कि किस स्तर पर कौन से शब्द सर्वाधिक प्रयोग में आते हैं। थॉर्नडाइक ने सन् १९२२ में अँग्रजी भाषा में बीस सहस्त्र सर्वाधिक प्रचलित शब्दों की एक सूची प्रकाशित की थी। अनेक पाठ्यपुस्तकों की रचना में इस शब्द-सूची की सहायता ली गई है। भारतवर्ष में श्री जे० सी० कोनिंग ने हिन्दी भाषा में १००० शब्दों की एक शब्द-सूची प्रकाशित की थी, जिसमें सर्वाधिक प्रचलित शब्द थे। बाद में मध्यभारत के शिक्षा विभाग की सहायता से इसमें बढ़ाकर ४००० शब्द कर दिए गए। अब तो लगभग सभी भाषाओं में इस प्रकार की शब्द-सूचियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं। ऐसी सूचियों की सहायता लेना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि भारत की प्रादेशिक भाषाओं में से अनेक पर्याप्त रूप से विकसित हैं। प्रत्येक का अपना साहित्य है और विस्तृत शब्दावली है। संस्कृत एवं अन्य भाषाओं से शब्दावली लेकर इनके विकास की सम्भावना भी काफी है। एक साधारण व्यक्ति से यह आशा नहीं की जाती कि वह इस सम्पूर्ण शब्दावली से परिचित हो।

भाषा-योग्यता का विश्लेषण—

भाषा-परीक्षणों के निर्माण से पहले उन दक्षताओं का जानना, जिन पर कि शाब्दिक अभिव्यक्ति निर्भर है, उपादेय होगा। भाषा-योग्यता में निहित दक्षताओं की एक संक्षिप्त, पर विश्लेषणात्मक रूपरेखा निम्नलिखित है :—

१. **शब्द** (Words) :
   वर्ण-विन्यास : आवश्यक शब्दों के वर्ण जानना।
   शब्द-चयन : समान एवं विरोधी शब्द; अर्थपूर्ण ढंग से शब्द-प्रयोग।
   शुद्ध प्रयोग : संज्ञा, क्रिया, क्रियाविश्लेषण आदि का।
   शब्दकोष का प्रयोग : अर्थ एवं उच्चारण समझना।

२. **वाक्य** (Sentences) :
   प्रकार : नकारात्मक, कथनात्मक, प्रश्नवाचक आदि।
   रूप : सरल, मिश्रित, पूर्ण, अपूर्ण।
   संगठन : विचार-क्रम।

३. **कण्डिका** (Paragraph) :
   रचना : एकता, सम्बन्धता।
   रूप : लम्बाई, प्रारम्भिक एवं अन्तिम वाक्य।
   संगठन : रूपरेखा, विचार-क्रम।

४. **पत्र लेखन** (Letter-wrting) :

व्यापारिक, सामाजिक एवं अन्य प्रकार के पत्रों को लिखते समय उचित विषय-वस्तु, भाषा का चुनाव; उपयुक्त शीर्षक।

५. **सामान्य बातें** (General) :

दीर्घ अक्षर : वाक्यों के प्रारम्भिक अक्षर, उपाधि, नाम के पहले।

विराम-चिन्ह : कौमा, विराम आदि।

हस्तलेखन : सुस्पष्टता एवं गति।

६. **तट-स्थान या हाशिया** (Margin) :

बायीं ओर; पृष्ठ के ऊपर एवं नीचे; कण्डिका के पूर्व।

अँग्रेजी भाषा के विदेशी प्रमापीकृत परीक्षण---

भाषा-परीक्षण मुख्यत: दो प्रकार के होते हैं : (१) सामान्य श्रेष्ठता परीक्षण (General Merit Scale), (२) विश्लेषणात्मक परीक्षण (Analytical Scales)। लिखित रचना (Composition) की **सामान्य श्रेष्ठता** का मूल्यांकन सदैव से विद्यालयों में होता आया है। पर सबसे बड़ी कठिनाई है स्वयं 'रचना' में अनेक तत्वों का निहित होना। इसके कारण मूल्यांकन स्पष्ट रूप से नहीं होता। कुछ प्रमुख अमरीकी परीक्षण हैं : हिलेगस रचना मापदण्ड (Hillegas Composition Scale), लिखित रचना के मापन का विलिंग मापदण्ड (Willing Scale for Measuring Written Composition), थार्नडाइक का लिखित रचना की विशेषता का मापन (Thorndike's Measurement of Quality in Written Composition) आदि। अँग्रेजी व्याकरण के प्रयोग की क्षमता का मापन करने के लिए आयोवा व्याकरण सूचना परीक्षण (Iowa Grammar Information Test), एवं कर्बी व्याकरण परीक्षण Kerby Grammar Test) हैं।

विश्लेषणात्मक परीक्षणों में स्टेन्फोर्ड निष्पत्ति परीक्षण (Stanford Achievement Tests), आयोवा भाषा-योग्यताएँ परीक्षण (Iowa Language Abilities Tests), फ्रान्सीन भाषा-नैदानिक परीक्षण (Franseen Diagnostic Tests in Language), ग्रीन-स्टैप भाषा-योग्यताएँ परीक्षण (Green Stapp Language Abilities Tests) आदि अधिक प्रचलित हैं। स्टेनफोर्ड निष्पत्ति परीक्षण में भाषा के तीन पक्षों— दीर्घ अक्षरों, विराम-चिन्हों के प्रयोग, एवं शब्द प्रयोग—का मापन होता है। आयोवा भाषा योग्यताएँ परीक्षण में ३५० पद हैं और कुल समयावधि ४६ मिनट है। इसके सात भाग हैं : वर्ण-विन्यास, शब्दार्थ, भाषा-प्रयोग, व्याकरण, वाक्यार्थ,

दीर्घ अक्षर एवं विराम-चिन्ह। फ्रान्सीन नैदानिक परीक्षण में सर्वनाम, क्रिया एवं रचना से सम्बन्धित कठिनाइयों का विश्लेषण किया जाता है। ग्रीन-स्टैप-भाषा योग्यताएँ परीक्षण हाई-स्कूल एवं कॉलिज के विद्यार्थियों के लिए है। इसमें भी भाषा के अनेक पक्षों जैसे दीर्घ अक्षरों, वर्ण-विन्यास, व्याकरण, वाक्य-रचना आदि का मापन करते हैं।

वर्ण-विन्यास परीक्षण
(Spelling Tests)

विचारों के संवहन में सही भाषा अत्यन्त उपयोगी है। अँग्रेजी भाषा में बिना सही वर्ण-विन्यास के भाषा सही नही मानी जायेगी। इसी कारण स्कूलों में सही वर्ण-विन्यास के प्रशिक्षण पर आवश्यक बल दिया जाता है। विशिष्ट शब्दों के वर्ण-विन्यास में बालक पारंगत हो, ऐसी चेष्टा की जाती है। पर ऐसा विशेषकर प्रारम्भिक कक्षाओं में किया जाता है। हाई-स्कूल या समकक्ष कक्षाओं में वर्ण-विन्यास का शिक्षण पाठ्यक्रम में सम्मिलित नहीं किया जाता। पर विद्यार्थी से यह आशा की जाती है कि वह शब्दों को शुद्ध लिखेगा। बिना इसके उसकी रचना अपूर्ण समझी जाती है एवं उसके अंक काट लिये जाते हैं।

विदेशों में, विशेषकर अमरीका में, जो वर्ण-विन्यास परीक्षण बने हैं, उनका आधार कुछ विशिष्ट शब्दों का चयन है, जिनमें प्रायः विद्यार्थी गलती करते हैं। आयर्स, रिन्सलैण्ड, थॉर्नडायक प्रभृति व्यक्तियों ने ऐसे शब्दों की सूचियाँ बनाई हैं। आयोवा वर्ण-विन्यास मापदण्ड (Iowa Spelling Scales) तीन सहस्त्र शब्दों पर आधारित है। पर यह परीक्षण अब पुराना पड़ गया है। सिमन्स-बिक्सलर स्टैन्डर्ड हाई स्कूल वर्ण-विन्यास परीक्षण (Simmons Bixler Standard High School Spelling Scales) सात से लेकर बारहवीं कक्षाओं (Grades) तक के लिये है। इसमें २६१० शब्दों को कठिनाई के क्रम में व्यवस्थित किया गया है।

वर्ण-विन्यास परीक्षण की रचना में सर्वप्रथम समस्या है शब्दों का चयन। यह अत्यन्त आवश्यक है कि उन शब्दों को लिया जाय जो परीक्षार्थी के लिये उपयोगी हों। शब्दों के चयन में कुछ प्रसिद्ध शब्द-सूचियों, जैसे थॉर्नडायक अध्यापक शब्द-पुस्तक (Thorndike Teacher's Word Book), हॉर्न आधारभूत लेखन-शब्दभण्डार (Horn Basic Writing Vocabulary) आदि का प्रयोग करते हैं। शब्द कितने कठिन हों, यह दूसरी समस्या है। विद्यार्थियों के स्तर एवं विद्यालय में वे किस कक्षा में पढ़ते हैं, इस आधार पर शब्दों की कठिनाई

का निर्णय करते हैं। शब्दों की संख्या न बहुत कम होनी चाहिए, न बहुत अधिक। पच्चीस से कम शब्द नहीं होने चाहिये और सौ से अधिक। वर्ण-विन्यास परीक्षण जहाँ तक हो, लिखित होने चाहिये। हॉर्न[1] के अनुसार प्रत्यास्मरण (Recall) परीक्षण प्रत्यभिज्ञा (Recognition) परीक्षणों में उत्तम रहते हैं।

वर्ण-विन्यास परीक्षणों से विद्यार्थी के वर्ण-विन्यास स्तर के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण सूचना मिलती है। इनसे उनकी व्यक्तिगत कठिनाइयों पर भी प्रकाश पड़ता है। यह जान लेने के पश्चात् कि विद्यार्थी किन शब्दों के वर्ण विशेष रूप से नहीं जानता, इन पर अभ्यास कराने में विशेष ध्यान देना चाहिये। विद्यार्थी जो रचना या निबन्ध लिखे, उसमें वर्ण-विन्यास सम्बन्धी भूलों का पता लगाना चाहिए। वर्ण-विन्यास सम्बन्धी कठिनाइयों के कारण का पता लगाने के लिए उसकी बुद्धि-लब्धि, विद्यालय में प्राप्त अंक, वाचन परीक्षणों में प्राप्त अंक, स्कूल में उपस्थिति, दृष्टि एवं श्रवण सम्बन्धी कठिनाइयों, सामान्य स्वास्थ्य, व्यक्तित्व गुण आदि के सम्बन्ध में तथ्य एकत्र करने चाहिए। तत्पश्चात् उसके दोषों के प्रतिकार के लिए अनेक विधियों का प्रयोग किया जा सकता है, जैसे, शब्दों का नियमित अध्ययन, शारीरिक कठिनाइयों का निराकरण, उचित उच्चारण का अभ्यास, सफल प्रयास के द्वारा बालक में विश्वास जाग्रत करना।

सामाजिक विषयों में परीक्षण
(Tests in Social Studies)

सामाजिक विषयों के अन्तर्गत मानव-सम्बन्ध एवं विभिन्न व्यक्तियों की अन्तर्प्रक्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि इसके अन्तर्गत आते हैं। इन विषयों के अध्ययन अध्यापन का उद्देश्य है व्यक्ति को समाज-व्यवस्था में अधिक उपयोगी बनाना। इन विषयों में विद्यार्थी की निष्पत्ति का मापन करने लिए अनेक परीक्षण बने हैं। पर इनका नैदानिक महत्व संदेहजनक है। परीक्षण कई प्रकार के हैं। तथ्यात्मक परीक्षणों (Factual Tests) में किसी विशिष्ट सामाजिक विषय में परीक्षार्थी के ज्ञान या सूचना का मापन होता है। समस्या-निरूपण या चिन्तन-परीक्षणों (Problem-Solving or Thought Tests) में तथ्य प्रस्तुत

1. Horn, Earnest. 'Spelling'. *Encyclopedia of Educational Research*, Revised edition, Macmillan Co., New York, 1950, p. 259.

कर दिए जाते हैं और उन तथ्यों की सहायता से समस्या का हल करने की क्षमता का मापन करते हैं। अभिवृत्ति परीक्षणों (Attitude Tests) में समाजशास्त्रों में दी हुई शिक्षा के फलस्वरूप अभिवृत्तियों में क्या परिवर्तन हुआ, इसका मापन करते हैं।

अमरीका में विभिन्न सामाजिक विषयों में इस प्रकार के अनेक परीक्षण बने हैं। विश्व-इतिहास, अमरीकी इतिहास, एवं प्राचीन इतिहास पर परीक्षण प्रमुख हैं। इसमें इतिहास सम्बन्धी ज्ञान का मापन होता है। नागरिक शास्त्र, एवं सामान्य ज्ञान पर भी इसी प्रकार कुछ परीक्षण हैं। कुछ तथ्यात्मक परीक्षण भूगोल के क्षेत्र में भी बने हैं। प्रारम्भिक कक्षाओं के लिए भी अब कुछ परीक्षण बनने लगे हैं।

: १२ :

बुद्धि का प्रकृति एवं सिद्धान्त

बुद्धि का अर्थ एवं व्याख्या

बुद्धि-परीक्षणों के प्रयोग में बड़े पैमाने पर वृद्धि हो जाने से अनेक व्यक्ति इस प्रश्न की महत्ता समझने लगे हैं कि बुद्धि-परीक्षण वास्तव में किस वस्तु का मापन करते हैं। अनेक निष्ठावान् व्यक्तियों के अनुसार बुद्धि-परीक्षण वास्तव में बुद्धि का ही मापन करते हैं। किन्तु अनेक अन्य व्यक्तियों के अनुसार ये बन्दर की कूटता से अधिक कुछ नहीं। हम स्पष्ट रूप से बुद्धि का अर्थ बताने में असमर्थ हैं, इसलिए नहीं कि हम इससे अनभिज्ञ हैं, वरन् इसलिए कि यह समस्या ही अत्यन्त जटिल है।

वैज्ञानिकों की चतुराई इसमें है कि वे वस्तुओं का पृथक्करण करें और उनका मापन करें। जैसे, वे पहले यह पता लगाएँ कि वस्तुओं में लम्बाई होती है और फिर लम्बाई को नापें। पर लम्बाई का नाप करने के बाद भी हम यह परिभाषित करने का सरदर्द प्रायः नहीं करते कि 'लम्बाई क्या है?' हम बिजली की सत्ता के बारे में जानते हैं, इसका मापन करते हैं और इसका उत्पादन करते हैं; पर हम इसकी प्रकृति को परिभाषित करने में अपनी असमर्थता बताते हैं। यही हाल बुद्धि का है। विद्युत की भाँति बुद्धि भी एक

प्रकार की शक्ति है। विद्युत को हम उसके अनेक कार्यों से जानते हैं; जैसे ताप-उत्पादन, रासायनिक विश्लेषण, चुम्बकीय क्षेत्र इत्यादि। इसी प्रकार बुद्धि को भी हम इसके कार्यों से समझ पाते हैं, जैसे गणितीय समस्याओं को हल करना, पुल बनाना, अच्छा भाषण देना। हम विद्युत का मापन इसके रासायनिक, चुम्बकीय एवं तापक्रम सम्बन्धी प्रभाव के परिमाणात्मक विवरण से करते हैं। इसी प्रकार हम बुद्धि का मापन किसी परीक्षण या परिवेश में व्यक्ति के कार्य के परिमाणात्मक विवरण या फलांकों से करते हैं।

मनोवैज्ञानिकों से जब बुद्धि की एक शाब्दिक, औपचारिक परिभाषा देने को कहा जाता है तो वे एकमत नहीं होते। अतः यह आवश्यक है कि इसकी व्यावहारिक परिभाषाएँ दी जाएँ। जैसे प्रत्येक व्यक्ति इस बात से सहमत होगा कि स्कूल या विश्वविद्यालय में शिक्षा ग्रहण करने के लिए एक कार्य-कुशल अफसर या एक सफल व्यापारी होने के लिए बुद्धि आवश्यक है। और हम यह भी जानते हैं कि मानसिक रूप से पिछड़े लोगों में, शैक्षिक रूप से मन्द व्यक्तियों में, एवं जड़ लोगों में बुद्धि कम होती है, तभी तो संलग्नता से कार्य करने पर भी उन्हें छोटे-मोटे उद्योग भी नहीं सिखाये जा सकते।

बुद्धि को परिभाषित करने का सबसे प्राचीन प्रयास यूनानी दार्शनिकों ने किया। उनके सिद्धान्त का नाम '**शक्ति-मनोविज्ञान**' था जिसके अनुसार मनुष्य के मन में अनेक प्रकार की शक्तियाँ होती हैं, जो उसे अनेक क्रियाएँ करने के योग्य बनती हैं। ये शक्तियाँ (Faculties) समरण, कल्पना आदि हैं जो मस्तिष्क के विभिन्न भागों में स्थित हैं। मस्तिष्क वैज्ञानिकों (Phrenologists) के अनुसार किसी व्यक्ति की खोपड़ी के उभारों के आधार पर यह बताया जा सकता था कि उसकी कौन-सी शक्तियाँ अधिक विकसित हैं और कौन-सी कम। मस्तिष्क के उन्होंने ऐसे चित्र बनाये जिनमें प्रत्येक शक्ति का क्षेत्र अलग-अलग दर्शाया गया था। पर अब शक्ति मनोविज्ञान (Faculty Psychology) तथा मस्तिष्क विज्ञान (Phrenology) दोनों का परित्याग कर दिया गया है।

उन्नीसवीं शताब्दी तक ये शब्द—'बुद्धि' एवं 'बुद्धिजन्य'—मनुष्य की सोचने की शक्ति के लिये प्रयुक्त होते थे एवं पशुओं को बुद्धिहीन तथा मूल-प्रवृत्यात्मक माना जाता था। डार्विन के विकासवाद के सिद्धान्त ने इस विचार में क्रान्ति ला दी एवं इस तथ्य की ओर संकेत किया कि मनुष्य एवं पशु के व्यवहार में आधारभूत समानता होती है। इस प्रकार उसने बतलाया कि पशुओं में भी बुद्धि है। सन् १८८० में कैटिल ने जर्मनी में लीपजिग जाकर वुन्ड्ट की देखरेख में अध्ययन किया एवं अपने मानसिक परीक्षण बनाए। पर उसके अनुसार प्रतिक्रिया काल, टैप करने की गति, स्मृति-विस्तार भी बुद्धि के पक्ष थे,

क्योंकि ये मानसिक परीक्षण इन्हीं तथ्यों का मापन करने के लिए थे। हार्वर्ड विश्वविद्यालय में ह्यूगो मुन्स्टेबर्ग तथा विस्कान्सिन विश्वविद्यालय में जास्ट्रो ने भी इसी प्रकार के परीक्षण बनाये। सन् १६०० में ऐबिन्हास ने लिखा कि "बुद्धि का अर्थ है मिश्रण एवं संकलन करने की योग्याता।"[1] और यह कि वाक्य-पूर्ति से इसका परीक्षण हो सकता है। उसने स्कूल के बालकों को ऐसे वाक्य दिए और ज्ञात किया कि होशियार बालक कमजोर बालकों की अपेक्षा अच्छी प्रकार वाक्य-पूर्ति करते हैं।

कुछ परिभाषाएं

१. **बिने** के अनुसार बुद्धि की मुख्य क्रियाएं हैं, "निर्णय करना, ठीक से समझना और ठीक से तर्क करना।"[2] बिने का विश्वास था कि बुद्धि अपने आप को अनेक क्रियाओं में व्यक्त करती है। और कौन सी वस्तु कठिन है कौन सी नहीं, इसमें बालकों में व्यक्तिगत विभेद होते हैं। उसने तर्क प्रस्तुत किया कि परीक्षणों की रचना इस प्रकार हो कि बुद्धि सामान्यतया जिस अर्थ में प्रयुक्त होती है, उसका मापन हो सके। अर्थात् परीक्षणों की रचना इस प्रकार हो कि वे पूर्व शिक्षण एवं अनुभव पर निर्भर हों।

२. **स्पीयरमैन** के अनुसार "बुद्धि साम्बन्धिक चिन्तन है।"[3] एवं इसमें तीन बातें होती हैं: (अ) अनुभव-बोध (Apprehension of Experience), अर्थात् किसी विद्यमान वस्तु का गुण समझना; (ब) सम्बन्ध-शिक्षण (Educaton of Relatons), अर्थात् दो या अधिक वस्तुओं के उपस्थित होने पर उनका सम्बन्ध समझ लेना, (स) सहसम्बन्ध शिक्षण (Education of Correlates) अर्थात् किसी वस्तु एवं उससे सम्बन्धित वस्तु के उपस्थित होने पर उनका सहसम्बन्ध समझना। स्पीयर मैन के दो-अवयव सिद्धान्त का वर्णन हम आगे करेंगे।

३. **थॉर्नडायक** के अनुसार बौद्धिक योग्यता के अनेक संकार्य है, जैसे अनुमान लगाना, तर्क योग्यता, साहचर्य, सीखना या अवगम। उसने[4] बुद्धि को तीन वर्गों में बाँटने का सुझाव दिया है: (अ)अमूर्त और शाब्दिक बुद्धि, जिसमें प्रतीकों का प्रयोग होता है, (ब) व्यावहारिक बुद्धि जिसमें वस्तुओं का हस्तकौशल होता है, एवं (स) सामाजिक बुद्धि जिसमें अन्य व्यक्तियों से सामाजिक अन्तर्प्रक्रिया

---

1. Intelligence is the ability to combine and integrate.
2. To judge well, to comprehend well, to reason well.
3. Intelligence is relational thinking
4. Thorndike, *The Measurement of Intelligence*, 1921.

में सुगमता होती है। उसने लिखा है कि "बुद्धि मन (या चाहें तो मस्तिष्क या व्यवहार) का वह गुण है, जिसमें अरस्तू, प्लेटो तथा अन्य व्यक्ति अथीनियन मूर्खों से अन्तर रखते थे या समान आयु पर वकील, डॉक्टर, वैज्ञानिक, विद्वान्, सम्पादक हमारे पागलखानों में पड़े मूढ़ों से भिन्न हैं।"[1]

४. **स्टर्न** के अनुसार, "बुद्धि जीवन की नई समस्याओं और परिस्थितियों के प्रति सामान्य अभियोजनशीलता है।"[2]

५. **बर्ट** के अनुसार बुद्धि, "जन्मजात, सर्वतोमुखी मानसिक कार्यकुशलता है—सापेक्षतया नवीन परिस्थितियों से अभियोजन की क्षमता।[3]

६. **टर्मन** के अनुसार, "एक व्यक्ति उसी अनुपात में बुद्धिशील है जिसमें उसकी अमूर्त्त चिन्तन की क्षमता है।"[4]

इंगलैण्ड में सन् १९२१ में "जरनल ऑफ एजूकेशनल साइकॉलाजी" के सम्पादक ने एक संगोष्ठी (*Symposium*) का संगठन किया और इसमें भाग लेने के लिए १७ मनोवैज्ञानिकों को निमन्त्रण दिया। इनमें से १४ ने जवाब दिया। इन्होंने जो परिभाषाएँ प्रस्तुत कीं वे अनेक प्रकार की हैं। सीखने की क्षमता पर बकिंघम, डियरबोर्न आदि ने जोर दिया। काल्विन, पिन्टनर, पैटर्सन आदि ने यह जोर दिया कि बुद्धि का अर्थ अभियोजनशीलता है। हैगर्टी, थर्सटन एवं अन्य व्यक्तियों ने इस बात पर बल दिया कि बुद्धि अनेक तत्त्वों का समन्वय है।

बुद्धि की कुछ अन्य परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं—

७. **फ्रीमैन**—"बुद्धि वही है, जिसका कि बुद्धि-परीक्षण मापन करते हैं।"[5]

---

1. Let intellect be defined as that quality of mind (or brain or behaviour, if one prefers) in respect to which Aristotle, Plato, and the like differed most from Athenian idiots of their days, or in respect to which lawyers, physicians, scientists, scholars, and editors of reputed greatest ability at constant age differ most from idiots of that age in our asylums—*Measurement of Intelligence*, 1921.
2. Intelligence is the general adaptability to new problems of life.—Stern.
3. Inborn, alround mental efficiency–the power of readjustment to relatively novel situations.—Burt.
4. An individual is intelligent in proportion as he is able to carry on abstract thinking. —Terman.
5. Intelligence is that Intelligence tests measure.—Freeman.

८. **रेक्स नाइट**— "बुद्धि का अर्थ है सम्बन्धित विचारों की खोज।"[1]

९. **रैविन**—चूँकि ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी में बुद्धि को दो बातों से परिभाषित किया है : (अ) समझ, एवं (ब) सूचना अतः रेविन के अनुसार बुद्धि में ये दोनों ही तत्व महत्वपूर्ण हैं। किसी भी परिस्थिति में बुद्धिमत्तापूर्वक कार्य करने के लिए किसी व्यक्ति को दोनों बातों की जरूरत होती है : आवश्यक सूचना तथा तुलना एवं तर्क करने की समझ।

१०. **हीम**—हीम के अनुसार "बुद्धिमत्ता पूर्ण कार्य में आवश्यक बातों की समझ और उनके प्रति उचित प्रक्रिया करना निहित है।"[2] जैसे किसी सामाजिक परिस्थिति, साक्षात्कार, टी-पार्टी या किसी व्यावहारिक परिस्थिति रेगिस्तान या जेल में बुद्धिमान व्यक्ति वही है जो ठीक से परिस्थिति को समझे।

११. **स्टॉडर्ड**—स्टॉडर्ड ने बुद्धि की बड़ी व्यापक परिभाषा की है। उसके अनुसार, "बुद्धि उन कार्यों को करने की क्षमता होती है, जिनमें (अ) कठिनाई, (ब) जटिलता, (स) अमूर्त्तता, (द) मितव्ययता, (य) ध्येय से सामंजस्य, (र) सामाजिक उपयोगिता, एवं (ल) मौलिकता के गुणों का उपयोग हो, तथा जिसमें कार्य-सम्पादन की एकाग्रता हो और संवेगात्मक प्रत्याबलों का निरोध करना पड़े।"[3]

(अ) **कठिनाई**—आयु के बढ़ने के साथ-साथ बालक कठिनतर प्रश्नों को हल करने में समर्थ होना चाहिए। परीक्षण इस प्रकार का हो कि एक ७ वर्ष का बालक १७ वर्ष के बालक से अधिक प्रश्नों को हल न कर सके। कार्य की जटिलता से उसकी कठिनता भी बढ़ जाती है।

(ब) **जटिलता**—इसका अर्थ है कितने कार्यों को एक साथ सफलता से सम्पादित किया जा सकता है। कठिनता योग्यता के उच्च से उच्चतर स्तरों की ओर संकेत करती है, जबकि जटिलता योग्यता के अनेक

1. Intelligence means discovery of relevent ideas. —Rex Kinght.
2. Intelligent activity consists of grasping of essentials, and responding appropriately to them.— A. W. Heim.
3. Intelligence is the ability to undertake activities that are characterised by (i) difficulty, (ii) complexity, (iii) abstractness, (iv) economy, (v) adaptiveness to a goal, (vi) social value, and (vii) the emergence of originals, and to maintain such activities under conditions that demand a concentration of energy and a resistance to emotional forces.—G. D. Stoddard.

क्षेत्रों की ओर। जटिलता कला-सम्बन्धी निष्पत्ति (Artistic Achievement) एवं अन्य ऐसे कार्यों में प्रकट होती है।

(स) **अमूर्त्तता**—अर्थात् अमूर्त्त तथा प्रतीकात्मक चिन्तन की क्षमता। किसी भी समस्या को सुलझाने के लिए अमूर्त्त तथा प्रतीकात्मक चिन्तन आवश्यक है।

(द) **मितव्यता या गति**—अर्थात् कम से कम समय में अधिक से अधिक कार्यों को करने की क्षमता; अल्पतम शक्ति, समय तथा व्यय में कार्य का सम्पादन।

(य) **ध्येय से सामंजस्य**—अर्थात् ध्येय की पूर्ति में निश्चित प्रयोजन से कार्य-सम्पादन की सामर्थ्य।

(र) **सामाजिक उपयोगिता**—अर्थात् बुद्धिमतापूर्ण व्यवहार वह है जिसमें व्यक्ति उन कार्यों को करने में शक्ति लगाए जो समाज द्वारा अनुमोदित हों।

(ल) **मूल बातों का सूत्रपात**—अर्थात् बुद्धिशीलता में नवीनता का भाव सन्निहित है। जैसे इन्जीनियरिंग के क्षेत्र में नए सिद्धान्तों या डिज़ाइनों की खोज।

वैश्लर (Wechsler)—"बुद्धि व्यक्ति की वह समस्त एवं सार्वभौम शक्ति है, जो उसे ध्येययुक्त कार्य करने, तर्कपूर्ण चिन्तन करने एवं वातावरण के साथ प्रभावशील अभियोजन करने में सहायता करती है।"[1]

बुद्धि के सिद्धान्त

शक्ति-मनोविज्ञान (Faculty Psychology)—

शक्ति-मनोविज्ञान के अनुसार, मन में अनेक शक्तियाँ हैं। इनमें से प्रत्येक शक्ति दूसरे से स्वतंत्र है। इनके नाम हैं : जानना, अनुभव करना, इच्छा करना, निर्णय, स्मरण तथा कल्पना।

अठारहवीं शताब्दी के अन्त में स्कॉटिश दार्शनिक रीड (Reid) ने मन की तीस शक्तियों का उल्लेख किया। इनमें दया, कर्त्तव्य, स्मरण, निर्णय, अनुकरण आदि सम्मिलित हैं। बाद के दार्शनिकों ने इनसे भी अधिक शक्तियों का उल्लेख किया है।

1. Intelligence is the aggregate or global capacity of an individual to act purposefully, to think rationally and to deal effectively with his environment.—Wechsler.

शक्ति-मनोविज्ञान की परम्परा में मन की प्रकृति पर काफी विवेचन हुआ है पर यह मुख्यतः अनुमानात्मक था। इसका केवल ऐतिहासिक महत्व है।

स्पीयरमैन का द्वय अवयव सिद्धान्त (Spearman's Two Factor Theory)—

स्पीयरमैन शक्ति-मनोविज्ञान के इस सिद्धान्त में विश्वास नहीं करता था कि मन की शक्तियाँ एक-दूसरे से स्वतंत्र होती हैं। उसके अनुसार ये एकात्मक हैं। उसने ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में अनुसंधान कार्य किया। विद्यार्थियों को दो समूहों में बाँटा गया और उन्हें स्कूल के अनेक विषयों में परीक्षण दिए गए और तब प्रत्येक दो विषयों के फलांकों में सहसम्बन्ध निकाले गए। इस प्रकार जो सहसम्बन्ध प्राप्त हुए, वे धनात्मक थे। स्पीयरमैन के अनुसार ये सहसम्बन्ध धनात्मक इसलिए हैं क्योंकि सभी परीक्षणों में कुछ न कुछ समानता है। इसे उसने सामान्य योग्यता (General Ability) की संज्ञा दी। इस सामान्य योग्यता के अतिरिक्त प्रत्येक कार्य में कुछ न कुछ विशिष्ट योग्यता की भी आवश्यकता पड़ती है। यह विशिष्ट योग्यता (Specific Ability) S_1, S_2, S_3 आदि चिन्हों से दर्शायी जा सकती है। स्पीयरमैन के अनुसार बुद्धि में सामान्य तथा विशिष्ट ये दो तत्व होने से उसका सिद्धान्त दो अवयव या दो तत्व सिद्धान्त (Two Factor Theory) कहलाता है।

स्पीयरमैन के दो अवयव सिद्धान्त को निम्नलिखित चतुष्टय समीकरण (Tetrad Equation) से स्पष्ट किया जा सकता है। मान लीजिए, हम स्कूल में पढ़ाए जाने वाले चार विषयों में परीक्षण दें, तो इनके सहसम्बन्धों को निम्नलिखित व्यूह (Matrix) में दिखाया जा सकता है :—

	अ	ब	स	द
अ	( )	.४२	.३५	.२८
ब	.४२	( )	.३०	.२४
स	.३५	.३०	( )	.२०
द	.२८	.२४	.२०	( )
	१.०५	.९६	.८५	.७२

ऊपर के व्यूह में सहसम्बन्ध गुणांकों को उच्चोच्च परम्परा क्रम में रखा गया है। उच्च सहसम्बन्ध गुणांक ऊपर लिखे गए हैं; बाद में निम्न गुणांक। इसीलिए प्रथम स्तम्भ के सहसम्बन्ध गुणांकों का योग सबसे अधिक है, दूसरे का कम एवं बाद के स्तम्भों का क्रमानुसार उससे भी कम है। ऊपर के व्यूह में

ये योग क्रमशः १.०५, ·६६, ·८५ एवं .७२ हैं। एक विषय का उसी विषय से सहसम्बन्ध नहीं दिखाया गया है, जैसे 'अ' का 'अ' से, 'ब' का 'ब' से इत्यादि।

अ तथा ब विषयों में सहसम्बन्ध .४२ है, अ तथा स में .३५, अ तथा द में .२८। इसी प्रकर अन्य कतारों में भी कुछ सहसम्बन्ध दिए हुए हैं। यदि हम विभिन्न स्तम्भों या कतारों पर ध्यान दें, तो ज्ञात होगा कि प्रत्येक दो स्तम्भों की प्रथम कतार के सहसम्बन्धों में वही सम्बन्ध है जो द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ कतारों में। जैसे—

ब, स स्तम्भों में $\frac{.४२}{.३५} = \frac{.२४}{.२०}$; स, द स्तम्भों में $\frac{.३५}{.२८} = \frac{.३०}{.२४}$।

अतः किसी भी दो स्तम्भों के सहसम्बन्ध गुणांकों का अनुपात बराबर होता है। जैसे—स्तम्भ स, द में .३५ × .२४ = ३० × .२८।

अब यदि हम इन सहसम्बन्धों को r_1, r_2, r_3, r_4, r_5 r_6 आदि प्रतीकों से दर्शाएँ तो निम्न तालिका बनेगी।

परीक्षण	१	२	३	४
१	( )	$r_{१·२}$	$r_{१·३}$	$r_{१·४}$
२	$r_{१·२}$	( )	$r_{२·३}$	$r_{२·४}$
३	r '.	$r_{२·३}$	( )	$r_{३·४}$
४	r .	$r_{२·४}$	$r_{३·४}$	( )

इस तालिका में उपर्युक्त सिद्धान्त से—

$$\frac{r_{१३}}{r_{१४}} = \frac{r_{23}}{r_{24}} \text{ या } r_{१3}\, r_{2४} = r_{2३}\, r_{1४}.$$

या $r_{13}\, r_{24} - r_{23}\, r_{14} = ०.$

इसे ही चतुष्टय समीकरण (Tetrad Equation) कहते हैं। ऊपर के व्यूह में चतुष्टय समीकरण का अन्तर सदैव शून्य रहेगा। पर सभी तालिकाओं में यह अन्तर शून्य नहीं होगा। यह अन्तर शून्य आने पर ही स्पीयरमैन के सिद्धान्त की पुष्टि होती है।

स्पीयरमैन के अनुसार 'g' या सामान्य योग्यता में दो बातें हैं :—(अ) सम्बन्ध शिक्षण (Education of Relations), तथा (ब) सहसम्बन्ध शिक्षण (Education of Correlates)। 'सम्बन्ध-शिक्षण' का अर्थ है दो वस्तुओं या वस्तु के भागों में सम्बन्ध का बोध। 'सहसम्बन्ध-शिक्षण' का अर्थ है एक व्यक्ति के मन में एक वस्तु होने पर और उसका दूसरी वस्तु से सम्बन्ध ज्ञात होने पर दूसरी सम्बन्धित वस्तु के बारे में सोचना। इसके अतिरिक्त स्पीयरमैन ने बाद में चलकर सामूहिक तत्त्वों का भी पता लगाया; जैसे यान्त्रिक

योग्यता, मानसिक गति आदि । अतः अप्रत्यक्ष रूप से स्पीयरमैन के सिद्धान्त में वास्तव में तीन तत्त्व हो जाते हैं : (अ) 'g' या सामान्य अवयव जो सभी कार्यों को करने में आवश्यक है, (ब) 's' या विशिष्ट अवयव जो प्रत्येक कार्य में अलग-अलग आवश्यक है, (स) समूह अवयव, जो इन दोनों के मध्य में है ।

सन् १९२७ में स्पीयरमैन ने अपनी पुस्तक 'व्यक्ति की योग्यताएं'[1] में संकेत किया कि 'g' के अतिरिक्त अन्य सामान्य अवयव भी सम्भव हैं, जैसे 'c' तथा 'w'। 'c' का अर्थ है निष्क्रियता से मुक्ति, विचार प्रक्रिया में गति; w का अर्थ है इच्छा-शक्ति, आत्म-नियन्त्रण, संलग्नता की सामर्थ्य आदि ।

स्पीयरमैन के सिद्धान्त को निम्नलिखित चित्र से स्पष्ट किया जा सकता है—
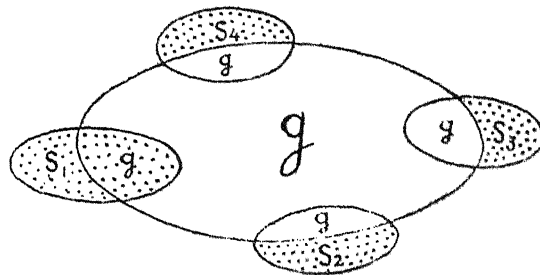
इस चित्र में स्कूल के चार विषयों में परीक्षणों के अन्तर्सम्बन्धों का चित्रांकन है । जैसा कि स्पष्ट है, कुछ परीक्षणों में अधिक सामान्य योग्यता की आवश्यकता पड़ती है, कुछ में कम ।

स्पीयरमैन के सिद्धान्त की समालोचना

१. स्पीयरमैन के अनुसार प्रत्येक कार्य करने में कुछ सामान्य योग्यता की आवश्यकता पड़ती है और कुछ विशिष्ट योग्यता की । इसका यह अर्थ हुआ कि प्रत्येक कार्य में अलग-अलग विशिष्ट योग्यता चाहिए । पर व्यवहार में हम ऐसा नहीं पाते । अनेक कार्यों को मिलाकर ऐसे समूहों में बाँटा जा सकता है, जिनमें एक ही प्रकार की योग्यता की आवश्यकता पड़ती है, जैसे फोरमैन, मैकेनिक एवं इंजीनियर के कार्य में ।

२. अवयव विश्लेषण के आधार पर स्पीयरमैन ने जिस प्रकार सहसंबंधों की गणना की विधि अपनायी है वह एक सरल कार्य नहीं है, क्योंकि अधिक

1. Spearman, C. : *The Abilities of Man*, New York, The Macmillan Co., 1927.

- परीक्षणों के प्रशासन में चतुष्टय समीकरणों की संख्या इतनी अधिक हो जाती है कि सरलता से उनके आधार पर परिणाम नहीं निकाले जा सकते।

३. चतुष्टय समीकरणों का मूल्य सदैव शून्य नहीं होता। अतः आवश्यक नहीं है कि सभी परीक्षणों के परिणामस्वरूप सामान्य योग्यता का अवयव ज्ञात हो सके।

४. अन्य अवयव सिद्धान्तों की भाँति इसके बारे में भी अभी समन्वेषण साहित्य अधूरा है। केवल अनन्तिम परिकल्पना (Tentative hypothesis) के रूप में ही हम इसमें आस्था रख सकते हैं।

थॉर्नडायक का सिद्धान्त (Thorndike's Theory)—

स्पीयरमैन के सिद्धान्त का सबसे क्रियाशील विरोध ई० एल० **थार्नडायक** ने किया। थॉर्नडायक ने स्पीयरमैन के सिद्धान्त के सांख्यिकीय आधार पर चोट करते हुए केवल यही संकेत नहीं किया कि कई परिस्थितियों में परीक्षणों के अन्तर्सहसम्बन्ध अत्यन्त कम थे अतः प्रामाणिक नहीं माने जा सकते, वरन् उसने सामान्य योग्यता जैसी सार्वभौम बुद्धि-लक्षण की सत्ता को भी न माना। थॉर्नडायक के अनुसार हम में 'बुद्धि' नहीं, वरन् वास्तव में अनेक प्रकार की बुद्धियाँ हैं जो ऐसे अनेक तत्त्वों से बनी हैं कि एक-दूसरे को अनिच्छादित करें। विभिन्न परीक्षणों में जो सहसम्बन्ध ज्ञात होते हैं, वे इस कारण हैं कि प्रत्येक का कोई लक्षण अन्य परीक्षणों के लक्षणों से मिलता-जुलता है। अपनी पुस्तक 'बुद्धि का मापन'[1] में थॉर्नडायक ने उल्लेख किया है कि व्यक्ति दो दिशाओं में किसी निश्चित कार्य को करने में विभेद रखते हैं : (अ) पदों की संख्या, एवं (ब) पदों का कठिनता स्तर, जिसमें वे सफल होते हैं। हम ऐसे व्यक्तियों के सम्पर्क में आते हैं जो विभिन्न विषयों के बारे में अनेक तथ्य जानते हैं, किन्तु किसी भी एक विषय के बारे में उनका ज्ञान विस्तृत नहीं है। दूसरी ओर ऐसे भी व्यक्ति हैं जिनका ज्ञान किसी एक विषय में अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा कहीं अधिक विस्तृत है, किन्तु वे अनेक ऐसी बातों एवं सूचनाओं से अनभिज्ञ हैं जिन्हें एक सामान्य व्यक्ति जानता है। इस प्रकार एक सीमा तक थॉर्नडायक ने 'बुद्धि' को ज्ञान या दक्षता के समकक्ष माना है।

थर्स्टन का बहुअवयव सिद्धान्त (Thurston's Multi-factor Theory)–

थर्स्टन ने शिकागो विश्वविद्यायल में अपना अनुसंधान कार्य किया और

---

1. E. L. Thorndike : *The Measurement of Intelligence,* New York, Bureau of Publication, Teachers College, Columbia University, 1926.

१९४१ में कॉलिज के विद्यार्थियों पर परीक्षण करके उसने बुद्धि के नौ अवयव ज्ञात किए। बाद में स्कूल के बालकों के आधार पर केवल सात अवयव। कॉलिज के विद्यार्थियों पर अन्वेषण में जो नौ अवयव ज्ञात हुए, वे ये हैं :—

१. **शब्द-बोध** (Verbal Comprehension)—शब्द-बोध, पाठन-बोध, शाब्दिक तर्क आदि परीक्षणों द्वारा इसका मापन होता है।

२. **शब्द-प्रवाह** (Word Fluency)—अर्थात् गति जिससे प्रयोज्य शब्द-प्रयोग कर सके।

३. **संख्यात्मक योग्यता** (Numerical Ability), गणित के प्रश्नों को हल करने, जोड़ने, गुणा करने आदि में गति एवं परिशुद्धता।

४. **वस्तु-प्रक्षण** (Spatial Ability)—अर्थात् दो-तीन परिमाणों में स्थानगत वस्तुप्रेक्षण करने की सामर्थ्य।

५. **साहचर्य स्मृति** (Associative Memory) सम्बन्धित साहचर्यों को स्मरण रखने की योग्यता।

६. **प्रातिबोधिक गति** (Perceptual Speed)—द्राष्टिक विवरणों को शीघ्रता से एवं यथार्थता से ग्रहण करना; समानताओं एवं अन्तरों की शीघ्र पहिचान।

७, ८. **तर्क-शक्ति** (Reasoning)—यह तर्क-शक्ति दो प्रकार की हो सकती है : (अ) **आगमन तर्क** (Inductive Reasoning), (ब) निगमन तर्क (Deductive Reasoning)।

९. **समस्या हल करने की योग्यता**—(Ability to Solve Problems)—

थर्स्टन के बुद्धि के विभिन्न अवयवों को स्पष्ट करने के लिए कुछ उदाहरण नीचे दिए गए हैं:—

(१) **शब्द-बोध**—

(अ) **Proverb Test**—A. Sail when the wind blows.

निम्नलिखित में से उन्हीं कहावतों को छाँटो जिनका वह अर्थ है जो ऊपर :—

Strike when the iron is hot.

Make not sail too large for the ship.

One must howl with the wolves.

(ब) **Verbal Relation**—

पैर : जूता : हाथ :

(अंगूठा, सिर, दस्ताना, अंगुली)

(ii) **शब्द-प्रवाह—**

(अ) **Letter Arrangement—**

निम्न अक्षरों को इस प्रकार व्यवस्थित करो कि जानवरों का नाम बन जाए :—

अक्षर	**उत्तर**	**अक्षर**	**उत्तर**
e b a r	bear	w l o	owl
o d g	dog	s a s	ass
a c t	cat	i k d	kid
c o w r	crow	E H N	HEN

(ब) **Word Finding—**

• 'S' अक्षर से शुरू होने वाले शब्द लिखो।

(**उत्तर**—Sell, Sand, Spell, Say, Slay......)

(iii) **संख्यात्मक योग्यता—**

(२९)² = ७५५......
८४१✓...
८७२......
९१०......

(iv) **वस्तुप्रेक्षण—**

इसमें हाथ के चित्र दिखाये जा सकते हैं। प्रयोज्य बताता है कि कौन-सा चित्र सीधे हाथ का है, कौन बायें हाथ का।

(v) **साहचर्य-स्मृति—**

इसमें शब्दों के साथ कुछ अंक दिए रहते हैं, जैसे

Box ६६, Chain ४४, Fan २९, Lamp ६०; अगले पृष्ठ पर वस्तुओं का संख्याक्रम दिया रहता है, और प्रयोज्य को वस्तुओं के नाम बताने पड़ते हैं।

(vi) **प्रातिबोधिक गति—**

६९६	९८०
३५२	५५२
४५६	६६६
६९६	६३०
८७०	९८०
२३०	२४०
६९६	९८०

स्तम्भ के ऊपर जो संख्यायें लिखी हैं, उन्हें देखो। नीचे की संख्याओं में वे दुबारा कहाँ है? उन्हें रेखांकित करो।

(vii) **तर्कशक्ति**—

गुप्त लेखन	S A W	३,८,५ बताओ कौन सा
	S A T	५,८,६ अक्षर किस अंक के
	W A S	३,८,५ लिये हैं ?

उत्तर : S=३, W=५, A=८,T=६

अवयव-विश्लेषण पर आधारित बुद्धि-सिद्धान्तों का मूल्यांकन
(General Evaluation of Factor Theories of Intelligence)—

अनेक मनोवैज्ञानिकों ने अवयव-विश्लेषण पर आधरित सभी बुद्धि-सिद्धान्तों की आलोचना की है। संक्षेप में इन आलोचनाओं की मुख्य बातों को हम नीचे दे रहे हैं :—

(१) ये सिद्धान्त हमारे मन या मस्तिष्क में अलग सत्ताओं को मानते हैं, जबकि आधुनिक शरीर-शास्त्री इस प्रकार की किसी अलग सत्ता की ओर संकेत नहीं करते। अवयव-सिद्धान्त ऐसी स्थापना करते प्रतीत होते हैं, मानो योग्यताएँ एक-दूसरे से स्वतन्त्र हों और स्वयं एक योग्यता के अन्दर सजातीयता हो, पर व्यवहार में हम इन योग्यताओं को अलग नहीं कर सकते। अतः अवयव-विश्लेषण मनोवैज्ञानिक रूप से भ्रमात्मक व्याख्या प्रस्तुत करता है। इसी बात को हम यों कह सकते हैं कि अवयव-विश्लेषण द्वारा प्राप्त अवयव केवल गणित के आधार पर हैं, मनोवैज्ञानिक वास्तविकताएँ नहीं।

पर यह तर्क वैध नहीं है। सम्भव है, व्यवहार में योग्यताएँ स्वतन्त्र प्रतीत न हों, उनमें सजातीयता एवं अतिच्छादन (Over-lapping) हो, पर उनके आधार में अवयव गुप्त भी हो सकते हैं। व्यवहार में या परीक्षण द्वारा हम स्वतन्त्र योग्यताओं का पता इसलिए नहीं लगा पाते कि ऐसे शुद्ध परीक्षणों की रचना जो किसी विशिष्ट योग्यता का मापन कर सकें, कठिन कार्य है।

(२) योग्यता में व्यक्तिगत विभेद कुछ सीमा तक जन्मजात हैं और कुछ अंशों में वातावरणजन्य। ऐसी परिस्थिति में योग्यता के घटकों का निर्धारण अनिश्चित एवं असम्भव है, क्योंकि वातावरण की परिस्थितियाँ इतनी अधिक परिवर्तनशील हैं कि व्यक्तियों की योग्यता में समान तत्व नहीं खोजे जा सकते। प्रशिक्षण एवं अनुभव में अन्तर आने से योग्यता में भी अन्तर आ जायेगा। स्वयं अनुभव एवं वातावरण से नई योग्यताओं का उदय होता है। वातावरण से प्राप्त अनेक आदतें, जैसे भाषा, योग्यता का अंग मान ली गई हैं। पर 'भाषा' वास्तव में किसी जन्मजात योग्यता पर आधारित है या केवल अनेक प्रारम्भिक प्रक्रियाओं—ध्वनि, अर्थ, ग्रहणता, ध्वनियों का अर्थ से सम्बन्ध

स्थापित होना, आदि के सम्मिश्रण से बनी हैं, नहीं कहा जा सकता। अवयव सिद्धान्त इस उलझन पर कोई प्रकाश नहीं डालता।

(३) अवयव-विश्लेषण के सिद्धान्त शक्ति-मनोविज्ञान की परम्परा में ही रखे जा सकते हैं जिनका कि बहुत पहले ही मनोवैज्ञानिक परित्याग कर चुके हैं। इससे वास्तव में कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ता कि स्मृति, भाषा, गणितीय सुविधा, स्थानगत कल्पना आदि को शक्तियाँ कहा जाये या थर्सटन के शब्दों में आधारभूत योग्यतायें। निस्संदेह मस्तिष्क वैज्ञानिकों (Phrenologists) का यह विचार कि शक्तियाँ मस्तिष्क के स्थानीय क्षेत्रों की रचना एवं विकास पर निर्भर हैं, माननीय नहीं है।

(४) यह विचार कि योग्यता अनेक संकीर्ण तत्वों से मिलकर बनी है, केवल सहसम्बन्ध के सांख्यिकीय तत्त्वों की व्याख्या करता है, वह भी जबकि सहसम्बन्ध बहुत उच्च न हों। किन्तु इसमें मनोवैज्ञानिक कठिनाई यह है कि यह वंश-परम्परा के सिद्धान्त पर आधारित है। मनुष्यों के सम्बन्ध में वंश परम्परा पर किये गए अध्ययनों के निष्कर्षों की इतनी सरलता से व्यख्या नहीं हो सकती, विशेषकर मानसिक गुणों के प्रसंग में। अतः वंश-परम्परागत आधार पर योग्यता को उसके घटकों, तत्त्वों या अवयवों में विभाजित नहीं किया जा सकता। वातावरण के कारण उसमें अनेक प्रकार से अन्तर पड़ जाता है जो सभी व्यक्तियों को समान रूप से प्रभावित नहीं करता।

: १३ :

बुद्धि-परीक्षण का विकास

सर्वप्रथम सन् १७६५ में व्यक्तिगत विभेद को मान्यता दी गई, जबकि ग्रीनविच की ज्योतिष-प्रयोगशाला में, मैस्कीलिन (Maskelyne) ने अपने एक सहयोगी को केवल इस आधार पर पद-च्युत कर दिया कि एक निश्चित रेखा से सितारे के संक्रमण का निरीक्षण वह कुछ देर से करता था। पर बाद में यह माना जाने लगा कि प्रत्येक निरीक्षक के निरीक्षण में अन्य निरीक्षणों से कुछ भिन्नता होती है। इसे 'व्यक्तिगत समीकरण' (Personal Equation) की संज्ञा दी गई। प्रारम्भ में प्रतिक्रिया काल के अन्तर को व्यक्त करने के लिए इस शब्द का प्रयोग हुआ, पर कालान्तर में सभी प्रकार के व्यक्तिगत विभेदों को व्यक्त करने के लिए। १८२२ में बैसेल तथा अन्य ज्योतिषियों ने प्रतिक्रिया काल में व्यक्तिगत विभेदों को मान्यता दी। वैबर तथा फैक्नर ने भी इनके महत्व को समझा।

प्रारम्भिक परीक्षण

अमरीका में—

कैटिल ने लीपज़िग में वुन्ड्ट की प्रयोगशाला में व्यक्तिगत विभेदों को अत्यन्त महत्व दिया। गाल्टन ने व्यक्तिगत विभेदों का प्रयोगात्मक अध्ययन

किया। बुद्धि-परीक्षणों की प्रगति के इतिहास में कैटिल का नाम तो स्वर्ण अक्षरों में लिखे जाने योग्य है। संयुक्त राज्य अमरीका में अध्यापन कार्य प्रारम्भ कर लेने पर उसने सन् १८९० में प्रसिद्ध ब्रिटिश पत्र 'मन' (Mind) में परीक्षणों का एक कार्यक्रम प्रस्तुत किया, जिसमें विभिन्न मानसिक प्रक्रियाओं में व्यक्तिगत विभेदों के मापन का प्रस्ताव था। ये विभिन्न मानसिक प्रक्रियाएँ थीं[1] :—

(१) डायनामोमीटर से शक्ति का मापन, (२) हस्तसंचालन की गति का मापन, (३) दो-बिन्दु-सीमान्त, (४) वेदना उत्पन्न करने के लिए आवश्यक दवाब, (५) वजन उठाकर परिमाण का विभेद करने की सामर्थ्य, (६) ध्वनि के प्रति प्रतिक्रिया की शीघ्रता, (७) दस विभिन्न रङ्गों के नमूने देखकर शीघ्रता से उनके नाम बताना, (८) पचास सैन्टीमीटर लम्बी रेखा का द्विविभाजन करने में परिशुद्धता, (९) दस सैकिन्ड का अन्तर बताने में परिशुद्धता, और (१०) तात्कालिक स्मरण।

इस प्रकार ये परीक्षण संवेदना की तीव्रता, निर्णय, गति की शीघ्रता, तात्कालिक स्मरण आदि से सम्बन्धित थे। कैटिल ने इन परीक्षणों को कोलम्बिया विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों पर प्रयुक्त किया। कैटिल के आग्रह पर 'अमरीकी मनोवैज्ञानिक संस्था' ने व्यापक रूप से इन परीक्षणों को प्रयुक्त किया। क्लार्क विस्लर ने इन परीक्षणों का विस्तृत विवरण दिया है। उसके अनुसार कोलम्बिया विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों पर अनेक प्रकार के परीक्षण प्रयुक्त हुए, जैसे—सर की लम्बाई-चौड़ाई का मापन, दृश्य-संवेदना, त्वचा में दो बिन्दुओं की संवेदना का निर्णय, वेदना-संवेदना, प्रतिक्रिया-काल, गति-परिशुद्धता, नौ शब्दों में मुक्त-साहचर्य विधि से साहचर्य का मापन, मानसिक प्रतिमा आदि। इनमें से अनेक परीक्षणों के निष्कर्षों का आपस में, एवं इनका विभिन्न विषयों से, साहचर्य ज्ञात किया गया है। कुछ साहचर्य निम्न हैं:—

---

1. (i) Strength of grip by dynamometer, (ii) The rate of movement of hand, (iii) Two-point threshold, (iv) Amount of pressure necessary to cause pain, (v) Amount of difference in the discrimination of lifted weights, (vi) The quickness of reaction to sound, (vii) The quickness of naming ten specimens of different colours arranged in miscellaneous order, (viii) The accuracy of bisecting a fifty centimeter line, (ix) The accuracy of marking intervals of ten seconds, (x) Immediate rote-memory.

प्रतिक्रिया काल एवं कक्षा में स्थिति	·०२
तर्कसंगत स्मृति एवं कक्षा में स्थिति	·१९
श्रव्य स्मृति एवं कक्षा में स्थिति	·१६
प्रतिक्रिया काल एवं साहचर्य	·०८
लैटिन एवं गणित	·५८
जर्मन एवं गणित	·५२
लैटिन एवं जर्मन	·६१
लैटिन एवं फ्रैन्च	·६०

प्रारम्भ के मानसिक प्रक्रियाओं के निष्कर्षों में निम्न सहसम्बन्ध का कारण यह है कि ये मुख्यतः सांवेदनिक हैं। विभिन्न विषयों में उच्च सहसम्बन्ध का कारण स्थानान्तरण है।

कैटिल एवं उसके सहयोगियों के अतिरिक्त अन्य व्यक्तियों ने भी इस प्रकार के परीक्षण किए। **बोल्टन** (Bolton) ने सन् १८९१ में अंक-विस्तार का मापन करने के लिए एक स्मृति परीक्षण बालकों पर प्रयुक्त किया। **जैस्ट्रो** (Jastrow) ने सन् १८९३ में 'विश्व कोलम्बियन प्रदर्शनी' (World Columbian Exhibition) में अपने परीक्षण रखे। **गिलबर्ट** ने सन् १८९४ में मानसिक परीक्षणों में बालकों द्वारा प्राप्तांकों की अध्यापकों द्वारा उनकी सामान्य बुद्धि के सम्बन्ध में किये गए निर्णय से तुलना की। सन् १९०१ में **बागले** (Bagley) ने बालकों की मानसिक तथा गत्यात्मक क्षमता में क्या सम्बन्ध है, यह अध्ययन किया। गत्यात्मक क्षमता का मापन करने के लिए उसने अनेक प्रकार के परीक्षणों को प्रयुक्त किया, जैसे-शक्ति, संचालन गति, गति-नियन्त्रण में स्थिरिता, प्रतिक्रिया काल आदि। मानसिक क्षमता के मापन के लिए बालकों के स्कूल में प्राप्त अंकों को आधार माना गया। मानसिक एवं गत्यात्मक क्षमता के इन दोनों निर्देशकों में उसने सम्बन्ध ज्ञात किया। उसके परिणामों से ज्ञात होता है कि वे बालक जिनमें उच्च गत्यात्मक क्षमता होती है, कक्षा में उनका स्तर निम्न होता है; अर्थात् इन दोनों क्षमताओं में निम्न सहसम्बन्ध है। पर बाद के अध्ययनों से इसके पक्ष में प्रमाण नहीं मिले हैं।

योरुप में—

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में योरुप में भी अनेक व्यक्ति परीक्षण कर रहे थे। १८९५ में **ए० ऐहर्न** (A. Oehrn) ने कुछ परीक्षणों का विवरण प्रकाशित किया, जिनमें अक्षर-गणना, प्रूफ-पाठन, स्मृति, सरल साहचर्य आदि प्रक्रियाओं का मापन था। पर इस युग में सबसे अधिक महत्वपूर्ण कार्य **अल्फ्रेड**

बिने ने किया । सन् १८९५ में उसने भी परीक्षणों की एक सूची प्रस्तावित की, जिसमें स्मृति, ज्यामितिक डिजायन, पैराग्राफ-पाठन, मानसिक प्रतिमा, निर्देश-ग्रहण-शीलता, सौन्दर्य-भाव, नैतिक भाव, संवेदना-निर्णय आदि से सम्बन्धित परीक्षण थे । **एँबिन्घॉस** ने सन् १८९७ में बौद्धिक थकान के मापन के लिए परीक्षण बनाए । इसमें परीक्षार्थी को एक ऐसी पाठ्यवस्तु दी जाती है, जिसमें कुछ शब्द छूटे रहते हैं । परीक्षार्थी से इन शब्दों की पूर्ति करने को कहा जाता है । मानसिक थकान का मापन करने के लिए यह विधि अनुपयुक्त थी । बौद्धिक क्षमता के मापन के लिए वह अधिक उपयुक्त थी ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस प्रकार के परीक्षणों के निर्माताओं का मुख्य उद्देश्य सैद्धान्तिक था और ये व्यक्तित विभेदों को महत्व देते थे । न तो परीक्षणों के प्रमापीकरण की कोई व्यवस्था थी और न उनका फलांकन ही वस्तुगत था । विश्वसनीयता एवं वैधता ज्ञात करने की कोई विधि भी निश्चित नहीं थी ।

सिरील बर्ट ने अपने परीक्षणों में सहसम्बन्ध विधि का प्रयोग किया । उसने १९०९ में बालकों के दो समूहों—ऐलीमेन्टरी तथा प्रीपेमेटरी पर अनेक परीक्षण प्रयुक्त किए । स्वयं बर्ट के वर्गीकरण के अनुसार ये परीक्षण निम्न प्रकार के थे :—

१. **सांवेदनिक निर्णय** : दो बिन्दु संवेदना, वज़न उठाने में भार के अन्तर का निर्णय, रेखाओं की लम्बाई में अन्तर बताना ।
२. **गत्यात्मक परीक्षण** : टैपिंग-गति, पत्तों को ढेर में रखना, पत्तों का छाँटना, अक्षर ज्ञात करना ।
३. **साहचर्य परीक्षण** : तात्कालिक धारणा, मुद्रण-चित्रण ।
४. **स्वेच्छिक ध्यान** ।

इन परीक्षणों को प्रयुक्त करने के अतिरिक्त सिरील बर्ट (Cyril Burt) ने परीक्षार्थियों की सामान्य मानसिक योग्यता के सम्बन्ध में अध्यापकों का निर्णय प्राप्त किया । फिर उसने प्रत्येक परीक्षण एवं मानसिक योग्यता में सहसम्बन्ध ज्ञात किया । इनमें से कुछ सहसम्बन्ध निम्न क्रम में हैं—

ऐलीमेन्टरी स्कूल	**प्रीपेरेटरी स्कूल**
मुद्रण-चित्रण	अक्षर ज्ञात करना
अक्षर ज्ञात करना	स्मृति
स्मृति	कार्ड छाँटना
कार्ड छाँटना	मुद्रण-चित्रण

टैपिंग-गति	टैपिंग गति
कार्ड ढेर में रखना	कार्ड ढेर में रखना
रेखाओं की दूरी में अन्तर बताना	रेखाओं की दूरी में अन्तर बताना
सांवेदनिक निर्णय	सांवेदनिक निर्णय
वज़न उठाने में भार का अन्तर	वज़न उठाने में भार का अन्तर

ऊपर की सूची को देखने से ज्ञात होता है कि 'ऐलीमेन्टरी' एवं 'प्रीपेरेटरी' दोनों में सहसम्बन्ध के क्रम काफी समान हैं। बर्ट ने दुबारा परीक्षण करके अपने परीक्षणों की विश्वसनीयता भी ज्ञात की। निम्नतम विश्वसनीयता गुणांक '०३८ था एवं अधिकतम '१३। उसने विभिन्न परीक्षणों में अन्तर सहसम्बन्ध भी ज्ञात किए।

बिने-मापदण्ड एवं उनके परिवर्द्धन
(Binet Scales and their Revisions)

जैसा कि पहले बताया जा चुका है, बिने ने परीक्षणों की एक सूची सन् १८९५ में प्रस्तुत की थी। इन परीक्षणों का उद्देश्य केवल सरल मानसिक प्रक्रियाओं का मापन करना था। सन् १९०४ में फ्रांस के जन-शिक्षा मन्त्री (Minister for Public Instruction) ने फ्रेन्च विद्यालयों में पढ़ने वाले बालकों की असफलता एवं कठिनाइयों को ज्ञात करने के लिए जो आयोग बनाया, बिने को उसका सदस्य नियुक्त किया। आवश्यकता इस बात की थी कि फ्रेन्च स्कूलों के विद्यार्थियों में प्रतिवर्ष जो इतने बालक असफल रह जाते थे, उसका कारण पता लगाया जाय एवं मानसिक रूप से पिछड़े बालकों को अन्य सामान्य बालकों से अलग छाँटा जा सके। बिने ने साइमन (Simon) की सहायता से ऐसे परीक्षण बनाए ताकि इस उद्देश्य की पूर्ति की जा सके।

१९०५ का परीक्षण—

सन् १९०५ में उसने एक ऐसे परीक्षण की रचना की जिसमें ३० प्रश्न थे और ये सरलतम से लेकर कठिनतम इस क्रम में थे। इस परीक्षण में विभिन्न प्रकार के पद थे, जैसे—अंकों का दुहराना, वाक्य-पूर्ति, रेखाओं की लम्बाई की तुलना, समझ आदि। ये परीक्षण पूर्व परीक्षणों से भिन्न थे, क्योंकि ये केवल सांवेदनिक क्षमता ही नहीं, वरन् उच्च मानसिक प्रक्रियाओं के मापन में समर्थ थे। चूँकि प्रश्न सरल से कठिन इस क्रम में हैं, अतः हम इस परीक्षण को एक मापदण्ड (Scale) कह सकते हैं। उदाहरण के लिए प्रथम परीक्षण में बालक से एक प्रज्ज्वलित मशाल का अनुसरण करने को कहा जाता है; पाँचवे में

परीक्षक बालक के सामने एक कैन्डी कागज में लपेटता है और यह देखा जाता है कि बालक इसे खोलकर खा लेता है या नहीं। चौदहवें परीक्षण में बालक से कुछ शब्दों के अर्थ बताने को कहा जाता है। सोलहवें परीक्षण में बालक कुछ वस्तुओं, जैसे कागज और कपड़े, में अन्तर बताता है। छब्बीसवें परीक्षण में वह तीन शब्दों का वाक्य बनाता है; एवं तीसवें परीक्षण में वह कुछ अमूर्त्त शब्दों, जैसे आदर एवं मैत्री, में अन्तर बताता है।

१९०५ के बिने-मापदण्ड की एक संक्षिप्त रूपरेखा निम्नलिखित है :—

१. आँख से घूमती हुई वस्तु का अनुसरण करना।
२. लकड़ी के टुकड़े को हाथ से पकड़ना।
३. लकड़ी का टुकड़ा दिखाकर ज्ञात करना कि बालक इसे पकड़ता है या नहीं।
४. लकड़ी एवं चॉकलेट के टुकड़ों में से एक को चुनना।
५. कागज में लिपटी कैन्डी उपस्थित करके देखना कि वह खोलकर खाता है या नहीं।
६. सरल आज्ञाओं का पालन करना एवं सरल हाव-भावों का अनुसरण।
७. शरीर के अंगों एवं सरल वस्तुओं के नाम जानना।
८. चित्र में वस्तुओं की ओर संकेत करना।
९. चित्र में वस्तुओं के नाम बताना।
१०. दो रेखाओं में कौन-सी लम्बी है, यह बताना।
११. तीन अंकों को दुहराना।
१२. दो दिए हुए वज़नों में कौन भारी है, यह बताना।
१३. तीन असमान रेखाओं की तुलना करना, फिर तीन समान रेखाओं की (निर्देशग्रहणशीलता)।
१४. वस्तुओं का अर्थ बताना।
१५. वाक्यों का अर्थ बताना।
१६. वस्तुओं के जोड़ों में अन्तर बताना।
१७. तीस सैकिन्ड तक चित्र में तेरह सामान्य वस्तुएँ दिखाई जाती हैं; फिर बालक से अधिकतम वस्तुओं का स्मरण करने को कहते हैं।
१८. दस सैकिन्ड तक चित्र दिखाते हैं; फिर बालक स्मरण से उसे खींचता है।
१९. अंकों का दुहराना।

२०. वस्तुओं के जोड़ों में समानता बताना ।
२१. रेखाओं की लम्बाई की तुलना करना ।
२२. वजन की तुलना करना ।
२३. स्मरण से बताना कि क्रम में रखे वजनों में से कौन-सा उपस्थित नहीं है ।
२४. दिए हुए शब्दों में लय बताना ।
२५. वाक्य-पूर्ति करना ।
२६. तीन शब्दों से वाक्य बनाना ।
२७. प्रश्नों को समझना ।
२८. स्मृति से घड़ी की सुइयों को उलटना ।
२९. मुड़े हुए कागज से त्रिकोण काटना ।
३०. अमूर्त शब्दों के अर्थ बताना ।

१९०५ का यह परीक्षण अत्यन्त महत्वपूर्ण था, क्योंकि बाद के अनेक परीक्षणों की रचना भी इसी के आधार पर हुई । यद्यपि इसमें आयु के अनुसार परीक्षणों का वर्गीकरण नहीं किया गया, पर इस बात को मान्यता दी गई कि आयु के बढ़ने से कठिनतर प्रश्नों का उत्तर देने की योग्यता भी बढ़ती है । परिपक्वता के किसी स्तर पर बुद्धि की मात्रा कितने परीक्षणों का सफलता से उत्तर दिया गया है, इस आधार पर मापी जाती है । मूढ़ (Idiot) प्रथम ६ परीक्षणों का उत्तर दे सकेगा, अल्पबुद्धि (Imbecile) ७ से लेकर १५ परीक्षणों का, क्षीण बुद्धि (Feeble-minded) इससे अधिक ।

१९०८ का बिने-साइमन मापदण्ड—

इसमें मानसिक आयु की विधि का उपयोग हुआ । ३ से लेकर १३ वर्ष तक आयु के अनुसार परीक्षणों का वर्गीकरण किया गया, पर प्रत्येक आयु में परीक्षणों की संख्या समान नहीं है ।

उदाहरण के लिए पाँच वर्ष की अवस्था में निम्न प्रश्न हैं :—

१. दो वजनों की तुलना ।
२. वर्ग का अनुकरण ।
३. दो त्रिकोण मिलाकर एक चतुर्भुज बनाना ।
४. चार सिक्के गिनना ।

ग्यारह वर्ष की अवस्था के लिए निम्न प्रश्न हैं :—

१. वाक्यों में असंगति का पता लगाना ।
२. तीन शब्दों का वाक्य बनाना ।

३. तीन मिनिट में ६० शब्द बोलना ।
४. अमूर्त्त शब्दों का अर्थ बताना ।
५. अक्रमिक शब्दों को मिलाकर अर्थपूर्ण वाक्य बनाना ।

परीक्षक कठिनाई के बढ़ते क्रम में परीक्षण प्रयुक्त करता है। वह उस अवस्था से प्रारम्भ करता है जब परीक्षार्थी सब प्रश्नों के उत्तर दे दे और तब तक प्रश्न पूछता है जब वह किसी भी प्रश्न का उत्तर न दे। जिस आयु के सब प्रश्नों का वह उत्तर दे दे, उतने पूरे वर्ष एवं उसके आगे प्रत्येक ५ प्रश्नों का सही उत्तर के लिए १ वर्ष, इस प्रकार मानसिक आयु की गणना की जाती है।

१९११ का बिने-साइमन मापदण्ड—

जब १९०८ का बिने-साइमन मापदण्ड बालकों पर व्यापक रूप से प्रयुक्त हुआ, और इसके परिणामों के विवरण प्रकाशित हुए, तो इसकी अनेक त्रुटियाँ प्रकाश में आईं। अनेक परीक्षण ठीक क्रम में नहीं थे एवं कुछ परीक्षण अत्यधिक सरल थे और कुछ अत्यधिक कठिन। कम अवस्था के परीक्षण बहुत सरल थे। अतः मानसिक आयु सामान्य से अधिक आती थी। ऊँची अवस्था के लिए प्रश्न आवश्यकता से अधिक कठिन थे। अतः मानसिक आयु सामान्य से कम आती थी। मानसिक आयु की गणना करने की विधि भी उचित नहीं थी। इन त्रुटियों को दूर करने के लिए १९११ में मापदण्ड का परिवर्द्धन हुआ। परिवर्द्धित संस्करण में प्रत्येक अवस्था के लिए समान संख्या में परीक्षणों की व्यवस्था की गई, सिवाय चार वर्ष की अवस्था को छोड़कर। अतः मानसिक आयु की गणना करना अब सरल हो गया। परीक्षणों का क्रम भी बदल दिया गया। ११ वर्ष के परीक्षणों को १२ वर्ष की आयु के लिए रखा गया एवं १२ वर्ष की आयु के परीक्षणों को १५ वर्ष की आयु के लिए। 'पहले आधार मानसिक आयु' (Basal mental age) उस आयु को मानते थे जब परीक्षार्थी सब प्रश्नों का उत्तर दे दे। अब उस आयु को माना जाने लगा, जब वह एक को छोड़ कर सब प्रश्नों का उत्तर दे सके।

उदाहरण के लिए इस मानदण्ड में तीन वर्ष की अवस्था के लिए निम्न प्रश्न हैं :—

१. नाक, आँख और मुँह की ओर संकेत करना।
२. दो अंक दुहराना।
३. चित्र में वस्तुएँ बताना।
४. परिवार का नाम बताना।
५. छै शब्दों का वाक्य दुहराना।

पंद्रह वर्ष की आयु के लिए निम्न प्रश्न हैं :—

१. सात अंकों का दुहराना।
२. दिए हुए शब्द से मिलती तीन लय बताना।
३. छब्बीस शब्दांशों का वाक्य दुहराना।
४. चित्र की व्याख्या करना।
५. दिए हुए तथ्यों की व्याख्या करना।

स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण, १९१६—

इस परीक्षण का प्रमापीकरण १,००० बालकों पर किया गया जिनमें से ९०५ पाँच एवं चौदह वर्ष की अवस्था के मध्य में थे। इसमें कुल ९० परीक्षण हैं, अर्थात् १९११ के बिने-साइमन स्केल से ३६ अधिक। तीन से लेकर दस वर्ष की अवस्था तक प्रत्येक अवस्था के लिए ६ परीक्षण हैं; १२ वर्ष की अवस्था के लिए ८; चौदह वर्ष के लिए ६; औसत प्रौढ़(Average Adult) के लिए ६; और 'श्रेष्ठ प्रौढ़' (Superior Adult) के लिए भी ६। सोलह वैकल्पिक परीक्षण (Alternate Tests) हैं। इन्हें विभिन्न अवस्था में वितरित किया गया है। कुछ अवस्थाओं के परीक्षणों की रूपरेखा निम्नलिखित है :—

तीन वर्ष :

१. शरीर के भागों की ओर संकेत करना।
२. परिचित वस्तुओं के नाम बताना।
३. चित्र में वस्तुओं की व्याख्या।
४. लिंग बताना।
५. अपना नाम बताना।
६. छः या सात शब्दांश दुहराना।

सात वर्ष :

१. अँगुलियाँ दिखाना।
२. चित्रों का वर्णन करना।
३. पाँच अंक दुहराना।
४. टाई की गाँठ बाँधना।
५. अन्तर बताना।
६. हीरे का अनुकरण करना।

सामान्य प्रौढ़ :

१. शब्द-भण्डार, ६५ शब्द।
२. कथाओं की व्याख्या।

३. अमूर्त शब्दों में अन्तर बताना।
४. आवरण-युक्त संदूक में कुछ समस्याएँ।
५. ६ अङ्कों को उलटा दुहराना।
६. गुप्त-लेखन।

श्रेष्ठ प्रौढ़ :

१. शब्द-भण्डार, ७५ शब्द।
२. बिने का कागज काटने का परीक्षण।
३. आठ अङ्क दुहराना।
४. सुने हुए गद्यांश में विचार बताना।
५. सात अङ्कों को उलटा दुहराना।
६. मौलिकता परीक्षण।

तीन वर्ष की अवस्था से लेकर दस वर्ष तक प्रत्येक परीक्षण के लिए २ माह मानसिक आयु दी जाती है; १२ वर्ष की अवस्था में ८ में से प्रत्येक परीक्षण के लिए ३ माह; १४ वर्ष की अवस्था के ६ परीक्षणों में प्रत्येक के लिए ४ माह; सामान्य प्रौढ़ के लिए ६ परीक्षणों में प्रत्येक के लिए ५ माह; एवं श्रेष्ठ प्रौढ़ के लिए ६ परीक्षणों में प्रत्येक के लिए ६ माह।

टरमैन ने १९१६ में निर्मित अपने इस परीक्षण के प्रशासन से जो निष्कर्ष प्राप्त किये, उनका विस्तृत विश्लेषण किया है। इसके आधार पर अनेक महत्वपूर्ण तथ्य प्रकाश में आए हैं। इनमें से कुछ निम्न प्रकार है :—

बुद्धि-वितरण—क्षीण बुद्धि एवं सामान्य बुद्धि में कोई स्पष्ट रेखा नहीं खींची जा सकती। मानसिक रूप से कोई बालक बुद्धि-प्रसार के किसी निश्चित वर्ग में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता। तथापि ५ से लेकर १४ वर्ष के बालकों का सामान्य समग्र (Population) में प्रतिशत वर्गीकरण इस प्रकार है :—

बुद्धि-लब्धि	प्रतिशत जनसंख्या
५६-६५	.३३
६६-७५	२.३
७६-८५	४.६
८६-९५	२०.१
९६-१०५	३३.१
१०६-११५	२३.१
११६-१२५	९.०
१२६-१३५	२.३
१३६-१४५	०.५५

लिंग-भेद—टरमैन के परिणामों से बालक एवं बालिकाओं की बुद्धि में सामान्य अन्तर नहीं आता। स्त्रियाँ यदि समाज में प्रमुख स्थान नहीं ले पातीं, तो इसका कारण अवसर का समान न होना है। जब लड़कों और लड़कियों की बुद्धि-लब्धि का उसने अलग से विश्लेषण किया तो ज्ञात हुआ कि तेरह वर्ष की अवस्था तक लड़कियाँ लड़कों से कुछ श्रेष्ठ होती हैं। पर यह अन्तर केवल २-३ बिन्दु है। अतः इसकी उपेक्षा की जा सकती है। कुछ परीक्षणों में लड़के अवश्य ही लड़कियों की अपेक्षा श्रेष्ठ थे, जैसे गणितीय तर्क में एवं समानताओं का पता लगाने में। लड़कियाँ स्मृति, सौन्दर्यात्मक तुलना आदि में श्रेष्ठतर थीं।

समाज-स्तर एवं बुद्धि-लब्धि—कुल १००० बालकों में से ४६२ का उनके सामाजिक स्तर के अनुसार ५ वर्गों—अति श्रेष्ठ, श्रेष्ठ, सामान्य, निम्न, अति निम्न—में वर्गीकरण किया गया। ज्ञात हुआ कि श्रेष्ठ बालकों की औसत बुद्धि-लब्धि सामान्य बालकों की बुद्धि-लब्धि से ७ बिन्दु अधिक थी, एवं निम्न की ७ बिन्दु कम। टरमैन के अनुसार इसका कारण जन्मजात भिन्नता है।

स्कूल की प्रगति एवं बुद्धि-लब्धि—५०४ बालकों के स्कूल-कार्य का क्रमांकन अध्यापकों द्वारा ५ वर्गों में किया गया—अतिश्रेष्ठ, श्रेष्ठ, सामान्य, निम्न, अतिनिम्न। तत्पश्चात् प्रत्येक वर्ग में बुद्धि-लब्धि के साथ स्कूल-कार्य की तुलना की गई। पता चला कि बुद्धि-लब्धि एवं स्कूल के कार्य की प्रगति में निश्चित सम्बन्ध है। केवल १० प्रतिशत बालकों के साथ यह बात घटित नहीं हुई। इसका कारण यह हो सकता है कि अध्यापकों ने बालकों के बारे में ठीक से निर्णय न किया हो।

स्टेनफोर्ड-बिने-परीक्षण की वैधता—

इस परीक्षण से मापन करने पर बालक की बुद्धि-लब्धि प्रायः स्थिर रहती है। यह इस बात का प्रमाण है कि परीक्षण वैध है। श्रेष्ठ बुद्धि के बालक अवस्था के बढ़ने पर कम बुद्धि-लब्धि प्राप्त नहीं करते। उनकी बौद्धिक क्षमता में ह्रास नहीं होता। वैधता ज्ञात करने के लिए बालकों को बुद्धि-लब्धि के अनुसार तीन वर्गों में बाँटा गया : (१) ६० से कम, (२) ६०-१०६ के बीच, (३) ११० से ऊपर। यह ज्ञात किया गया कि परीक्षण इनमें विभेद करने में समर्थ है या नहीं।

भारतवर्ष में बुद्धि-परीक्षण
(Intelligence Tests in India)

विदेशी परीक्षणों के आधार पर एवं कुछ मौलिक रूप से भी बुद्धि-परीक्षणों का भारतवर्ष में विकास हुआ है। इस सम्बन्ध में मुख्य तथ्य निम्न-लिखित हैं :—

१९२२. डॉक्टर सी० हरबार्ट राइस (Dr. C. Herbert Rice) ने लॉहौर में बिने-परीक्षण का भारतीय प्रमापीकरण किया। पर यह बिने से काफी भिन्न था। यह दो भाषाओं में था—उर्दू एवं पंजाबी। इसका नाम "हिन्दुस्तानी बिने निष्पादन बिन्दु मापदण्ड" (Hindustani Binet Performance Point Scale) रखा गया। इसके न्यादर्श में पंजाब के ५ से लेकर १६ वर्ष तक की अवस्था के १०७० लड़के थे।

१९२७. डा० जे० मनरी (Dr. J. Menry) ने उर्दू, अंग्रेजी एवं हिन्दी में वाचिक समूह परीक्षण बनाए। इनमें कुल १०० प्रश्न-पद हैं। इसका नाम "प्रारम्भिक वर्गीकरण परीक्षण" (Preliminary Classification Test) रखा गया।

१९३३. पंडित लज्जाशंकर झा (Pt. L. S. Jha) ने रिचार्डसन के १० वर्ष से लेकर १८ वर्ष तक के बालकों के लिए रिचार्डसन के "सरल मानसिक परीक्षण" (Simple Mental Test) का भारतीय प्रमापीकरण किया।

ऐमिल डब्ल्यू मैन्ज़िल (Emil W. Menzel) ने "मनुष्याकृति मुद्रण परीक्षण" (Draw a Man Test) का भारतीय प्रमापीकरण किया।

१९३९. डा० कामथ (Dr. V. V. Kamat) ने बम्बई में बिने-परीक्षण का कर्नाटक परिवर्द्धन प्रस्तुत किया।

१९४२. डा० टी० सी० विकारी (Dr. T. C. Vicary) ने ८ वर्ष से लेकर १५ वर्ष तक के बालकों के लिए "यूनियन ईसाई प्रशिक्षण विद्यालय अशाब्दिक समूह परीक्षण" (Union Christian Training College Non-Verbal Group Test) का निर्माण किया।

१९४२. डा० सोहनलाल (Dr. Sohan Lal) ने ११ वर्ष से अधिक आयु के स्कूल में पढ़ने वाले बालकों के लिए हिन्दी एवं उर्दू में सामूहिक बुद्धि-परीक्षण बनाया।

इसके अतिरिक्ति अन्य अनेक बुद्धि-परीक्षण बने हैं। डा० जलोटा ने हिन्दी, अंग्रेजी एवं उर्दू में सामूहिक बुद्धि-परीक्षण बनाए हैं। बिहार में डा० एस० एम० मोहसिन, तथा अन्य स्थानों पर श्री आई० आर० कुमारिपा, टी० पी० भौमिक, एच० पी० मैत्री, आदि विद्वानों ने इस दिशा में प्रयास किया है।

भारतवर्ष में बुद्धि परीक्षणों की प्रगति शिथिल रही, इसके अनेक कारण हैं। प्रथम तो भारत में अशिक्षितों की संख्या शिक्षितों से अधिक है, एवं ग्रामीण जनसंख्या शहरी से अधिक। ग्रामीण एवं नगरीय सांस्कृतिक परम्पराएँ भी काफी भिन्न हैं, क्योंकि रेडियो, टेलीग्राफ, आदि गाँवों में उस सीमा तक प्रवेश नहीं कर पाये हैं, जिस सीमा तक नगरों में। अतः प्रमापीकरण में असुविधा होती है। जनसंख्या विस्तृत होने से अनुसंधान-कार्य का संगठन करने में भी कठिनाई होती है।

: १४ :

बुद्धि-सम्बन्धी कुछ तथ्य

बुद्धि-परीक्षणों के निष्कर्ष

बुद्धि एवं कोचिंग या प्रशिक्षण—

यह माना जाता है कि बुद्धि जन्मजात होती है। पर बुद्धि-परीक्षणों के प्रशासनों से ज्ञात हुआ है कि शिक्षा एवं प्रशिक्षण का बुद्धि-फलांकों पर प्रभाव पड़ता है। फ्रेन्क एवं फ्रीमैन, एच० एच० न्यूमैन तथा होल्जिगर ने इस बात का प्रमाण दिया है कि यदि सजातीय यमजों का अलग-अलग पालन करने पर उनकी बुद्धि-लब्धि असमान आती है। जिन यमजों का शिक्षा-स्तर ऊँचा होता है, उनकी बुद्धि-लब्धि भी अधिक आती है। आयोवा (Iowa) विश्वविद्यालय में किए गए अध्ययनों से ज्ञात होता है कि अच्छी शिक्षा देने पर बुद्धि-लब्धि १० बिन्दु तक बढ़ जाती है। सैन्य परीक्षणों से यह ज्ञात हुआ है कि जिन सिपाहियों को अच्छी शिक्षा मिली थी, बुद्धि-परीक्षणों में उन्होंने अच्छे अङ्क प्राप्त किए।

विशिष्ट शैक्षिक प्रविधियों का बुद्धि-परीक्षणों के अंकों पर प्रभाव पड़ता है। कैंफर्ट के एक अध्ययन में १५ वर्ष से लेकर १८ वर्ष तक के लड़कों को इस

प्रकार प्रशिक्षित किया गया कि उनमें मौलिकता एवं योजनाशीलता के गुणों का विकास हो। प्रशिक्षण से पूर्व एवं बाद में स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण प्रयुक्त किया गया तो ज्ञात हुआ कि पहले बु० ल० ६६.३ थी, पर बाद में ७६.४। श्मिट् (Schmidt) के एक अध्ययन में १२-१४ वर्ष की आयु की बालिकाओं पर तीन वर्ष की अवधि का एक शैक्षणिक कार्यक्रम प्रयुक्त किया गया। कार्यक्रम से पूर्व इनकी बुद्धि-लब्धि ५२·१ थी; पर कार्यक्रम से उनकी बु० ल० में ४०·७ बिन्दु की वृद्धि हुई।

कुछ अन्य अध्ययनों में यह ज्ञात किया गया है कि नर्सरी स्कूल में पढ़ने के बाद शिशुओं की बुद्धि-लब्धि बढ़ जाती है। वैलमैन[1] ने अपने एक अध्ययन में १५३७ शिशुओं पर नर्सरी स्कूल में उपस्थिति के पहले और बाद बिने-परीक्षणों जैसे क्हूलमैन-बिने एवं स्टेनफोर्ड-बिने परीक्षणों को प्रयुक्त किया। बुद्धि-लब्धि उपस्थिति के बाद ५·४ बिन्दु अधिक थी। कुछ अन्य अध्ययनों से भी इसी प्रकार के निष्कर्ष निकले हैं।

बुद्धि एवं आयु—

बुद्धि-परीक्षणों के निष्कर्षों से यह निश्चित रूप से सिद्ध हुआ है कि बुद्धि का विकास होता है। पर यह विकास १६ वर्ष की अवस्था के लगभग रुक जाता है। वास्तविक आयु, जहाँ यह विकास रुक जाता है, विवादास्पद है। बिने एवं टरमैन के अनुसार यह अवस्था १५ वर्ष है, एवं ओटिस तथा मनरो के अनुसार १८ वर्ष। पर अधिकांश मनोवैज्ञानिकों के अनुसार यह १६ वर्ष है। थॉमसन[2] ने इस बात में सन्देह व्यक्त किया है। उसके अनुसार एक निश्चित अवस्था के बाद परीक्षार्थियों के अंकों में बढ़ोतरी इसलिए नहीं होती कि स्वयं परीक्षण उस आयु के अनुरूप नहीं होते। यदि ऐसे परीक्षण बन सकें जोकि श्रेष्ठ बुद्धि वाले प्रौढ़ों को अमूर्त चिन्तन करने की क्षमता प्रदर्शित करने का अवसर प्रदान कर सकें तो निस्संदेह ये प्रौढ़ अधिक अंक प्राप्त कर सकेंगे। जो कुछ भी हो, इतना निश्चित है कि बुद्धि का विकास प्रारम्भिक वर्षों में अधिक तीव्र गति से होता है। पर बुद्धि-लब्धि स्थिर रहती है।

यह बात विवादास्पद है कि अधिकतम बुद्धि-विकास हो चुकने पर क्या

1. Wellman. : "I/Q. changes of preschool and non-preschool groups during the preschool years." *A Summary of the Literature.*—Journal of Psychology., 1945, 20, pp. 347-368.
2. Thomson : *Instinct, Intelligence & Character*, p. 222.

इसका पतन होने लगता है। फॉस्टर एवं टेलर[1] ने १० से लेकर ८४ वर्ष की आयु के ७३७ व्यक्तियों पर परीक्षण प्रयुक्त करके यह निष्कर्ष निकाला कि अधिकतम बुद्धि का विकास हो चुकने पर बुद्धि स्थिर रहती है। केवल वृद्धावस्था में यह कुछ गिरती है। यह पतन स्मरण-शक्ति में होता है, न कि सापेक्षिक चिन्तन में।

बुद्धि एवं शरीर क्षमता—

शरीर के विभिन्न अंगों के ठीक से कार्य न करने या रुग्ण होने का मानसिक क्षमता पर प्रभाव पड़ता है, यह अनेक अध्ययनों से सिद्ध है। लकुए में स्नायुतन्त्र का क्रमशः ह्रास हो जाने के कारण रोगी का मानसिक जीवन नष्ट हो जाता है। ग्रन्थियों के सुचारु रूप से कार्य न करने से मानसिक क्षमता पर प्रभाव पड़ता है। उदाहरण के लिए थाइराइड ग्रन्थि की गड़बड़ी से बालक मूढ़ हो जाता है। डॉसन ने ग्लास्गो के रोगी बालकों के लिए बने रॉयल अस्पताल में १०७७ बालकों पर बुद्धि-परीक्षणों का प्रयोग किया। उसके अनुसार सामान्यतया केवल उन्हीं परिस्थितियों में बुद्धि औसत से विशेष रूप से कम होती है जहाँ बालक ग्रन्थि-रोगों से ग्रसित हो।

उपदंश रोग (Syphilis) का प्रभाव जन्म से पहले भी सम्भव है, क्योंकि माँ के रोग से सन्तान ग्रसित हो सकती है। इस रोग के प्रभाव से बालक में मन्द-बुद्धिता आती है। जन्म के समय बालक सामान्य लगता है, पर बाद में इसका प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। इसी प्रकार मस्तिष्क आघात (Brain Injury) के कारण मानसिक क्षमता का ह्रास होता है। अधिक निद्रा रोग (Sleeping Sickness) में भावात्मक नियन्त्रण की शक्ति भी कम हो जाती है एवं मानसिक क्षमता भी कम हो जाती है।

बुद्धि एवं वंशानुक्रम—

बुद्धि-परीक्षणों के परिणाम बताते हैं कि बुद्धि वंश-परम्परा पर निर्भर है। थार्नडायक, फ्री-मैन, हौल्जिंगर एवं अन्य व्यक्तियों ने विभिन्न सीमा तक रक्त-सम्बन्ध वाले व्यक्तियों की बुद्धि ज्ञात की है। विङ्गफील्ड द्वारा प्राप्त निष्कर्षों की एक सारिणी निम्नलिखित है :—

1. Foster and Taylor · Journal of Applied Psychology, Vol-IV, pp. 39-58.
2. Dawson : *Intelligence and Disease.*, p. 51.

समूह	सह-सम्बन्ध गुणांक
समरूप यमज	·९०
सम-लिंग यमज	·८२
विषम-लिंग यमज	·५९
सहोदर भाई-बहिन	·५०
चचेरे-ममेरे भाई-बहिन	·०२७
असम्बन्धित व्यक्ति	·०

इस सारिणी से स्पष्ट होता है कि असम्बन्धित व्यक्तियों की बुद्धि में कोई सम्बन्ध नहीं होता। जितना ही रक्त-सम्बन्ध अधिक है, उतना ही बुद्धि में सहसम्बन्ध गुणांक भी। समरूप यमजों की बु० ल० में सहसम्बन्ध गुणांक ·९ है। कुछ लोग ऐसे तर्क प्रस्तुत करते हैं कि समरूप यमजों में अधिक सहसम्बन्ध आने का कारण वातावरण का समान होना है, न कि वंश-परम्परा का। पर यह बात निराधार है, क्योंकि उन यमजों पर भी परीक्षण प्रयुक्त करके देखे गए हैं जिनके वातावरण समान नहीं हैं। तथापि उनकी बुद्धि में सहसम्बन्ध अधिक आता है। इसके अतिरिक्त ७ वर्ष की आयु में बुद्धि-लब्धि में उतनी समानता होती है जितनी १४ वर्ष की अवस्था में।

बालकों एवं माता-पिता की बुद्धि में भी असम्बन्धित व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक सहसम्बन्ध है। शिकागो विश्वविद्यालय में फ्रीमैन एवं उसके साथियों ने यह ज्ञात किया है कि अपने माता-पिता के अतिरिक्त किसी अन्य परिवार में परिपालित बालकों की बुद्धि पर क्या प्रभाव पड़ता है। चार वर्ष तक अन्य श्रेष्ठतर परिवार में पालन-पोषण होने पर ७·५ बिन्दु तक बु० ल० बढ़ती है। कम अवस्था के बालकों को नए परिवारों में रख देने से १० बिन्दु तक बढ़ोतरी होती है।

विभिन्न पुश्तों में बुद्धि में कितनी समानता है, यह ज्ञात करने के लिए भी अनेक अध्ययन किए गए हैं। इस हेतु माता-पिता एवं उनकी सन्तान में कितना सादृश्य है, इसके लिए अनेक तथ्य एकत्र करके फलांकों में सहसम्बन्ध ज्ञात किया गया है। यह पता चला है कि मेधावी माता-पिता की सन्तान भी मेधावी होती है, पर यह बात केवल सामान्य रूप से ही सही है। मेधावी माता-पिता की आर्थिक स्थिति एवं उनके परिवार का वातावरण श्रेष्ठतर होता है। इस कारण भी इनकी सन्तान की बुद्धि का श्रेष्ठ होना सम्भव है। पर किसी मेधावी माता-पिता की सन्तान मेधावी होगी ही, इस सम्बन्ध में पूर्वकथन नहीं किया जा सकता।

वंशानुक्रम के प्रभाव को सिद्ध करने के लिए अनेक अन्य अध्ययन किए गए हैं। एवं परीक्षण प्रयुक्त करने की अपेक्षा अन्य विधियों का भी प्रयोग किया गया है।

व्यवसाय एवं बुद्धि-लब्धि—

अनेक अध्ययनों से यह ज्ञात हुआ है कि बुद्धि का व्यावसायिक चुनाव से घनिष्ठ सम्बन्ध है। आर्मी अल्फा परीक्षण से ज्ञात हुआ कि इन्जीनियर, वकील, डाक्टर, अध्यापकों एवं व्यापारिक संचालकों की बुद्धि-लब्धि काफी अधिक है। दूसरे नम्बर पर क्लर्क, फोटोग्राफर आदि आते हैं। और तत्पश्चात् प्रिन्टर्स, पुलिसमैन, दुकानदार एवं मजदूर। टरमैन एवं मैरिल ने भी सन् १९३७ के स्टैनफोर्ड-बिने परीक्षण के परिवर्द्धन में ३००० बालकों पर अध्ययन किया। उनके निष्कर्षों के आधार पर बुद्धि-लब्धि के अनुसार हम विभिन्न व्यवसायों को निम्न श्रेणियों में वर्गीकृत कर सकते हैं :—

पिता का व्यावसायिक स्तर	मध्यमान बु० ल०
१. व्यावसायिक	११६·२
२. अर्द्ध-व्यावसायिक	१११·६
३. क्लैरीकल, व्यापारी	१०७·५
४. अर्द्ध-प्रशिक्षित कर्मचारी	१०५·०
५. श्रमिक	९७·२

पर इसका यह अर्थ नहीं है कि विभिन्न व्यवसायों के बीच बुद्धि-लब्धि के आधार पर कोई सीमा रेखा खींचना सम्भव है। उच्च व्यावसायिक स्तर के अनेक माता-पिता के बालकों की बुद्धि-लब्धि अत्यन्त निम्न होना सम्भव है।

व्यवसाय एवं बुद्धि-लब्धि के सम्बन्ध में अनेक अन्य अध्ययन भी हुए हैं। विद्यालय में भर्ती होने से पूर्व बालकों पर परीक्षण करके ज्ञात किया गया है कि उनके माता-पिता के व्यावसाय एवं बुद्धि-लब्धि में घनिष्ठ सम्बन्ध है। गुडएनफ[1] के एक अध्ययन में १८ एवं ५४ माह के बीच की आयु के ३८० बालकों पर क्हूलमैन-बिने परीक्षण प्रयुक्त हुआ। छः सप्ताह के अन्तर पर पुनर्परीक्षण किया गया। परीक्षण एवं पुनर्परीक्षण दोनों के निष्कर्ष इस प्रकार हैं :—

1. Goodenough, F. L : "The relation of the intelligence of pre-school children to the occupation of their fathers." —American Journal of Psychology, 1928, 40, pp. 284-294.

पिता का व्यवसाय	मध्यमान परीक्षण	टर्मन-बिने बु० ल० पुनर्परीक्षण
१. व्यावसायिक	११६	१२५
२. अर्द्ध-व्यावसायिक	११२	१२०
३. क्लैरीकल, स्किल्ड ट्रेड	१०८	११३
४. सैमी-स्किल्ड	१०५	१०८
५. कम स्किल्ड	१०४	१०७
६. अनस्किल्ड	९६	९६

लिंग-भेद एवं बुद्धि-लब्धि—

पुरुष एवं स्त्रियों में बौद्धिक उपार्जन के अन्तर को, उनकी बौद्धिक क्षमता में अन्तर है, यह सिद्ध करने के लिए प्रमाण दिया जाता है। पुरुष एवं स्त्रियों में अलग-अलग कितने प्रसिद्ध तथा महत्वपूर्ण व्यक्ति हैं, यह ज्ञात किया गया है। हैवलिक एलिस[1] ने ब्रिटिश प्रतिभा के एक अध्ययन में पता लगाया कि १०३० महान् व्यक्तियों में केवल ५५ स्त्रियाँ थीं। कैटिल की १००० महान् विभूतियों की सूची में केवल ३२ स्त्रियाँ थीं। इन स्त्रियों में भी अधिकांश अपने सौन्दर्य एवं अन्य किसी सुअवसर के कारण महत्वपूर्ण बनी थीं। कैटिल ने अपनी पुस्तक 'वैज्ञानिक विभूतियाँ'[2] में ९७८५ विभूतियों की सूची में केवल ७२५ स्त्रियों का उल्लेख किया है। पर केवल महान् व्यक्तियों की संख्या कम होने से ही यह नहीं कहा जा सकता कि स्त्रियों में पुरुषों की अपेक्षा कम बुद्धि होती है। स्त्रियों में महान् व्यक्तियों की संख्या अधिक न होने के कई कारण सम्भव हैं, जैसे वातावरण समान न होना, अवसर में भिन्नता, पारिवारिक परिस्थितियाँ एवं समाज की व्यवस्था में स्त्रियों से श्रेष्ठ कार्य करने की आशा न रखना। अतः स्त्री एवं पुरुषों की बु० ल० में अन्तर जानने के लिए स्वयं बुद्धि परीक्षणों को प्रयुक्त करके देखा गया है। एवं उनके परिणामों का विश्लेषण किया गया है।

बुद्धि-परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि बालिकाएँ शाब्दिक परीक्षणों में अधिक अंक प्राप्त करती हैं एवं बालक निष्पादन परीक्षणों में। आर्मी अल्फा परीक्षण में ५८१ पुरुषों एवं ६०७ स्त्रियों का न्यादर्श लिया और उनके फलांकों की तुलना की गई। स्त्रियों के फलांक पुरुषों से अधिक थे। किन्तु स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण

1. Ellis, H. : *A Study of British Genius*, Hurst and Blackett, London, 1904.
2. Cattell : *Men of Science.*, Science Press, New York, 1933.

के आधार पर जो अनेक सर्वे किए गए हैं, उनमें पुरुषों एवं स्त्रियों के फलांकों में बहुत कम अन्तर आता है। स्कॉटलैण्ड में किए गए एक सर्वे में १९१६ का स्टेनफोर्ड-बिने परीक्षण प्रयुक्त किया गया। लड़कों का मध्यमान बु० ल० अङ्क १००·५ था और लड़कियों का ९९.७।

प्रजातीय अन्तर एवं बुद्धि—

विभिन्न प्रजातियों के उपार्जन एवं उनकी बुद्धि के तुलनात्मक अध्ययन किए गए हैं। मनोवैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि विशिष्ट अवसर, बौद्धिक विकास एवं संवेगात्मक विकास की असमान असुविधाएँ, और जन्मजात गुणों में अन्तर होने के कारण प्रजातीय अन्तर पाये जाते हैं। प्रजातियों के तुलनात्मक अध्ययन के लिए विभिन्न निर्देशकों को कसौटी माना गया है, जैसे विज्ञान की प्रगति में योगदान, साहित्यिक उपलब्धि, सामाजिक एवं राजनीतिक संगठन की जटिलता एवं प्रजाति में उत्पन्न महान् व्यक्तियों की संख्या। अनेक मनोवैज्ञानिकों ने विभिन्न प्रजातियों की बुद्धि-लब्धि की प्रत्यक्ष तुलना की है।

ग्रामीण एवं नगरीय अन्तर और बुद्धि—

मैक्नीमर[1] ने १९३७ के स्टेनफोर्ड-बिने परीक्षण के प्रशासन के आधार पर बुद्धि में ग्रामीण-नगरीय अन्तर पर प्रकाश डाला है। उसके निष्कर्ष निम्न-लिखित हैं :—

स्थान	आयु (वर्षों में)		
	(२-५½)	(६-१४)	(१५-१८)
नगरीय (Urban)	१०६.३	१०५·८	१०७·९
नगर-प्रान्तीय (Suburban)	१०५.०	१०४.५	१०६.९
ग्रामीण (Rural)	१००·६	९५·४	९५.७

इन तथ्यों से ज्ञात होता है कि नगरीय एवं नगर-प्रान्तीय बालकों की बु० ल० में महत्वपूर्ण अन्तर नहीं है, पर नगरीय एवं ग्रामीण व्यक्तियों की मध्यमान बुद्धि-लब्धि में काफी अन्तर है।

---

1. McNemar, Q : *The Revision of the Stanford-Binet Scale.* Houghton Mifflin, Boston, 1942, p. 185.

मन्द एवं उत्कृष्ट बुद्धि बालकों में अन्तर—

मन्द बुद्धि बालक	उत्कृष्ट बुद्धि बालक
१—मन्द प्रतिक्रिया काल, धीमे सीखते हैं; इन्हें अधिक अभ्यास की आवश्यकता है।	१—शीघ्र प्रतिक्रिया काल; बिना अधिक दुहराए अत्यन्त शीघ्रता से सीखते हैं।
२—पुरानी विधि या तक्नीक से सीखते हैं; नयी विधि से हल निकालने में असमर्थ हैं।	२—तीव्र मौलिक शक्ति; दूसरों पर निर्भर नहीं रहते।
३—इनका ध्यान-विस्तार कम होता है। साहित्यिक विषय पर कम समय तक ही ध्यान केन्द्रित कर पाते हैं।	३—इनमें लगातार ध्यान लगाए रखने की ऐच्छिक शक्ति होती है; सापेक्षतया एक लम्बी अवधि तक ध्यान केन्द्रित कर सकते हैं।
४—मौलिकता की कमी; अमूर्त्त चिन्तन का अभाव; विचारों के स्थान पर वस्तुओं से कार्य करते हैं।	४—किसी कार्य को स्वयं प्रारम्भ करने की प्रवृत्ति; अमूर्त्त शब्दों एवं विचारों को समझाने की क्षमता।
५—क्षीण साहचर्य शक्ति; सामान्यीकरण भी ठीक से नहीं कर पाते।	५—तत्परता से शब्द-भण्डार बढ़ाते हैं; अधिक साहचर्य शक्ति; शीघ्रता से सामान्यीकरण करते हैं।
६—आत्म-आलोचन में क्षीण; अपनी स्वयं की भूलों का तत्परता से मूल्यांकन नहीं कर पाते।	६—आत्म-आलोचन एवं अन्तर्दर्शन की सापेक्षतया अच्छी सामर्थ्य।
७—ये विश्लेषण एवं तर्क-शक्ति में योग्य नहीं होते। किन्हीं तथ्यों को बिना समझे केवल रटने का प्रयास करते हैं।	७—विश्लेषण तत्परता से करते हैं। चिन्तन में तर्क से काम लेते हैं।
८—निरर्थक, व्यर्थ की एवं असंगत बातों का पता लगाने में असमर्थ रहते हैं।	८—निरर्थक एवं असंगत बातों को शीघ्रता से पहचान लेते हैं।
९—इनकी रुचियों का प्रसार-क्षेत्र अत्यन्त संकीर्ण होता है।	९—इनकी रुचियों का प्रसार-क्षेत्र विस्तृत होता है।
१०—भौतिक, मूर्त्त तथा यान्त्रिक वस्तुओं से प्रभावित होते हैं।	१०—इनमें योजना बनाने, चिन्तन करने और तत्परता से समस्या को हल करने की सामर्थ्य होती है।

बुद्धि का वितरण
(Distribution of Intelligence)

बुद्धि का वितरण किसी रसायन-शास्त्री के तत्त्वों या जीवशास्त्रज्ञ के जीवधारियों के वर्गीकरण की भाँति नहीं हो सकता। यह तो इन्द्रधनुष के रंगों की भाँति है, जिसमें एक रंग दूसरे रंग में मिल जाता है और दो रंगों के बीच कोई स्पष्ट विभेद-रेखा नहीं खींची जा सकती। इसी प्रकार बुद्धि का एक स्तर दूसरे स्तर में मिल जाता है। सीमावर्त्ती को मन्द बुद्धि से, सामान्य को श्रेष्ठ से पूर्ण रूप से विभेदित करना कठिन है।

प्रारम्भ में बुद्धि का वर्गीकरण बिल्कुल स्पष्ट रूप से नहीं किया जा सका। प्रारम्भिक वर्गीकरण जैसे—मूढ़ (Idiot), अल्पमति (Imbecile), क्षीणमति (Moron) आदि चिकित्सा एवं विधि क्षेत्र में प्रयुक्त शब्दों में व्यवहार की व्याख्या करने की ओर एक प्रयास था। तब से वर्गीकरण की दशा में काफी प्रगति हुई है। अब परिमाणात्मक मापन के आधार पर बुद्धि का वर्गीकरण किया जाता है। इसका आधार बुद्धि-लब्धि है। पर बुद्धि-लब्धि की सीमा रेखा मनोवैज्ञानिकों ने अलग-अलग मानी हैं।

टरमैन का वर्गीकरण—

टरमैन का वर्गीकरण इस प्रकार है :—

बुद्धि-लब्धि की सीमाएँ	वर्गीकरण
७० से कम	निश्चित क्षीण बुद्धिता (Definite Feeble-mindedness)
७०– ८०	सीमावर्त्ती हीनता (Border-line deficiency)
८०– ९०	मन्द बुद्धिता (Dullness)
९०–११०	सामान्य बुद्धि (Normal or Average Intelligence)
११०–१२०	श्रेष्ठ बुद्धि (Superior Intelligence)
१२०–१४०	अति श्रेष्ठ बुद्धि (Very Superior Intelligence)
१४० से ऊपर	प्रतिभाशाली (Genius)

टरमैन के वर्गीकरण, या इस प्रकार के अन्य वर्गीकरणों, की निम्न परिसीमाएँ हैं :—

१. बुद्धि-लब्धि की सीमा-रेखाएँ मनमाने तौर से निश्चित की जाती हैं। प्रत्येक मनोवैज्ञानिक ने अपना एक नया ही वर्गीकरण निर्धारित किया है।

२. निर्देशित वर्गान्तरों के चयन का कोई तर्कसंगत आधार प्रस्तुत नहीं किया जाता। हमें यह नहीं बताया जाता कि सीमावर्त्ती बुद्धि का निर्देश कराने के लिए ७० एवं ७९ के मध्य बु० ल० ली जाती है, न कि ७३ और ८२ के बीच; या श्रेष्ठ बुद्धि का निर्देश करने के लिए ११० एवं ११९ के बीच बु० ल० ली जाती है, न कि ११४ और १२३ के बीच।

३. प्रत्येक वर्गान्तर के अन्त में शून्य है। उदाहरण के लिए सीमावर्त्ती बुद्धि ७० पर प्रारम्भ होती है और ८० पर अन्त। किसी भी सांख्यिकीय विधि के आधार पर इतने स्पष्ट रूप से शून्य सहित संख्या पर समाप्त होने वाली सीमा-रेखाओं का प्राप्त करना सम्भव नहीं जान पड़ता।

४. अन्य परीक्षणों में प्राप्त बुद्धि-लब्धियों का वर्गीकरण करने में भी स्टेनफोर्ड-बिने परीक्षण के आधार पर प्राप्त टरमैन के इसी वर्गीकरण को प्रयुक्त करते हैं। पर वास्तव में विभिन्न परीक्षणों में प्राप्त बुद्धि-लब्धियों में कोई अनुरूपता नहीं होती।

वैश्लर का वर्गीकरण—

टरमैन एवं अन्य मनोवैज्ञानिकों के 'बुद्धि के वर्गीकरण' की इन परिसीमाओं को ध्यान में रखते हुए **वैश्लर** ने एक अन्य आधार पर वर्गीकरण प्रस्तुत किया है। बुद्धि का प्रत्येक स्तर मध्यमान से एक निश्चित दूरी पर है। इन दूरियों को सम्भावित त्रुटि (Probable Error) के गुणकों के रूप में प्रगट किया गया है। वर्गीकरण इस प्रकार है—

वर्गीकरण	सम्भावित त्रुटि सीमा	बु० ल० सीमा	प्रतिशत
हीन (Defective)	−३P.E एवं कम	६५ एवं कम	२.२
सीमावर्त्ती (Barder-line)	−२P.E. से −३P.E.	६६—७९	६.७
मन्दबुद्धि-सामान्य (Dull-Normal)	−१P.E. से −२P.E.	८०—९०	१६.१
औसत (Average)	−१P.E. से +१P.E.	९१—११०	५०.०
तीव्रबुद्धि-सामान्य (Bright-Normal)	+१P.E. से +२P.E.	१११—११९	१६.१
श्रेष्ठ (Superior)	+२P.E. से +३P.E.	१२०—१२७	६.७
अति श्रेष्ठ (Very Superior)	+३P.E. एवं ऊपर	१२८ एवं ऊपर	२.२

इस प्रकार के वितरण के अनेक लाभ हैं—

१. इस प्रकार का वर्गीकरण एक समान है। इसमें मध्य के वर्गान्तर के ऊपर भी उतने ही वर्गान्तर हैं, जितने नीचे।
२. इस वर्गीकरण में प्रयुक्त सीमाओं को अनुभव के आधार पर परिवर्त्तित किया जा सकता है। अन्य वर्गीकरणों के लिए यह एक आदर्श है।
३. यह वर्गीकरण सांख्यिकीय विधियों पर आधारित होने के कारण अधिक वैज्ञानिक है।

मानसिक आयु एवं बुद्धि-लब्धि

मानसिक आयु एवं बुद्धि-लब्धि का अर्थ—

बुद्धि-परीक्षणों के परिणामों को व्यक्त करने की सबसे अधिक प्रचलित इकाइयाँ मानसिक आयु (Mental Age) तथा बुद्धि-लब्धि (I. Q.) हैं। मानसिक आयु मानसिक परिपक्वता का मापक है, एवं इस बात की ओर संकेत करता है कि किसी अवसर पर बालक विकास के किस स्तर तक पहुँच गया है। मानसिक परिपक्वता या विकास के स्तर की मात्रा इस आधार पर व्यक्त की जाती है कि समान वर्षायु के औसत बालक का आपेक्षिक विकास क्या है। उदाहरण के लिए यदि किसी बुद्धि-परीक्षण में १२ वर्षायु के बालक का मानसिक आयु १० वर्ष ८ महीने है एवं किसी अन्य ९ वर्षायु के बालक की मानसिक आयु भी १० वर्ष ८ महीने है, तो दूसरा बालक अधिक विकसित है; अर्थात् मानसिक रूप से वह अधिक परिपक्व है। स्पष्ट है कि मानसिक आयु (मा० आ०) परिपक्वता या विकास के स्तर का मापक है, न कि गति का। गति तो बुद्धि-लब्धि से मापित होती है, जिसे ज्ञात करने के लिए मानसिक आयु में वर्षायु का भाग देकर सौ से गुणा करते हैं।

$$\text{बुद्धि-लब्धि} = \frac{\text{मानसिक आयु}}{\text{वर्षायु}} \times १०० \text{ या } \frac{M. A.}{C. A.} \times १००$$

यदि किसी बालक की वर्षायु १० वर्ष हो एवं मानसिक आयु १२ वर्ष ६ महीने हो तो

$$\text{बुद्धि-लब्धि} = \frac{\text{मानसिक आयु}}{\text{वर्षायु}} \times १०० = \frac{१५०}{१२०} \times १००$$

$$= \frac{५}{४} \times १०० = १२५$$

इसी प्रकार यदि किसी बालक की मानसिक आयु ११ वर्ष ८ माह हो, एवं वर्षायु ९ वर्ष २ महीने, तो

$$\text{बुद्धि-लब्धि} = \frac{\text{१४०}}{\text{११०}} \times \text{१००} = \text{१२७·२७}$$

ऊपर के उदाहरणों में बुद्धि-लब्धि निकालने से पूर्व हमने वर्ष एवं माह को महीनों में परिवर्तित कर लिया था। जैसे ११ वर्ष ८ माह = १४० माह; ९ वर्ष २ माह = ११० माह आदि।

इस प्रकार यह एक प्रतिशत मान है जो मानसिक आयु में वर्षायु का भाग करके एवं सौ का गुणा करके आता है। पर गणना में एक निश्चित अवस्था के बाद परीक्षार्थी की वास्तविक वर्षायु नहीं ली जाती। भाजक के रूप में अधिक-तम वर्षायु उतनी ही ली जाती है, जितनी कि परीक्षण-निर्माता की दृष्टि से अधिकतम मानसिक परिपक्वता हो। टर्मैन ने १९१६ में प्राप्य सूचना के आधार पर यह सुझाव दिया कि अधिकतम वर्षायु १५ मानी जाय। इसके आधार पर उसने गणना का नियम बनाया कि १३ वर्ष की आयु तक सम्पूर्ण वर्षायु ली जाए; एवं १६ या १६ से अधिक के लिए केवल १५ ही। १३ एवं १६ वर्ष के बीच की अवस्था के लिए १३ वर्ष एवं इससे अतिरिक्त अवस्था का $\frac{२}{३}$ लिया जाए। अर्थात्—

$$\text{१३ वर्ष तक बुद्धि-लब्धि} = \frac{M.\ A.}{C.\ A.} \times \text{१००}$$

$$\text{१३-१६ वर्ष की अवस्था के बीच बु० ल०} = \frac{M.\ A.}{\text{१३} + \frac{२}{३}(CA - \text{१३})} \times \text{१००}$$

$$\text{१६ या इससे अधिक अवस्था के लिए बु० ल०} = \frac{M.\ A.}{\text{१५}} \times \text{१००}$$

उपर्लिखित विवेचन से स्पष्ट है कि मानसिक आयु एवं बुद्धि-लब्धि अलग-अलग प्रत्यय हैं। बु० ल० परिपक्वता की गति का मापक है, जबकि मा० आ० परिपक्वता के स्तर का।

'मानसिक आयु' का मूल्यांकन—

मानसिक आयु केवल एक फलांक है। मौलिक रूप से अन्य प्रकार के फलांकों से इसमें कोई अन्तर नहीं है। मानसिक आयु को बिन्दु-अंकों में परि-वर्तित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए यदि किसी परीक्षण में प्रत्येक

पद का सही उत्तर दे देने पर २ माह मासिक आयु है और बालक कुल ४१ पदों का सही उत्तर दे देता है तो उसकी मा० आ० ८२ माह, या प्रत्येक पद का एक अंक होने पर उसके प्राप्तांक ४१ हुए।

एक निश्चित अवस्था के पश्चात् मानसिक आयु में वृद्धि नहीं होती। अतः आयु की वृद्धि के साथ मा० आ० बढ़े, यह आवश्यक नहीं है। इससे सम्भावित फलांकों का प्रसार अत्यन्त सीमित हो जाता है। विभिन्न परीक्षणों में सीमा भी भिन्न है, जैसे मैनिकिन परीक्षण में ८ वर्ष, मान परीक्षण में १२ आदि। विशेषकर १५ वर्ष की अवधि के बाद लगभग सभी परीक्षणों में मध्यमान फलांक आयु की वृद्धि के साथ नहीं बढ़ते। इसका यह अर्थ लगाया जाता है कि इस अवस्था में आकर बौद्धिक योग्यता का विकास रुक जाता है। यह सत्य हो सकता है। पर इससे 'मानसिक आयु' के सिद्धान्त की अनेक त्रुटियों की ओर प्रकाश पड़ता है। यदि किसी प्रौढ़ व्यक्ति की मानसिक आयु १८ वर्ष है तो इसका यह अर्थ कदापि नहीं हो सकता कि सकता कि उसमें १८ वर्ष के व्यक्ति की सी मानसिक क्षमता है। यद्यपि एक बालक के बारे में यह कहा जा सकता है कि यदि उसकी मानसिक आयु ८ या ९ वर्ष है तो उसमें इस अवस्था के सामान्य बालक की सी मानसिक क्षमता है। अतः यह कहना कि किसी प्रौढ़ की मा० आ० १८ बर्ष है, अर्थहीन है।

मानसिक आयु के आधार पर बुद्धि को परिभाषित करना तर्कसंगत नहीं है, विशेषकर उस स्तर पर जहाँ आकर आयु की वृद्धि के साथ बुद्धि-फलांकों की वृद्धि नहीं होती। ऐसा निश्चित रूप से किस अवस्था में होता है, नहीं कहा जा सकता। वैश्लर के अनुसार यह अवस्था बारह वर्ष है।

'बुद्धि-लब्धि' का मूल्यांकन—

मानसिक आयु की भाँति वर्षायु भी एक फलांक है। यह वह फलांक है जो परीक्षक की दृष्टि में किसी दी हुई आयु के व्यक्ति का फलांक होगा, यदि उसकी योग्यता उसकी आयु के औसत व्यक्ति के अनुरूप हो। अर्थात्—

$$\text{बुद्धि-लब्धि} = \frac{\text{मानसिक आयु}}{\text{वर्षायु}} \times १००$$

उपर्युक्त सूत्र से बुद्धि ज्ञात करने में हमें व्यक्ति की सापेक्षिक योग्यता का पता चलता है। इससे हमें पता चलता है कि अपनी ही आयु के व्यक्ति की तुलना में कोई व्यक्ति कितना श्रेष्ठ है। ऐसी मान्यता है कि बुद्धि-लब्धि अर्थात् मानसिक एवं वर्षायु का यह अनुपात सदैव सामान्यतया स्थिर रहता है। इसे 'बुद्धि-लब्धि की स्थिरता' (Constancy of I/Q) कहते हैं।

उन सभी परीक्षणों में जिनमें बुद्धि की सापेक्षिक मात्रा का मापन होता है, 'बुद्धि-लब्धि की स्थिरता' एक मौलिक मान्यता है। पर यह आवश्यक है कि बुद्धि-लब्धि को आयु से स्वतन्त्र माना जाए, क्योंकि जब तक इस मान्यता को आधार न माना जाय, बुद्धि का कोई वर्गीकरण सम्भव नहीं है। यदि किसी व्यक्ति की एक आयु में कुछ बु० ल० आए और कुछ वर्षों के बाद परीक्षण लेने पर कुछ अन्य बुद्धि-लब्धि आए, तो इस प्रकार की बु० ल० की कोई व्यावहारिक सार्थकता ही नहीं है।

इस बात का निश्चित सांख्यिकीय प्रमाण है कि बुद्धि-लब्धि वास्तव में सार्थक नहीं होती। एक उल्लेखनीय अध्ययन में सिरील बर्ट ने प्रत्येक आयु में प्राप्त मानसिक आयु-फलांकों को एकत्र किया। उनके मध्यमान एवं प्रमाप-विचलन निकाले। बर्ट के तथ्यों के विश्लेषण से पता चलता है कि ६ एवं १० वर्ष की अवस्था को छोड़कर बुद्धि-लब्धि की विचलनशीलता में अन्तर काफी अधिक है। टरमैन तथा मैरिल ने भी स्टेनफोर्ड-बिने परीक्षण के परिवर्द्धन के सिलसिले में इस प्रकार के कुछ तथ्य प्रस्तुत किए हैं। उनके अनुसार २½ वर्ष की आयु में मध्यमान बु० ल० १०९.९ है, जबकि १४ वर्ष की आयु में १००.९। १९३७ के स्टेनफोर्ड–बिने परीक्षण में १२ वर्ष की आयु में बु० ल० का विचलन २० है, जबकि ६ वर्ष की अवस्था में केवल १२.५।

मानसिक आयु एवं वर्षायु में एकरेखीय सम्बन्ध मान लेने के अनेक गलत परिणाम निकलते हैं। सामान्य व्यक्ति का जहाँ तक सम्बन्ध है, औसत बु० ल० प्रत्येक आयु में परिवर्त्तित होती रहती है। प्रारम्भिक आयु-स्तरों में जबकि मानसिक विकास तीव्र गति से होता है, बुद्धि-लब्धि समग्र (Population) के मध्यमान से अधिक होगी, एवं बाद के वर्षों में कम। १९१६ के स्टेनफोर्ड-बिने परीक्षण में ३ से लेकर ५ वर्ष तक मध्यमान बु० ल० १०२ हैं। एवं १४-१५ वर्ष की आयु में ९८। इसके अतिरिक्त आयु के बढ़ने के साथ-साथ बुद्धि-लब्धि में जो ह्रास होता है, वह मानसिक रूप से पिछड़े बालकों में अधिक दृष्टिगोचर होता है।

अनेक मनोवैज्ञानिक अब इस बात को मानने लगे हैं कि मानसिक आयु को वर्षायु से विभाजित करके बुद्धि-लब्धि निकालने के भयंकर परिणाम निकल सकते हैं। इनसे बचने के लिए वर्षायु की अधिकतम सीमाएँ भी निर्धारित करने की योजनाएँ बनाई गई हैं। विभिन्न मनोवैज्ञानिकों ने इस अधिकतम आयु को एकमत से नहीं माना है। कुछ १४ वर्ष तक बौद्धिक विकास मानते हैं, कुछ १५ वर्ष तक, एवं कुछ अन्य १६, १७, या १८ वर्ष तक। अधिकतम मानसिक विकास की सीमा का निर्धारण मनोवैज्ञानिकों के व्यक्तिगत अनुभव एवं सम-

मापक पर निर्भर रहा है। एक प्रौढ़ व्यक्ति की आयु को १४, १५ या कुछ अन्य मानकर जो बुद्धि-लब्धि आती है, उसे बुद्धि का संकेत कैसे कहा जा सकता है? यह मानना कि इस अधिकतम निर्धारित अवस्था के पश्चात् बुद्धि-लब्धि स्थिर रहती है, त्रुटिपूर्ण है। पर दुर्भाग्य से बुद्धि-लब्धि में विश्वास करने वालों की सदैव से ही मान्यता रही है।

बुद्धि-लब्धि के सिद्धान्त में एक अन्य महत्वपूर्ण त्रुटि है, जन्म के समय बालक की वर्षायु को शून्य मान लेना। पर यह मान्यता गलत है, क्योंकि जन्म के समय न तो बालक की वर्षायु ही शून्य होती है, न बुद्धि ही। स्पष्ट है कि जन्म से पूर्व ९ माह तो वह माता के उदर में रहकर ही आता है।

: १५ :

व्यक्तिगत बुद्धि-परीक्षण

स्टैन्फोर्ड-बिने परीक्षण, १९३७
(Stanford-Binet Scale, 1937)

परीक्षण का विवरण—

स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण सामान्य मानसिक योग्यता (General Mental Ability) का मापन करने के लिए बनाया गया है। इस परीक्षण के दो प्रतिरूप हैं—L तथा M। प्रत्येक प्रतिरूप में १२६ प्रश्न-पद हैं। ये २० आयु-स्तरों में वर्गीकृत हैं। ये दो वर्ष की अवस्था से लेकर श्रेष्ठ प्रौढ़ (Superior Adult) व्यक्तियों के लिए हैं। दो से लेकर पाँच वर्ष की अवस्था तक प्रत्येक के लिए छः परीक्षण हैं जो प्रत्येक आधे वर्ष के विकास के लिए हैं। पाँच वर्ष से ऊपर प्रत्येक एक वर्ष के लिए प्रश्न हैं। किसी भी बालक को सम्पूर्ण परीक्षण नहीं दिया जाता। जैसे एक १० वर्ष का बालक ९ वर्ष के परीक्षणों से प्रारम्भ करता है और यदि वह इन परीक्षणों में सफल हो जाए तो तब तक परीक्षणों पर प्रयास करता रहेगा जब तक कि वह अपनी योग्यता की सीमा तक न पहुँचे। कुछ १० वर्ष के बालक ११-१२ वर्ष तक के परीक्षण कर सकेंगे और कुछ अन्य १३-१४ वर्ष तक के। बालक का परीक्षण करने में

लगभग एक घण्टा लगता है। किसी एक ही अवस्था के लिए दिए गए प्रश्न लगभग समान कठिनाई के होते हैं।

स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण में प्रमाणित खेलने वाली वस्तुओं का एक सन्दूक होता है जो दो से लेकर छः वर्ष तक की अवस्था के लिए है। इसके अतिरिक्त कुछ छपे हुए कार्ड तथा प्रतिक्रियाओं को लिखने के लिए एक लेखा-पुस्तिका होती है। परीक्षण के बारे में विस्तृत सूचना, निर्देश, प्रशासन के नियम, मानक आदि विवरण-पुस्तिका में दिए गए हैं। टरमैन तथा मैरिल की पुस्तक "बुद्धि का मापन"[1] में इस मापदण्ड की संरचना के बारे विस्तृत विवरण दिया गया है।

मापदण्ड के विभिन्न परीक्षणों में परीक्षार्थी को साधारण वस्तुओं के हस्त-व्यापार से लेकर अमूर्त्त चिन्तन एवं तर्कशक्ति से सम्बन्धित अनेक कार्य करने पड़ते हैं। छोटी आयु के बालकों के लिए कुछ परीक्षण हैं—वस्तुओं का हस्त-व्यापार (Manipulation of Objects), नेत्र-हस्त समन्वय (Eye-Hand Co-ordination), ब्लाक रचना (Block building) आदि प्रत्यक्षीकरणात्मक विभेद (Perceptual Discrimination) जैसे छड़ियों की लम्बाइयों की तुलना, ज्यामितिक आकृतियों का मिलाना भी सम्मिलित है। निम्न आयु-स्तरों पर सामान्य वस्तुओं के निरीक्षण एवं पहिचान से सम्बन्धित अनेक परीक्षण हैं जैसे दो साल की अवस्था में शिशु से गुड़िया के एक बड़े चित्र में शरीर के भागों की ओर संकेत करने को कहा जाता है। कुछ परीक्षणों में वस्तुओं का नाम बताने, चित्र-पूर्त्ति करने, छूटे हुए भागों की पहिचान करने या वस्तुओं में समानता या अन्तर बताने को कहा जाता है। बड़ी आयु के व्यक्तियों से पूछा जाता है कि कुछ बातों का नित्य-प्रति के व्यवहार में पालन क्यों किया जाता है। स्मरण-परीक्षण सभी अवस्था के बालकों के लिए हैं। इनमें परीक्षार्थी से वस्तुओं, चित्रों, ज्यामितिक आकृतियों, अंकों, शब्दों एवं वाक्यों की पहिचान करने को कहा जाता है। अंक-विस्तार परीक्षण तो कई आयु-स्तरों के लिए हैं। स्थानगत अनुस्थिति (Spatial orientation), जैसे पथजाल अनुरेखन (Maze-tracing), कागज मोड़ना (Paper-folding) आदि परीक्षण भी सम्मिलित हैं। सांख्यिक परीक्षणों में गणना, साधारण एवं जटिल गणित सम्बन्धी प्रश्न और समस्याओं के हल करने सम्बन्धी परीक्षण हैं।

1. Terman and Merrill : *Measuring Intelligence.*, Boston, Houghton Mifflin, 1937.

पर अधिक आयु के लिए मुख्य परीक्षण वाचिक हैं। इसमें शब्द-भण्डार (Vocabulary), आनुपात-पूर्ति (Analogy), वाक्य-पूर्ति (Sentence completion), अमूर्त शब्दों की व्याख्या, कहावतों की व्याख्या आदि से सम्बन्धित प्रश्न हैं।

प्रशासन एवं गणन—

स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण के लिए अत्यन्त प्रशिक्षित परीक्षक होना चाहिए, क्योंकि कई परीक्षणों का प्रशासन अत्यन्त जटिल है। यह आवश्यक है कि परीक्षक का परीक्षण से पूर्व-परिचय एवं अनुभव हो। प्रशासन के साथ ही उसका गणन आवश्यक होने से परीक्षण की जटिलता और भी बढ़ जाती है। पूरा परीक्षण किसी बालक को नहीं दिया जाता। छोटे बालकों का परीक्षण करने में लगभग ५० मिनिट और बड़े बालकों के परीक्षण में लगभग ७८ मिनिट लगते हैं। बालक जिस अवस्था का है उससे कम अवस्था से प्रश्न प्रारम्भ करने चाहिए ताकि उसमें आत्म-विश्वास रहे। यदि वह जिस आयु-स्तर से परीक्षित होना प्रारम्भ किया है, उस पर भी गलती करे तो एक और आयु-स्तर कम करके परीक्षण करते हैं। यह प्रक्रिया उस स्तर तक चालू रखते हैं जब तक कि वह परीक्षण पास न कर ले। इसे 'आधार अवस्था' (Basal Age) कहते हैं। इसके पश्चात् परीक्षण को तब तक चालू रखते हैं जब तक कि परीक्षार्थी सभी में असफल न हो। इसे 'अधिकतम अवस्था' (Maximal Age) कहते हैं। इस अवस्था के बाद परीक्षण बन्द कर देते हैं। प्रत्येक आयु में परीक्षण विवरण-पुस्तिका में दिए गए अनुक्रम (Sequence) में देते हैं कुछ उपचारक क्रमांकित (Serial) अनुक्रम में परीक्षण देने के पक्ष में हैं। पर इसका निर्णय बहुत कुछ परीक्षक एवं परीक्षण की परिस्थितियों पर निर्भर है।

स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण में मानसिक विकास को एक सरल एवं आसानी से समझ में आने वाले गणन में प्रदर्शित करना सम्भव है। इसे 'मानसिक आयु' (Mental Age) कहते हैं। मानसिक आयु मापदण्ड पर वह स्तर है जहाँ बालक सब परीक्षणों में सफल होता है। मानसिक आयु की गणना करना अत्यन्त सरल होता यदि किसी स्तर पर कोई बालक सभी परीक्षणों में सफल होता और उसके पश्चात् के स्तर पर सभी परीक्षणों में असफल होता। पर ऐसा नहीं होता। एक ही स्तर के परीक्षणों में परीक्षार्थी कुछ प्रश्नों का उत्तर दे पाता है और कुछ का नहीं। प्रत्येक परीक्षण के लिए सामान्यतया दो माह-आयु गणना की जाती है। उदाहरण के लिए यदि कोई बालक छः वर्ष के स्तर (Basal Age) के सभी प्रश्नों में सफल रहे, सात वर्ष

के स्तर के ४ प्रश्नों में, आठ वर्ष के स्तर के ४ प्रश्नों में, नौ वर्ष की अवस्था के २ प्रश्नों में और १० वर्ष की अवस्था के ३ प्रश्नों में, तो उसकी मानसिक आयु निम्न प्रकार हुई :—

वर्ष स्तर	सफल परीक्षणों की संख्या	आयु : वर्ष	माह
६	सब परीक्षण	६	—
७	४	—	८
८	४	—	८
९	२	—	४
१०	३	—	६
		कुल ८	—२
		या ९८ महीने	

इस मानसिक आयु के आधार पर I.Q. $= \frac{M.A.}{C.A.} \times १००$ के सूत्र से बुद्धि-लब्धि निकालते हैं। यदि बालक की वास्तविक अवस्था १० वर्ष है तो,

$$बुद्धि\text{-}लब्धि \ \frac{९८}{१२०} \times १०० = ८१.६६ \ हुई।$$

प्रौढ़ व्यक्तियों की बुद्धि-लब्धि की गणना करने के लिए वास्तविक आयु केवल १५ लेते हैं। इस प्रकार १५ वर्ष की अवस्था के ऊपर मानसिक आयु वास्तविक इकाई नहीं है। इनका कार्य प्रौढ़ों के लिए भी सामान्य वितरण में बुद्धि-लब्धि वितरण को स्थिर रखना है। टरमैन तथा मैरिल ने इस दृष्टि-कोण से जो विशिष्ट सूत्र प्रस्तुत किए हैं वे निम्न हैं—

वास्तविक आयु १३ वर्ष से कम : $I.Q. = \frac{M.A.}{C.A.} \times १००$

वास्तविक आयु १३ से १६ वर्ष : $I.Q. = \frac{M.A. \times १००}{१३ + \frac{२}{३}(C.A. - १३)}$

वास्तविक आयु १६ वर्ष से अधिक : $I.Q. = \frac{M.A.}{१५} \times १००$

परीक्षण से प्राप्त बुद्धि-लब्धियों का अर्थ एवं उनकी व्याख्या (Meaning and Interpretation of I/Qs Obtained in the Test)—

स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण के सम्बन्ध में विस्तृत तथ्य एवं अन्वेषण-निष्कर्ष

एकत्र हैं। यहाँ तक कि अनेक मनोवैज्ञानिकों, उपचारकों एवं शिक्षा-शास्त्रियों के लिए बिने परीक्षणों में प्राप्त बुद्धि-लब्धि स्वयं बुद्धि की ही पर्यायवाची है। बुद्धि-लब्धि के सम्बन्ध में जो व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई हैं वे सन् १९१६ और १९३७ दोनों परीक्षणों से प्राप्त निष्कर्षों पर आधारित हैं। किन्तु दोनों में काफी अन्तर होने से इससे अनेक अवसरों पर गलत निष्कर्ष भी निकले हैं। क्योंकि १९१६ के स्टेन्फोर्ड परीक्षण में बुद्धि-लब्धि का प्रमाप विचलन १२ था, जबकि १९३७ के परीक्षण में यह १६.४ है। इसी प्रकार १९१६ के परीक्षण में १३० बु० ल० १९३७ के परीक्षण की १४३ बुद्धि-लब्धि के बराबर है और पिछले परीक्षण की ११४ बु० ल० नए परीक्षण की ११८ बु० ल० के।

मानसिक आयु-स्तर एवं बुद्धि-लब्धि के सम्बन्ध में कुछ मुख्य निष्कर्ष ये हैं—

१. मानसिक आयु स्कूल के वर्षों में निरन्तर बढ़ती रहती है, पर बुद्धि-लब्धि बहुत कुछ स्थिर रहती है। अतः बुद्धि-लब्धि विभिन्न आयु के बालकों की तुलना करने में अत्यन्त ही उपयोगी है। इस आधार पर विभिन्न बुद्धि-लब्धि के बालकों की शैक्षिक एवं व्यावसायिक सम्भावनओं के बारे में सामान्यीकरण किए जा सकते हैं।

२. एकसमान बुद्धि-लब्धि के व्यक्तियों की मानसिक योग्यता एक-समान नहीं होती। उनमें केवल समान सापेक्षिक श्रेष्ठता होती है।

३. बालकों का 'सामान्य', 'मन्द बुद्धि', 'श्रेष्ठ', 'प्रतिभाशाली' इस प्रकार का नामांकन (Labelling) करना भ्रान्तिकारी है, क्योंकि ऐसी कोई सीमा-रेखा नहीं है जहाँ प्रतिभा एक साथ उत्पन्न हो। महामूर्ख से लेकर प्रतिभाशाली तक बुद्धि-लब्धि का निरन्तर वितरण होता है। और योग्यता की विभिन्न मर्यादाएँ एक-दूसरे को प्रतिच्छादित करती हैं। ११० बुद्धि-लब्धि के कुछ व्यक्ति समाज को महत्वपूर्ण योगदान करते हैं, जबकि १६० बुद्धि-लब्धि के कुछ व्यक्ति महत्वहीन प्रौढ़ जीवन बिताते हैं। ८० बुद्धि-लब्धि के कुछ व्यक्ति समाज से अभियोजन नहीं कर पाते, जबकि ६० बुद्धि-लब्धि वाले अन्य व्यक्ति अपना उचित पालन करते हैं और सामान्य जीवन बिताते हैं।

४. जब एक श्रेष्ठ बुद्धि वाला व्यक्ति प्रौढ़ अवस्था में पहुँचता है तो उसकी बुद्धि-लब्धि गिरने लगती है। सांख्यिकीय दृष्टि से एक छः वर्ष के बालक के लिए २०० बुद्धि-लब्धि प्राप्त करना सम्भव है यदि वह

१२ वर्ष की आयु-स्तर के सभी परीक्षण हल कर सके किन्तु अधिक आयु-स्तर, जैसे १४ वर्ष की अवस्था में, उसकी मानसिक आयु २२ वर्ष १० महीने से अधिक नहीं होगी। अतः उसकी बुद्धि-लब्धि भी

अधिकतम $\frac{\text{२२ वर्ष १० महीने}}{\text{१४ वर्ष}} \times \text{१००}$

$= \frac{\text{२७४}}{\text{१६८}} \times \text{१००} = \text{१५२}$ होगी।

५. यह मान्यता कि एक दी हुई बुद्धि-लब्धि सदैव एक निश्चित बुद्धि-स्तर प्रदर्शित करती है भ्रान्तिकारी है, क्योंकि इस मान्यता में दो त्रुटियाँ हैं—

(अ) स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण में प्राप्त बुद्धि-लब्धियों की विभिन्न अवस्था में तुलना नहीं की जा सकती, क्योंकि यद्यपि बुद्धि-लब्धि का सामान्य विचलन १६·४ बिन्दु है, कई आयु-स्तरों पर प्रमाण विचलनों में इससे काफी अधिक अन्तर है। ५ वर्ष की आयु पर यह विचलन १४, ६ वर्ष पर १२.५, और २½ वर्ष की आयु पर १९ या २० है।

(ब) विभिन्न बुद्धि-परीक्षणों से प्राप्त बुद्धि-लब्धियों में पारस्परिक परिवर्तन सम्भव नहीं है। एक अन्वेषण में कॉलेज में प्रवेश करने वाले विद्यार्थियों की बिने परीक्षण में मध्यांक (Median) बुद्धि-लब्धि १२९ थी और वैश्लर परीक्षण में ११९।

६. छः वर्ष से कम की आयु में बुद्धि-लब्धि के निष्कर्ष भविष्य संबंधी यथार्थ पूर्व-सूचन (Prediction) नहीं करते। इससे अधिक आयु पर किए गए परीक्षणों के निष्कर्षों के आधार पर किया गया पूर्व-सूचन कम मध्यान्तर के लिए ही यथार्थ होता है।

७. पुनर्परीक्षण में बुद्धि-लब्धि अंकों में २० तक का अन्तर आ जाता है। इसके अनेक कारण हो सकते हैं, जैसे मापन की भूलें, बालक में शारीरिक परिवर्त्तन, परिवर्त्तित संवेगात्मक अभियोजन, अधिक उत्तेजक वातावरण आदि।

८. बुद्धि-लब्धि की गणना में आदि बिन्दु (Zero-point) वास्तविक न होकर स्वेच्छ (Arbitrary) होता है और विभिन्न मापन इकाइयाँ असमान लम्बाई तथा मूल्य की हैं। ६० और ७० बुद्धि-लब्धि के बीच में वही अन्तर नहीं है जो ९० एवं १०० बुद्धि-लब्धि में या १२० एवं

१३० में। इसी प्रकार यह कहना कि १२० बुद्धि-लब्धि ६० से दुगुनी है, अत्यन्त भ्रमात्मक है।

स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण का निदानात्मक उपयोग—

स्टेन्डफोर्ड परीक्षण से अनेक व्यक्तिगत विभेदों पर प्रकाश पड़ता है। परीक्षार्थी के कार्य की विधि, समस्या के प्रति उसका रुख एवं उसकी क्रिया के अनेक गुणात्मक पक्षों का निरीक्षण सम्भव है। परीक्षण की अवधि में अनेक व्यक्तित्व गुणों पर भी निर्णय सम्भव है। सूचना में कठिनाई, गणितीय एवं तर्क योग्यता में कमी आदि का पता लगाया जा सकता है, पर इस परीक्षण से विस्तृत निदानात्मक सूचना नहीं मिलती, क्योंकि सामान्य बुद्धि के अतिरिक्त अन्य तत्वों पर यह परीक्षण जोर नहीं देता। तथापि कुछ सम्भावित असामान्य वृत्तियों की ओर यह संकेत करता है। जैसे सामान्य व्यक्तियों की तुलना में शिज़ोफ्रेनिक शब्द-भण्डार, अमूर्त्त शब्दों के प्रयोग एवं वाक्य-रचना में धनी होते हैं। पर चित्र असंगतियों (Picture absurdities) एवं डिज़ायन तथा कहानी सम्बन्धी स्मरण में इन्हें कठिनाई होती है। पर चूँकि अनेक सामान्य व्यक्तियों में भी इसी प्रकार के लक्षण होते हैं, केवल इन्हीं के आधार पर निर्णय नहीं दिया जा सकता। प्रतिक्रियाओं को अध्ययन करने से चिन्तन सम्बन्धी व्यवधान का भी पता लगाया जा सकता है। एक अध्ययन के अनुसार मानसिक रोगी एवं सामान्य व्यक्ति शाब्दिक प्रश्न-पदों के प्रति विभिन्न प्रकार से प्रतिक्रिया करते हैं। सामान्य व्यक्ति पर्यायवाची शब्द देते हैं जबकि असामान्य व्यक्ति विवरण देकर, व्याख्या करके या उदाहरण देकर समझाते हैं।

इस परीक्षण से परीक्षार्थी की अभिवृत्तियों, मूल्यों एवं दृष्टिकोण का भी पता चलता है। एक प्रमापीकृत परिस्थिति में बालक के व्यवहार के निरीक्षण के लिए यह परीक्षण अद्वितीय अवसर प्रदान करता है। स्वयं बालक यह नहीं जान पाता कि परीक्षण से उसके व्यवहार का कौन-सा पक्ष प्रकट हो रहा है। अतः वह अनावश्यक रूप से चेतन भी नहीं हो पाता।

विश्वसनीयता एवं वैधता—

१९३७ के स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण की विश्वसनीयता निकालने के लिए एक सप्ताह के मध्यान्तर में प्रमापीकरण समूहों पर एल० तथा एम० प्रतिरूपों का परीक्षण किया गया एवं उनमें सहसम्बन्ध निकाला गया। निष्कर्ष यह निकला कि यह परीक्षण कम आयु-स्तरों की अपेक्षा अधिक आयु-स्तरों पर अधिक विश्वसनीय है। अनेक अन्वेषणों में इस परीक्षण के विश्वसनीयता गुणांक ·८

और ·९ के बीच आते हैं। इस परीक्षण की वैधता पद-विश्लेषण (Item Analysis) के आधार पर निकाली गई है। पिछले सन् १९१६ के स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण को कसौटी मानकर यह ज्ञात हुआ कि नवीन परीक्षण भी मुख्यतः उन्हीं बातों का मापन करता है जिनका कि पिछला परीक्षण। स्टेन्फोर्ड-बिने प्रश्न-पदों का अवयव विश्लेषण (Factor analysis) किया गया है। यह ज्ञात हुआ है कि विभिन्न आयु-स्तरों के परीक्षणों में समान अवयव (Factors) मिलते हैं। बड़ी आयु-स्तर पर मुख्य अवयव वाचिक है। उदाहरण के लिए ६ वर्ष की अवस्था में शब्द-भण्डार अवयव ·५९ है और १८ वर्ष की अवस्था में ·९१।

'स्कूल में प्रगति' को कसौटी मानकर भी इस परीक्षण की वैधता निकाली गई है। परिणामों से सिद्ध हुआ है कि बुद्धि-लब्धि एवं स्कूल-प्रगति में निश्चय ही धनात्मक सहसम्बन्ध है। एक कक्षा अधिक होने पर बुद्धि-लब्धि में औसत बढ़ोतरी ११ बिन्दु है। एक कक्षा कम होने पर बुद्धि-लब्धि में औसत कमी भी ११ बिन्दु है। १९१६ के स्टेन्फोर्ड परीक्षण का स्कूल कक्षाओं, अध्यापकों के निर्णय, ज्ञानोपार्जन परीक्षाओं में प्राप्तांक आदि के साथ ·४० से लेकर ·७५ तक सहसम्बन्ध है। इस प्रकार के परिणाम १९३७ के बिने-परीक्षण के सम्बन्ध में प्रकाशित नहीं हुए हैं, क्योंकि यह मान लिया गया है कि जो परिणाम १९१६ के परीक्षण से प्रकाशित हुए हैं, वे परिणाम ही सामान्यतः १९३७ के परीक्षण से उपलब्ध होंगे।

वैधता के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण बात यह है कि विभिन्न परिवर्त्तीय किस सीमा तक परीक्षण को प्रभावित करते हैं, सामान्य मानसिक योग्यता को यह परीक्षण कहाँ तक मापन करता है एवं कौन से तत्व गणन को प्रभावित करते हैं। इस सम्बन्ध में क्रॉनबैक[1] ने जो निष्कर्ष दिए हैं वे इस प्रकार हैं—

(१) स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण वर्त्तमान योग्यता का मापन करता है, न कि जन्मजात योग्यता का। पर वर्त्तमान योग्यता जन्मजात एवं वातावरण-जन्य दोनों प्रकार के तत्त्वों से प्रभावित होती है। और यदि यह मान लिया जाए कि एक ही वातावरण में बालकों का अनुभव भी एकसमान होता है, उनमें बौद्धिक अन्तर का कारण जन्मजात योग्यता ही हो सकता है। अतः अप्रत्यक्ष रूप से ये परीक्षण जन्मजात योग्यता का ही मापन करते हैं। पर यह बात पूर्णतया सत्य नहीं है, क्योंकि वातावरण किसी भी दशा में सभी के लिए निरपेक्ष रूप

---

1. Lee. J. Cronbach : *Essentials of Psychological Testing,* Harper and Brothers, Publishers, New York, (2nd Edition), 1960, pp. 181–185.

से समान नहीं हो सकता और इसीलिए सब लोगों के अनुभव भी समान नहीं हो सकते। बिने ने स्वयं कभी इस बात का बिल्कुल दावा नहीं किया कि उनके परीक्षण जन्मजात योग्यता का मापन करते हैं।

(२) स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण के प्राप्तांक शाब्दिक योग्यता से प्रभावित हैं। अतः विद्याविषयक अभियोग्यता (Scholastic Aptitude) के ये अच्छे मापक हैं। पर ये परीक्षण सभी प्रकार की मानसिक योग्यता का मापन नहीं करते। लेखकों ने इस बात की आलोचना की है कि ये परीक्षण अन्तर्दृष्टि, दूरदृष्टि, मौलिकता, विचारों के संगठन आदि को महत्व नहीं देते।

(३) स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण विभिन्न आयु-स्तरों पर विभिन्न प्रकार की मानसिक योग्यता का मापन करते हैं। इसका कारण यह है कि प्रारम्भिक वर्षों से निष्पादन एवं बाद के वर्षों में शब्द-भण्डार का महत्व होता है, क्योंकि शाब्दिक योग्यता वातावरण से प्राप्त एक लम्बी अवधि की शिक्षा पर निर्भर है।

(४) इस परीक्षण में सफलता के लिए अमरीका की नगरीय संस्कृति के अनुभवों की आवश्यकता पड़ती है। अतः विभिन्न सांस्कृतिक समूहों के तुलनात्मक अध्ययन के लिए इसका मूल्य संदेहास्पद है। उदाहरण के लिए जूनी जाति के लोग मन्दगति होते हैं और इसलिए गति-परीक्षण उन पर उपयोगी नहीं हैं। गुडएनफ के आकृति-चित्रण परीक्षण (Draw-a-man Test) के बारे में भी यही बात सत्य है। जब इस परीक्षण को ६ अमेरिकन इन्डियन जातियों पर प्रशासित किया गया तो ज्ञात हुआ कि प्रत्येक जाति की मध्यमान बुद्धि-लब्धि प्रत्येक अन्य जाति के व्यक्तियों की मध्यमान बुद्धि-लब्धि से भिन्न थी और यह कि बालक और बालिकाओं की बुद्धि-लब्धि में अन्तर सांस्कृतिक प्रभावों के कारण था।

(५) बिने-परीक्षण मानसिक योग्यता के विभिन्न पक्षों का विश्वसनीय मापन प्रस्तुत नहीं करता। यद्यपि प्राप्तांक सामान्य मानसिक योग्यता के अतिरिक्त अन्य प्रकार की योग्यताओं से भी प्रभावित होते हैं, तथापि ये परीक्षण बुद्धि के अनेक पक्षों का अलग-अलग निदान करने में बिल्कुल उपयुक्त नहीं हैं।

(६) बिने-परीक्षण के प्राप्तांक परीक्षार्थी के व्यक्तित्व एवं उसकी संवेगात्मक आदतों से प्रभावित होते हैं। कुछ विशेष संवेगात्मक आदतें हैं—अपरिचित व्यक्तियों के समक्ष शर्मीलापन, आत्म-विश्वास की कमी, विद्या-विषयक परीक्षणों से अरुचि एवं उनके प्रति उदासीनता आदि। एक अनावश्यक रूप से आत्म-आलोचना के प्रति सजग व्यक्ति अच्छा उत्तर होने पर भी अपने उत्तर से असन्तुष्ट होकर 'मुझे ज्ञात नहीं' इस प्रकार के उत्तर दे सकता है और उसके प्राप्तांक इस प्रकार प्रभावित हो सकते हैं।

स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण की परिसीमाएँ (Limitations of the Stanford-Binet Scale)—

१. स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण बुद्धि का कोई महत्वपूर्ण मापक नहीं है।[1] इसे विस्तृत रूप से स्वीकार जाने किये का कारण यह है कि अपने विकास के प्रत्येक चरण में यह पिछले परीक्षणों की तुलना में अधिक उपादेय था। यह एक अत्यन्त सुविधाजनक बुद्धि-परीक्षण भी नहीं है, क्योंकि इसके प्रशासन एवं गठन के लिए एक अत्यन्त ही प्रशिक्षित परीक्षक की आवश्यकता पड़ती है, विशेषकर इसलिए कि इसे व्यक्तिगत रूप से प्रशासित करना पड़ता है। अतः यह कम व्ययपूर्ण नहीं है।

२. यह परीक्षण बालकों के लिए अवश्य ही सरल एवं उचित है, पर प्रौढ़ व्यक्तियों के यह किसी भी भाँति अनुरूप नहीं है।

३. यह परीक्षण सभी उद्देश्यों के लिए वैध नहीं है। यह सर्वतोमुखी मानसिक योग्यता का अत्यन्त गलत चित्र प्रस्तुत करता है, क्योंकि यह शाब्दिक योग्यता से अधिक प्रभावित है। भाषा सम्बन्धी कठिनाई से ग्रसित व्यक्ति इस परीक्षण में अच्छे प्राप्तांक नहीं लाएगा।

४. परीक्षण से भेददर्शी अभियोग्यता (Differential Aptitude) का मापन नहीं होता। इसके अनेक कारण हैं, जैसे (अ) सभी आयु-स्तरों पर एक ही प्रकार के प्रश्न-पद नहीं हैं। (ब) प्रत्येक प्रकार के प्रश्न-पदों की संख्या इतनी कम है कि विभिन्न पद-समूहों पर व्यक्ति की सफलता का विश्वसनीय निर्णय नहीं किया जा सकता। (स) मापदण्ड इस प्रकार संरचित है कि सामान्य बुद्धि-तत्व के अधिकतम योगदान को माप सके और समूह तत्वों या बुद्धि के विभिन्न तत्वों को कोई महत्व न दिया जाए।

५. स्वयं आयु-स्तर पर बने मापदण्ड में अनेक परिसीमाएँ होती हैं, जिनमें से कुछ ये हैं: (अ) पास-फेल की विधि अत्यन्त निपुणताजनक विधि नहीं है क्योंकि अनेक परीक्षणों का बिल्कुल प्रयोग न होने से इसमें महत्वपूर्ण सूचना व्यर्थ जाती है। बिन्दु मापदण्ड इस दृष्टि से बहतर है। (ब) आयु-स्तर पर बने मापदण्डों की संरचना में समय

1. According to Stoddard : "···Stanford revisions have offerred not very reliable measurements of functions, not very close to intelligence."

एवं श्रम का अपव्यय होता है। एक सफल आयु-माप का विकास निस्संदेह एक श्रमसाध्य उपक्रम है।

६. इस परीक्षण में प्रयुक्त मानसिक आयु के सिद्धान्त में अनेक त्रुटियाँ हैं जिन पर पीछे प्रकाश डाला चुका है। कुछ कमियाँ ये हैं : (अ) विभिन्न आयु-स्तरों पर मानसिक आयु की इकाइयों में असमानता। (ब) एक परीक्षण से प्राप्त मानसिक आयु-मापकों का दूसरे परीक्षण से प्राप्त मापकों से तुलना न होना। (स) प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए इस विधि का उपयुक्त न होना, आदि।

वैश्लर-बेलैव्यू बुद्धि-परीक्षण

(Wechsler-Bellevue Intelligence Scale)

वैश्लर न्यूयार्क के वैलैव्यू अस्पताल में औपचारिक मनोवैज्ञानिक था। और ऐसे व्यक्तियों की परीक्षा करना जो अपराधी, रोगी, मन्द-बुद्धि, निरक्षर तथा मनोविकृतियों से ग्रसित हों, उसके कार्यों में शामिल था। इस प्रकार उसका मुख्य कार्य, बिने की भाँति, औसत तथा औसत से निम्न बुद्धि के व्यक्तियों का अध्ययन करना था। प्रौढ़ मानसिक योग्यता के उच्च स्तर का यथार्थ मापन करने की ओर उसने विशेष प्रयत्न नहीं किया। पर वैश्लर बुद्धि मापन की बिने प्रणाली से सन्तुष्ट न था। इसके कारण थे—

(१) मानसिक आयु की विधि से सम्भावित अंकों का प्रसार क्षेत्र कम हो जाता है, क्योंकि एक आयु के बाद परीक्षण पर मध्यांक अंक नहीं बढ़ते। फिर यह मानसिक आयु की सीमा प्रत्येक परीक्षण में अलग-अलग होती है। यह सम्भव है कि एक प्रौढ़ की मानसिक आयु परीक्षण में २० ही आए, पर इसका यह अर्थ नहीं है कि उसमें एक २० वर्ष के औसत व्यक्ति की सी मानसिक प्रतिभा है। वैश्लर के अनुसार मानसिक आयु की विधि १२ वर्ष की अवस्था से अधिक के बच्चों की बुद्धि का मापन करने के लिए उपयोगी नहीं है। इसके अतिरिक्त बिने के अनुसार बुद्धि-लब्धि को स्थिर माना जाता है जबकि वह वास्तव में स्थिर (Constant) नहीं होती। स्वयं टरमैन तथा मैरिल ने भी इस सम्बन्ध में तथ्य प्रस्तुत किये हैं जिनसे ज्ञात होता है कि २½ वर्ष की आयु में मध्यांक बुद्धि-लब्धि १०९.९ थी, जबकि १४ वर्ष की अवस्था में १००.९।

(२) मानसिक आयु में वास्तविक आयु का भाग देकर बुद्धि-लब्धि निकालने की विधि पूर्णतया स्वेच्छाचारी है। उदाहरण के लिए एक निश्चित अवस्था से अधिक के व्यक्तियों की बुद्धि-लब्धि निकालने के लिए मानसिक आयु का भाग

नहीं देते, वरन् किसी अधिकतम आयु का भाग देते हैं जो अलग-अलग मनो-वैज्ञानिक एवं शिक्षा-शास्त्रियों के लिए अलग-अलग हैं—१४ वर्ष से लेकर १८ वर्ष तक। यह अवस्था बहुत कुछ परीक्षण-रचयिता के अपने अनुभव और किस प्रकार का मानदण्ड बनाया है, इस पर निर्भर है। अतः इस प्रकार निकाली हुई बुद्धि-लब्धि का कोई विशेष वैज्ञानिक महत्व नहीं है।

(३) मानसिक आयु से बुद्धि-लब्धि निकालने की विधि में यह सिद्धान्त निहित रहता है कि जन्म के समय बालक की M.A. तथा C.A. दोनों ज़ीरो है अतः उसकी बुद्धि-लब्धि भी ज़ीरो है। पर यह बात तर्क-संगत नहीं है। न तो जन्म के समय बालक की बुद्धि शून्य होती है और न उसकी शारीरिक आयु। क्योंकि गर्भ से लेकर जन्म तक लगभग ९ महीने तो वह माँ के गर्भ में रह ही चुकता है।

(४) स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण मुख्यतः स्कूल जाने वाले बालकों के लिए बना है, और इसका प्रमापीकरण भी बालकों के समूह पर हुआ है, न कि प्रौढ़ों के। अतः यह प्रौढ़ों के लिए विशेष उपयोगी नहीं है। इसके प्रश्न-पदों का स्वरूप भी इस प्रकार का है कि यह प्रौढ़ों की मानसिक क्षमता के अनुरूप प्रतीत नहीं होता। इन पदों के प्रति प्रौढ़ों की मनोवृत्ति अनुकूल नहीं होती।

(५) स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण शुद्धता की अपेक्षा गति को अधिक महत्व देते हैं और निष्पादन कार्य की अपेक्षा शब्दों पर।

इन सब तथा अन्य कारणों से वैश्लर एक नए परीक्षण के निर्माण की ओर अग्रसर हुआ। उसने अपने परीक्षण के लिए उपयुक्त विषय-वस्तु एकत्र करना प्रारम्भ किया। वैश्लर ने बुद्धि के किसी विशिष्ट सिद्धान्त पर बल न दिया वरन् बिने के सामान्य या सर्वव्यापक बुद्धि के सिद्धान्त से ही एक सीमा तक सहमति प्रकट की। पूर्व परीक्षणों से उसने ऐसे अनेक पद लिए जो उसकी समझ में कुछ रोगियों के सम्बन्ध में बुद्धि सम्बन्धी सूचना प्राप्त करने में सहायक हुए थे और जिनमें विभिन्न प्रकार के चिन्तन या निष्पादन की प्रेरणा देने का अद्वितीय गुण था। अनेक औपचारिक प्रयासों के बाद सन् १९३९ में परीक्षण प्रकाशित हुआ। युद्ध में सेना ने वैश्लर से अपने प्रयोग के लिए एक समानान्तर परीक्षण (Parallel Form) बनाने की प्रार्थना की। अतः वैश्लर ने सैन्य अस्पतालों के प्रयोग के लिए एक समानान्तर प्रतिरूप की भी रचना की। सन् १९४६ में सैन्य मनोविज्ञानिकों ने इस सम्बन्ध में विस्तृत अनु-संधान करके निष्कर्ष प्रकाशित किए। इस परीक्षण का उपचार-गृहों में, विशेष-कर प्रौढ़ों पर, विस्तृत उपयोग हुआ है। पर इसका किशोरों एवं युवा बालकों पर भी अब व्यापक रूप से प्रयोग होने लगा है।

वैश्लर परीक्षण एक बिन्दु मानदण्ड (Point-Scale) है, जबकि स्टेन्फोर्ड-बिने आयु-मानदण्ड (Age-Scale)। यह दो प्रतिरूपों (Forms) में प्राप्य है। कुछ विशिष्ट पदों या निर्देश आदि में थोड़े हेर-फेर के अतिरिक्त इन दोनों प्रतिरूपों में कोई मौलिक अन्तर नहीं है। द्वितीय प्रतिरूप के प्रमापीकरण तथा दोनों भागों के तुलनात्मक निष्कर्षों के सम्बन्ध में अधिक सूचना उपलब्ध नहीं है। परीक्षण के प्रत्येक प्रतिरूप में ११ उपपरीक्षण हैं—शाब्दिक मानदण्ड में छः तथा निष्पादन मानदण्ड में पाँच। **शाब्दिक मानदण्ड** में निम्न छः उपपरीक्षण हैं—(१) सामान्य सूचना (General Information), (२) सामान्य समझ (General Comprehension), (३) अंकगणित सम्बन्धी तर्क (Arithmatical Reasoning), (४) अंकों का स्मृति-विस्तार (Digits Forward and Backward), (५) सादृश्य (Similarities), (६) शब्द-भण्डार (Vocabulary)। **निष्पादन मानण्ड** में निम्न पाँच उपपरीक्षण हैं—(१) चित्र विधान (Picture Arrangement), (२) चित्र-पूर्ति (Picture Completion), (३) वस्तु संग्रह (Object Assembly), (४) ब्लाक डिजायन (Block Design), (५) अंक प्रतीक (Digit Symbol)। इनका संक्षिप्त विवरण निम्न लिखित है :—

शाब्दिक परीक्षण (Verbal Tests)—

१. **सामान्य सूचना** (General Information)—इसमें २५ प्रश्न होते हैं जो सूचना के प्रसार-क्षेत्र से लिये होते हैं। पर इसका शैक्षिक ज्ञान से सम्बन्ध नहीं होता। प्रश्न इस प्रकार के हैं—'वाशिंगटन का जन्म-दिन कब है, हेमलेट किसने लिखा, ब्राजील कहाँ है, वर्ष में कितने सप्ताह होते हैं, औसत अमरीकी महिला की लम्बाई क्या है ?' परीक्षार्थी इन प्रश्नों का उत्तर देता है। सही उत्तर का (+) और गलत का (—) गणन होता है। यदि परीक्षार्थी पाँच प्रश्नों का लगातार उत्तर न दे तो आगे प्रश्न नहीं पूछते। अधिकतम गणनांक २५ है।

२. **सामान्य समझ** (General Comprehension)—इसमें व्यावहारिक निर्णय एवं सामान्य बुद्धि का मापन करने के लिए १० प्रश्न होते हैं जैसे—'जूते चमड़े के क्यों बनाए जाते हैं, कानून आवश्यक क्यों हैं, लोग कर क्यों अदा करते हैं ?' आदि। यदि प्रश्न परीक्षार्थी की समझ में न आए तो उसे दुहराकर एवं समझाकर फिर पूछा जाता है। उत्तर के सामान्यीकरण की मात्रा एवं उसके गुण के अनुसार गणन ०, १, या २ में करते हैं। अधिकतम गणनांक २० है।

३. **गणितीय तर्क** (Arithmatical Reasoning)—इसमें जबानी तौर

से इस प्रकार की १० गणितीय समस्याएँ दी जाती हैं जैसी कि प्रारम्भिक पाठशाला में पढ़ाई जाती हैं। परीक्षार्थी कागज-पैन्सिल के प्रयोग के बिना इन्हें हल करता है। गति एवं परिशुद्धता पर गणन आधारित है। निश्चित समयावधि में उत्तर दे देने पर एक सही उत्तर का एक अङ्क मिलता है। नवीं एवम् दसवीं समस्या पर यदि ४० सैकिन्ड के अन्तर्गत उत्तर दे तो एक अङ्क अधिक देते हैं और १५ सैकिन्ड में उत्तर देने पर १ अङ्क और। सामान्यतः प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय प्रश्नों पर १५ सैकिन्ड; चौथे, पाँचवें और छठे पर ३० सैकिन्ड; सातवें एवं आठवें पर ६० सैकिन्ड तथा नवें एवं दसवें प्रश्नों पर १२० सैकिन्ड का समय देते हैं। प्रश्न इस प्रकार हैं—'यदि सात पाउण्ड चीनी २५ सैन्ट्स् में आती है तो एक डॉलर में कितनी चीनी आएगी ?'

४. **अंकों का स्मृति-विस्तार** (Digits Forward and Backward)—इसमें मौखिक रूप से ३ से लेकर ९ तक के अङ्कों की संख्या प्रस्तुत करते हैं और परीक्षार्थी इन्हें दुहराकर कहता है। पहले आगे की ओर दुहराता है फिर उन्हें उलट कर दुहराता है। दो बार लगातार असफल होने पर परीक्षण बन्द कर देते हैं। दो प्रयासों में बिना भूल किए जितनी अधिकतम अङ्कों की संख्या सीधी या उल्टी दुहराई जाती है, वह गणन है। अधिकतम गणन १७ है।

५. **सादृश्य** (Similarities)—इसमें १२ प्रश्न-पद होते हैं। परीक्षार्थी से पूछा जाता है कि किस प्रकार दो वस्तुएँ एक समान हैं; जैसे वायु एवं जल, केला एवं सन्तरा। सामान्यीकरण की मात्रा एवं गुण के अनुसार उत्तरों का गणन ०, १, या २ करते हैं। अधिकतम गणन २४ है।

६. **शब्द-भण्डार** (Vocabulary)—इसमें क्रमिक कठिनाई के अनुसार लिखे ४२ शब्दों की सूची होती है, जैसे—सेव। परीक्षार्थी इन शब्दों का अर्थ बताता है। अत्यन्त स्पष्ट रूप से अर्थ व्यक्त करने पर १, और आंशिक रूप से व्यक्त करने पर ½ अङ्क देते हैं। कुल अङ्क ४२ हैं।

निष्पादन परीक्षण (Performance Tests)—

१. **चित्र-विधान** (Picture Arrangement)—इसमें कार्डों के एक सेट पर चित्र देते हैं। परीक्षार्थी इन्हें इस प्रकार रखता है कि एक कहानी बन सके। चित्रों के पीछे उन्हें प्रस्तुत करने का क्रम दिया रहता है। इसी के आधार पर सही उत्तर का गणन करते हैं। समय और परिशुद्धता दोनों ही गणन के आधार हैं। अधिकतम गणन २१ है।

२. **चित्र-पूर्ति** (Picture Completion)—इसमें परीक्षार्थी को १५ कार्ड दिखाये जाते हैं। प्रत्येक में एक चित्र होता है जिसका एक भाग छूटा

हुआ रहता है। परीक्षार्थी बताता है कि प्रत्येक चित्र में से कौन-सा भाग छूटा हुआ है। चित्रों को क्रमिक रूप से प्रस्तुत करते हैं। जितने चित्रों में परीक्षार्थी सही उत्तर देता है, यह उसका गणन हुआ। अधिकतम गणन १५ है।

३. **वस्तु-संग्रह** (Object Assembly)—इसमें तीन कटे हुए आकृति के टुकड़े धड़ (Manikin), आकृति (Profile), तथा हाथ (Hand) प्रस्तुत करते हैं। परीक्षार्थी एक-एक करके उन्हें जोड़कर रखता है। धड़ के लिए २ मिनिट, आकृति के लिए ३ मिनिट तथा हाथ के लिए ३ मिनिट समय देते हैं। मैनिकिन का अधिकतम गणन ६ है और कुल परीक्षण का २६।

४. **ब्लॉक डिज़ाइन** (Block Design)—इसमें १६ क्यूब्स तथा ६ डिज़ाइन का एक बक्स देते हैं। ब्लॉक के सभी धरातलों पर अलग-अलग रंग होते हैं, पर सभी ब्लॉक एक-समान होते हैं। परीक्षार्थी ब्लॉक को रंग के आधार पर डिज़ाइन के अनुरूप व्यवस्थित करता है। परीक्षण का गणन समय और परिशुद्धता दोनों के आधार पर करते हैं। ठीक से पुनरोत्पादित प्रत्येक डिज़ाइन के लिए ३ बिन्दु देते हैं और १, २ या ३ अतिरिक्त बिन्दु निश्चित समयावधि में सफलता प्राप्त करने पर। अधिकतम गणन ४२ है।

५. **अङ्क प्रतीक** (Digit Symbol)—इसमें ६ संख्याओं के नीचे उनके ६ प्रतीक लिखने होते हैं। समयावधि १½ मिनिट है। जितने अधिकतम प्रतीक प्रतिस्थापित करता है, वही परीक्षार्थी का गणन है। अधिकतम गणन ६७ है।

प्रशासन एवं गणन—

परीक्षण के प्रशासन में परीक्षक दिए हुए निर्देशों का अनुसरण करता है। परीक्षण के दौरान में अतिरिक्त टीका नहीं करनी चाहिए। निर्देशों को आवश्यकता वश दुहराया जा सकता है। यदि परीक्षार्थी किसी परीक्षण पर असफल हो तो उसे छोड़कर आगे बढ़ जाना चाहिए। यह आवश्यक नहीं है कि परीक्षण उसी क्रम में दिये जाएँ जिसमें कि वे लिखे हैं। प्रौढ़ों के लिए 'सामान्य सूचना' से और बालकों के लिए 'वस्तु-संग्रह' से प्रारम्भ करना उचित है। किशोरों पर पूरा मानदण्ड प्रयुक्त करना उपयोगी है, क्योंकि इसके परिणाम व्यावसायिक संदर्शन में प्रयुक्त हो सकते हैं। शारीरिक दृष्टि से अपाहिज व्यक्तियों पर केवल 'शाब्दिक परीक्षण' और निरक्षर व्यक्तियों या विदेशियों पर केवल 'निष्पादन परीक्षण' प्रयुक्त कर सकते हैं। ५० वर्ष या अधिक अवस्था के व्यक्तियों में क्षीण दृष्टि एवं श्रव्य-शक्ति सम्भव है। अतः एक-दो उपपरीक्षणों को छोड़ा जा सकता है।

वास्तविक प्राप्तांकों को सर्वप्रथम प्रामाणिक अङ्कों (Standard Scores) में परिवर्तित करते हैं जिनका मध्यमान १० और प्रामाणिक विचलन ३ होता है।

प्रथम पाँच उपपरीक्षणों पर प्रामाणिक अङ्कों का योग शाब्दिक मानदण्ड पर कुल अंक बताता है। इसी प्रकार निष्पादन मानदण्ड का कुल अङ्कों का योग ज्ञात करते हैं। इन अङ्कों और परीक्षार्थी की वास्तविक आयु के आधार पर सारिणी में देखकर बुद्धि-लब्धि ज्ञात करते हैं। बुद्धि-लब्धि शतांशीय मानदण्ड (Percentile Scale) पर ज्ञात करते हैं, जिसका मध्यांक १०० है। विभिन्न आयु के प्रौढ़ों के लिए बुद्धि-लब्धि मानक भी अलग होते हैं। उदाहरण के लिए वैश्लर परीक्षण में ७० गणन प्राप्त करने पर १६ वर्ष के व्यक्ति की बुद्धि-लब्धि ७९ आती है, जबकि इतने ही अङ्क प्राप्त करने पर ३५ वर्ष के व्यक्ति की बुद्धि-लब्धि ८९; ४५ वर्ष के व्यक्ति की ९३ और ५५ वर्ष के व्यक्ति की ९७ आती है। यद्यपि १० से लेकर ५९ वर्ष तक की अवस्था के लोगों की बुद्धि-लब्धि निकालने के लिए ही सारिणी दी गई है, पर अधिक अवस्था के लोगों की बु० ल० भी निकल सकती है।

परीक्षण के प्रमापीकरण के लिए जो न्यादर्श लिया गया उसमें ७ से ७० वर्ष तक की आयु के १७५१ व्यक्ति थे, पर पुरुषों की संख्या स्त्रियों से अधिक थी। इसमें १०८१ व्यक्ति १७ वर्ष से अधिक की अवस्था के थे। अधिकांश व्यक्ति न्यूयार्क नगर से थे।

वैश्लर बुद्धि-लब्धि की विश्वसनीयता एवं वैधता (Reliability and Validity of Wechsler I/Q)—

अनेक अध्ययनों से वैश्लर परीक्षण की विश्वसनीयता एवं वैधता पर प्रकाश पड़ा है। पर स्टेनफोर्ड परीक्षण की तुलना में इस पर अनुसंधान अभी अधूरा ही है। एक अध्ययन में ३५५ युवा व्यक्तियों पर वैश्लर परीक्षण की अर्द्ध-विच्छेद विश्वसनीयता ·९० थी एवं परीक्षण-पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता ·९४। इन अध्ययनों से ज्ञात होता है कि मापन की भूल कम है और इसके निष्कर्ष उतने ही यथार्थ हैं जितने स्टेनफोर्ड-बिने के। जहाँ तक वैधता का प्रश्न है, स्वयं वैश्लर ने दावा किया है कि व्यवहार में यह परीक्षण अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ है। विशेषकर औपचारिक निर्णयों में अन्य बुद्धि-परीक्षणों की अपेक्षा इसका महती उपयोग है। स्टेन्फोर्ड बुद्धि-परीक्षण के साथ इसका सह-सम्बन्ध ·८० और ·९३ के बीच है, जैसा कि रेबिन तथा वाट्सन के अध्ययनों से स्पष्ट है। बिने एवं अन्य परीक्षणों से वैश्लर परीक्षण की शाब्दिक परीक्षा का अधिक सहसम्बन्ध है, न कि निष्पादन परीक्षा का। पूरे परीक्षण का बिने से ·८६ सहसम्बन्ध है, शाब्दिक मानदण्ड का ·८० एवं निष्पादन का ·५७।

स्टेन्फोर्ड-बिने एवं वैश्लर परीक्षण में प्राप्त बुद्धि-लब्धियों की पारस्परिक तुलना करने से ज्ञात होता है कि बिने-परीक्षण में श्रेष्ठ परीक्षार्थियों के अङ्क

अधिक आते हैं, जबकि मन्द परीक्षार्थियों के वैश्लर-परीक्षण में। स्टेनफोर्ड-बिने एवं वैश्लर परीक्षणों की बुद्धि-लब्धियों में पारस्परिक सम्बन्ध बुद्धि-स्तर के अतिरिक्त अवस्था पर भी निर्भर है। अधिक अवस्था के व्यक्तियों को वैश्लर परीक्षण में अधिक लाभ रहता है और बालकों को स्टेनफोर्ड-परीक्षण में, क्योंकि स्टेनफोर्ड-बिने का परीक्षण बालकों पर प्रमापीकरण किया गया था, जबकि वैश्लर-बैलेव्यू परीक्षण प्रौढ़ों पर।

वैश्लर परीक्षण का नैदानिक उपयोग (Diagnostic Uses of the Wechsler Test)—

इस परीक्षण से परीक्षार्थी के व्यवहार एवं व्यक्तिगत विभेदों पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है जिसका नैदानिक उपयोग है। सूचना, गणितीय तर्क एवं क्रियात्मक उपपरीक्षणों में किस प्रकार के परीक्षार्थियों के किस प्रकार अंक आते हैं, इस पर काफी साहित्य उपलब्ध है और अनुसन्धान कार्य हुआ है। यह ज्ञात हुआ है कि सामान्य व्यक्तियों की तुलना में सिज़ोफ्रेनिया के रोगियों के शब्द-भण्डार में अधिक अंक आते हैं और इसी प्रकार अमूर्त्त शब्दों में। पर स्मरण-विस्तार, चित्र-विधान एवं चित्र-पूर्ति में इनके अंक कम आते हैं।

पर इन निष्कर्षों में अधिक विश्वास नहीं किया जा सकता जब तक कि अन्य विधियों से इन्हें प्रामाणिक न कर लिया जाय, क्योंकि निदान एक अत्यन्त कठिन एवं वैज्ञानिक कार्य है और एक कलात्मक प्रक्रिया भी जिसमें मनोवैज्ञानिक को छोटे-छोटे संकेतों पर निर्भर रहना पड़ता है। इसका प्रथम कारण यह है कि निदानात्मक परीक्षणों में प्रयुक्त सांख्यिकीय विधियाँ सामूहिक हैं, जबकि उपचारक निदान करने वाला व्यक्तियों का अलग-अलग निदान करता है तथा समूह पर प्रमापीकृत किए हुए मानकों का प्रयोग करने में भूल कर सकता है। दूसरे, निदानात्मक उपयोग के लिए यह आवश्यक है कि पूरे परीक्षण की ही उच्च विश्वसनीयता न हो, वरन् प्रत्येक उपपरीक्षण की अलग-अलग भी। यह सदैव सम्भव नहीं हो पाता।

वैश्लर परीक्षण पर अनुसंधान से भी यह ज्ञात हुआ है कि इसके परिणामों की नैदानिक व्याख्या में अनेक त्रुटियाँ हैं। तथापि कभी-कभी उपचारक इस परीक्षण में नैदानिक सफलता से अत्यन्त प्रभावित हुए हैं।

वैश्लर-परीक्षणों का मूल्यांकन (Evaluation of Wechsler Tests)—

उपयोग:— (१) इन परीक्षणों को विस्तृत रूप से स्वीकृति मिली है और मनोवैज्ञानिक उपचारकों ने इसे प्रोत्साहन दिया है। १९४६ के एक सर्वेक्षण से

ज्ञात हुआ कि अमरीका में लोकप्रिय परीक्षणों में स्टेन्फोर्ड-बिने के बाद इसी का नम्बर है। यह अन्य अनेक परीक्षणों के लिए कसौटी के रूप में प्रयुक्त होता है। इस परीक्षण पर जो अनेक अध्ययन हुए हैं, उससे भी इसकी लोकप्रियता का परिचय मिलता है। उपचार-गृह का वातावरण जिसमें कि इस परीक्षण का विकास हुआ और बैलेव्यू मनोचिकित्सक अस्पताल की प्रतिष्ठा ने भी उपचारकों एवं मनोचिकित्सकों में इस परीक्षण की लोकप्रियता बढ़ाई है।

(२) वैश्लर परीक्षण ने एक प्रौढ़ परीक्षण की दीर्घकाल से अनुभव की गई कमी को पूरा किया है। इसका प्रमापीकरण भी प्रौढ़ों पर किया गया है और मानक भी उसी आधार पर दिये गए हैं। मानसिक आयु से बुद्धि-लब्धि निकालने में जो अवैज्ञानिकता है, उसे भी दूर कर दिया गया है।

(३) वैश्लर परीक्षण व्यवहार का प्रमापीकृत विधि से निरीक्षण करने का अवसर प्रदान करता है। परीक्षार्थी के व्यक्तित्व-गुण, वह विशेष रूप से निष्पादन प्रश्नों को किस प्रकार हल करता है, इससे ज्ञात होते हैं। कुछ प्रश्नों के उत्तरों में उसके मन के भावों का प्रक्षेपण होता है, जैसे यदि कोई बालक यह बताए कि प्रशंसा और दण्ड दोनों समान हैं तो इससे उसकी व्यक्तित्व-रचना पर प्रकाश पड़ेगा।

(४) वैश्लर परीक्षण का प्रशासन अत्यन्त सरल है। पूरे परीक्षण में लगभग ४५ मिनिट और एक घंटे के बीच समय लगता है। बिने परीक्षण की तुलना में निर्देश भी सरल हैं। परीक्षक का भी विशेष कार्य नहीं होता। १० से लेकर ६० वर्ष तक के व्यक्तियों की इससे परीक्षा ली जा सकती है। बालकों के लिए भी परीक्षण का एक प्रतिरूप निकल चुका है।

परिसीमाएं—(१) वैश्लर परीक्षण में विभिन्न प्रकार के गणन निकालने की जो पद्धति दी गई है वह स्पष्ट नहीं है। विवरण-पत्रिका में दो संस्करण के पश्चात् भी अनेक स्थलों पर सांख्यिकीय पद्धतियों को स्पष्ट रूप से व्याख्यित नहीं किया गया है।

(२) परीक्षण के लिए न्यादर्श मुख्यतः न्यूयार्क क्षेत्र में लिया गया था। अमरीका के अन्य भागों पर अब भी इसका प्रमापीकरण नहीं किया गया है। अतः इस बात की अत्यन्त आवश्यकता है कि भौगोलिक दृष्टिकोण से प्रतिनिधित्व करने वाला एक बड़ा न्यायदर्श लिया जाए और इसी आधार पर मानक बनाए जाएं। विवरण-पुस्तिका में दिए गए मानक सामान्य रूप से पूरे अमरीका का प्रतिनिधित्व नहीं करते।

(३) वैश्लर परीक्षण के कुछ प्रश्न-पद, विशेषकर सामान्य सूचना एवं

शब्द-भण्डार उपपरीक्षणों में, असन्तोषजनक हैं। आधुनिक विकास को ध्यान में रखते हुए इनमें परिवर्त्तन करना आवश्यक हो गया है।

(४) इस परीक्षण में भी बुद्धि-लब्धि निकालने का जो आधार लिया गया है वह अधिक तर्कसंगत नहीं है। स्वयं परीक्षण भी बुद्धि के किसी स्पष्ट सिद्धान्त पर आधारित नहीं है।

(५) परीक्षण पर्याप्त रूप से कठिन नहीं है कि यह श्रेष्ठ बुद्धि के परीक्षार्थियों की बुद्धि का मापन कर सके।

वास्तव में अधिक अवस्था के व्यक्तियों के लिए यह एक आदर्श परीक्षण है, पर १६ वर्ष से कम की अवस्था पर वैश्लर परीक्षण प्रयुक्त हो या स्टेन्फोर्ड-बिने, यह बहुत कुछ व्यक्तिगत रुचि पर निर्भर है। व्यवहार में स्कूल जाने वाले बालकों, संवेगात्मक रूप से अस्थिर बालकों पर एवं अन्य उद्देश्यों में यह परीक्षण काफी उपयोगी सिद्ध हुआ है।

बर्ट के तर्कशक्ति परीक्षण
(Burt's Reasoning Tests)

बर्ट के तर्कशक्ति परीक्षण उच्च स्तर के परीक्षार्थियों के लिए अनुपयुक्त हैं। ये श्रेष्ठ विद्यार्थियों की अपेक्षा मन्द बुद्धि वाले विद्यार्थियों का पता लगाने के लिए बनाए गए थे। बर्ट ने 'जर्नल ऑफ ऐक्सपेरीमेन्टल पैडेगौगी' के जून तथा दिसम्बर १९१९ के अंकों में उन परिस्थितियों का विवरण दिया है जिनके अन्तर्गत परीक्षण बने और उनका प्रमाणीकरण हुआ। इस पत्रिका में लिखे गए लेख के अनुसार परीक्षण के प्रश्न प्रत्येक बालक को मौखिक तथा व्यक्तिगत रूप से दिए जाने चाहिए। स्वयं बर्ट ने प्रत्येक समस्या को एक अलग कार्ड पर टाइप किया। तदनन्तर बालक को कार्ड देकर निम्न निर्देश दिए गए—"क्या तुम इस छोटी सी समस्या को पढ़ोगे। इसके अन्त में एक आसान सा प्रश्न है। जब तुम प्रश्न को पढ़ चुको तो उसके ऊपर जो लिखा है, उसे ध्यान से फिर पढ़ो। और प्रयत्न करो कि तुम उसका उत्तर दे सकते हो या नहीं।" मन्द बालकों को परीक्षक स्वयं समस्या पढ़कर बता सकता है। यदि कोई बालक किसी विशेष शब्द को पढ़ने में या उसका अर्थ समझने में असमर्थ है तो उन्मुक्त रूप से उसकी सहायता करनी चाहिए। प्रत्येक परीक्षण का सही उत्तर देने पर या सही रूप से तर्क प्रस्तुत करने पर एक अङ्क देना चाहिए। यदि आवश्यक हो तो बालक को अतिरिक्त प्रयास करने देना चाहिए, किन्तु किसी भी परीक्षण में इनकी संख्या तीन से अधिक नहीं होनी चाहिए। प्रत्येक असफल प्रयत्न के लिए एक चौथाई अंक काट लेना चाहिए। इसी प्रकार ठीक से व्यक्त न हुए तर्क के लिए या अनुपयुक्त तर्क के लिए भी $\frac{1}{4}$, $\frac{1}{2}$ या $\frac{3}{4}$ अङ्क

काटना चाहिए। बालक जो तर्क देता है, उसके बारे में उससे विवाद करके अधिक जानकारी प्राप्त करना भी परीक्षण का एक महत्वपूर्ण भाग है। इससे उसकी बौद्धिक प्रक्रिया, स्वभाव आदि के बारे में ज्ञान प्राप्त होता है। समया-अवधि का कोई प्रतिबन्ध नहीं है। आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक बालक पर सभी परीक्षण किये जायें, क्योंकि यह अत्यन्त नीरस कार्य होगा। प्रत्येक तीन में से एक परीक्षण उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार परीक्षणों की सूची में बजाय ५० के केवल १७ परीक्षण बचेंगे। व्यवहार में यह छोटी सूची पर्याप्त उपयोगी है, क्योंकि इससे शीघ्र ही मानसिक आयु का मापन सम्भव है। बर्ट के ५० परीक्षण किस प्रकार के हैं यह निम्नलिखित उद्धृत परीक्षण क्रमांक ३७ से ज्ञात होगा :—

"मैं गिरिजाघर से प्रारम्भ करके १०० गज चला, मैं दायीं ओर घूमा और ५० गज चला। मैं दुबारा दायीं ओर घूमा और १०० गज चला। मैं गिरिजाघर से कितना दूर हूँ ?"

बर्ट के तर्कशक्ति परीक्षणों में ७ एवं १४ वर्ष के लिए सात-सात परीक्षण हैं, जबकि ८ से १३ वर्ष के लिए छः।

बिने-साइमन मापदण्ड का हैरिंग द्वारा किया गया परिवर्द्धन
(Herring Revision of the Binet-Simon Scale)

इस परीक्षण में निम्न प्रकार के पद हैं :—

प्रथम समूह :

१. चित्र में वस्तुएँ बताना
२. शृङ्खला में अंक बताना
३. गद्यांश पढ़ना
४. उलटे अंक दुहराना

द्वितीय समूह :

५. घुटना, अंगुली, कान, पैर की ओर संकेत करना
६. वाक्य दुहराना
७. संख्याओं के तीन युग्मों में सबसे बड़ी संख्या बताना
८. मुखाकृतियों में अन्तर बताना
९. काले, भूरे एवं सफेद का नाम बताना
१०. समस्यायों का हल प्रस्तुत करना
११. विचारों का पुनरोत्पादन, सरल पाठन
१२. सात अमूर्त्त शब्दों को परिभाषित करना

१३. विचारों का पुनरोत्पादन, कठिन पाठन

तृतीय समूह :

१४. पाँच समस्यायों का हल देना
१५. आठ दिए वाक्यों में असंगतियों का पता लगाना
१६. तीन-तीन शब्दों के चार वाक्य बनाना
१७. चार शब्दों की लय बताना
१८. वस्तुओं में समानताएँ बताना
१९. पाँच कहावतों का निर्वचन करना
२०. विचारों का पुनरोत्पादन, अधिक कठिन अध्ययन
२१. तीन अनियमित तथा असंगठित वाक्यों को पढ़ना
२२. गणित की तीन समस्याओं का हल निकालना

चतुर्थ समूह :

२३. चार वाक्यों का दुहराना
२४. निर्देश परीक्षण
२५. वस्तुओं में असमानता बताना
२६. सम्बन्धित पर अलग-अलग कथनों के आधार पर सामान्यीकरण करना
२७. दो पद्यांशों को समझना
२८. वाक्य पूर्त्ति करना
२९. समस्या का पाठन, एवं हल करना

पाँचवाँ समूह :

३०. पाँच परिचित वस्तुओं के नाम बताना
३१. प्रतिरूपों की तुलना करना
३२. तीन अनुदेशों का पालन करना
३३. समस्या सुलझाना
३४. अंकों का दुहराना
३५. तीन बड़े वाक्यों का दुहराना
३६. पढ़ी हुई विषय-वस्तु में आनुपातिक सम्बन्ध ज्ञात करना
३७. गुप्त-लेखन

इस प्रकार इस परीक्षण के पद बिने के आयु-मापक के पदों के ही समान हैं। परिवर्त्तन उनकी व्यवस्था में है।

शिशुओं के बुद्धि-परीक्षण
(Tests of Infant Intelligence)

हमने अब तक जिन परीक्षणों का वर्णन किया है, उनमें से अनेक शिशुओं एवं छोटे बालकों पर प्रयुक्त हो सकते हैं। उदाहरण के लिए परिवर्द्धित स्टेन-फोर्ड-बिने परीक्षण (दो वर्ष से ऊपर), व्हूलमैन मानसिक विकास परीक्षण (तीन माह से ऊपर), कैलीफोर्निया मानसिक परिपक्वता परीक्षण (किन्डर-गार्टन के बच्चों के लिए) । पर कुछ परीक्षण विशेषकर शिशुओं एवं विद्यालय में भर्त्ती होने से पूर्व छोटे बालकों के लिए बनाए गए हैं। इनमें से कुछ निम्न-लिखित हैं :—

मिनेसोटा पूर्व-विद्यालय मापदण्ड (Minnesota Pre-school Scale)—

यह परीक्षण १½ वर्ष से लेकर ६ वर्ष तक की आयु के शिशुओं के लिए है एवं दो प्ररूपों में उपलब्ध है। इसमें २६ पद हैं। इसका प्रमापीकरण विभिन्न सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के ९०० शिशुओं पर किया गया। परीक्षण की रूपरेखा इस प्रकार है—

१. गुड़िया देखकर शरीर के अंग बताना।
२. चित्र में वस्तुओं, जैसे कुर्सी की ओर संकेत करना।
३. पाँच उपस्थित वस्तुओं के नाम बताना।
४. वृत्त, त्रिकोण आदि के चित्र का अनुकरण करना।
५. प्रयोगकर्त्ता को देखकर रेखाओं का अनुकरण करना।
६. प्रयोगकर्त्ता को देखकर दिए हुए बारह घन से आकृतियाँ बनाना।
७. तीन दिए चित्रों में बताना कि उनमें क्या है।
८. किसी आधार पर कील से ठुके चार नॉक्स के घन के साथ प्रहस्तन करना।
९. निर्देश मिलने पर विभिन्न वस्तुओं के साथ प्रहस्तन करना।
१०. समझ—विभिन्न सरल परिस्थितियों में क्या करना है, यह बताना।
११. वस्तुओं में अन्तर बताना।
१२. स्मृति से वस्तुओं के नाम बताना।
१३. वस्तुओं की पहिचान करना।
१४. दिए हुए रंगों के नाम बताना।
१५. पैन्सिल से आकार खींचना।
१६. चौकोर कटे चित्र के भागों का समन्वायोजन करना।
१७. अपूर्ण चित्रों के छूटे भागों की ओर संकेत करना।

१८. अंकों को मौखिक दुहराना।

१९. विकर्ण रूप से (Diagnolly) कटे चित्र के भागों को समन्वायोजित करना।

२०. परीक्षण-प्रशासक का अनुकरण करके कागज मोड़ना।

२१. वाक्य के शब्दों को पुनर्व्यवस्थित करना।

२२. विकृत चित्रों में गलत तथ्यों की ओर संकेत करना।

२३. शब्द-भण्डार—दी हुई सारिणी में शब्दों की व्याख्या करना।

२४. मौखिक प्रस्तुत की गई शब्दों की सारिणी में विलोम शब्द बताना।

२५. कार्ड बोर्ड की घडी में हाथ से घड़ी की सुई की विभिन्न स्थितियों का अनुकरण करना।

२६. पाँच या अधिक शब्दों का वाक्य बोलना।

इन पदों में प्राप्त फलांकों को मानसिक आयु में परिवर्त्तित करना सम्भव है। शाब्दिक एवं अशाब्दिक फलांक अलग-अलग प्राप्त किए जा सकते हैं। यद्यपि परीक्षण १½ से ६ वर्ष तक की आयु के लिए है, पर तीन वर्ष की आयु से कम के शिशुओं पर यह अधिक उपयोगी है।

मैरिल-पामर मानसिक परीक्षण (Merill Palmer Scale of Mental Tests)—

यह परीक्षण २४ से लेकर ६३ माह तक के बालकों के लिए उपयुक्त है। इसमें ३८ उपरीक्षण हैं एवं इसका प्रमापीकरण ६३१ शिशुओं पर हुआ था। उपपरीक्षणों का चयन पदों की रुचिकरता, आयु के बढ़ने के साथ विभेद-क्षमता आदि के आधार पर किया गया था। मापदण्ड को ६ महीने के अन्तर से आयु-स्तरों में बाँटा गया है। यदि कोई शिशु किसी स्तर के उपपरीक्षणों में से आधे से अधिक में सफल हो जाता है, तो उसे आगे के स्तर के उपपरीक्षण मिल जाते हैं। परीक्षण से तीन प्रकार के फलांक प्राप्त होते हैं :—(१) वास्तविक फलांकों की समतुल्य मानसिक आयु, (२) वास्तविक फलांकों के समतुल्य प्रमाप-फलांक, एवं (३) शतांशीय फलांक। किन्तु बुद्धि-लब्धि प्राप्त नहीं होती। परीक्षण शिशुओं की बुद्धि में अन्तर बताने में समर्थ है। अतः वैध है। वर्षायु के साथ परीक्षण का वैधता-गुणांक ·९२१ है, एवं स्टेनफोर्ड-बिने परीक्षण से ·७८, तथापि यह बुद्धि के केवल कुछ ही पक्षों का मापन करता है। यह गति पर बहुत अधिक बल देता है एवं गत्यात्मक योग्यता (Motor Abilities) का मापन नहीं करता।

जैसिल विकास अनुसूची (Gesell Development Schedule)—

जैसिल विकास अनुसूची केवल एक परीक्षण ही नहीं है। यह शिशुओं एवं विद्यालय में प्रवेश से पूर्व के बालकों के व्यवहार के मूल्यांकन करने, विकास एवं मानसिक क्षमता जानने का एक दृष्टिकोण है। यह बालक के वर्ष-प्रतिवर्ष के विकास के मूल्यन की एक विधि है। इसके प्रशासन के लिए प्रशिक्षित व्यक्ति की आवश्यकता पड़ती है, जो औपचारिक ज्ञान रखता हो, और जो परिणामों का निर्वचन कर सके। इस अनुसूची का विकास १९३८ में हुआ। इसमें शिशु के विकास के विभिन्न सोपनों के लिए अनुसूचियाँ दी हैं। इनसे जन्म से लेकर १२ महीने तक प्रत्येक चार सप्ताह के अन्तर पर प्रत्याशित व्यवहार का संकेत मिलता है। एवं १२ महीने के बाद प्रत्येक तीन माह के अन्तर से ४२ महीने की आयु तक। यदि निर्वचन सावधानी से किया जाए, तो इन अनुसूचियों का अत्यधिक पूर्वकथनात्मक महत्व है।

शिशु-परीक्षणों का मूल्यांकन (Evaluation of Infant Tests)—

शिशुओं के व्यवहार एवं विकास का पता लगाने की दो विधियाँ हैं: (१) प्रमापीकृत परीक्षण, (२) विकास अनुसूचियाँ। यह ज्ञात हुआ है कि शिशुओं के बुद्धि-परीक्षणों, जैसे मिनोसोटा पूर्व-विद्यालय मापदण्ड, मैरिल-पामर मापदण्ड आदि का अधिक पूर्वकथनात्मक (Predictive) मूल्य नहीं है। प्रारम्भिक महीनों में जो फलांक प्राप्त होते हैं उनका बाद के महीनों में प्राप्त फलांकों के साथ उचित सहसम्बन्ध प्राप्त नहीं होता। प्रारम्भिक एवं बाद के परीक्षणों में जितना ही समयान्तर बढ़ता जाता है, सहसम्बन्ध गुणांक कम होता जाता है। शिशु-परीक्षणों के स्वयं आपस के सहसम्बन्ध गुणांक निम्न आते हैं। इसी प्रकार शिशु-परीक्षणों का स्टेनफोर्ड-बिने परीक्षण से सह-सम्बन्ध निकालने पर वैधता गुणांक उच्च नहीं आते। इसके अनेक कारण हैं:—

(१) शिशु-परीक्षण मुख्यतः निष्पादन-परीक्षण हैं। अतः अन्य परीक्षणों के साथ, जो मुख्यतया शाब्दिक हैं, इनका वैधता गुणांक अधिक नहीं है।

(२) छोटे शिशुओं के साथ एकतानता (Rapport) स्थापित करना अत्यन्त कठिन है। अतः जब अपरिचित प्रशासनकर्त्ता उनसे प्रश्न पूछता है या कार्य कराता है, तो वे नकारात्मक अभिवृत्ति का प्रदर्शन करते हैं। उनकी प्रतिक्रियाओं का मूल्यांकन करना कठिन कार्य है। इससे विचलन त्रुटि बढ़ती है और परीक्षणों की उपयोगिता कम होती है।

(३) प्रारम्भिक जीवन में विकास की गति अत्यन्त तीव्र होती है। परिवर्त्तन गुणात्मक तथा परिमाणात्मक दोनों प्रकार के होते हैं। अतः परीक्षणों

द्वारा किया गया मूल्यांकन पूर्वकथन के लिए उपयोग में नहीं लाया जा सकता। यह सम्भव है कि प्रारम्भिक वर्षों में स्वयं मानस-रचना में ही परिवर्त्तन हो जाए।

(४) बाद के वर्षों की अपेक्षा प्रारम्भिक वर्षों में वातावरण अधिक प्रभावी होता है। एक ही वर्षायु के बालकों का मानसिक विकास विभिन्न वातावरण के कारण अलग-अलग हो सकता है; अतः उनके फलांक भी।

प्रचलित बुद्धि-परीक्षणों को प्रौढ़ों पर प्रयुक्त करने का औचित्य
(Justification for the Use of Various Tests on Adults)

अनेक बुद्धि-परीक्षण प्रौढ़ व्यक्तियों की बुद्धि का ठीक से मापन नहीं करते। इसके कई कारण हैं :—

(१) अधिकांश परीक्षण स्कूल एवं कॉलिज के विद्यार्थियों पर प्रमापीकृत किए गए हैं, क्योंकि ये आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं। इस कारण प्रमापीकृत समूह का आयु-प्रसार अत्यन्त सीमित रहता है और मानक विद्यार्थियों की योग्यता पर आधारित रहने के कारण प्रौढ़ों के लिए उपयुक्त नहीं होते।

(२) इन परीक्षणों में पद-चयन की कसौटी भी स्कूल में प्रगति, ज्ञानोपार्जन या अध्यापक के मूल्यांकन को रखा जाता है। वह परीक्षण वैध समझा जाता है जो इस चयन के आधार पर या व्यवहार में खरा उतरे। किन्तु स्कूल एवं वास्तविक जीवन के अनुभव एक-समान नहीं हैं। अतः ये परीक्षण प्रौढ़ों के लिए उपयोगी नहीं होते।

(३) अधिकांश परीक्षणों में वर्षायु तथा मानसिक आयु में सम्बन्ध ज्ञात करते हैं। इनके सांख्यिकीय निर्वचन भी इस कसौटी पर आधारित रहते हैं। किशोर अवस्था तक तो यह उचित है, पर प्रौढ़ों में वर्षायु को मानसिक योग्यता का आधार मानना अनुचित है। इसी कारण वैश्लर ने अपने परीक्षण में मानसिक आयु की विधि का त्याग कर दिया है।

(४) परिपक्व अवस्था के प्रौढ़ व्यक्तियों की रुचियाँ और मानसिक कार्य-कलाप विशिष्ट हो जाते हैं। एवं उनकी बुद्धि अधिक जटिल होती है। अतः परीक्षणों से उसका मापन करना एक अन्याय है।

(५) परीक्षणों की परम्परागत विषयवस्तु प्रौढ़ों के लिए उपयुक्त नहीं है, क्योंकि वर्षों के अनुभव एवं परीक्षण-निर्माण के आधार पर एकत्र पद प्रायः बालकों के परीक्षणों से लिए गए हैं। इनमें गति पर बल दिया जाता है, जबकि प्रौढ़ उत्तर देने से पहले सोचना पसन्द करते हैं।

बिन्दु-मापदण्ड
(Point Scales)

बिन्दु-मापदण्ड वे हैं जिनमें फलांक बिन्दुओं में दिए जाते हैं, न कि मानसिक आयु में। बिन्दु-मापदण्डों में पदों का आयु के अनुसार संगठन नहीं किया जाता। एक बिन्दु-मापदण्ड का आयु-मापदण्ड में परिवर्त्तन सम्भव है। १९१६ में यर्क्स तथा ब्रिजिज ने "बुद्धि मापन के लिए बिन्दु-मापदण्ड" (The Point Scale for the Measurement of Intelligence) बनाया। १९२३ में इसका परिवर्द्धन हुआ। एक अन्य महत्वपूर्ण बिन्दु-मापदण्ड १९२२-२३ में निर्मित हैरिंग परीक्षण हैं। यर्क्स के अनुसार बिन्दु एवं आयु मापदण्डों में निम्नलिखित अन्तर हैं :—

आयु-मापदण्ड (Age Scale)	**बिन्दु-मापदण्ड** (Point Scale)
१. पदों का संगठन वर्ष या अन्य आयु-इकाइयों के आधार पर होता है।	१. मापदण्ड क्रमिक एवं एक-समान होता है। विभिन्न इकाइयों में पदों का संगठन नहीं होता।
२. आयु की वृद्धि के साथ सफलता के सम्बन्ध को आधार मानकर पदों एवं परीक्षणों का चयन होता है।	२. परीक्षण एवं पदों का चयन किस उद्देश्य की पूर्त्ति के लिए मापन किया जा रहा है, इस आधार पर किया जाता है।
३. असम्बन्धित परीक्षणों को एक मिश्रित रूप में उपस्थित करते हैं।	३. परीक्षण इस प्रकार बनता है कि व्यापक आयु-प्रसार में समान रूप से प्रयुक्त हो सके।
४. परीक्षार्थी की प्रतिक्रियाओं का 'पूर्ण या बिल्कुल नहीं' के आधार पर मूल्यांकन होता है।	४. प्रतिक्रियाओं का सापेक्षिक मूल्यांकन सम्भव है।
५. मापदण्ड गुणात्मक होता है।	५. मापदण्ड परिमाणात्मक होता है।
६. इन मापदण्डों पर किए गए मापन का पूर्णरूप से सांख्यिकीय विवेचन सम्भव नहीं है।	६. इन मापदण्डों पर किए गए मापन का पूर्ण रूप से सांख्यिकीय विवेचन सम्भव है।
७. विभिन्न आयु के परीक्षण अनियमित परिमाण के एवं असमान होते हैं।	७. विभिन्न अवस्थाओं में परीक्षण नियमित परिमाण में एवं तुलनात्मक होते हैं।

: १६ :

सामूहिक बुद्धि-परीक्षरण

सामूहिक बुद्धि-परीक्षणों का मूल्यांकन

सामूहिक बुद्धि-परीक्षणों का प्रचलन आजकल बड़े पैमाने पर हो रहा है। ये व्यक्तित्व परीक्षणों का स्थान लेते जा रहे हैं। इसका कारण इनकी मित-व्ययता एवं व्यावहारिकता है। उन परिस्थितियों में जहाँ अनेक व्यक्तियों का एक साथ परीक्षण लेना आवश्यक हो, जैसे सेना, उद्योग, अनुसंधान एवं विद्यालय में, ये विशेषकर उपयोगी सिद्ध हुए हैं। अनुकूल वातावरण में ये परीक्षण व्यक्तिगत परीक्षणों से कम विश्वसनीय नहीं हैं। इनकी पूर्वसूचन वैधता (Predictive Validity) भी पर्याप्त है। इसी कारण भारतवर्ष में भी अनेक परिस्थितियों में शिक्षण संस्थाओं, व्यावसायिक एवं संदर्शन केन्द्रों पर इनका प्रयोग हो रहा है। इनको प्रयुक्त करने के लिए अधिक दक्ष परीक्षकों की आवश्यकता नहीं पड़ती। इनका प्रमापीकरण अधिक सावधानी से किया जा सकता है और मानक निर्धारित हो सकते हैं। प्रारम्भिक से लेकर उच्च कक्षाओं तक के लिए इन मानकों का तुलनात्मक अध्ययन में मुख्य उपयोग है। इन परीक्षणों में पदों का चयन अत्यन्त सावधानी से होता है और उचित निर्देश दिए जाते हैं। यद्यपि ये परीक्षण मुख्यतया शाब्दिक होते हैं, तर्क, संख्याएँ, ज्यामितिक प्रतिरूप आदि से सम्बन्धित समस्यायें भी दी जा सकती हैं। इनके प्रशासन एवं अंकीकरण में भी सुविधा होती है।

सामूहिक बुद्धि-परीक्षणों में एक मुख्य कमी यह है कि ये बहुत-कुछ भाषा पर आधारित होते हैं। या तो इनके प्रश्न शाब्दिक होते हैं, अथवा कम से कम निर्देश तो शाब्दिक होते ही हैं। अतः उन व्यक्तियों पर इनका प्रयोग सम्भव नहीं है, जिन्हें भाषा या वाचन सम्बन्धी कठिनाई हो। इन परीक्षणों में गति पर काफी बल दिया जाता है। अतः धीमी गति से काम करने वाले छात्रों या प्रौढ़ व्यक्तियों के इन परीक्षणों में पर्याप्त अंक नहीं आते। यदि वे ही प्रश्न जो गति-परीक्षणों में पूछे गये हों, किसी अन्य ऐसे परीक्षणों में पूछे जाएँ, जिनमें समय-अवधि का कोई बन्धन न हो, तो इनके अंक अधिक आएँ। ऐसे परीक्षण अपेक्षाकृत कम ही हैं जिनमें गति एवं शक्ति के सिद्धान्तों का समन्वय हो एवं जिनमें प्रश्नों को कठिनाई के क्रम में दिया जाए। प्रायः समय-अवधि इस प्रकार निर्धारित करने का चलन है कि प्रत्येक छात्र सभी प्रश्न हल कर सके। सामूहिक परीक्षणों की एक अन्य कमी यह है कि इनमें योग्यता के सभी पक्षों का मापन सम्भव नहीं है। कुछ ऐसे प्रश्न-पदों का सम्मिलित हो जाना सम्भव है कि अधिक कुशल छात्र ऐसे उत्तर का औचित्य ठहरा सके जो परीक्षण रचयिता की दृष्टि से गलत हो। कुछ ऐसे परीक्षार्थी होते हैं जो मानसिक निरोधों (Inhibitions) के कारण सामूहिक परीक्षणों में प्रश्नों का ठीक से उत्तर नहीं दे पाते। इन परीक्षार्थियों के साथ एकतानता (Rapport) स्थापित करना आवश्यक है। एकतानता की सहायता से इन निरोधों को दूर किया जा सकता है। निर्देश सभी को एक साथ दिए जाते हैं, उनकी समझ में व्यक्तिगत अन्तर का ध्यान नहीं रखा जाता। कुछ परीक्षार्थी इन निर्देशों को ही नहीं समझ पाते। उनके लिए बुद्धि-परीक्षण बिल्कुल ही अवैध है। बुद्धि के सामूहिक परीक्षणों का निदानात्मक उपयोग भी नहीं है। बहुत कम परीक्षण इस प्रकार हैं, प्राथमिक योग्यता परीक्षण (Primary Abilities Test) तथा 'कैलीफोर्निया मानसिक परिपक्वता परीक्षण' (California Mental Maturity Test) को छोड़कर जिनका नैदानिक महत्व है। यद्यपि उद्योग, सेना एवं विद्यालय में इनका सामान्य उपयोग है, पर व्यक्तिगत परीक्षणों की तुलना में इनकी पूर्वकथन वैधता कम है। प्रमापीकरण-समूह तुलनात्मक न होने के कारण विभिन्न बुद्धि-परीक्षणों के परिमाणों को पारस्परिक कसौटी पर रखना भी सम्भव नहीं है।

कुछ महत्वपूर्ण सामूहिक परीक्षण

आर्मी अल्फा परीक्षण (Army Alpha Test)—

सन् १९१६ में टर्मन का स्टेन्डफोर्ड-बिने परीक्षण प्रकाशित हुआ और

उसके एक वर्ष बाद ही अमरीका को प्रथम महायुद्ध में शामिल होना पड़ा। इस बात की तीव्र आवश्यकता प्रतीत हुई कि लाखों व्यक्तियों में से जो मानसिक रूप से अनुपयुक्त हैं, छाँट कर निकाल दिया जाय एवं दूसरी ओर उन व्यक्तियों की भी खोज की जाए जिनमें अफसर बनने की क्षमता हो। शीघ्र ही 'अमरीकी मनोवैज्ञानिक संस्था' (American Psychological Association) ने विशेषज्ञों की एक कमेटी बनाई, जिसे अनेक व्यक्तियों पर एक साथ प्रयुक्त करने के लिए परीक्षण की रचना करनी थी। येल विश्वविद्यालय के प्रॉफेसर रॉबर्ट एम० यर्क्स (Robert M. Yerkes) इसके सभापति बने। एल० एम० टर्मेन, आॅर्थर एस० ओटिस, हेनरी एच० गोडर्ड, एफ० एल० वैल्स, वाल्टर वी० बिन्घम, जी० एम० ह्विपिल तथा एफ० एच० हेन्स इसके सदस्य थे। परीक्षण की रचना करने में कमेटी ने उस बात का विशेष ध्यान रखा कि जन्मजात योग्यता का ही मापन किया जाय, एवं परीक्षण जहाँ तक सम्भव हो सके, शिक्षा एवं प्रशिक्षण के प्रभाव से स्वतंत्र रहे।

इस कमेटी की देख-रेख में आॅर्मी अल्फा परीक्षण बना। इसमें ८ भाग हैं और प्रत्येक में १२ से लेकर ४० तक प्रश्न हैं। प्रत्येक भाग में प्रारम्भ में सरल प्रश्न दिए गए हैं और क्रमिक रूप से इनका कठिनाई स्तर बढ़ता जाता है। परिमाणस्वरूप सरल प्रश्नों को तो सभी परीक्षार्थी हल कर सकते हैं, पर कठिन प्रश्नों को बहुत कम। प्रथम परीक्षण में निम्न निर्देश परीक्षार्थी को जोर से पढ़ कर सुनाए जाते हैं :—

(१) (२) (३) (४) (५) (६) (७) (८) (९)

"सावधान! दूसरे प्रश्न को ध्यान से देखो, जिसमें अंकों के चारों ओर वृत्त खींच दिए गए हैं। जब मैं 'चलो' कहूँ, तो दूसरे से लेकर पाँचवें वृत्त तक रेखा खींचो, जो तीसरे वृत्त के नीचे से चले और पाँचवे वृत्त के ऊपर से। ......'चलो'।"

अन्य परीक्षण इस प्रकार हैं :—

दूसरा परीक्षण—	बीस गणित सम्बन्धी समस्याएँ।
तीसरा परीक्षण—	सामान्य समझ से सम्बन्ध रखने वाले परीक्षण।
चौथा परीक्षण—	शब्दों के चालीस जोड़े—यह निर्णय करने के लिए कि वे पर्यायवाची हैं या विलोमार्थक।
पाँचवाँ परीक्षण—	ऐसे शब्द जिन्हें वाक्यों में व्यवस्थित करना है।
छठा परीक्षण—	अंक-सारिणी की पूर्ति करना; जैसे- -३-४-६-९-१३-१८......।

सातवाँ परीक्षण— अनुपातपूरक प्रश्न; जैसे—मेयर : नगर : : ...।
आठवाँ परीक्षण— सामान्य सूचना।

निर्देश के अतिरिक्त परीक्षण की समयावधि २४ मिनिट है। अधिकतम फलांक २१२ बिन्दु है। १३५-श्रेष्ठ; १०५-१३४ बहतर; ४५-१०४ संतोषप्रद। अफसरों का सामान्य फलांक १०५ और सिपाहियों का ६० है।

ऑर्मी बीटा परीक्षण (Army Beta Test)—

इस परीक्षण में निर्देश संकेत के माध्यम से दिए जाते हैं। इसमें इस प्रकार की समस्याएँ होती हैं—पथजाल में रेखा खींचना, दिए हुए ढेर में काष्ठ-पिंड गिनना, अंकों के स्थान पर प्रतीक प्रतिस्थापन करना अंकों की दो सूचियों में समानताएँ तथा अन्तरों को ज्ञात करना, चित्रपूर्ति करना एवं सरल ज्यामितिक प्रश्नों को हल करना। आर्मी बीटा परीक्षण योग्यता के उन्हीं पक्षों का मापन नहीं करता जिनका कि आर्मी अल्फा परीक्षण। पर यह उन व्यक्तियों की योग्यता का मापन करने में अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ जो अँग्रेजी भाषा से परिचित न थे या जिनकी विद्यालय की शिक्षा कम, अपर्याप्त एवं अपूर्ण रही थी। सन् १९१८ में लगभग १५ लाख व्यक्तियों पर ऑर्मी अल्फा परीक्षण प्रयुक्त हुआ एवं कई सहस्त्र पर आर्मी बीटा परीक्षण। उपयुक्त एवं अनुपयुक्त सिपाहियों को छाँटने में परीक्षण श्रेष्ठ सिद्ध हुआ। इन परीक्षणों के प्रयोग से मनोवैज्ञानिकों को बुद्धि एवं इसके परीक्षण के बारे में पर्याप्त सूचना भी उपलब्ध हुई। इससे अन्य परीक्षणों की रचना करने एवं उनके निष्कर्षों को ज्ञात करना सरल हो गया।

सैन्य सामान्य वर्गीकरण परीक्षण (Army General Classification Test)—

इस परीक्षण का विकास द्वितीय महायुद्ध में उन्हीं उद्देश्यों की पूर्ति करने के लिए हुआ, जिसके लिए प्रथम महायुद्ध में ऑर्मी अल्फा का विकास हुआ। लाखों व्यक्तियों पर इसे प्रयुक्त किया गया। सन् १९४५ में जब इसका परिवर्द्धित संस्करण प्रकाशित हुआ, इस परीक्षण का सामान्य तथा सिविल प्रयोग (Civilian use) प्रारम्भ हो गया। इस परीक्षण में शब्द-भण्डार, गणितीय तर्क तथा ब्लॉकों की गणना आदि से सम्बन्धित प्रश्न-पद हैं। वास्तविक परीक्षण प्रारम्भ करने से पहले, तीन पृष्ठों में अभ्यास के लिए पद दिए गए हैं। फलांक शतांशीय मानक तथा प्रमाप मानकों में दिए गए हैं। इनका मध्यमान १०० है और प्रमाप विचलन २०। इसकी परीक्षण-पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता ·८२ है एवं अर्ध-विच्छेद विश्वसनीयता ·९५। जहाँ तक वैधता का प्रश्न

है, स्कूल के विषयों के साथ सहसम्बन्ध ·७३ है । 'ऑर्मी अल्फा' एवं 'ओटिस उच्च मानसिक योग्यता परीक्षण' के साथ इसका वैधता गुणांक क्रमशः ·९० एवं ·८३ है ।

क्हूलमैन-एन्डर्सन बुद्धि-परीक्षण (Kuhlman-Anderson Intelligence Tests)—

इस परीक्षण के अनेक संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं । यह एक से लेकर बारह कक्षाओं के लिए उपयुक्त है । यह ९ पुस्तिकाओं में प्रकाशित है और प्रत्येक में १० से लेकर १२ तक उपपरीक्षण हैं । कुल ३९ उपपरीक्षण हैं । प्रत्येक बालक को १० उपपरीक्षण दिए जाते हैं । चित्र, गणित, ज्यामितिक चित्र, शब्द-सम्बन्ध, सूचना आदि से सम्बन्धित प्रश्न होते हैं । प्रत्येक उप-परीक्षण के लिए अलग फलांक-गणना की गई है एवं मानसिक आयु निकाली गई है । यह परीक्षण मुख्यतया असाधारण रूप से श्रेष्ठ बालकों की पहिचान करने में उपयोगी है ।

टरमैन का मानसिक योग्यता समूह परीक्षण (Terman Group Test of Mental Maturity)—

सन् १९२० में आर्मी अल्फा परीक्षण के आधार पर ही इसकी रचना हुई । इसमें ये १० उपपरीक्षण हैं :—(१) सूचना, (२) कहावतों एवं अन्य तथ्यों का निर्वचन, (३) शब्दों के अर्थ एवं उनके विलोम, (४) तर्क-संगत चयन, (५) गणितीय समस्याएँ, (६) वाक्यार्थ, (७) अनुपात पूर्ति, (८) अव्यवस्थित वाक्य, (९) वर्गीकरण, एवं (१०) अंक श्रृङ्खला की पूर्ति ।

परीक्षण के प्रशासन में ३५ मिनिट लगते हैं । कुल प्रश्नों की संख्या १८५ है । इनका चयन ८८६ प्रश्नों में से किया गया था । ७ से लेकर १२ कक्षाओं के लिए शतांशीय मानक प्राप्य हैं । इसका प्रमापीकरण गोरे बालकों पर किया गया था, जिनमें से अधिकांश कैलीफोर्निया के नगर के विद्यालयों से लिए गए थे । शैक्षिक सफलता ज्ञात करने में एवं सामान्य वर्गीकरण में परीक्षण अत्यन्त उपयोगी है । अत्यधिक शाब्दिक होने के कारण औद्योगिक क्षेत्र में इस परीक्षण का उपयोग संदेहास्पद है ।

यह सामान्य एवं श्रेष्ठ बालकों में विभेद करने में भी अनुपयुक्त है । हाई स्कूल एवं कॉलिज स्तरों पर प्रायः इसका उपयोग होता है ।

टरमैन-मैक्नीमर मानसिक योग्यता परीक्षण (Terman-McNemar Test of Mental Ability)—

यह परीक्षण सन् १९४१ में 'टरमैन मानसिक योग्यता समूह परीक्षण' के

आधार पर प्रकाशित हुआ। इसमें सात उपपरीक्षण हैं :—(१) सूचना, (२) पर्यायवाची, (३) तार्किक चयन, (४) वर्गीकरण, (५) अनुपातपूर्ति, (६) ब्लोम शब्द, (७) सर्वश्रेष्ठ उत्तर। इसके दो प्रतिरूप हैं। सात से लेकर नवीं कक्षाओं तक इसकी अर्द्ध-विच्छेद विश्वसनीयता ·९६ है। वास्तविक फलांकों के आधार पर मानसिक आयु ज्ञात करने के लिए एक सारिणी दी गई है। इसके आधार पर भी बुद्धि-लब्धि निम्न सूत्र से ही निकालते हैं :—

$$I.Q. = \frac{M.\ A.}{C.\ A.} \times १००$$

मिलर अनुपात-पूर्त्ति परीक्षण (Miller Analogies Test)—

इसमें १०० अनुपात-पूर्त्ति पद हैं जो विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित हैं। इसका स्वयं-प्रशासन सम्भव है। निर्देश परीक्षण पुस्तिका पर छपे रहते हैं। फलांकन-गणना हाथ एवं मशीन दोनों से सम्भव है। यद्यपि समयावधि ५० मिनिट निश्चित है, तथापि यह मुख्यतया शक्ति परीक्षण है। विभिन्न विद्यार्थियों के लिए अलग अलग शतांशीय मानक दे दिए गए हैं। अर्द्ध-विच्छेद विश्वसनीयता गुणांक ·९२ है। 'ग्रेज़ुएट रिकॉर्ड' परीक्षण के साथ इसका वैधता गुणांक ·७ से अधिक है।

पूर्त्ति, गणित, शब्द-भण्डार एवं निर्देश परीक्षण (Completion, Arithmatic, Vocabulary and Directions–CAVD–Test)—

इस परीक्षण का विकास ई० एल० थॉर्नडायक ने किया। इसके प्रथम भाग में वाक्य-पूर्ति पद हैं। दूसरे भाग में गणितीय तर्क सम्बन्धी पद। तीसरे और चौथे भाग में क्रमशः शब्द-भण्डार एवं वाक्यों की समझ से सम्बन्धित पद हैं। परीक्षण पूर्णरूपेण शाब्दिक है। CAVD परीक्षण १७ स्तरों के लिए बनाया गया है। यह विशेषकर उच्च-स्तर की योग्यता वाले प्रौढ़ व्यक्तियों की योग्यता का मापन करने में उपयुक्त है। परीक्षण चार समानान्तर प्रतिरूपों में उपलब्ध हैं। एम० से लेकर क्यू० स्तर के परीक्षणों के प्रशासन में ४ से लेकर ६ घण्टे तक लगते हैं। चारों प्रतिरूपों के अन्तर्सहसम्बन्ध ·८८ से लेकर ·९३ तक हैं।

अमरीकी परिषद् मनोवैज्ञानिक परीक्षण (American Council Psychological Examination—A C E)—

इसकी रचना एल०एल० थर्सटन तथा टी० जी० थर्सटन ने १९२४ में की। इसके अनेक परिवर्द्धित संस्करण प्रकाशित हुए हैं। यह विद्यालय में प्रवेश के इच्छुक छात्रों (College Entrants) के लिए है। माध्यमिक विद्यालयों

(High School) के लिए भी इसका एक प्रतिरूप उपलब्ध है। इसके दो भागों के अलग-अलग फलांक हैं—भाषात्मक, एवं परिमाणात्मक (Linguistic and Quantitative—L and Q)। पर अब इन अलग फलांकों का प्रयोग नहीं करते।

कैलीफोर्निया मानसिक परिपक्वता परीक्षण (California Test of Mental Maturity—CTMM)—

इस परीक्षण का विकास सलीवान, क्लार्क एवं टीग्स ने किया। यह १९३६ में प्रकाशित हुआ और किन्डरगाटन से लेकर प्रौढ़ स्तर तक के व्यक्तियों के लिए है। स्कूल जाने वाले परीक्षार्थियों को इसमें एक से लेकर डेढ़ घण्टे तक का समय लगता है। इसका एक संक्षिप्त प्रतिरूप भी प्राप्य है।

: १७ :

निष्पादन बुद्धि-परीक्षण

निष्पादन परीक्षणों का विस्तृत रूप से उपयोग होता है, विशेषकर औपचारिक क्षेत्र में। सामान्यतया इन्हें शाब्दिक परीक्षाओं के साथ प्रयुक्त करते हैं। भाषा-सम्बन्धी कठिनाई होने पर व्यक्तिगत कमियों के निदान में इनका विशेष महत्व है। विदेशी व्यक्तियों, बहरों या अल्प-शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों पर भी शाब्दिक परीक्षणों के स्थान पर निष्पादन परीक्षणों का उपयोग करते हैं। विभिन्न प्रकार के निष्पादन परीक्षण उपलब्ध हैं। कुछ परीक्षण छोटे बालकों के लिए बनाए गये हैं और अत्यन्त रुचिकर हैं। कुछ में समन्वय (Co-ordination) पर अधिक बल दिया जाता है, और कुछ में योजना एवं तर्क पर।

उन बालकों की बुद्धि ज्ञात करने में, जो शाब्दिक परीक्षणों में स्वयं को ठीक से व्यक्त नहीं कर सकते, ये परीक्षण विशेष रूप से उपयोगी हैं। उन बालकों का मूल्यांकन करने में भी इन्हें प्रयुक्त करना चाहिए जो स्कूल के विषयों में असमर्थ रह जाने के कारण, शाब्दिक परीक्षणों से घबराते हैं। ये परीक्षण औपचारिक निरीक्षण का अवसर प्रस्तुत करते हैं। ये मानसिक क्षमता में कितनी कमी है, इस ओर संकेत करते हैं। विभिन्न संस्कृतियों की पारस्परिक तुलना में भी ये उपयोगी हैं, क्योंकि इन परीक्षणों की विषय-वस्तु

इस प्रकार होती है कि यह विभिन्न समूहों या संस्कृतियों में एक-सी हो। दूसरी ओर शाब्दिक परीक्षण सांस्कृतिक विषय-वस्तु से प्रभावित रहते हैं।

इन परीक्षणों की एक मुख्य कमी यह है कि इनका प्रशासन केवल व्यक्तिगत रूप से ही सम्भव है। इसमें समय एवं धन का अपव्यय होता है। इन परीक्षणों के विश्वसनीयता गुणांक भी निम्न होते हैं, क्योंकि ये योग्यता के कुछ ही पक्षों का मापन करते हैं। इन परीक्षणों से जिस बुद्धि का मापन होता है, वह बुद्धि बिने एवं अन्य शाब्दिक परीक्षणों द्वारा मापित बुद्धि से भिन्न होती है, पर बिने बुद्धि-लब्धि एवं निष्पादन परीक्षणों से प्राप्त बु० ल० में धनात्मक सहसम्बन्ध है।

कुछ महत्वपूर्ण निष्पादन परीक्षण
(Some Important Performance Tests)

गुडएनफ का मनुष्य-कर्षण परीक्षण (Goodenough's Draw a Man Test)—

यह परीक्षण ३½ वर्ष से लेकर १३½ वर्ष की अवस्था के बालकों के लिए बना है। यह गुडएनफ एवं अन्य व्यक्तियों की इस खोज पर आधारित है कि कर्षण (Drawing) बुद्धि की ओर संकेत करता है। इसमें इस प्रकार निर्देश देते हैं: "मैं इन कागजों पर तुमसे आदमी का चित्र बनवाना चाहता हूँ। जितना अच्छे से अच्छा चित्र बना सकते हो, बनाओ। सावधानी से कार्य करो, मैं देखूँगा कि इस स्कूल के लड़के और लड़कियाँ भी अन्य स्कूलों के बालकों जैसे ही कार्य करते हैं।" फलांक-गणना कुछ पदों की उपस्थिति पर निर्भर है, जैसे— पैर, नाक, अँगुली, अनुपात आदि क्योंकि कर्षण में इनकी उपस्थिति अवस्था के साथ-साथ बढ़ती है। फलांक-गणना चित्रण के गुण पर निर्भर नहीं है। अधिकतम फलांक ५१ है। फलांक मानक विभिन्न आयु के लिए दिये गए हैं। ३½ वर्ष के लिए फलांक २ है; ४½ वर्ष की आयु के लिए ६; ५½ वर्ष के लिए १०; तथा १३½ वर्ष के लिए ४२। विभिन्न अध्ययनों में परीक्षण की विश्वसनीयता ·७७ और ·९३ के मध्य आई है। फलांक-गणना पूर्णरूप से वस्तुगत (Objective) नहीं है, क्योंकि विभिन्न व्यक्ति समान रूप से फलांक नहीं देते। अन्य परीक्षणों के साथ सहसम्बन्ध निकालने पर वैधता-गुणांक उच्च नहीं आता। १९४५ में मैक्ह्यू (Mchuqh) के एक अध्ययन के अनुसार १९३७ के स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण के साथ सहसम्बन्ध गुणांक ·४१ है और त्रुटि ·०६। वातावरण का भी फलांक-गणना पर प्रभाव पड़ता है। जहाँ तक

नामकरण का प्रश्न है, गुडएनफ के परीक्षण को केवल सौजन्यता स्वरूप ही निष्पादन परीक्षण कहा जा सकता है। वास्तव में तो यह पत्र-पेन्सिल परीक्षण (Paper and Pencil Test) है। इसका प्रथम प्रमापीकरण १९२६ में हुआ था।

पिन्टनर-पैटर्सन निष्पादन परीक्षण (Pintner Patterson Scale of Performance Tests)—

यह परीक्षण सन् १९१७ में प्रकाशित हुआ एवं इसका परिवर्द्धन तथा संक्षिप्तीकरण सन् १९३७ में। यह केवल व्यक्तिगत रूप से प्रयुक्त हो सकता है। इसमें निम्न १५ उप-परीक्षण होते हैं :—

(१) **अश्वा एवं अश्व परीक्षण** (Mare and Foal Test)—इसमें किसी प्रक्षेत्रांगण (Farm-yard) का चित्र दिया रहता है, जिसमें अन्य वस्तुओं के अतिरिक्त अश्वा एवं अश्व भी दिखाये रहते हैं। इसमें ग्यारह अंश कटे रहते हैं। परीक्षार्थी को इन ११ अंशों को मिलाकर चित्र बनाना पड़ता है। फलांक-गणना ५ मिनिट तक समय एवं अशुद्धियों के आधार पर की जाती है।

(२) **सैग्युन आकृति फलक** (Seguin Form Board)—इसमें २०"×१०$\frac{3}{4}$" का एक फलक होता है, जिसमें से १० ज्यामितिक टुकड़े कटे रहते हैं। फलक में दिए हुए विवरों (Apertures) में इन्हें फिट करना पड़ता है।

(३) **पंच प्रतिरूप आकृति फलक** (Five Figure Form Board)—यह 'सैग्युन आकृति फलक' के समान ही होता है, पर उससे कुछ कठिन। इसमें ५ विवरों में ११ कटे हुए अंश फिट करने पड़ते हैं।

(४) **द्वय प्रतिरूप आकृति फलक** (Two Figure Form Board)—यह ऊपर की ही भाँति है, पर उससे सरल।

(५) **कैस्युस्ट आकृति फलक** (Casuist Form Board)—यह भी ऊपर की ही भाँति है, पर कुछ कठिन। इसमें ४ रन्ध्रों में १२ कटे अंश फिट करने पड़ते हैं।

(६,७,८) **आकृति फलक** (Form Boards)—ऊपर की ही भाँति, पर प्रत्येक में विवरों एवं कटे अंशों की संख्या असमान है।

(९) **मनुष्यक परीक्षण** (Manikin Test)—इसमें ६ अंशों में एक गुड़िया होती है। दिए हुए स्थानों में हाथ, पैर इत्यादि फिट करने होते हैं।

(१०) **लक्षण पार्श्वचित्र परीक्षण** (Feature Profile Test)—इसमें आठ अंश होते हैं, जिनसे लक्षणों का एक पार्श्व-चित्र बनाना होता है।

(११) **यान-परीक्षण** (Ship Test)—इसमें यान का एक चित्र होता है, जिसमें १० चौकोर अंशों को मिलाना पड़ता है।

(१२) **चित्रपूर्ति परीक्षण**—(Picture Completion Test)—इसमें ग्रामीण चित्र दिए रहते हैं, जिसमें १० वर्गांश कटे रहते हैं। परीक्षार्थी उचित वर्गांश लेकर चित्रपूर्ति करता है। ५ मिनिट में कितने अंशों की पूर्त्ति की गई, इस आधार पर फलांक-गणना की जाती है।

(१३) **प्रतिस्थापन परीक्षण** (Substitution Test)—इसमें ज्यामितिक प्ररूपों की कतार दी हुई होती है। परीक्षार्थी कुंजी के अनुसार इनमें अंक प्रतिस्थापन करता है। ५० प्ररूपों के अंक प्रतिस्थापन में कितना समय लगा, इस आधार पर फलांक-गणना करते हैं।

(१४) **अभियोजन फलक**(Adaptation Board)—इसमें चार गोल छिद्र दिए रहते हैं। इनमें से तीन का व्यास ६.८ सेन्टीमीटर होता है एवं चौथे का ७ से० मी०। परीक्षार्थी को दिखाया जाता है कि किस प्रकार एक काष्ठ सब से बड़े छेद में फ़िट होता है। वह अन्य छिद्रों में भी इसी प्रकार करता है।

(१५) **घन-अनुकरण परीक्षण** (Cube Imitation Test)—इसमें ५ काले १" के घन होते हैं। इनमें से चार को परीक्षार्थी के सम्मुख एक कतार में दो इंच की दूरी पर रखते हैं। परीक्षण-प्रशासनकर्त्ता चारों को पाँचवें घन से चुलाते हैं। चुलाने या च्यावन करने (Tap) की गति एक प्रति सैकिन्ड होती है। तत्पश्चात् इसी का अनुकरण करके परीक्षार्थी को ऐसा करने को कहा जाता है।

पिन्टनर-पैटर्सन परीक्षण एक बिन्दु-मापदण्ड है। प्रत्येक उपपरीक्षण के फलांकों को मानसिक आयु में बदलने के लिए अलग-अलग सारिणीयाँ दी गई हैं। १५ में से १२ उपपरीक्षणों में गति एक महत्वपूर्ण तत्त्व है। सामान्य बुद्धि के मापन के लिए यह एक श्रेष्ठ परीक्षण है। यह शाब्दिक परीक्षणों का अनुपूरक है, पर उनके स्थान पर इसका प्रयोग उपयुक्त नहीं है। यह बहरों के लिए विशेष उपयोगी है, पर बड़ी आयु के बालकों के लिए नहीं।

आर्थर निष्पादन मापदण्ड (Arthur Performance Scale)—

'पोर्टियस पथजाल परीक्षण' (Porteus Maze Test) एवं कोह काष्ठपिंड परीक्षण (Kohs' Block Design Test) की भाँति इस परीक्षण का प्रकाशन भी सन् १९३० में हुआ। स्टूलमैन-बिने परीक्षण के साथ इसका सहसम्बन्ध ·८ है। सामान्य एवं मानसिक रूप से दोषपूर्ण दोनों प्रकार के बालकों पर प्रयोग करके एक अध्ययन में ज्ञात हुआ है कि आर्थिक परीक्षण पर मानसिक

आयु स्टेनफोर्ड परीक्षण से निम्न होती है। १९४७ में इस परीक्षण का परिवर्द्धित संस्करण छपा, जिसे 'द्वितीय प्रतिरूप' (Form II) कहते हैं। इसका प्रमापीकरण ९६८ मध्यवर्गीय बालकों पर किया गया।

रैविन उत्तरोत्तर रूपांकन परीक्षण (Raven's Progressive Matrices Test)—

बुद्धि के सामान्य तत्व का मापन करने के लिए इसका निर्माण हुआ। इसमें अमूर्त विषय-वस्तु में सम्बन्ध-स्थापन योग्यता की आवश्यकता पड़ती है। कुल ६० रूपांकन हैं, जिसमें प्रत्येक में एक अंश काट कर निकाला रहता है। ६ या ८ दिए हुए विकल्पों में से परीक्षार्थी सही अंश छाँटकर बताता है जिसे रूपांकन के कटे स्थान में रखने से रूपांकन पूर्त्ति हो सके। फिलहाल में ५ से लेकर ११ वर्ष तक के बालकों के लिए इस परीक्षण का एक संस्करण छपा है।

यह परीक्षण सर्वप्रथम १९३६ में प्रकाशित हुआ। प्रौढ़ों के लिए इसके मानक १९४० में छपे। तब से यह कई बार परिवर्द्धित हो चुका है। यह निरीक्षण एवं स्पष्ट चिन्तन की तत्कालीन क्षमता का मापन करता है। दिए हुए रूपांकन उत्तरोत्तर कठिन होते जाते हैं। प्रशासन में आयु का कोई बन्धन नहीं है। प्रयोज्य को स्वयं अपनी गति के अनुसार कार्य करने दिया जाता है। सम्पूर्ण फलांक से परीक्षार्थी की बौद्धिक क्षमता का आभास मिलता है। पर इस परीक्षण को सामान्य बुद्धि का मापक नहीं कह सकते। इसमें लगभग २० मिनिट लगते हैं।

लीटर अन्तर्राष्ट्रीय निष्पादन परीक्षण (Leiter International Performance Scale)—

इसका विकास हवाई द्वीप के विभिन्न जातीय समूहों के बालकों पर प्रमापीकरण करके हुआ। इनमें प्रारम्भिक तथा माध्यमिक विद्यालय के छात्र थे। कोई निर्देश नहीं दिए जाते। इसमें विभिन्न प्रकार के पद होते हैं—चित्र, काष्ठ-रूपांकन, चित्र-पूर्त्ति, अनुपात-पूर्त्ति आदि।

सैग्युन आकृति फलक परीक्षण (Seguin Form Board Test)—

यह मन्द-बुद्धि बालकों के लिए है। निष्पादन परीक्षणों में प्रयुक्त यह एक अत्यन्त सरल आकृति फलक है।

नौक्स घन परीक्षण (Knox Cube Test)—

यह तात्कालिक स्मृति परीक्षण है। इसमें प्रशासनकर्त्ता चार घनों को एक पूर्व-निश्चित क्रम में च्यावित (Tap) करता है। तब इस बात की ओर संकेत

करता है कि परीक्षार्थी भी उसी प्रकार करे। इस विधि को दुहराया जाता है, और क्रम-व्यवस्था जटिल होती जाती है।

भाटिया बुद्धि-परीक्षण (Bhatia Intelligence Test Battery)--

भाटिया का उद्देश्य एक ऐसे परीक्षण की रचना करना था, जो केवल मध्यवर्ग पर ही नहीं, वरन् सामान्य रूप से भारतीय बालकों पर प्रयुक्त हो सके। भारतीय जनता का अधिकांश अशिक्षित या अर्द्ध-शिक्षित होने के कारण एक निष्पादन परीक्षण के निर्माण से ही इस उद्देश्य की पूर्त्ति सम्भव थी। अतः इस ओर प्रयास किया गया। यह परीक्षण अशिक्षित एवं विद्यालय में पढ़ने वाले शिक्षित, सभी बालकों के लिए उपयुक्त है। न्यादर्श (Sample) में ११ से लेकर १६ वर्ष तक के लड़के सम्मिलित थे। पर्याप्त संख्या में लड़कियाँ प्राप्त न होने के कारण, तथा लड़के एवं लड़कियों की बुद्धि-लब्धि में अन्तर न होने के कारण उन्हें न्यादर्श में सम्मिलित नहीं किया गया। कुल ११५४ लड़कों का न्यादर्श है, जिसमें ६४२ विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थी एवं ५१२ अशिक्षित लड़के सम्मिलित हैं। परीक्षण का विकास क्रमशः हुआ। सन् १९४५ तक जो सम्पूर्ण बैटरी तैयार हुई, उसमें निम्न पाँच परीक्षण थे : (१) कोह का काष्ठ अनुकृति परीक्षण, (२) अलेक्जेंडर का पुनस्सरण परीक्षण, (३) आकृति-चित्रण परीक्षण, (४) अङ्क तत्काल-स्मृति परीक्षण, (५) चित्र-रचना परीक्षण।

(१) कोह् का काष्ठ अनुकृति परीक्षण (Koh's Block Design Test) पहले कोह द्वारा निर्मित सभी १७ अनुकृतियों को प्रयुक्त किया गया। पर समय की मितव्ययता का ध्यान करके इनमें से केवल १० का चयन किया गया। अनुकृतियों के मौलिक रूप में काफी परिवर्त्तन कर दिया गया है। कोह की १७ आकृतियों में जिन १० आकृतियों के परिवर्तित रूप इसमें सम्मिलित हैं, वे हैं— १, २, ४, ५, ७, १०, ११, १५, १६, १७। प्रथम पाँच आकृतियों में प्रत्येक के लिये २ मिनिट और अन्तिम पाँच में से प्रत्येक के लिए ३ मिनिट समय निर्धारित है।

(२) अलेक्जेंडर का पुनस्सरण परीक्षण (Alexander's Pass Along Test)—अलेक्जेन्डर ने ९ उपपरीक्षणों का प्रयोग किया था, उनमें से ८ भाटिया बैटरी में ले लिए गए हैं। प्रथम चार में से प्रत्येक के लिए २ मिनिट, एवं अन्तिम चार में से प्रत्येक के लिए ३ मिनट समय निर्धारित है।

(३) आकृति-चित्रण परीक्षण (Figure Drawing Test)--यह भाटिया का अपना परीक्षण है, जिसमें परीक्षार्थियों को बिना पैन्सिल उठाये

कुछ आकृतियाँ बनानी पड़ती हैं। कुल ८ आकृतियाँ हैं। प्रथम चार आकृतियों में प्रत्येक के लिए २ मिनिट एवं अन्तिम चार में प्रत्येक के लिए ३ मिनिट समय निर्धारित है।

(४) **अंकतत्काल-स्मृति परीक्षण** (Immediate Memory Test for Digits)— इसके दो भाग हैं: (१) तत्काल स्मृति—सीधी, (२) तत्काल स्मृति—उलट कर। सीधे परीक्षण में कम अंकों से प्रारम्भ करके उनकी संख्या बढ़ाते जाते हैं। प्रयोज्य इन्हें दुहराकर बोलता है। कितने अङ्कों तक वह दुहरा सकता है, यह उसका फलांक है। अब अङ्क उलटकर दुहराने पड़ते हैं। अनपढ़ बालकों के लिए अङ्कों के स्थान पर अक्षरों की व्यवस्था है, जैसे—ब-ट, स-ट।

(५) **चित्र-रचना परीक्षण** (Picture Construction Test)—इसमें चित्रों के कटे टुकड़े दिए जाते हैं, एवं परीक्षार्थी उन्हें जोड़ कर पूरा चित्र बनाता है। चित्रों के टुकड़े चौकोर हैं, पर आवश्यक रूप से वर्ग नहीं। चित्र भारतीय वातावरण के अनुरूप हैं, और पाँच में से चार का चयन बालकों की पत्र-पत्रिकाओं से किया गया है। प्रथम तीन में से प्रत्येक के लिए २ मिनट एवं अन्तिम दो में से प्रत्येक के लिए ३ मिनिट समय निर्धारित है।

इस परीक्षण की विश्वसनीयता अर्द्ध-विच्छेद (Split-half) विधि से निकाली गई है। शिक्षित समूह के लिए गुणांक ·८५१ है और अशिक्षित पर ·८४१। शिक्षित बालकों पर परीक्षण का वैधता गुणांक अध्यापकों के मत के साथ तुलना करके प्राप्त किया गया है। यह ·७०३ है। अशिक्षित बालकों पर गाँव में उनकी बुद्धि के बारे में लोगों की क्या राय है, इस आधार पर वैधता गुणांक प्राप्त किए गए हैं। यह ·७१७ हैं।

भाटिया बुद्धि-परीक्षण के निष्कर्ष अत्यन्त दिलचस्प एवं महत्वपूर्ण हैं। मध्यम वर्ग में शिक्षित बालक निम्न वर्ग एवं कृषक वर्ग के शिक्षित बालकों से श्रेष्ठतर हैं। नगर एवं ग्राम के बालकों की बुद्धि में सार्थक (Significant) अन्तर नहीं है। जाति के आधार पर शिक्षित हिन्दू बालकों में सबसे अधिक बुद्धि-लब्धि कायस्थों की है। पिछड़ी जातियों की बु० ल० अन्य जातियों की तुलना में कम नहीं आती। अशिक्षितों में कारीगरों की बु० ल० सर्वाधिक है; उसके बाद दूकानदारों की, एवं सबसे कम श्रमिक परिवारों के बालकों की। पर ये अन्तर सार्थक नहीं हैं। अशिक्षितों में पूर्वी प्रदेश के बालकों की बुद्धि-लब्धि पश्चिमी प्रदेश के बालकों की बुद्धि-लब्धि से कम है। इसका कारण आर्थिक पिछड़ापन हो सकता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य

कुछ उच्चतर हैं, किन्तु पिछड़े वर्गों से तुलना करने पर इनकी बुद्धि-श्रेष्ठता में अन्तर सार्थक नहीं है ।

शिक्षित एवं अशिक्षित बालकों की पारस्परिक तुलना करने से ज्ञात होता है कि दोनों के मध्यमानों में सार्थक अन्तर (Significant difference) है। प्रशिक्षितों का मध्यमान अधिक है। पर प्रमाप-विचलन में अधिक अन्तर नहीं है। कोह के अनुकृति परीक्षण, एलेक्जेण्डर अनुसरण परीक्षण, अनुकृति-चित्रण परीक्षण एवं चित्र-रचना परीक्षण में शिक्षित बालकों का प्रमाप-विचलन अधिक है, एवं तत्काल स्मृति परीक्षण में अशिक्षित बालकों का। अशिक्षित परीक्षार्थियों के निम्न निष्पादन अंक आवश्यक रूप से यह संकेत नहीं करते कि उनकी जन्म-जात योग्यता कम है। परीक्षण के प्रशासन में यह अनुभव हुआ कि ये बालक परीक्षण-प्रक्रिया से अपरिचित से लगते हैं। उन्हें ध्यान केन्द्रित करके निष्पादन में लगा रहना कठिन लगता है।

परीक्षण से बालक के बारे में, विशेषकर उसके स्वभाव के सम्बन्ध में औपचारिक सूचना प्राप्त होती है, पर यह परिसीमित है। इस प्रकार की सूचना प्राप्त हो सकती है : "क्या बालक स्थिर गति से कार्य करता है ?" "असफल होने पर क्या वह शीघ्र ही हताश हो जाता है ?" आदि। उसके विचार-प्रवाह के बारे में ज्ञान प्राप्त करना भी सम्भव है। उदाहरण के लिए अनुकृति-चित्रण परीक्षण में यह जाना जा सकता है कि क्या परीक्षार्थी बालक अनुकृति की जटिलता से परेशानी में पड़ गया है।

: १८ :

बुद्धि परीक्षणों का मूल्यांकन

बुद्धि-परीक्षणों का अब व्यापक रूप से प्रयोग होने लगा है। विद्यालयों में, सेना में, उपचार में, औद्योगिक कर्मचारियों के चयन में, मानसिक पिछड़ेपन की पहचान में एवं अन्य क्षेत्रों में, सभी देशों में इन्हें दिन पर दिन अधिक महत्व देने लगे हैं। पर बुद्धि-परीक्षणों में अनेक कमियाँ हैं एवं इनका प्रयोग त्रुटियों से रहित नहीं है। हम प्रस्तुत अध्याय में इन परीक्षणों के उपयोग एवं इनकी परिसीमाओं का वर्णन करेंगे।

परीक्षणों के उपयोग
(Uses of Tests)

विद्यालयों में—

विद्यालयों में अनेक उद्देश्यों के लिए परीक्षणों को प्रयुक्त किया जाता है, जैसे परीक्षार्थी की योग्यता, उसकी क्षमता, आवश्यकताओं, अभियोग्यता आदि के बारे में सूचना प्राप्त करके उसकी अभियोजन क्षमता बढ़ाने, योग्यता के अनुसार उनका वर्गीकरण करने, शैक्षिक तथा व्यावसायिक संदर्शन के बारे में तथ्य एकत्र करने, तथा विशिष्ट कठिनाइयों से ग्रसित व्यक्तियों की पहिचान करने के लिए। परीक्षणों से प्राप्त निष्कर्षों के

आधार पर बच्चों की प्रशंसा एवं निन्दा की जाती है । उसे किस प्रकार प्रेरणा प्रदान की जाए, यह बहुत कुछ परीक्षण परिणामों को ध्यान में रखकर किया जाता है । आजकल शिक्षा-क्षेत्र में व्यापक रूप से परीक्षणों का उपयोग होता है । अमरीका में शैक्षिक अनुसंधान समीक्षा ('Review of Educational Research') पत्रिका में शिक्षा में किए गए अनुसन्धानों का ब्यौरा प्रकाशित होता रहता है । 'शिक्षा के अध्ययन की राष्ट्रीय संस्था' (National Society for the Study of Education) द्वारा प्रकाशित 'वार्षिक पुस्तकों' (Year books) में भी शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षणों के विषय में महत्वपूर्ण तथ्य दिए रहते हैं ।

यह बड़े दुःख का विषय है कि स्कूल एवं कॉलिजों में परीक्षण प्रयुक्त करते समय प्रायः कोई उद्देश्य निश्चित नहीं किया जाता या उद्देश्य इतने सीमित तथा संकीर्ण होते हैं कि परीक्षणों के परिमाणों का उचित उपयोग नहीं हो पाता । यह धारणा भी हानिकारक सिद्ध होती है कि परीक्षणों का निर्माण करने वाले अध्यापकों के लिए किसी विशिष्ट प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं है । इन गलत धारणाओं के कभी-कभी बड़े भयंकर परिणाम निकलते हैं । विद्यालयों में प्रयुक्त होने वाले परीक्षणों के निर्माण एवं उनके प्रशासन में काफी सावधानी से काम लेना चाहिए एवं परिणामों के उचित निर्वचन (Interpretation) की व्यवस्था होनी चाहिए ।

विभिन्न वर्गों के अध्ययन में—

मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान में विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत सामूहिक इकाइयों के मानसिक एवं व्यवहारात्मक अन्तरों का अध्ययन करना अत्यन्त महत्पूर्ण है । किन्तु ऐसे अध्ययनों में अनुसन्धानकर्त्ता अपनी इच्छानुसार किसी सामूहिक इकाई के किसी विशिष्ट गुण में परिवर्त्तन नहीं कर सकता । जैसे, यह ज्ञात करने के लिए कि विभिन्न धर्मावलम्बियों के धार्मिक विश्वासों का अन्य क्षेत्रों में उनकी अभिवृत्तियों के साथ क्या सम्बन्ध है, यह नहीं किया जा सकता कि कुछ शिशुओं को एक प्रकार के धार्मिक वातावरण में पाला जाए एवं कुछ अन्य शिशुओं को दूसरे प्रकार के धार्मिक वातावरण में । इसी प्रकार रतिरोगों (Venereal diseases) का मानसिक क्षमता पर क्या प्रभाव पड़ता है, यह जानने के लिए कुछ व्यक्तियों को जान-बूझकर इस रोग से पीड़ित नहीं किया जा सकता । और न ही लिंग-भेद का किसी विशिष्ट गुण से सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए किन्हीं व्यक्तियों का लिंग-परिवर्त्तन ही किया जा सकता है । इस प्रकार के अध्ययन करने के लिए तो मनोवैज्ञानिक को पहले से ही उपलब्ध

उचित व्यक्तियों को प्रयोज्य स्वरूप लेना होगा । यदि ऐसे अध्ययन करना सम्भव हो और उनके परिणामों का ठीक से निर्वचन किया जा सके तो विभिन्न समूहों के व्यवहार पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है । हम नीचे मन्द एवं उत्कृष्ट बुद्धि वाले बालकों, लिंग-भेद, एवं राष्ट्रीय तथा जातीय अन्तरों का वर्णन करेंगे—

(१) **मन्द एवं उत्कृष्ट बुद्धि के बालकों में अन्तर**—मानसिक परीक्षणों से यह ज्ञात हुआ है कि उत्कृष्ट बुद्धि बालक मन्द बुद्धि बालकों की अपेक्षा अधिक हृष्ट-पुष्ट, स्वस्थ एवं शारीरिक शक्ति में श्रेष्ठ होते हैं, न कि उनकी अपेक्षा ठिगने एवं अस्वस्थ तथा क्षीणकाय, जैसा कि प्रायः विश्वास किया जाता है । यद्यपि इनके व्यक्तिगत-सामाजिक गुणों में पर्याप्त विभेद मिलता है, पर उत्कृष्ट बुद्धि बालक अपनी आयु के अन्य बालकों की अपेक्षा अधिक लोक-प्रिय, बहिर्मुखी एवं विनम्र होते हैं । कॉक्स के १९२५ के अध्ययन में, एवं स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय में टरमैन के चार ग्रन्थों में छपे विवरण में (१९२१-४५), इस सम्बन्ध में विस्तृत निष्कर्ष प्रकाशित हुए हैं ।

मन्द एवं उत्कृष्ट बुद्धि वाले बालकों का तुलनात्मक अध्ययन करते समय दो मुख्य समस्याएँ उपस्थित होती हैं—

(अ) बाल्यकाल की श्रेष्ठता एवं प्रौढ़ावस्था के उपार्जन में सम्बन्ध—इस सम्बन्ध में कॉक्स ने श्रेष्ठ बालकों की बाल्यावस्था के व्यवहार के सम्बन्ध में जो अध्ययन किए हैं, उनसे पर्याप्त प्रकाश पड़ा है । कॉक्स ने १४५० से लेकर १८४९ तक चार शताब्दियों के बीच उत्पन्न हुए ३०० विख्यात महापुरुषों का अध्ययन किया, जिनके बारे में फ्रेंच, जर्मन तथा अँग्रेजी भाषा में जीवन साहित्य उपलब्ध था, और जो अपनी स्वयं की क्षमता के कारण महान् बने थे, न कि वंश-परम्परा के कारण । इनमें चौदह विभिन्न राष्ट्रीयताओं के व्यक्ति थे । इस अध्ययन से पता चलता है कि बाल्यावस्था की रुचियों, सामान्य व्यवहार, आदि का बाद की अवस्था के उपार्जन से काफी सम्बन्ध है । टरमैन के अध्ययन से भी यही निष्कर्ष निकला है । टरमैन के प्रयोज्य अधिकांश अमरीकन थे और उनमें से ७०% किसी न किसी अच्छे व्यवसाय में लगे थे । इनकी आय सामान्य व्यक्तियों की आय से अधिक थी । इनमें से अधिकांशतः की कला, साहित्य, विज्ञान या अन्य किसी न किसी क्षेत्र में महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ थीं ।

(ब) प्रतिभा की पहिचान एवं इसकी व्याख्या—मानसिक परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि परीक्षण में अधिक अंक प्राप्त करने या अधिक बुद्धि-लब्धि आने का प्रतिभाशीलता से निश्चित सम्बन्ध है । टरमैन ने जिन प्रतिभाशाली बालकों का अध्ययन किया, उन्हें तीन श्रेणियों में बाँटा गया । ज्ञात हुआ कि

प्रथम श्रेणी के उत्कृष्ट बालकों की बुद्धि-लब्धि निस्संदेह ही अधिक थी। आयु के बढ़ने के साथ-साथ उत्कृष्ट-बुद्धि बालकों के समूह का अन्य बालकों की बुद्धि से अन्तर बढ़ता ही गया। अत्यधिक योग्य व्यक्तियों का मानसिक विकास भी अधिक अवधि तक चलता रहता है। सामान्यतया ऐसे व्यक्तियों के माता-पिता भी अधिक शिक्षित होते हैं। इनके भाई-बहिन की बु० ल० भी अधिक होती है। प्रतिभाशाली बालकों में मन्द-बुद्धि बालकों की अपेक्षा जीवन के प्रति अधिक उत्साह रहता है। ये अधिक पुस्तकें पढ़ते हैं। इनका ज्ञान-भण्डार अधिक होता है। नेतृत्व करने की सामर्थ्य एवं समाजोन्मुख प्रवृत्ति के कारण ये लोग अधिक लोकप्रिय होते हैं। पर केवल बौद्धिक क्षमता के आधार पर प्रतिभा की व्याख्या नहीं की जा सकती और बुद्धि-परीक्षणों से ही प्रतिभा का मापन नहीं हो सकता।

(२) **लिंग भेदों का अध्ययन**—लिंग सम्बन्धी भेदों का अध्ययन दो प्रकार से करते हैं—(अ) प्रथम, यह ज्ञात करना कि पुरुष एवं स्त्रियों में किस सीमा तक तथा किस प्रकार की मनोवैज्ञानिक विभिन्नता है, और (ब) दूसरे, यह कि लैंगिक विभिन्नता के कारण शारीरिक, मानसिक तथा व्यक्तित्व गुणों में किस सीमा तक समानता या अन्तर पाया जाता है। अनेक पुरुषों में स्त्रियोचित गुण पाये जाते हैं, एवं अनेक स्त्रियों में पुरुषोचित। अनेक व्यक्तित्व परीक्षणों से स्त्रीत्व एवं पुरुषत्व का मापन होता है। टरमैन, माइल्स तथा गुडएनफ ने इस प्रकार के परीक्षण बनाए हैं। इनके निष्कर्ष बताते हैं कि स्नातक प्राप्त स्त्रियों में अधिक पुरुषोचित गुण पाये जाते हैं।

(३) **राष्ट्रीय एवं प्रजातीय अन्तरों का अध्ययन**—मानसिक परीक्षणों के आधार पर विभिन्न राष्ट्रों के व्यक्तियों की बुद्धि एवं उनके व्यवहार का अध्ययन सम्भव है। अमरीका में योरुप के विभिन्न क्षेत्रों से जाकर जो व्यक्ति बसे हैं, राष्ट्रीयता में विभिन्नता होने के कारण उनकी बुद्धि एवं व्यवहार में भी अन्तर पाया जाता है। यहूदी, अँग्रेज, जर्मन, चीनी एवं जापानी राष्ट्रीयता के व्यक्ति इटालियन, पुर्त्तगाली एवं मैक्सिको निवासियों की अपेक्षा अधिक अंक प्राप्त करते हैं। किन्तु इसका कारण वातावरण एवं अवसर की असमानता है।

औद्योगिक क्षेत्र में—

औद्योगिक संस्थानों में विभिन्न उद्देश्यों के लिए परीक्षणों का उपयोग होता है। हम इनका वर्णन करेंगे।

(१) **औद्योगिक चयन में**—सर्वप्रथम कर्मचारियों के चयन में परीक्षणों का

प्रयोग हुआ था। इससे विशिष्ट कृत्यकों को करने के लिए उत्तम प्रत्याशियों का चुना जाना सम्भव हो सका, विशेषकर उस समय जबकि उपलब्ध सेवाओं या कार्यों की अपेक्षा कर्मचारियों की संख्या कहीं अधिक थी। श्रमिकों की कमी के समय चयन की प्रक्रिया पर अधिक बल नहीं दिया जा सकता, क्योंकि जिस किसी व्यक्ति को भी काम पर रखना आवश्यक हो जाता है। ऐसे अवसर पर परीक्षणों का प्रयोग यह जानने के लिए किया जाता है कि नियुक्त व्यक्तियों में कौन व्यक्ति किस कार्य के योग्य है।

(२) **ठीक कार्य न मिलने से असन्तुष्ट कर्मचारियों का पता लगाना**—परीक्षणों की सहायता से औद्योगिक संस्थान का मैनेजर यह ज्ञात कर सकता है कि कौन कर्मचारी किस कार्य को अधिक सन्तोषजनक रूप से कर सकेगा। इससे कार्य के प्रति अनभियोजित, एवं शरारत करने वाले या काम बिगाड़ने वाले कर्मचारियों का पता लगाने में सुविधा रहेगी। उन कर्मचारियों का निदान करना सरल हो जाएगा, जो अपनी व्यक्तिगत कठिनाइयों से सार्वजनिक समस्याएँ उत्पन्न करते हैं। बाद में मनोविश्लेषणात्मक तथा अन्य विधियों से इन कठिनाइयों का निराकरण भी किया जा सकता है।

(३) **प्रशिक्षण के लिए उपयुक्त कर्मचारियों का पता लगाना**—विशेषकर श्रमिकों की कमी के समय यह आवश्यक हो जाता है कि अनुभवी एवं निपुण कर्मचारियों को पर्याप्त संख्या में छाँटा जाए एवं उन्हें प्रशिक्षण देकर स्वयं औद्योगिक संस्थान में उनकी पदोन्नति की जाए। परीक्षणों से ऐसे कर्मचारियों का पता चल सकता है।

(४) **निपुणता के लिए आवश्यक परिस्थितियों का पता लगाना**—इस कार्य में भी परीक्षण उपयोगी हैं। अभिवृत्ति परीक्षणों से किन्हीं निश्चित कार्यकारी परिस्थितियों का कार्य के प्रति कर्मचारी के दृष्टिकोण पर क्या प्रभाव पड़ता है, यह ज्ञात हो सकता है। इस उद्देश्य के लिए कुछ प्रमापीकृत व्यक्तित्व अनुसूचियाँ भी उपयोगी हैं।

औद्योगिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा जिन परीक्षणों का प्रयोग होता है, वे निम्न प्रकार के हैं :—(१) सामान्य मानसिक योग्यता के परीक्षण, (२) प्रशासनिक योग्यता, विक्रय, यंत्रचालन योग्यता आदि के परीक्षण, (३) अभियोग्यता परीक्षण, (४) विशिष्ट कुशलता के उपार्जन का मापन करने के लिए उपार्जन-परीक्षण, (५) व्यक्तिगत-सामाजिक गुणों के परीक्षण। सामान्य मानसिक योग्यता के परीक्षण तीन उद्देश्यों के लिए प्रयुक्त हो सकते हैं : (अ) निम्न बुद्धि होने के कारण किसी भी कार्य में अनुपयुक्त प्रत्याशियों को छाँटकर अलग करना, (ब) विशेष अभियोग्यता परीक्षण के अनुपूरकों के रूप में, ताकि किस

कर्मचारी के लिए कौन-सा कार्य अधिक उपयुक्त है, यह निर्धारित किया जा सके, (स) सामान्य मानसिक योग्यता का पता लगाना, ताकि यह ज्ञात करना कि अभियोग्यता परीक्षण प्रयुक्त किए जाएँ या नहीं। उपार्जन या कुशलता परीक्षण यह जानने के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं कि परीक्षार्थी ने प्रशिक्षण से लाभ उठाया है या नहीं। क्लर्क का काम करने वाले कर्मचारियों के लिए ऐसे परीक्षण विशेष रूप से उपयुक्त होते हैं। व्यक्तित्व परीक्षण कर्मचारी का स्वभाव, अन्य कर्मचारियों के साथ उसका व्यवहार एवं कार्य के प्रति वह अभियोजित है या नहीं, यह जानने के लिए प्रयुक्त होते हैं। इस उद्देश्य के लिए व्यक्तित्व प्रश्नावलियों का प्रयोग किया जा सकता है।

उपचार में—

औपचारिक क्षेत्र में किस अवसर पर कौन-से परीक्षण प्रयुक्त हों, यह उपचार करने वाले मनोवैज्ञानिक के दृष्टिकोण एवं सिद्धान्तों पर निर्भर है। हॉलिस्टिक सिद्धान्त के समर्थक रोगी के सम्पूर्ण व्यवहार का अध्ययन करना चाहेंगे, न कि यह कि वे व्यवहार के अलग-अलग घटकों का परीक्षणों से मापन करें। इस हेतु वे प्रक्षेपण विधि को प्रयुक्त करेंगे। मापनयोग्य गुणों का अलग अलग सम्मापन सम्भव है, इस सिद्धान्त के समर्थक मुरेनो की समाज निर्देशांक विधि का प्रयोग करेंगे। विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण रखने वाले स्वभाव, योग्यताओं एवं अभिवृत्तियों की रचना को मापन करने के लिए साधनों का निर्माण करेंगे। परीक्षणों का चयन रोगियों एवं परीक्षणों का प्रयोग करने वाली संस्था पर भी निर्भर करेगा। मानसिक चिकित्सालयों व मनोविश्लेषणात्मक निदान करने वाले प्रक्षेपण एवं व्यक्तित्व परीक्षणों, एवं कुछ सीमा तक सामान्य योग्यता एवं व्यावसायिक अभियोग्यता के परीक्षणों का प्रयोग करेंगे।

बड़ी अवस्था के किशोरों एवं प्रौढ़ों के लिए परीक्षणों का प्रयोग तीन उद्देश्यों के लिए होता है: (१) निदान एवं वर्गीकरण, (२) पूर्व-सूचन, (३) उपचार की प्रगति क्या है, यह ज्ञात करना। शारीरिक रूप से अपंग या अपाहिज बालकों में माँ-बाप और बच्चों के सम्बन्ध का अध्ययन करना अधिक महत्वपूर्ण है ताकि बालक की क्षमताओं तथा उसके प्रति माता-पिता की अभिवृत्तियों का पता चल सके।

निश्चित रूप से चिकित्सा क्षेत्र में अब व्यापक रूप से मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का प्रयोग होने लगा है। परेशान अभिभावक जब यह अनुभव करते हैं कि उनका बालक सामान्य गति से प्रगति नहीं कर रहा है, तो वे मनो-

वैज्ञानिक की शरण लेते हैं। अमरीका एवं ब्रिटेन में, तथा भारत के बड़े शहरों में सम्पन्न घराने के परिवारों में यह प्रवृत्ति बढ़ रही है। अनेक आधुनिक चिकित्सालयों में अब मनोवैज्ञानिक-विभाग खोल दिए गए हैं। अनेक प्रशिक्षित मनोवैज्ञानिक इन चिकित्सालयों के स्टाफ पर हैं। इन मनोवैज्ञानिक विभागों का काम केवल परीक्षणों का प्रयोग करना ही नहीं है। इसमें केवल बौद्धिक योग्यता एवं अन्य मानसिक क्षमताओं का पता ही नहीं लगाया जाता, वरन् यह ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है कि रोग प्रारम्भ होने से पहले रोगी की मानसिक क्षमता क्या रही होगी। रोगग्रस्त हो जाने से उसकी मानसिक क्षमता में क्या ह्रास हुआ, इसका भी पता लगाया जाता है। रोग प्रारम्भ होने से पहले की मानसिक क्षमता ज्ञात करने के लिए अन्य स्रोतों से भी तथ्य एकत्र करना आवश्यक होता है। अतः मनोवैज्ञानिक चिकित्सक सदैव निदान में सहायक तथ्यों की खोज में रहता है। उसका मुख्य कार्य प्रयोगात्मक एवं अनुसन्धानात्मक है। जीर्ण रोगों से ग्रसित रोगियों की मनोवृत्ति एवं मनःशक्ति के बारे में सूचना प्राप्त करने के लिए बाहरी संसार के प्रति उनकी अभिवृत्तियों, चिन्ताओं, क्रोध तथा उनके अनेक संवेगात्मक पक्षों का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक हो जाता है। व्यक्तित्व प्रश्नावलियों, साक्षात्कार विधि, संदर्शन रुचि एवं व्यावसायिक अभियोग्यता परीक्षणों का इस दृष्टि से उपयोग है।

बाल-अपराध वृत्ति के निरोध एवं उपचार में—

अनेक अनुसन्धानों से ज्ञात हुआ है कि बाल-अपराधी बुद्धि-परीक्षणों पर अंक प्राप्त करते हैं। ग्ल्यूक तथा ग्ल्यूक ने १९३४ में ९७९ बाल-अपराधियों तथा मैसैच्युसैट्स राज्य के स्कूलों में पढ़ाने वाले ३००० सामान्य बालकों पर १९१६ का स्टैन्फोर्ड बुद्धि-परीक्षण प्रयुक्त किया। उन्हें पता चला कि ३०% बाल-अपराधियों और केवल ७% सामान्य बालकों की बुद्धि लब्धि ८० से कम थी। सन् १९४७ के मैरिल के परीक्षणों से भी इन निष्कर्षों की पुष्टि होती है। उसने कैलीफोर्निया राज्य के स्कूल जाने वाले बालकों पर नवीन स्टेनफोर्ड-बिने परीक्षण प्रयुक्त किया। ज्ञात हुआ कि वाल अपराधियों में २५% से भी अधिक बालकों की बुद्धि-लब्धि ८० से कम थी, जबकि सामान्य बालकों में केवल ८.२% की। बर्ट के अनुसार ८०% से अधिक अपराधी बालकों की बुद्धि-लब्धि सामान्य बालकों की बुद्धि-लब्धि से कम होती है। अन्य आधुनिक विवरणों से भी इसी प्रकार के तथ्यों का पता चला है। इससे सिद्ध होता है कि कम बुद्धि एवं अपराध-वृत्ति में सम्बन्ध है। अतः परीक्षणों से उनका पता लगाया जा सकता है। अधिकांश बाल-अपराधी १२ एवं १६ वर्ष की आयु

के बीच होते हैं। मैरिल ने जिन बालकों का अध्ययन किया, उनमें ९०% इसी प्रसार क्षेत्र में आते हैं एवं केवल ७०% १४ तथा १७ वर्ष की आयु के बीच। मैरिल ने कुछ अन्य मनोवैज्ञानिकों के सहयोग से अपराधी बालकों पर परीक्षण किए और उन बालकों की पारिवारिक पृष्ठ-भूमि, विद्यालय में उनका पूर्ववृत्त (Case history), उनकी रुचियों, साथियों आदि के बारे में तथ्य एकत्र किए। अधिक बालकों की पृष्ठभूमि में उन्हें विच्छृंखल परिवार, प्रतिकूल पारिवारिक वातावरण, माता-पिता का कटु व्यवहार, हानिकारक शिक्षा तथा अन्य कारण मिले। अब तो मनोवैज्ञानिक के पास अपराध-प्रवृत्ति के कारण, निदान एवं निराकरण के अनेक साधन उपलब्ध हैं।

सेना में—

सेना में परीक्षणों का प्रयोग सन् १९१७ में हुआ। इसके पूर्व बहुत कम व्यक्ति यह समझते थे कि सैन्य क्षेत्र में मानसिक मापन कोई महत्वपूर्ण स्थान पा सकेगा। अनुसन्धान एवं परीक्षण-रचना के लिए सेना में जो कमेटी बनी, उसके द्वारा किए गये सर्वेक्षण से अनेक महत्वपूर्ण तथ्य एकत्र हुए, जिनका सार इस प्रकार है :—

(१) मानसिक मापन का कार्य केवल मन्द-बुद्धि व्यक्तियों की पहिचान ही नहीं है। किसी जन-समूह में, सामान्य वितरण के सिद्धान्त के अनुसार, अनेक बुद्धि-स्तर वाले व्यक्ति होते हैं। सेना में भी बुद्धि के लगभग वे ही स्तर हैं।

(२) निश्चित अवधि में सीमित बुद्धि-परीक्षणों से किसी व्यक्ति की बुद्धि के बारे में अनेक सप्ताहों के परिचय के आधार पर प्राप्त तथ्यों से अधिक तथ्य प्राप्त हो सकते हैं।

(३) यह आवश्यक नहीं है कि बुद्धि-परीक्षण व्यक्तिगत रूप से किया जाए। सामूहिक रूप से भी बुद्धि-परीक्षण सम्भव है। यही कारण है कि सेना में कुछ वर्षों के कार्य से ही बुद्धि-परीक्षणों की महत्ता और ख्याति काफी बढ़ गई। इस संक्षिप्त अवधि में १० लाख से भी अधिक व्यक्तियों पर बुद्धि-परीक्षण किए गये और उनके परिणामों का व्यापक उपयोग हुआ।

(४) सैन्य अनुसन्धानों से बुद्धि-परीक्षणों के आधार पर व्यक्तियों का वर्गीकरण सम्भव हो सका। सैन्य अधिकारियों ने इस प्रकार के वर्गीकरण के महत्व को समझा। बाद में युद्ध समाप्त हो जाने पर सामान्य जीवन में इनका उपयोग होने लगा।

प्रथम महायुद्ध में सेना में महत्वपूर्ण सामूहिक बुद्धि परीक्षण बने, जैसे— आर्मी-अल्फा, आर्मी-बीटा परीक्षण एवं वुडवर्थ का पर्सनल डाटा शीट। द्वितीय

महायुद्ध में भी बुद्धि-परीक्षणों की प्रगति हुई। १९१७ में बुद्धि-परीक्षण निर्माताओं के पास कोई पूर्व अनुभव न था। पर १९३९ में परिस्थिति भिन्न थी। परीक्षण-रचना के सम्बन्ध में व्यापक परीक्षात्मक साहित्य उपलब्ध था। अतः मनोवैज्ञानिकों के समक्ष बिल्कुल नए सिरे से परीक्षण-निर्माण की समस्या न थी। द्वितीय महायुद्ध में युद्ध-कौशल का और भी अधिक विकास हो चुका था एवं सैन्य सङ्गठन पहले से भी अधिक जटिल था। इसके अतिरिक्त दो विश्व-युद्धों के बीच के २० वर्षों के अनुभव ने भी सामूहिक बुद्धि-परीक्षण की समस्यायें स्पष्ट कर दी थीं। अतः सैन्य सामान्य वर्गीकरण परीक्षण (Army General Classification Test) के बनाने में उतनी कठिनाई न हुई। अनेक अभियोग्यता परीक्षण भी बने। वायुयान-चालकों (Airplane Pilots) के चयन के लिए परीक्षण बने। व्यक्तित्व गुणों एवं संवेगात्मक स्थिरता का मापन करने वाले परीक्षणों की भी रचना हुई। वायु-सेना में तो विभिन्न कार्यों के लिए व्यक्तियों का चयन करने के लिए परीक्षण बने हैं। गिल्फोर्ड तथा लेसी[1] ने अपनी सम्पादित पुस्तक 'मुद्रित वर्गीकरण परीक्षण' में लगभग ८०० परीक्षकों का विवरण, निष्कर्ष एवं मूल्याङ्कन दिया है। इन परीक्षणों में अवयव विश्लेषण विधि का भी प्रयोग हुआ है। स्ट्यूट[2] ने अपनी एक सम्पादित पुस्तक में भी अमरीकी वायु-सेना में प्रयुक्त विभिन्न परीक्षणों का विवरण दिया है। सैन्य विभाग से प्रकाशित अनेक पुस्तकों में भी इन परीक्षणों के विवरण उपलब्ध हैं।

अनुसन्धान में—

लगभग सभी सामाजिक विज्ञानों का उद्देश्य है मनुष्य के व्यवहार का विश्लेषण एवं उसके बारे में पूर्वकथन (Prediction)। सभी विज्ञान नियमों एवं सिद्धान्तों की स्थापना करते हैं ताकि व्यक्ति के सम्बन्ध में प्राप्त निष्कर्षों को एक निश्चित विधि से संक्षिप्त रूप में व्यक्त किया जा सके। मानसिक मापन भी यही कार्य करता है। मानसिक परीक्षण की सहायता से अब जैविक विज्ञान समाज विज्ञानों के निकट आ गए हैं। उदाहरणार्थ पशु के व्यवहार का अध्ययन जीवशास्त्र एवं मनोविज्ञान दोनों के अन्तर्गत आता है। व्यवहार के

---

1. Guilford and Laccy : *Printed Classification Tests*, Govt. Printing Office, Army Air Force Aviation Psychology, Programme, 1947.
2. Stuit : Personnel Research and Test Development in the Bureau of Naval Personnel, Princeton University Press, 1948.

अध्ययन के मानसिक परीक्षण, जैसे बुद्धि, व्यक्तित्व एवं अभिवृत्ति परीक्षणों का महत्वपूर्ण योगदान है। पशु के 'सीखने की प्रक्रिया' के अध्ययन ने निस्संदेह मनुष्य के 'सीखने की प्रक्रिया' पर प्रकाश डाला है, क्योंकि पशु एवं मनुष्य के सीखने की प्रक्रिया एवं इनकी बुद्धि में काफी समानता है। अब भी पशु एवं मनुष्य के 'सीखने की प्रक्रिया' के अध्ययन में पथ-जाल (Maze) का प्रयोग होता है। इसी प्रकार सामान्य तथा असामान्य प्रयोज्यों के व्यवहार के अन्तर का मापन करने के लिये परीक्षण अत्यन्त उपयोगी हैं। चूँकि सभी परिस्थितियों में मनुष्य को प्रयोज्य बनाकर परीक्षण एवं प्रयोग नहीं किए जा सकते, अतः पशुओं पर परीक्षण एवं प्रयोग करना, एवं तत्पश्चात् प्राप्त निष्कर्षों को मनुष्यों पर आरोपित करना आवश्यक हो जाता है। मानसिक परीक्षण केवल व्यवहार का ही मापन नहीं करते, उसके कारण पर भी प्रकाश डालते हैं। उदाहरणार्थ यदि किन्हीं दो समूहों की भाषा-रचना की जटिलता में पर्याप्त अन्तर है तो उसका कारण भौतिक वातावरण हो सकता है या मौलिक मानसिक क्षमता। मानसिक मापन के आधार पर हम बता सकते हैं कि कौन-सा कारण सही है।

बुद्धि-परीक्षणों के उपयोग की आलोचना
(Criticism of the Use of Intelligence Tests)

अनेक देशों में, विशेषकर अमरीका में, बालकों का चयन एवं कक्षोन्नति बुद्धि-परीक्षणों के परिणामों पर निर्भर करती है। इन्हीं के आधार पर छात्रों का विद्यालय-जीवन एवं प्रगति निर्भर है। कम बु० ल० वाले बालकों को 'मन्द' कह कर उनकी उपेक्षा की जाती है। कुछ अन्य को 'औसत' मानकर शिक्षा दी जाती है एवं बहुत ही कम भाग्यवान व्यक्तियों को, जो तथाकथित बुद्धि-परीक्षणों में उच्च अंक प्राप्त करते हैं, श्रेष्ठ समझा जाता है। परीक्षण उद्योग अपने चरम विकास पर है। अनेक राज्यों की सरकारें परीक्षणों के विकास पर लाखों रुपए व्यय कर रही हैं। व्यक्तियों के बारे में महत्वपूर्ण निर्णय करते समय परीक्षणों की सहायता ली जाती है। पर इन परीक्षणों की अनेक **परिसीमाएँ** हैं :

१. परीक्षणों के आधार पर 'निम्न', 'औसत', 'उच्च' आदि समूहों में व्यक्तियों का वर्गीकरण कर दिया जाता है। 'उच्च श्रेणी के बालक पर अध्यापक विशेष ध्यान देते हैं। उसके जीवन एवं प्रगति में उनकी अधिक रुचि होती है; पर 'औसत' में वर्गीकृत किए जाने पर बालक में यह भावना बलवती हो सकती है कि वह

होनहार नहीं है और फिर वह तदनुसार कार्य करता है। 'निम्न' में श्रेणीकृत किए जाने पर तो बालक अपने गुणों के विकास के अवसरों से बिल्कुल ही वंचित हो जाता है।

२. एक बार बालक की बुद्धि लब्धि ज्ञात हो जाने पर अध्यापक बालक को उसी दृष्टि से देखने लगता है। वह निष्पक्ष रह कर बालक के अन्य गुणों पर ध्यान देने का प्रयास भले ही करे, उसकी फाइल में लिखा बालक का बुद्धि-फलांक एक स्थायी प्रभाव छोड़ जाता है।

३. बुद्धि-परीक्षण विश्वसनीय नहीं हैं। वे योग्यता या क्षमता का बिल्कुल सही मापन नहीं करते। एक ही परीक्षण विभिन्न अवसरों पर विभिन्न बुद्धि-फलांक देता है। यह अन्तर ४० एवं अधिक बिन्दु तक देखा गया है। इसी प्रकार अलग-अलग परीक्षणों से अलग-अलग बुद्धि-फलांक आते हैं।

४. बुद्धि-परीक्षणों, विशेषकर सामूहिक परीक्षणों, में कक्षा के अनेक व्यक्तियों पर एक साथ परीक्षण प्रयुक्त होते हैं। ये अत्यन्त संक्षिप्त होते हैं, कभी-कभी आध घण्टा से भी कम; एवं इनमें प्रश्नों या पदों की एक सीमित संख्या दी हुई होती है। बुद्धि जैसी जटिल वस्तु का मापन करने की निस्सन्देह यह एक अत्यन्त ही अपरिष्कृत विधि है।

५. कितनी ही सावधानी क्यों न बरती जाए, बुद्धि-परीक्षण तथाकथित जन्म-जात योग्यता का मापन नहीं कर पाते। वे संस्कृति से प्रभावित होते हैं, संस्कृति-मुक्त (Culture-free) नहीं होते। धनी एवं सुशिक्षित परिवारों के बालकों को इनमें लाभ रहता है। इन परीक्षणों में से अधिकांश शाब्दिक योजना पर आश्रित रहते हैं। पर यह दावा किया जाता है कि परीक्षण वातावरण के प्रभाव से मुक्त हैं। परिणामस्वरूप अनेक बालक जिनके वातावरण में पुस्तकों, वाद-विवाद, सांस्कृतिक वस्तुओं का आभाव रहता है, अच्छे अंक प्राप्त नहीं करते। इसके अतिरिक्त बुद्धि-परीक्षण परम्परावादियों के अधिक अनुकूल पड़ते हैं, न कि रचनात्मक मानसिक वृत्ति वाले व्यक्तियों के।

६. अत्यन्त ही जटिल मस्तिष्क का किसी एक फलांक या बुद्धि-निर्देशांक से ही प्रतिनिधित्व करना सम्भव नहीं है। मापन का आधार ढूँढ़ने के लिए आवश्यकता से अधिक सरलीकृत दृष्टिकोण लेना मानवीय मस्तिष्क का अपमान है। स्वयं बुद्धि अनेक योग्यताओं का एक समुच्चय है। परम्परागत बुद्धि-लब्धि परीक्षण केवल कुछेक

योग्यताओं का मापन करते हैं। दक्षिण कैलीफोर्निया (Southern California) विश्वविद्यालय के प्रोफेसर जे० पी० गिलफोर्ड ने बुद्धि परीक्षणों का विश्लेषण करके यह ज्ञात किया है कि अनेक आवश्यक गुणों का, जो बुद्धि के अभिन्न अंग हैं, इन परीक्षणों से मापन नहीं हो पाता।

७. बुद्धि तथा अन्य फलांक उतने यथार्थ नहीं हैं, जितना कि समझा जाता है। अनेक बार देखा गया है कि किसी निश्चित बुद्धि-फलांक जैसे ८५ का वास्तव में अर्थ ८५ नहीं है, वरन् इनका अर्थ ६० तथा १०० के बीच कुछ भी, या इससे भी कम या अधिक, हो सकता है। इस सबके बावजूद जी शैक्षिक तथा व्यावसायिक संदर्शन एवं कर्मचारियों के चयन में इन फलांकों का उपयोग होता है।

८. बुद्धि-परीक्षणों से केवल एक विशिष्ट प्रकार की बुद्धि वाले व्यक्तियों को लाभ रहता है—वे जिनकी बुद्धि तीव्र हो, और जो तत्काल प्रश्नों के उत्तर दे सकें। अर्न्तदृष्टि, रचनात्मक प्रवृत्ति एवं उच्च कल्पना वाले व्यक्तियों को इनसे लाभ नहीं रहता।

९. सामूहिक बुद्धि-परीक्षणों की मौलिक असंगतता यह मान्यता है कि मानव-बुद्धि जैसी रहस्यमयी वस्तु को, जिसे समझने में बड़े-बड़े दार्शनिक एवं कवि चक्कर खा गए हैं, राष्ट्रीय मानकों (National Norms) पर आधारित कुछ यंत्रवत् प्रश्न-पदों से मापित किया जा सकता है। राष्ट्रीय मानकों की पृष्ठभूमि में यह धारणा होती है कि किसी दी हुई आयु में राष्ट्र के किसी भी स्थान में औसत बालक, उसका शैक्षिक एवं पारिवारिक वातावरण कैसा भी रहा हो, कुछ निश्चित प्रश्नों का सही उत्तर दे सकेगा, केवल इसलिए कि उसकी आयु के बालकों के न्यादर्श में अधिकांश बालकों ने उनके सही उत्तर दिये हैं। यह धारणा गलत है।

१०. सामूहिक बुद्धि-परीक्षणों की एक अन्य मुख्य परिसीमा है गति (Speed) को आवश्यकता से अधिक महत्व देना। इससे उन परीक्षार्थियों को लाभ रहता है जो तीव्र गति से केवल परम्परागत शुद्ध उत्तरों की पहिचान करने की क्षमता रखते हैं। इससे विचारशील बालकों को, जो किसी प्रश्न के उत्तर स्वरूप अनेक विकल्प सोचते हैं, हानि रहती है। यह निर्णय करने में कि कौन-सा उत्तर अधिक उपयुक्त रहेगा, इन बालकों का पर्याप्त समय नष्ट हो जाता है एवं वे सब

प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाते। प्रौढ़ व्यक्तियों को भी, जिनका प्रति-क्रिया काल कम हो जाता है, इन परीक्षणों में हानि रहती है।

११. उन देशों में जहाँ परीक्षणों का प्रचुर मात्रा में उपयोग होता है, एक जो नई समस्या अनुभव होने लगी है, वह है उच्च बुद्धि-लब्धि पर आधारित एक नये वर्ग (Elite) का विकास, जिससे केवल इसलिए कि प्रमापीकृत परीक्षणों पर इसने अच्छे अंक प्राप्त किए हैं, समाज व्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र में नेतृत्व करने की आशा की जाती है। रूस में बुद्धि-परीक्षणों पर विश्वास नहीं किया जाता। पर अमरीका इसका एक उदाहरण है, जहाँ बुद्धि-परीक्षणों के कारण अन्य गुणों की उपेक्षा हो जाती है।

: १९ :

अभियोग्यता परीक्षण

अभियोग्यता का अर्थ

वारेन ने अपने कोष में **अभियोग्यता** के बारे में कहा है कि यह किसी व्यक्ति की प्रशिक्षण के बाद ज्ञान, दक्षता या प्रतिक्रियाओं को सीखने की योग्यता है, जैसे भाषा बोलने या संगीतोत्पादन की योग्यता।[1]

किसी विषय, जैसे गणित, कला, बढ़ईगीरी या कानून आदि में किसी व्यक्ति की योग्यता का हवाला देते समय हम भविष्य की ओर संकेत करते हैं। तथापि अभियोग्यता एक वर्त्तमान स्थिति है, वर्त्तमान गुणों की प्रतिकृति जो भावी क्षमता बताए। परिभाषा इस बात पर कोई प्रकाश नहीं डालती कि यह अभियोग्यता जन्मजात है या अर्जित। पर विकास के किसी चरण में यह क्षमता निश्चित रूप से जन्मजात तथा वातावरणजन्य, दोनों प्रकार की परिस्थितियों की अन्तःप्रक्रिया पर निर्भर है। अभियोग्यता में किसी विशिष्ट प्रति-

---

1. Warren : *Dictionary of Psychology* : "A condition or set of characteristics regarded as symptomatic of an individual's ability to acquire with training some (usually specified) knowledge skill or set of responses such as the ability to speak a language, to produce music etc.

क्रिया में समुपयुक्तता का भाव निहित है । यह व्यक्ति की किसी विषय में सापेक्षिक समुपयुक्तता की संकेतक है, जिसका आवश्यक अंग है प्रवणता प्राप्त करने की तत्परता ।

उपर्युक्त परिभाषा सामान्य तथा तक्नीकी दोनों अर्थों में उपयोगी है । एक उदाहरण लीजिए । अरस्तू में एक सैनिक बनने या मध्यम वर्ग का सामान्य जीवन बिताने से अधिक दार्शनिक बनने की क्षमता थी । न्यूटन में अपने पिता का व्यवसाय कृषि के लिए कोई क्षमता न थी, किन्तु राजनीति, अनुसन्धान तथा भौतिक शास्त्र में अपूर्व अभियोग्यता थी ।

बिन्घम के अनुसार अभियोग्यता की निम्न विशेषताएँ हैं—

(१) किसी व्यक्ति की अभियोग्यता वर्त्तमान वस्तुस्थिति या गुण समुच्चय है जो उसकी क्षमताओं की ओर संकेत करती हैं ।

(२) वर्त्तमान वस्तुस्थिति होने पर भी इसका निर्देश भविष्य की ओर है। यह गुणों की ऐसी श्रृंखला है जो लक्षणात्मक है ।

(३) यह केवल किसी कार्य में संभाव्य योग्यता ही नहीं है । इसमें किसी कार्य को करने में समुपयुक्तता (Fitness) का भाव निहित है । किसी क्षेत्र में अभियोग्यता का अर्थ है उसमें ज्ञान प्राप्त करने की क्षमता । यदि कोई व्यक्ति किसी व्यवसाय को पसन्द नहीं करता और उसमें प्रवणता प्राप्त करने में असमर्थ है तो इसका अर्थ है कि उसमें उसकी अभियोग्यता नहीं है ।

(४) अभियोग्यता किसी वस्तु का नाम नहीं है । यह एक अमूर्त्त संज्ञा है । यह किसी व्यक्ति के गुण या उसकी विशेषता की ओर संकेत करती है । यह व्यक्तित्व का एक अंग है ।

(५) किसी व्यवसाय में प्रवणता प्राप्त करने की क्षमता से ही अभियोग्यता का पता नहीं चलता । जिस क्षेत्र में व्यक्ति की अभियोग्यता होती है, उसमें उसकी रुचि भी होती है ।

सुपर के अनुसार अभियोग्यता में चार विशेषताएँ होती हैं :—

(१) विशिष्टता, (२) सीखने में सुविधा, (३) एकात्म-रचना, एवं (४) स्थिरता ।

बिन्घम के अनुसार अभियोग्यता में निम्न मान्यताएँ हैं :—

(१) किसी भी व्यक्ति की सभी अभियोग्यताएँ समान रूप से तीक्ष्ण नहीं होतीं । व्यक्ति की प्रतिभाओं में असमानता स्वाभाविक है । ल्योनार्डो डा० विन्सी जैसा बहुमुखी प्रतिभा वाला इंजीनियर, सङ्गीतज्ञ, चित्रकार, वास्तुकार एवं दार्शनिक भी इन सभी दिशाओं में प्रतिभावान् नहीं था; उसके प्रत्येक गुण महान्

नहीं थे। इस बात का निश्चित प्रमाण है कि किसी भी व्यक्ति की सर्वश्रेष्ठ तथा निकृष्टतम क्षमताओं में अत्यधिक अन्तर होता है।

(२) क्षमताओं में व्यक्तिगत विभेद होता है। गाल्टन ने इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान किया कि सभी व्यक्ति जन्म पर समान रूप से योग्य या प्रतिभाशाली नहीं होते। मूर्ख एवं महाविद्वान्, क्षीण एवं पुष्ट में अन्तर वास्तविक है। पर ऐसा नहीं होता कि किसी व्यक्ति में सब गुण हों और दूसरे में बिल्कुल नहीं। उदाहरण के लिए विदेशी भाषा में किसी व्यक्ति का गुण ऐसा एकात्म गुण नहीं है जो या तो पूर्ण रूप से उपस्थित हो या अनुपस्थित।

(३) क्षमताओं में अन्तर पर्याप्त रूप से स्थिर होते हैं। पर इसका यह अर्थ नहीं है कि समय के साथ इनमें बिल्कुल परिवर्त्तन नहीं होता। ये परिवर्त्तन अकस्मात् नहीं होते, इतना सत्य है। अन्यथा व्यावसायिक संदर्शन बिल्कुल भी सम्भव नहीं है।

'अभियोग्यता' तथा अन्य बातों में क्या अन्तर है, इसे ठीक से समझने के लिए नीचे हम कुछ अन्य शब्दों के अर्थ दे रहे हैं।

प्रवीणता पहले ही अर्जित योग्यता की क्षमता।

सामर्थ्य=सम्भाव्य योग्यता, जैसे साहित्यिक योग्यता।

दक्षता=किसी जटिल कार्य को करने में सरलता या सुतथ्यता।

प्रज्ञा = अभियोग्यता का एक उच्च स्तर। एक प्रज्ञावान व्यक्ति वह है, जिसमें प्रशिक्षण प्राप्त करने की असाधारण क्षमता हो।

प्रतिभा=प्रतिभा इसके परिणाम से पहिचानी जाती है अर्थात् असाधारण महानता की ओर ले जाने वाले गुण, सफलता या उपार्जन। चाहे ये उपार्जन कला-क्षेत्र में हो या धर्म, नाटक, दर्शन, विज्ञान, सङ्गीत-रचना, सैन्य सङ्गठन, अनुसन्धान या किसी अन्य क्षेत्र में।

अभियोग्यता एवं बुद्धि—

बुद्धि उच्च मानसिक प्रक्रियाओं से सम्बन्धित है, जबकि अभियोग्यता विशिष्ट सांवेदिनक, गतिवाही, कलात्मक, व्यावसायिक आदि क्रियाओं से। यदि दो व्यक्तियों के किसी सामान्य बुद्धि-परीक्षण में समान अङ्क आएँ, तथापि विशिष्ट क्षेत्रों में उनकी अभियोग्यता अलग-अलग सम्भव है। बुद्धि-लब्धि समान होने पर उनमें अन्य बातों में विभिन्नता होगी। पर प्रमापीकृत परीक्षा या शैक्षिक प्रगति के आधार पर किसी व्यक्ति की बुद्धि के बारे में निश्चय हो जाने पर, उसकी बुद्धि के बारे में हमारी सूचना इस प्रश्न का उत्तर देने में सहायक होगी कि उस व्यक्ति के किस व्यवसाय में जाने की सम्भावना है।

अनेक परीक्षण इस बात की ओर संकेत करते हैं कि किस व्यवसाय के लिए बुद्धि के किस स्तर की आवश्यकता पड़ती है। आर्मी अल्फा, आर्मी जनरल क्लासीफिकेशन टैस्ट, इस दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं।

अभियोग्यता परीक्षणों का महत्व—

इन परीक्षणों की अनेक परिस्थितियों में आवश्यकता पड़ती है। उदाहरण के लिए जब कोई सैनिक नागरिक जीवन में प्रवेश करना चाहता है, जब कोई विधवा या तलाकशुदा स्त्री कोई नौकरी तलाश करती है या हाई स्कूल पास विद्यार्थी अपना व्यवसाय चुनना चाहता है। यह सुविधाजनक है कि पहले परीक्षण दिया जाए और तत्पश्चात् व्यवसाय चुना जाए बजाय इसके कि बिना सोचे-समझे कोई व्यवसाय चुन लिया जाए और तत्पश्चात् अपने को उसके समुपयुक्त बनाने का प्रयास हो। इसीलिए बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ व्यक्तियों की नियुक्ति करने से पूर्व उनका अभियोग्यता परीक्षण लेती हैं। इससे प्रशिक्षण में अनुपयुक्त व्यक्तियों पर जो धन बर्बाद जाता है, उसकी बचत हो जाती है।

पर अभियोग्यता परीक्षणों से किस बात का मापन होता है ? एक ऐसा परीक्षण व्यक्ति की वर्त्तमान योग्यताओं और विशेषताओं का न्यादर्श लेता है। इससे एकत्र प्रदत्तों के आधार पर उसके व्यवहार का मापन होता है, जिससे उसके भावी व्यवहार एवं परिपूर्त्ति का संकेत मिलता है। **बिन्घम** के अनुसार अभियोग्यता परीक्षण प्रत्यक्ष रूप से भावी परिपूर्त्ति का मापन नहीं करते। ये तो केवल वर्त्तमान कार्यक्षमता का मापन करते हैं। इनसे सम्भाव्य कार्यक्षमता ज्ञात होती है।

अभियोग्यता परीक्षणों को मुख्यतः दो भागों में सुविधा के लिए बाँटा जा सकता है : भेदक अभियोग्यता परीक्षण (Differential Aptitude Tests), (२) विशिष्ट अभियोग्यता परीक्षण (Special Aptitude Tests)।

भेदक अभियोग्यता परीक्षण
(Differential Aptitude Tests)

ये परीक्षण 'सामान्य बुद्धि' का मापन करके उसके विभिन्न अंशों या तत्वों पर अलग-अलग तत्त्व उपस्थित करते हैं। इस प्रकार के परीक्षणों के विकास के अनेक कारण हैं :—

(१) बुद्धि-परीक्षणों से जो कार्य-क्षमता पता चलती है उसमें व्यक्तिगत विभेद का ज्ञात होना। यद्यपि स्वयं अनेक बुद्धि-परीक्षणों में उप-परीक्षण

होते हैं, पर इनके आधार पर व्यक्तियों की तुलना विश्वसनीय नहीं है।

(२) इस बात में निश्चित धारणा बन चुकी है कि सामान्य बुद्धि-परीक्षण भी उतने सामान्य नहीं हैं जितना कि उन्हें समझा जाता है। इनमें से अनेक केवल शाब्दिक समझ का मापन करते हैं। यान्त्रिक योग्यताओं का ये समावेश नहीं करते। इन्हीं परिसीमाओं के कारण शैक्षिक तथा व्यावहारिक बुद्धि में भेद किया गया। या फिर यान्त्रिक, अमूर्त्त तथा सामाजिक बुद्धि में।

(३) गुण-समुच्चयों के अवयव-विश्लेषण से भेदक अभियोग्यता परीक्षणों को रचना के लिए सैद्धान्तिक आधार मिला, क्योंकि अवयव विश्लेषण की विधि से 'बुद्धि' शीर्षक के अन्तर्गत संयोजित अनेक योग्यताओं को और भी अधिक निश्चित रूप से छाँटा तथा परिभाषित किया जा सकता था और ऐसे परीक्षणों की रचना की जा सकती थी जो सामान्य बुद्धि का मापन न करके किसी एक ही गुण या अवयव का मापन कर सकें।

(४) व्यावसायिक संदर्शन और औद्योगिक तथा सैन्य व्यक्तियों के चयन में दिन-प्रतिदिन मनोवैज्ञानिकों का महत्व बढ़ता रहा जिससे विभिन्न विशिष्ट क्षेत्रों में परीक्षण बनने में भी सुविधा हुई।

कुछ महत्वपूर्ण भेदक अभियोग्यता परीक्षणों का वर्णन आगे किया हुआ है।

थर्स्टन का प्राथमिक मानसिक योग्यताएँ परीक्षण (Thurston's Primary Mental Abilities Tests)—

इन परीक्षणों की रचना थर्स्टन के अवयव विश्लेषण के फलस्वरूप की गई। सर्वप्रथम १९३८ में हाई स्कूल तथा कॉलिज के विद्यार्थियों के लिए इनकी रचना हुई। १९४१ में ११ से लेकर १७ वर्ष तक के बालकों के लिए 'शिकागो प्राथमिक मानसिक योग्यता परीक्षण' (Chicago P. M. A Tests) प्रकाशित हुए। इसमें अनेक संशोधन हुए हैं। इसके एक प्रतिरूप में जिसका नाम एस० आर० ए० प्राइमरी मैन्टल एबिलिटीज् टैस्ट (S. R. A. Primary Mental Abilities Tests) हैं, ४० या ४५ मिनिट लगते हैं। यह पाँच अवयवों का मापन करता है : शब्दार्थ, स्थान, तर्क, संख्या तथा शब्द-प्रवाह। प्रत्येक में परीक्षण से पूर्व अभ्यास के प्रश्न दिए जाते हैं। वास्तविक अंकों को तुलना करने के लिए शतांशीय अङ्कों तथा अङ्क-प्रतिरूपों (Profiles) में बदल लेते हैं। इस परीक्षण के एक अन्य प्रतिरूप में जो ७ से लेकर ११ वर्ष तक के व्यक्तियों के लिए उपयुक्त है, सात परीक्षण हैं, और यह पाँच अवयवों

का मापन करता है। सभी परीक्षण वाचिक रूप से प्रशासित करते हैं। पर दो शब्द-परीक्षण भी हैं। प्रत्येक उपपरीक्षणों के अङ्कों के आधार पर बुद्धि-लब्धि ज्ञात करना सम्भव है। एक अन्य प्रतिरूप को ५ से लेकर ७ वर्ष तक के बालकों पर प्रयुक्त करते हैं। यह पाँच अवयवों का मापन करता है: (१) शब्द-अर्थ, (२) प्रतिबोध गति, (३) परिमाणात्मक, (४) गतिवाह, (५) स्थान। इनमें शब्द-प्रवाह एवं तर्क-परीक्षण नहीं हैं।

प्राथमिक मानसिक योग्यता परीक्षणों की निम्न **परिसीमाएं** हैं—

(१) अनेक प्राथमिक योग्यता परीक्षण गति पर निर्भर हैं। प्रतिबोधन, संख्या, आदि क्षेत्रों में तो यह बात ठीक है, पर शब्द-अर्थ, स्थान, तर्क आदि के मापन में यह बात अनुचित है।

(२) सामाजिक-आर्थिक स्तर, भौगोलिक वितरण, ग्रामीण तथा नागरिक अनुपात तथा अन्य दृष्टिकोणों से न्यादर्श उचित रूप से नहीं लिया गया। यौनि मानक अलग-अलग नहीं दिए गए हैं। यद्यपि महत्वपूर्ण यौनि विभिन्नताओं का पता चला है।

(३) प्राप्तांकों को निर्वचित (Interpret) करने की व्यवस्था अत्यन्त अनुचित है। शतांशीय फलांकों का प्रयोग उचित नहीं है।

(४) विभिन्न प्राथमिक परीक्षणों के विश्वसनीयता गुणांक या तो ठीक से नहीं दिए गए हैं, उनकी गणना का आधार गलत है या फिर वे दिए ही नहीं गए हैं। इन परीक्षणों में गति को इतना अधिक महत्व दिए जाने पर भी सम-विषम तथा कूडर-रिचर्डसन विधियों का प्रयोग हुआ है। विश्वसनीयता गुणांक कम होने पर भी परिणामों का निर्वचन परीक्षणों में अन्तर्सहसम्बन्ध पर निर्भर है।

(५) वैधता के सम्बन्ध में पर्याप्त तथ्य उपस्थित नहीं किए गए हैं। अवयव-वैधतायें नहीं दी गई हैं। कुछ बुद्धि-परीक्षणों एवं विशिष्ट अभियोग्यता परीक्षणों से सहसम्बन्ध निकालकर अनुभवजन्य वैधता पता लगाई गई है।

मनोवैज्ञानिक कॉर्पोरेशन द्वारा निर्मित वैभेदक अभियोग्यता परीक्षण

(D. A. T. of the Psychological Corporation)—

ये परीक्षण मुख्यतः शैक्षिक तथा व्यावसायिक मार्ग-संदर्शन के लिए मनोवैज्ञानिक कॉर्पोरेशन ने बनाए हैं। ये ८ से १२ तक की कक्षाओं के लिए उपयुक्त हैं, पर प्रौढ़ों पर भी इनका प्रयोग सम्भव है। इसमें ८ परीक्षण हैं: शाब्दिक तर्क, संख्यात्मक योग्यता, अमूर्त्त तर्क, स्थानगत सम्बन्ध, यान्त्रिक तर्क, क्लैरीकल गति एवं परिशुद्धता, तथा भाषा-प्रयोग। प्रत्येक परीक्षण अलग

पुस्तिका में प्रकाशित है। इससे प्रशासन में सुविधा होती है। फलांक गणना हाथ तथा मशीन दोनों से सम्भव है । क्लैरीकल गति एवं परिशुद्धता परीक्षण को छोड़कर बाकी सभी परीक्षण शक्ति परीक्षण हैं। प्रत्येक परीक्षण में लगभग ३५ से लेकर ४० मिनिट तक लगते हैं। ४७,००० बालकों को आधार मानकर मानक प्राप्त किए गए हैं। लड़के तथा लड़कियों के लिए अलग अगल मानक दिए गए हैं। प्रत्येक आयु तथा कक्षा के लिए शतांशीय फलांक हैं। प्रत्येक उपपरीक्षण की अलग-अलग विश्वसनीयता ज्ञात की गई है। क्लैरीकल गति एवं परिशुद्धता परीक्षण को छोड़कर सभी की विश्वसनीयता अर्द्ध-विच्छेद विधि से ज्ञात की गई है। गुणांक ·७१ और ·९३ के बीच हैं। अनुभवजन्य (Empirical) वैधता के सम्बन्ध में भी विस्तृत गुणांक प्रस्तुत किए गए हैं। इसके लिए स्कूल में निष्पत्ति, कक्षा-स्तर, परीक्षण-परिणामों आदि को कसौटी माना गया। वैधता गुणांक काफी उच्च हैं।

कैलीफोर्निया मानसिक परिपक्वता परीक्षण (California Mental Maturity Tests)—

इसमें कुल पाँच परीक्षण-समूहा हैं जो शिशुओं से लेकर कॉलिज के विद्यार्थियों तक के लिए हैं। प्रत्येक में १६ परीक्षण हैं और लगभग ९० मिनिट लगते हैं। इन परीक्षणों को पाँच शीर्षकों के अन्तर्गत वर्गीकृत किया गया है : स्थानगत सम्बन्ध, स्मृति, अन्वयात्मक तर्क, संख्यात्मक तर्क, एवं शब्द-भण्डार। अनुपात बुद्धि-लब्धि का प्रयोग होता है। पर इस परीक्षण की विश्वसनीयता तथा अनुभव-जन्य वैधता के बारे में अधिक आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। जो विश्वसनीयता गुणांक प्राप्त हुए हैं वे काफी उच्च हैं।

सामान्य अभियोग्यता परीक्षण समूहा (General Aptitude Test Battery GATB)—

इसका निर्माण संयुक्त राज्य नियुक्ति सेवा (United States Employment Service) ने किया। इसका आधार १७ से ३९ वर्ष तक के २१५६ व्यक्तियों पर परीक्षण का अवयव-विश्लेषण है। इनमें से अधिकांश व्यक्ति व्यावसायिक क्षेत्रों में प्रशिक्षणार्थी थे। इसमें १० अवयव सम्मिलित हैं : सामान्य बुद्धि, शाब्दिक योग्यता, संख्यात्मक योग्यता, स्थानगत योग्यता, रूप प्रतिबोधन, क्लैरीकल प्रतिबोधन, लक्ष्य बाँधना, गति, अंगुली की चतुराई, शारीरिक चतुराई। प्राप्तांकों को प्रमाप-अंकों में बदल लेते हैं जिनका माध्यमान १०० है और विचलन २०।

गिल्फोड-जिमरमैन अभियोग्यता आपरीक्षण (Guilford Zimmerman Aptitude Survey)—

इसका विकास द्वितीय विश्वयुद्ध में गिल्फोर्ड द्वारा सैन्य व्यक्तियों पर अनुसंधान के फलस्वरूप हुआ । इसमें सात परीक्षण हैं : शाब्दिक समझ, प्रतिबोधन गति, स्थानगत अभियोजन, स्थानगत दृष्टिकरण, यान्त्रिक ज्ञान । आदि । प्रत्येक परीक्षण अलग-अलग पुस्तिका में प्रकाशित है । इनका प्रयोग भी अलग-अलग होता है, पर वर्गीकरण एवं संदर्शन के उद्देश्य से पूरी समूहा का एक साथ प्रयोग श्रेयस्कर है । सभी परीक्षणों को तीन मुख्य क्षेत्रों में बाँटा जा सकता है—अमूर्त्त बुद्धि, क्लैरीकल अभियोग्यता तथा यान्त्रिक अभियोग्यता । प्रत्येक परीक्षण के लिए शतांशीय तथा प्रमाप फलांक मानक दिए गए हैं। विश्वसनीयता गुणांक काफी उच्च हैं—·९ के लगभग । मुख्यतः अवयव वैधताएँ ज्ञात की गई हैं । ये ·५२ तथा ·८९ के बीच हैं । परीक्षणों में अन्तः सहसम्बन्ध काफी उच्च है, जो अनुचित है । अनुभव-जन्य वैधता के सम्बन्ध में भी आंकड़े दिए गए हैं ।

कुछ अन्य परीक्षण निम्नलिखित हैं :—

१. फ्लैनेगन अभियोग्यता वर्गीकरण परीक्षण
   (Flanagan Aptitude Classification Tests—F.A.C.T.)
२. विमान कर्मचारी वर्गीकरण समूहा
   (Aircrew Classification Battery)
३ होल्जिंगर-क्राउडर एक-अवयव परीक्षण
   (Holzinger-Crowder Unifactor Tests)
४. बहु अभियोग्यता परीक्षण (Multiple Aptitude Tests)

विशिष्ट अभियोग्यता परीक्षण
(Specific Aptitude Tests)

इन परीक्षणों में मुख्यतः वे हैं जो यांत्रिक, कलात्मक, सङ्गीतात्मक चिकित्सा आदि क्षेत्रों में अभियोग्यता का मापन करते हैं । व्यावसायिक नियुक्ति एवं संदर्शन में परीक्षणों की माँग के कारण इस प्रकार के परीक्षणों का काफी विकास हुआ है । कुछ मुख्य प्रकार के परीक्षण निम्नलिखित हैं :—

लिपिक अभियोग्यता परीक्षण (Clerical Aptitude Tests)—

लिपिक कार्य सभी प्रकार के उद्योगों, शैक्षिक एवं सांस्कृतिक संस्थाओं तथा सभी अन्य प्रकार के कार्यों में आवश्यक है । अतः सभी कर्मचारियों की एक

बड़ी संख्या लिपिक कार्य में लगी है। हमारे देश में भी सभी सरकारी कर्मचारियों का ६०–७० प्रतिशत लिपिक कर्मचारी है। अतः आवश्यक है कि इस क्षेत्र से सम्बन्धित अभियोग्यता परीक्षण बनाए जाएँ। पर लिपिक अभियोग्यता से क्या अर्थ है, यह एक जटिल विषय है। सुपर के अनुसार, "लिपिक कार्य में सफल कर्मचारी संख्यात्मक तथा शाब्दिक प्रतीकों को अत्यन्त गति तथा परिशुद्धता से जाँचता है। इस प्रकार की योग्यता को लिपिक अभियोग्यता कहना काफी न्याय-सङ्गत है।"[1] **बिल** के अनुसार लिपिक कार्य में सभी प्रकार के प्रदत्तों को एकत्र करना, वर्गीकरण तथा उपस्थित करना एवं योजना में तथा परिणामों को कार्यान्वित करने में इनका विश्लेषण तथा प्रयोग सम्मिलित है। **बिन्घम** के अनुसार लिपिक कार्य में चार विभिन्न प्रकार की योग्यताएँ सम्मिलित हैं :—

(१) प्रतिबोधन योग्यता—शब्द एवं अङ्कों का अवलोकन करना।

(२) बौद्धिक योग्यता—शब्द एवं प्रतीकों का अर्थ ग्रहण करना।

(३) मानसिक दक्षता—जोड़ने, गुणा करने, वर्ण-विन्यास तथा उच्चारण करने की क्षमता।

(४) गति योग्यता—अंगुलियों तथा हाथ से विभिन्न वस्तुओं के हस्त-संचालन की क्षमता।

लिपिक कार्य में सन्निहित इन विभिन्न क्रियाओं का मापन करने के लिए अनेक परीक्षण बने हैं। विदेशी परीक्षणों में मुख्य हैं—लिपिक कर्मचारियों के लिए 'मिनेसोटा व्यावसायिक परीक्षण, ओ'रूर के लिपिक अभियोग्यता परीक्षण, डैट्रोइट लिपिक अभियोग्यता परीक्षण, सामान्य अभियोग्यता परीक्षण, कार्डेल लिपिक क्षमता परीक्षण। भारतवर्ष में प्रोफेसर कालीप्रसाद तथा अन्य व्यक्तियों ने लिपिक अभियोग्यता परीक्षण बनाए हैं।

१. **मिनेसोटा लिपिक अभियोग्यता परीक्षण** (Minnesota Clerical Aptitude Test)—इस परीक्षण में दो उपपरीक्षण हैं, संख्या तुलना तथा नाम तुलना। प्रथम परीक्षण में परीक्षार्थी को २०० संख्या-युग्म दे दिए जाते हैं जिनमें प्रत्येक में ३ से लेकर १२ तक अङ्क हैं। यदि युग्म में दोनों संख्याएँ एक ही हैं तो परीक्षार्थी निशान लगा देता है। जैसे ७६५४२ ✓ ७६५४२; इसी प्रकार दूसरे उपपरीक्षण में शब्द होते हैं। फलांक गति के आधार पर दिए

1. "In routine clerical work one would expect speed and accuracy in checking numerical and verbal symbols to be a characteristics of the successful worker" -Super : *Appraising Vocational Fitness*, Harper, NewYork, 1949.

जाते हैं । इस परीक्षण के लघु तथा दीर्घ प्रतिरूपों के लिए क्रमशः १५ तथा २८ मिनिट हैं । इस परीक्षण में गति तथा परिशुद्धता इन दोनों बातों का मापन होता है । एकाउन्टेन्ट तथा बक-कीपर के इस परीक्षण में अधिक फलांक आते हैं । प्रारम्भ में यह परीक्षण प्रौढ़ों के लिए बना था पर बाद में यह जूनियर तथा सीनियर हाई-स्कूल के विद्यार्थियों पर भी प्रयुक्त होने लगा । इसकी परीक्षण-पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता ·८५ तथा ·९१ के बीच है और वैधता-गुणांक ·५ तथा ·६ के बीच, जबकि कार्यालय के पर्यवेक्षकों के निर्णय को कसौटी (Criterion) माना गया था । इस परीक्षण के सम्बन्ध में काफी अनुसंधान तथ्य भी एकत्र हैं । संयुक्त राज्य अमरीका तथा ब्रिटेन में यह काफी लोकप्रिय है ।

२. **सामान्य लिपिक परीक्षण** (General Clerical Test)—यह परीक्षण मनोवैज्ञानिक निगम (Psychological Corporation) ने प्रकाशित किया । इसमें नौ उपपरीक्षण हैं । इसमें सम्पूर्ण फलांक भी प्राप्त होते हैं और लिपिक, शाब्दिक तथा संख्यात्मक योग्यता के लिए अलग-अलग फलांक भी । पूरे परीक्षण में लगभग ५० मिनिट लगते हैं । हाई स्कूल के कामर्शियल कक्षा के १९५ विद्यार्थियों पर एक माह के अन्तर पर परीक्षण-पुनर्परीक्षण करके इसका विश्वसनीयता गुणांक ·९४ है । उपपरीक्षणों की विश्वसनीयता ·५९ और ·८८ के मध्य है । विवरण-पुस्तिका में इसके जो विभिन्न वैधता-गुणांक दिए गए हैं वे ·४ और ·६ के बीच हैं । विभिन्न उपपरीक्षण हैं–गणितीय गणना, भूल का पता लगाना, गणितीय तर्क, वर्ण-विन्यास, शब्द-भण्डार, व्याकरण आदि ।

अंग-दक्षता परीक्षण (Motor Dexterity Tests)—

इन परीक्षणों का उद्देश्य संचालन की गति एवं समन्वय का मापन करना है । ये मुख्यतः शारीरिक दक्षता से सम्बन्धित हैं । पर कुछ परीक्षण पैर तथा अन्य अंगों के संचालन से भी सम्बन्धित हैं । ये अंग-संचालन, प्रतिबोधन तथा यान्त्रिक कार्यों का मापन करते हैं और इनका मुख्य उपयोग औद्योगिक तथा सैन्य व्यक्तियों की नियुक्ति में है । विशिष्ट कृत्यों में योग्यता का मापन करने के लिए भी इन परीक्षणों को बनाया गया है । बिन्घम के अनुसार दक्षता भी कई प्रकार की होती है । कुछ में हाथ की बड़ी मांस-पेशियों का ही नियन्त्रण करना पड़ता है जबकि अन्य में छोटी माँस-पेशियों का । कुछ में अनेक मांस-पेशियों का समन्वय करना पड़ता है, जैसे गेंद फेंकने में आँख, अंगुली, हाथ, भुजा आदि की मांस-पेशियाँ एक साथ कार्य करती हैं । कुछ प्रमुख अंग-दक्षता परीक्षण हैं—दो-हाथ समन्वय परीक्षण, जटिल समन्वय परीक्षण, ओ-कनूर

दक्षता परीक्षण, कॉफोर्ड दक्षता परीक्षण, परड्यू पैंगबोर्ड परीक्षण, बैनेट हाथ-यन्त्र दक्षता परीक्षण, मिनेसोटा प्रयास-गति परीक्षण आदि। हम इनमें से कुछ का वर्णन करेंगे।

१. **स्ट्राम्बर्ग दक्षता परीक्षण** (Stromberg Dexterity Test)—इसमें परीक्षार्थी को ६० रम्भाकर पिण्डों को छेदों में रखना होता है। और वह यह कार्य अत्यन्त शीघ्रता से करता है। ये पिण्ड लाल, नीले तथा पीले रंग के होते हैं। प्रत्येक प्रयास से पहले पिण्डों को क्रम में रख लेते हैं।

२. **जटिल समन्वय परीक्षण** (Complex Co-ordination Test)—यह वायुयान चालकों के निमित्त है। इसमें चालक को छड़ी एवं अन्य उपकरण दे दिए जाते हैं और वह उसी प्रकार कार्य करता है जैसे वायु-चालक। अंग संचालन का नियंत्रण प्रकाश के संकेत से होता है। परीक्षण की वैधता ·४० है।

३. **क्रॉफार्ड सूक्ष्म-अंग दक्षता परीक्षण** (Crawford Small-Parts Dexterity Test)—इसमें अनेक प्रकार की हस्त-संचालन दक्षताएँ होती हैं। परीक्षण के प्रथम भाग में परीक्षार्थी को चिमटी से छेद में आलपिन रखनी पड़ती है। दूसरे भाग में सूक्ष्म पेचकस छेदों में रखते हैं। प्रत्येक भाग में दत्त कार्य करने में कितना समय लगता है, इस आधार पर फलांक दिए जाते हैं। विश्वसनीयता गुणांक ·८० तथा ·९८ के बीच है।

४. **ओ' कनूर अंगुलि-दक्षता परीक्षण** (O' Connor Finger Dexterity Test)—इस परीक्षण के उपकरणों में ३१० रम्भाकार पीतल की सुइयाँ सम्मिलित हैं जिनकी लम्बाई १ इंच होती है और ·०७२ इंच व्यास। ये ५ × ६ इंच की धातु की ट्रे में रखी होती हैं। इसमें छेद होते हैं। परीक्षार्थी इन सुइयों को छेदों में रखता है। परीक्षण प्रौढ़ों तथा १३ वर्ष से अधिक की अवस्था के युवकों के लिए उपयुक्त है। प्रमाप मानक भी उपलब्ध हैं।

५. **ओ'कनूर चिमटी-दक्षता परीक्षण** (O' Connor Tweezer Dexterity Test)—यह परीक्षण परीक्षार्थी की चिमटी का उपयोग करके एक-एक करके सुइयों को उठाने और छेद में रखने की गति का मापन करता है। इसमें भी लगभग उन्हीं उपकरणों का प्रयोग होता है जिनका कि अंगुलि-दक्षता परीक्षण में। किन्तु दोनों में कार्य अलग-अलग हैं। इसलिए जिस परीक्षार्थी को अंगुलि-दक्षता परीक्षण में उच्च अंक प्राप्त होते हैं, आवश्यक नहीं है कि चिमटी-दक्षता परीक्षण में भी उसके फलांक अच्छे हों। यह भी १३ वर्ष से अधिक की अवस्था के व्यक्तियों के लिए उपयुक्त है। इनमें १०५ रम्भाकार (Cylindrical) पीतल की सुइयाँ होती हैं। सामान्यतया इसमें ८ मिनिट लगते हैं। पर धीमी गति से कार्य करने वाले व्यक्ति को १० मिनिट।

अंग-दक्षता परीक्षण मुख्यतया गति पर निर्भर हैं। अतः उन कृत्यों में जो गति से अधिक सम्बन्ध रखते हैं न कि गुण से, ये परीक्षण अधिक उपयुक्त हैं। सामान्यतया ये पर्याप्त विश्वसनीय हैं—गुणांक लगभग ·८ के पास। उद्योगों में इनका मुख्य उपयोग है। इनकी वैधता श्रेष्ठ स्तर की है।

यान्त्रिक अभियोग्यता परीक्षण (Mechanical Aptitude Tests)—

यान्त्रिक अभियोग्यता अनेक तत्वों पर निर्भर है जैसे स्थानगत दृष्टि, प्रतिबोधन गति, यान्त्रिक सूचना, शारीरिक दक्षता, बौद्धिक योग्यता, शाब्दिक एवं संख्यात्मक तर्क आदि। पर सामान्य बुद्धि की आवश्यकता प्रशिक्षण के दौरान में अधिक पड़ती है, न कि वास्तविक कार्य के दौरान में। इसी प्रकार उच्च दक्षता के कार्यों में निम्न दक्षता के कार्यों की अपेक्षा अधिक बुद्धि की आवश्यकता पड़ती है। यान्त्रिक परीक्षण भी अनेक प्रकार के बने हैं। प्रायः इनका प्रमापीकरण सरल होता है। इनकी वैधता मध्यम श्रेणी की होती है। कुछ प्रमुख यान्त्रिक अभियोग्यता परीक्षण हैं मिनेसोटा यान्त्रिक संग्रह परीक्षण, मिनेसोटा वरिम सम्बन्ध परीक्षण, मिनेसोटा पत्र-रूप फलक परीक्षण, जॉनसन ओ कनूर विग्ली पिण्ड आदि।

१. **मिनेसोटा यान्त्रिक संग्रह परीक्षण** (Minnesota Mechanical Assembly Test)—यह परीक्षण विभिन्न यांत्रिक उपकरणों को एक साथ रखने की व्यक्ति की योग्यता का मापन करता है। इसमें ३३ असंग्रहित उपकरण प्रयुक्त करते हैं। प्रत्येक उपकरण को ठीक से संग्रहित करने के लिए निश्चित समय दिया रहता है। व्यक्तिगत निदान में इस परीक्षण का प्रयोग श्रेयस्कर नहीं है। पूरे परीक्षण में एक घण्टे से कुछ अधिक समय लगता है। यदि ठीक से प्रयोग किया जाए तो यह परीक्षण पर्याप्त रूप से विश्वसनीय है। पर यह प्रौढ़ों की अपेक्षा युवा लड़कों के लिए अधिक विश्वसनीय है। इसका प्रशासन तथा फलांक-गणना कठिन है।

२. **मिनेसोटा वरिम सम्बन्ध परीक्षण** (Minnesota Spatial Relations Test)—इसमें चार रूपफलक (Formboard) होते हैं जिसमें से प्रत्येक में ५८ विभिन्न रूपों और आकारों के टुकड़े कटे रहते हैं। परीक्षार्थी का कार्य है इन टुकड़ों को उनके स्थान में रखना। यह परीक्षण आकार एवं रूप का अन्तर बताने में गति एवं परिशुद्धता का मापन करता है। यह प्रौढ़ों तथा विद्यार्थियों दोनों का मापन करने में समर्थ है। व्यक्तिगत निदान के लिए यह परीक्षण पर्य्याप्त रूप से विश्वसनीय है। इसमें ४५-५० मिनट लगते हैं और इसका

प्रशासन एक-एक करके होता है। पूर्व अनुभव का इस परीक्षण के फलांकों पर प्रभाव नहीं पड़ता।

३. **मिनेसोटा पत्र-रूप फलक परीक्षण** (Minnesota Paper Form-Board)—इसका विकास मिनेसोटा विश्वविद्यालय में हुआ। अब इसके दो प्रतिरूप उपलब्ध हैं और इसकी फलांक-गणना हाथ से भी सम्भव है तथा मशीन से भी। इसमें ६४ समस्याएँ प्रस्तुत की जाती हैं। उदाहरण के लिए एक समस्या में एक कोने में दो ज्यामितिक चित्र दे दिए हैं और परीक्षार्थी को यह बताना पड़ता है कि अन्य पाँच चित्रों में से कौन-सा चित्र इन दो को मिलाकर जो चित्र बनता है उसके अनुरूप है। इस परीक्षण से भी लगभग उसी योग्यता का मापन होता है, जो मिनेसोटा वरिम सम्बन्ध परीक्षण से। वस्तुओं के हस्त-संचालन का मापन करने के लिए यह एक अत्यन्त वैध साधन है।

४. **ओ' रूरके यान्त्रिक अभियोग्यता परीक्षण** (O'Rourke Mechanical Aptitude Test)—यह परीक्षण इस मान्यता पर आधारित है कि वह व्यक्ति जिसमें यान्त्रिक अभियोग्यता होती है उस व्यक्ति की अपेक्षा जिसमें यह योग्यता नहीं होती अधिक यान्त्रिक सूचना ग्रहण कर सकेगा। इसका प्रथम भाग चित्र-सम्बन्धी है और दूसरा शाब्दिक। प्रथम भाग में चित्र दिये जाते हैं और बताना पड़ता है कि उनके साथ कौनसा उपकरण प्रयुक्त होगा। दूसरे भाग में यान्त्रिक सूचना सम्बन्धी प्रश्न दिए जाते हैं। १५ से लेकर २४ वर्ष तक के ६००० व्यक्तियों पर इस परीक्षण का प्रमाणीकरण हुआ था। दोनों भागों के प्रशासन में लगभग ६५ मिनिट लगते हैं।

५. **मैक्वैरी मानसिक योग्यता परीक्षण** (MacQuarrie Test for Mechanical Ability)—इस परीक्षण में सात उपपरीक्षण हैं। प्रथम तीन गति एवं नेत्र-हाथ समन्वय से सम्बन्धित हैं। सम्पूर्ण फलांक तथा उपपरीक्षण सभी के लिए अलग-अलग मानक उपलब्ध हैं। सम्पूर्ण परीक्षण का विश्वसनीयता गुणांक ·९ है तथा उपपरीक्षणों का ·७२ और ·८६ के बीच।

कलात्मक अभियोग्यता परीक्षण (Artistic Aptitude Tests)—

इस प्रकार के परीक्षणों का विकास बहुत धीमी गति से हुआ है। इसका कारण यह है कि कलाकार एवं कला-अध्यापक मनोवैज्ञानिक परीक्षण को सन्देह की दृष्टि से देखते रहे हैं। इसके अतिरिक्त इन परीक्षणों की इतनी उपयोगिता भी औद्योगिक, सेना तथा अन्य संस्थानों में नहीं रही है। तथापि

कुछ महत्वपूर्ण परीक्षण बने हैं। ये सङ्गीत, कला तथा साहित्य से सम्बन्धित हैं। कुछ महत्वपूर्ण परीक्षण निम्नलिखित हैं :—

१. **मैकाडोरी कला परीक्षण** (McAdory Art Test)—इसका प्रथम प्रकाशन १६२६ में हुआ और इसके अनेक पदों के पुराने पड़ जाने से अव इसका ऐतिहासिक महत्व ही रह गया है। कला तथा व्यापार पुस्तिकाओं तथा पत्रिकाओं से परीक्षण की विषय-वस्तु एकत्र की गई है। पद विभिन्न वर्गों से सम्बन्धित हैं, जैसे फर्नीचर, घर-गृहस्थी के बर्त्तन, कपड़े इत्यादि। पदों का चयन करने में १०० निर्णायकों ने भाग लिया जिनमें कलाकार, कला-अध्यापक, आलोचक आदि सम्मिलित थे। अन्तिम परीक्षण में ७२ पद हैं। प्रत्येक में चार डिज़ाइन हैं। परीक्षार्थी को कलात्मक मूल्य के अनुसार इन्हें क्रमांकित करना पड़ता है। एके ही-परीक्षण एक साथ ३० व्यक्तियों पर प्रशासित किया जा सकता है। यद्यपि समय-अवधि निर्धारित नहीं है, तथापि परीक्षण में लगभग डेढ़ घंटा लगता है। इसका न्यादर्श मुख्यतया न्यूयार्क नगर-क्षेत्र से लिया गया। अर्द्ध-विच्छेद विश्वसनीयता ·८ और ·६ के बीच है। पर परीक्षण-पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता कम है।

२. **नॉबर कला योग्यता परीक्षण** (Knauber Art Ability Test)—यह जूनियर हाई-स्कूल के समकक्ष तथा उसके ऊपर के स्तर पर प्रयुक्त हो सकता है। इसमें १७ उपपरीक्षण या समस्याएँ हैं जिनमें परीक्षार्थी स्मृति से चित्रों का पुनरोत्पादन करता है। फलांक गणना काफी सरल है। सातवीं कक्षा से लेकर कॉलिज स्तर के व्यक्तियों के लिए मानक दिए गए हैं। ये १३६७ व्यक्तियों के न्यादर्श पर निर्भर हैं। विश्वसनीयता तथा वैधता के बारे में भी कुछ तथ्य उपलब्ध हैं। एक अध्ययन में इसकी अर्द्ध-विच्छेद विश्वसनीयता ·६५ थी। इस परीक्षण का मुख्य गुण है अत्यन्त सरल विधि से जटिल कार्यों का मापन। यह परीक्षण कलात्मक अभियोग्यता के रचनात्मक पक्ष का मापन करता है।

३. **मायर कला निर्णय परीक्षण** (Meier Art Judgment Test)—यह मायर-सीशोर परीक्षण का संशोधित संस्करण है। यह संशोधन १६४० में हुआ। वर्त्तमान परीक्षण में १०० पद हैं। इसमें स्थायी महत्व की कलाकृतियों का प्रयोग हुआ है। प्रत्येक पद में कलाकृतियों के दो स्वरूप प्रस्तुत किए गए हैं। एक तो मौलिक और दूसरे इस मौलिक को देखकर बनाई गई प्रतिकृति, जिसमें अनेक अंश परिवर्तित होते हैं। परीक्षण मुख्यतः सौन्दर्यात्मक संगठन के निर्णय से सम्बन्धित है। इस परीक्षण का विकास आयोवा विश्वविद्यालय में मायर तथा उसके साथियों के अनुसंधान के फलस्वरूप हुआ। यह सौन्दर्यात्मक बुद्धि, प्रतिबोधन में सुविधा, रचनात्मक कल्पना, सौन्दर्यात्मक निर्णय आदि

गुणों का मापन करता है। परम्परागत बुद्धि-परीक्षणों से इस परीक्षण का सहसम्बन्ध नगण्य है। विवरण पुस्तिका में वैधता के सम्बन्ध में तथ्य नहीं दिए हैं। पर अन्य स्रोतों से ज्ञात होता है कि वैधता गुणांक ·४ और ·७ के मध्य हैं।

कला सम्बन्धी अन्य परीक्षण हैं हॉर्न कला अभियोग्यता परीक्षण, लॉरेन्ज परीक्षण आदि।

संगीत अभियोग्यता में निम्नलिखित परीक्षण महत्वपूर्ण हैं—

४. **सीशोर संगीत प्रज्ञा परीक्षण** (Seashore Measures of Musical Talents)—इसके संशोशित संस्करण में ६ उप-परीक्षण हैं जो ध्वनि, लय, ऊँचाई आदि का मापन करते हैं। ये परीक्षण ५ वीं कक्षा से लेकर प्रौढ़ों तक के स्तर के लिए उपयुक्त हैं। पर रुचि एवं ध्यान के अभाव के कारण शिशुओं के परीक्षण में असुविधा होती है। इसी कारण अधिक आयु के व्यक्तियों के लिए इनकी विश्वसनीयता अधिक है। उप-परीक्षणों में फलांक अलग-अलग दिए जाते हैं और तत्पश्चात् उनकी एक प्रोफाइल बना ली जाती है। इन फलांकों को मिलाकर सम्पूर्ण फलांक नहीं निकाला जाता। अर्द्ध-विच्छेद विश्वसनीयता गुणांक ·६२ तथा ·८८ के बीच है। संगीत में प्रशिक्षण का इन उप-परीक्षणों में प्राप्त फलांकों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसकी तर्कसंगत (logical) तथा विषय-वस्तु सम्बन्धी वैधता ज्ञात की गई है। अनुभवजन्य वैधता के सम्बन्ध में अधिक तथ्य उपलब्ध नहीं हैं। एक परीक्षण में निष्पत्ति के साथ इनका सहसम्बन्ध ·५६ है।

५. **ड्रेक संगीत स्मृति परीक्षण** (Drake Musical Memory Test)—इसके दो प्रतिरूप प्राप्य हैं और रचयिता ने उल्लेख किया है कि अधिक विश्वसनीय परिणाम प्राप्त करने के लिए इन दोनों प्रतिरूपों को प्रयुक्त करना चाहिए। प्रत्येक प्रतिरूप में लगभग १२ ध्वनियों का मापन होता है। प्रत्येक परीक्षण में २५ मिनिट के लगभग लगते हैं। समानान्तर प्रतिरूप विश्वसनीयता गुणांक लगभग ·७ है और वैधता गुणांक ·५। ७ से लेकर २४ वर्ष तक की आयु के व्यक्तियों के लिए मानक दिए गए हैं।

संगीत अभियोग्यता का मापन करने के लिए अन्य परीक्षण हैं—ऑरेगन संगीत विभेद परीक्षण, क्वालवासर डायकेमा संगीत परीक्षण, फार्नस्वर्थ परीक्षण आदि।

साहित्य में अभियोग्यता का मापन करने के लिए एक प्रसिद्ध विदेशी परीक्षण है **ऐबट-ट्रैबू परीक्षण**।

६. **ऐबट-ट्र बू-परीक्षरण** (Abbot Trabue Test)–इसका प्रकाशन १९२१ में हुआ। इसके दो प्रतिरूप हैं। प्रत्येक में १३ पद हैं। इसका प्रमापीकरण ३५०० प्रयोज्यों पर हुआ। यह पाँचवें स्तर से लेकर अंग्रेजी में स्नातक विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त है। समानान्तर प्रतिरूप विश्वसनीयता ·६६ है।

व्यावसायिक अभियोग्यता परीक्षरण (Scholastic Aptitude Tests)—

ये परीक्षरण विभिन्न क्षेत्रों में व्यावसायिक प्रशिक्षरण की अभियोग्यता का मापन करते हैं। चिकित्सा, इन्जीनियरिंग, कानून, अध्यापक-प्रशिक्षरण आदि क्षेत्रों में प्रवेश के समय विद्यार्थियों का चयन करने में इनका उपयोग होता है। ये परीक्षरण अनेक प्रकार के हैं। हम कुछ परीक्षरणों का वर्णन कर रहे हैं।

१. **चिकित्सा विद्यालयों के लिए अभियोग्यता परीक्षरण** (Scholastic Aptitude Test for Medical Schools)—इसका विकास श्री मॉस ने किया। इसके कई बार संशोधन हुए हैं। इसका उद्देश्य है चिकित्सा क्षेत्र में प्रवेश से पूर्व विद्यार्थी के ज्ञान का मापन करना और चिकित्सा-विद्यालयों के पाठ्यक्रम को समझने की सामर्थ्य का पता लगाना। इसमें अनेक उपपरीक्षरण हैं जो वैज्ञानिक शब्द-भण्डार, पूर्व-चिकित्सा सूचना, नाम या तक्नीकी शब्दों की स्मृति, तर्क आदि से सम्बन्धित हैं। इसकी विश्वसनीयता एवं वैधता के सम्बन्ध में विवरण-पुस्तिका में तथ्य प्रस्तुत किए गए हैं।

चिकित्सा-अभियोग्यता के मापन के लिए कुछ अन्य परीक्षरण हैं : नर्सिंग अभियोग्यता परीक्षरण, आयोवा दन्त-परीक्षरण, चिकित्सा विद्यालय प्रवेश परीक्षरण आदि।

२. **इन्जीनियरिंग तथा भौतिक विज्ञान अभियोग्यता परीक्षरण** (Engineering and Physical Science Aptitude Test)–यह परीक्षरण मनोवैज्ञानिक निगम (Psychological Corporation) ने प्रकाशित किया। पूरे परीक्षरण में ८०-९० मिनिट लगते हैं और इसके ६ भाग हैं : गरिणत, सूत्र-रचना, भौतिक-विज्ञान, गरिणतीय तर्क, शाब्दिक समझ एवं यान्त्रिक समझ। इन्जीनियरिंग के विद्यार्थियों तथा सेवायुक्त इन्जीनियरों के लिए शतांशीय मानक दिए गए हैं।

३. **स्टेनफोर्ड वैज्ञानिक अभियोग्यता परीक्षरण** (Stanford Scientific Aptitude Test)—इस परीक्षरण का उद्देश्य वैज्ञानिक अनुसरण में आवश्यक गुणों एवं अभिवृत्तियों का मापन करना है। परीक्षरण में ११ भाग हैं जो प्रयोगात्मक रुचि, निर्णय, तर्क, निगमन आदि का मापन करते हैं। इसका प्रथम प्रकाशन १९२९ में हुआ। इसकी विश्वसनीयता एवं वैधता के सम्बन्ध में पर्याप्त तथ्य उपलब्ध नहीं हैं। विश्वसनीयता अत्यन्त निम्न है।

अन्य परीक्षण हैं : पूर्व-इन्जीनियरिंग योग्यता परीक्षण, बैनेट यान्त्रिक प्रतियोगिता परीक्षण, संशोधित भौतिक शास्त्र अभियोग्यता परीक्षण इत्यादि।

४. **फर्सन-स्टॉडर्ड विधि अभियोग्यता परीक्षण** (Ferson-Stoddards Law Aptitude Examination)—इसका विकास १९२५ के बाद आयोवा तथा उत्तरी कैरोलिना विश्वविद्यालय में हुआ। कानून विद्यालयों में निष्पत्ति के साथ वैधता-गुणांक ·६ और ·८ के बीच हैं। इसमें शाब्दिक कानूनी विषय-वस्तु है।

५. **विधि-विद्यालय प्रवेश परीक्षण** (Law School Aptitude Test)—इसका प्रकाशन सन् १९४८ में हुआ। यह भी पहले ही प्रकाशित कानून अभियोग्यता परीक्षणों की भाँति है। इसमें वाचन-समझ, तर्क, शाब्दिक सम्बन्ध आदि का मापन होता है। विधि-विद्यालय में निष्पत्ति के साथ इसकी वैधता ·५ है। यह पर्याप्त रूप से एक विश्वसनीय परीक्षण है। कुल ६ उपपरीक्षण हैं : सिद्धान्त, तथ्य-निर्वचन, वाचन-समझ, सर्वश्रेष्ठ तर्क, परिच्छेद-पाठन एवं वाद-विवाद।

एक अन्य परीक्षण है आयोवा कानून अभियोग्यता परीक्षण। शैक्षिक प्रशिक्षण के क्षेत्र में 'कोक्से-ओर्थियन्स शिक्षण-योग्यता परीक्षण' प्रसिद्ध है।

: २० :

रुचि एवं इसका मापन

रुचि का स्वभाव

"रुचि किसी अनुभव में संविलीन होने एवं इसमें संलग्न रहने की प्रवृत्ति है, जबकि विरक्ति उससे दूर हट जाने की प्रवृत्ति।"[1] यह परिभाषा इस बात की ओर संकेत करती है कि रुचि की व्याख्या उन वस्तुओं एवं क्रियाओं के अर्थों में ही नहीं की जा सकती जिन पर ध्यान दिया जाता है या जिनसे सन्तोष मिलता है, वरन् ध्यान दिये जाने और सन्तोष प्राप्त करने की गहनता के अर्थ में भी। उदाहरण के लिए एक ऐसा व्यक्ति जिसकी मोटर दुर्घटनाओं के कम हो जाने में रुचि है सम्बन्धित खबर ही पढ़ेगा, जबकि अन्य विषयों जैसे नाटक, स्टॉक-मार्किट, राजनीति, स्पोर्ट्स आदि में रुचि रखने वाले व्यक्ति सम्भव है उस खबर को बिल्कुल छोड़ दें।

'रुचि' के स्वभाव, इसकी अभिव्यक्ति, विकास एवं मापन आदि के सम्बन्ध में अनेक विवादास्पद विचार प्रस्तुत किए गए हैं। 'रुचि' के बारे में हमारा ज्ञान

---

1. "An interest is a tendency to become absorbed in an experience and to continue it, while an aversion is a tendency to turn away from it."
—Bingham, W. V : *Aptitude and Aptitude Testing*, Harper and Brothers, New York, 1937. p. 62.

अत्यन्त स्पष्ट होगा, यदि हम इस सम्बन्ध में इन विचारों का संक्षिप्त अध्ययन करें। कुछ दृष्टिकोण नीचे प्रस्तुत किए गए हैं

फ्रायर का दृष्टिकोण—

फ्रायर ने १९३१ में "मानव अभियोजन के सम्बन्ध में रुचि मापन"[1] नामक ग्रन्थ प्रकाशित किया और इसमें अपने अन्वेषण से पूर्व के अनेक वर्षों के अनुसंधान का सार लिख दिया। इन वर्षों में 'रुचि' शब्द की अपनी अलग सत्ता बन चुकी थी। फ्रायर के अनुसार रुचि दो प्रकार की होती है : (अ) आत्मनिष्ठ (Subjective), एवं (ब) वस्तुनिष्ठ (Objective)।

आत्मनिष्ठ रुचियों का अर्थ है 'आसक्ति' (like) तथा 'विरक्ति' (dislike) या वे अनुभव जिनसे प्रिय या अप्रिय भाव सम्बन्धित हों।

वस्तुनिष्ठ रुचियों का अर्थ है प्रतिक्रियाएँ या व्यवहार के वे पक्ष जिनका अन्य व्यक्ति अवलोकन कर सकें।

आत्मनिष्ठ रुचियों का पता लगाने के लिए किन वस्तुओं में व्यक्ति की आसक्ति, विरक्ति या उदासीनता है यह ज्ञात करके फलांक प्राप्त करते हैं जैसा कि 'स्ट्रांग व्यावसायिक रुचि परिसूची' में करते हैं। वस्तुनिष्ठ रुचियों का मापन करने के लिए सूचना परीक्षण या स्वतन्त्र साहचर्य परीक्षणों का प्रयोग करते हैं।

रुचियों के मापन में व्यवहार के दो पक्ष सन्निहित हैं : (१) प्रतिक्रिया की दिशा अर्थात् स्वीकृति तथा अस्वीकृति, एवं (२) उत्तेजना की चालना जिससे कि वह प्रतिक्रिया निर्धारित है, अर्थात् प्रेरणा (motivation)। प्रतिक्रिया की दिशा 'रुचि पक्ष' है, जबकि उत्तेजना की चालना शक्ति 'प्रेरणा पक्ष' है। इस प्रकार फ्रायर रुचि एवं प्रेरणा में भेद करता है। किसी भी प्रकार के रुचि मापन में ये दोनों पक्ष उपस्थित रहते हैं, पर प्रथम पक्ष अधिक प्रभावी रहता है।

फ्रायर ने अपनी पुस्तक में रुचि से सम्बन्धित लगभग सभी बातों पर प्रकाश डाला। उसने रुचि एवं प्रेरणा तथा आत्मनिष्ठ एवं वस्तुनिष्ठ प्रेरणाओं में अन्तर स्पष्ट किया और रुचि के मापन का संकेत किया। फ्रायर के अनुसार रुचि अर्जित होती है, न कि जन्मजात। ये योग्यता से भी सम्बन्धित नहीं हैं।

स्ट्रांग का दृष्टिकोण—

स्ट्रांग ने १९४३ में प्रकाशित अपनी पुस्तक "पुरुष एवं स्त्रियों की व्याव-

1. Fryer, D : *The Measurement of Interests in Relation to Human Adjustment*,, Henry Holt and Co , 1931.

सायिक रुचियाँ"[1] में इस बात का समर्थन किया कि रुचियाँ अर्जित होती हैं। अतः इनका संशोधन एवं पुनर्शिक्षण सम्भव है। पर स्ट्रांग ने रुचियों के आविर्भाव एवं विकास पर कोई विशिष्ट सिद्धान्त प्रस्तुत नहीं किया। उसने रुचि एवं क्षमता में सम्बन्ध भी ज्ञात किया। उदाहरण के लिए एक व्यक्ति जिसकी दृष्टि तीव्र है, पक्षियों के प्रत्यक्षीकरण में रुचि लेगा; पर क्षीण दृष्टि वाला व्यक्ति नहीं। स्ट्रांग ने इस विषय में मध्यमार्ग अपनाया है। वह कहता है : "Either these interests are expressions of their abilities and therefore of inborn characteristics or else they result from social force not yet recognised in this connection."[2] वातावरण में अन्तर होने के कारण बालक एवं बालिकाओं की रुचियों में भी अन्तर होता है। हमारी वर्त्तमान सामाजिक तथा शैक्षिक व्यवस्था में मानसिक कार्यों की अधिक प्रतिष्ठा है। अतः इसमें अधिक बालक रुचि लेते हैं।

बोर्डिन का दृष्टिकोण—

बोर्डिन ने अपने लेख "एक गतिशील तथ्य के रूप में व्यावसायिक रुचियों का सिद्धान्त",[3] में जो १९४३ में छपा, इस बात की ओर संकेत किया कि व्यावसायिक लक्ष्य एवं महत्वाकांक्षाएँ किसी भी व्यक्ति की क्रियाओं का एक मुख्य आधार है। उसने व्यक्तित्व की जो परिभाषा दी उसमें व्यक्ति के लघु एवं दीर्घकालीन लक्ष्य-निदेशित प्रयास सम्मिलित हैं। रुचियाँ भी व्यक्तित्व का एक अंग हैं। बोर्डिन ने पिता के व्यवसाय एवं बेटे की रुचियों में सम्बन्ध का पता लगाया। किन्तु उसे रुचि तथा योग्यता और रुचि तथा निष्पत्ति में बहुत कम सहसम्बन्ध मिला। उसके अनुसार व्यवसाय के बारे में जितना अधिक ज्ञान होगा, अध्यर्थित (Claimed) तथा मापित (Measured) रुचियों में उतना ही अधिक सम्बन्ध भी। बाद में चलकर विल्सन के साथ काम करते हुए बोर्डिन ने यह सुझाव दिया कि 'तालिकाकृत व्यावसायिक रुचियाँ' (Inventoried Vocational Interests) गतिशील तथ्य हैं और ये व्यक्ति के स्वयं के बारे में प्रतिबोधन में परिवर्त्तन को व्यक्त करते हैं। रुचियों पर अचेतन भावनाओं तथा अभिवृत्तियों का भी प्रभाव पड़ता है।

---

1. Strong, E. K. Jr : *Vocational Interests of Men and Women*, Stanford University Press, 1943.
2. *Ibid*, p. 13.
3. Bordin, E. S. : A Theory of Vocational Interests as Dynamic Phenomena, *Educational Psychol. Measurement*, 1943, 3, pp. 49-65.

बर्डी का दृष्टिकोण—

बर्डी ने सन् १९४४ में प्रकाशित अपने लेख "व्यावसायिक रुचियों से सम्बन्धित तत्व"[1] में इस बात का उल्लेख किया कि योग्यता एवं रुचियाँ निष्पत्ति के सहनिर्धारक हैं और रुचियों का अध्ययन किसी क्रिया में प्रेरणा का अध्ययन है। बर्डी के अनुसार मापित तथा व्यक्त (Measured and Claimed) रुचियाँ व्यक्तित्व से सम्बन्धित हैं। ये आधारभूत व्यक्तित्व रचना की अभिव्यक्तियाँ हैं। रुचियों की स्थिरता (Stability) व्यक्ति के विकास एवं उसके वातावरण पर निर्भर है। पर रुचियों के निर्धारण में बर्डी वंश-परंपरा एवं अनुभव दोनों के महत्व को स्वीकार करता है। विकासात्मक तथा वंश-परम्परात्मक तत्व वह दिशा देते हैं जिस ओर व्यक्ति सन्तोष प्राप्त करने के लिए मुड़ता है जबकि अनुभव उसकी विशिष्ट व्यावसायिक रुचि का निदेशन करते हैं।

सुपर का दृष्टिकोण—

सुपर ने १९४९ में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'व्यावसायिक समुपयुक्तता का मूल्यन"[2] में उल्लेख किया कि रुचियाँ एक ओर तो जन्मजात अभियोग्यताओं तथा अन्तरासर्गी ग्रन्थियों और दूसरी ओर अवसर तथा सामाजिक मूल्यांकन की अन्तर्प्रक्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न होती हैं। सामाजिक वातावरण के सापेक्षिक स्थायित्व (Stability) के कारण रुचियां भी सामान्य रूप से स्थायी रहती हैं। व्यक्तियों की योग्यता, रुचि एवं व्यक्तित्व में विभेद होता है और प्रत्येक व्यक्ति अनेक व्यवसायों के लिए योग्यता रखता है। प्रत्येक व्यवसाय के लिए योग्यताओं, रुचियों एवं व्यक्तित्व की प्रतिकृति चाहिए। व्यावसायिक चुनाव एवं सामर्थ्य में अनुभव से परिवर्त्तन होता रहता है। अतः इस अनुभव की दिशा में अनेक सोपान हैं, जिन्हें इस प्रकार वर्गीकृत किया जा सकता है : (१) विकास, (२) अन्वेषण, (३) स्थापना, (४) संधारण, (५) पतन। (Growth, Exploration, Establishment, Maintenance and Decline)।

सुपर ने रुचियों को तीन वर्गों में बाँटा : (१) अभिव्यक्त (Expressed), (२) प्रकट या प्रव्यञ्जित (Manifest). (३) परीक्षित या तालिकाकृत

1. Berdie, R. F : Factors Related to Vocational Interests, *Psychological Bulletine*, 1944, 41, pp. 131-157.
2. Super : *Appraising Vocational Fitness*, Harper Brothers, New York, 1949.

(Tested or Inventoried)। **अभिव्यक्त रुचि** का अर्थ है किसी वस्तु, क्रिया या व्यवसाय में रुचि का शाब्दिक कथन। प्रकट या प्रव्यञ्जित रुचि का अर्थ है किसी क्रिया या व्यवसाय में भाग लेना। परीक्षित या तालिकाकृत रुचि का अर्थ है वे रुचियाँ जो किसी परीक्षण, तालिका या प्रश्नावली का प्रयोग करने से ज्ञात होती हैं।

रुचियों के अवयव-विश्लेषण के परिणाम

रुचियों का अवयव-विश्लेषण सर्वप्रथम थर्स्टन ने किया, जिसने स्ट्रांग की व्यावसायिक रुचि परिसूची के १८ व्यावसायिक मापदण्डों का विश्लेषण किया। तदुपरान्त स्ट्रांग ने ३६ व्यावसायिक मापदण्डों के तथ्यों का विश्लेषण किया। गिलफोर्ड ने १९५४ में प्रकाशित लेख 'मानव रुचियों का अवयव-विश्लेषण अध्ययन'[1] में सेना के अफसरों एवं अन्य व्यक्तियों की रुचियों के अवयव-विश्लेषण का उल्लेख किया। कॉटिल ने १९५० में प्रकाशित लेख 'बहुपक्षीय, स्ट्रांग, कूडर तथा बैल की तालिकाओं का अवयवात्मक अध्ययन'[2] में भी रुचि के अनेक अवयवों का उल्लेख किया है। अनेक अन्य व्यक्तियों ने भी इस दिशा में कार्य किया है। हम यहाँ कुछ महत्वपूर्ण अवयवों का उल्लेख कर रहे हैं :—

थर्स्टन—भौतिक विज्ञान, कानूनी, शैक्षिक, वर्णनात्मक, जीवशास्त्रीय, कला, व्यापारिक, व्यावसायिक।

अलपोर्ट-वर्नन—सैद्धान्तिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक, सौन्दर्यात्मक।

सूरी—सैद्धान्तिक, सामाजिक, भौतिकवादी, धार्मिक।

कूडर—बाह्य, यान्त्रिक, गणनात्मक, वैज्ञानिक, अनुनयात्मक, कलात्मक, साहित्यिक, संगीतात्मक, समाज-सेवा, क्लैरीकल।

गिल्फोर्ड—यान्त्रिक, वैज्ञानिक, साहसिक कार्य, समाज-कल्याण, सौन्दर्य-अनुबोध, सांस्कृतिक समनुरूपता, आत्म-निर्भरता, सौन्दर्य अभिव्यक्ति, क्लैरीकल, व्यपवर्त्तन[3] की इच्छा, कलात्मक-

---

1. Guilford and Associates : A Factor Analysis Study of Human Interests, *Psychological Monograms*, 1954, 68, No. 4.
2. Cottle, W. C. : A Factorial Study of the Multiphasic, Strong, Kuder and Bell Inventories, —*Psychometrika*, 1950. 15, pp, 15-47.
3. **व्यपवर्त्तन** (Diversion).

चिन्तन, ध्यान की इच्छा, विरोध, व्यापारिक रुचि, बाह्य कार्य, शारीरिक चालना, आक्रमण ।

कॉटिल—वस्तुओं बनाम व्यक्तियों में
व्यापार बनाम विज्ञान में
व्यापार बनाम जीवशास्त्र
शाब्दिक भाषा सम्बन्धी कार्यों में
व्यक्तियों के व्यवहार करने में—सामाजिक कार्यों में ।

स्ट्रांग—रचनात्मक-वैज्ञानिक, तकनीकी, उत्पादन-मैनेजर, अर्द्ध-तकनीकी, सामाजिक, संगीत, एकाउन्टेन्ट, व्यापार, शाब्दिक, औद्योगिक संस्थान का सभापति ।

इसी प्रकार अनेक अवयव दिए जा सकते हैं । अवयवों की एक विस्तृत सूची आगे दे रहे हैं ।

रुचियों का मापन

रुचि-तालिका बनाने का कार्य सर्वप्रथम सन् १९१९ में 'कार्नीगे इन्स्टीट्यूट ऑफ टैक्नॉलॉजी' (Carnegie Institute of Technology) में प्रारम्भ हुआ । **माइनर** (Miner) ने हाई-स्कूल के विद्यार्थियों के लिए एक रुचि-तालिका बनाई । इसके न्यादर्श में हाई-स्कूल के १०,००० बालकों को लिया गया । विभिन्न क्षेत्रों जैसे विद्यालय, औद्योगिक एवं व्यापारिक संस्थानों, सार्वजनिक तथा व्यक्तिगत कर्मचारी-नियुक्ति कार्यालयों में इसका उपयोग किया गया । **मूर** (**Moor**) ने सन् १९२१ में एक तालिका बनाई । इसमें इन्जीनियर्स की यांत्रिक एवं सामाजिक रुचियों का पता लगाने के लिए १४ प्रश्न रखे गए थे । बाद में प्रश्नों की संख्या बढ़ाकर २० कर दी गई और १० विभिन्न व्यावसायिक समूहों में रुचियों के मापन में इसका प्रयोग किया गया । मूर की 'व्यावसायिक रुचि-तालिका' (Occupational Interest Inventory) में निम्नलिखित व्यवसायों में रुचि का मापन किया जाता है -

यांत्रिक व्यवसाय	**सामाजिक व्यवसाय**
१. वास्तुकार (Architect)	१. वहित्र विक्रेता (Automobile Salesman)
२. वहित्र प्रतिसंस्कर्त्ता (Automobile Repairman)	२. बैंक का खजान्ची (Bank Cashier)
३. बढ़ई (Carpenter)	३. किसी जनप्रिय पत्रिका का सम्पादक (Editor of a Popular Magzine)

४. मानचित्रकार (Draftsman)	४. होटल-मालिक (Hotel owner)
५. सरकारी ज्योतिषी (Govt. Astronomer)	५. वकील (Lawyer)
६. यन्त्रकार (Machinist)	६. समाचारपत्र प्रतिवेदक (Newspaper Reporter)
७. प्रतिकृति-निर्माता (Pattern-maker)	७. व्यक्तिगत सचिव (Private Secretary)
८. भौतिकशास्त्र में अन्वेषक (Research-worker in Physics)	८. क्रय अभिकर्त्ता (Purchasing Agent)
९. उपकरण बनाने वाला (Tool-maker)	९. सम्पदा अभिकर्त्ता (Estate Agent)
१०. घड़ी-साज (Watch-maker)	१०. स्कन्ध-मध्यग (Stock-broker)

क्रेग ने १९२४-२५ में विभिन्न प्रकार की रुचियों का मापन करने के लिए अनेक रुचि-तालिकाएँ प्रयुक्त कीं। इनमें प्रथम तालिका "रुचियों एवं अधिमानों की प्रश्नावली" (A Questionnaire of Interests and Preferences) है, जिसमें दो पृष्ठों में ५ लम्बे प्रश्न हैं। दूसरी तालिका "व्यावसायिक अधिमान" (Occupational Preferences) है जिसमें ४९ पद हैं; तीसरी 'अधिमानों का लेखा' (Record of Preferences) है; चौथी "रुचि परिसूची" (Interest Blank) है जिसमें अनेक क्रियाओं से सम्बन्धित प्रश्न हैं; जैसे तैरना, व्यक्तिगत सचिव होना, स्कूल जाना, बैन्जो बजाना, कविता लिखना, खेती करना, दूकानदारी करना आदि।

ब्रेनार्ड ने सन् १९२३ में एक रुचि-तालिका बनाई, जिसका नाम है "शैक्षिक एवं व्यावसायिक कार्यों के लिए ब्रेनार्ड की तालिका" (Brainard's Inventory of Educational and Vocational Activities)। इसमें अनेक क्रियाएँ सम्मिलित हैं; जैसे कविता लिखना, भाषण देना, समाचार-पत्र पढ़ना आदि।

कार्नहॉसर ने सन् १९२७ में अपनी "सामान्य रुचि तालिका" (Kornhauser's General Interest Inventory) बनाई। इसमें खेल, पुस्तकों, पत्रिकाओं, प्रजाति एवं सामाजिक समस्याओं, कॉलिज का अध्ययन आदि से सम्बन्धित अनेक प्रश्न हैं। पर व्यावसायिक क्रियाओं से सम्बन्धित प्रश्न नहीं हैं।

सन् १६२४ में **कॉडेरी** (Cowdery)[1] ने कार्नीगे रुचि-तालिका का संशोधन करके एक नई तालिका बनाई। इसमें कुल २६३ पद हैं, जो इस प्रकार वर्गीकृत हैं—

व्यावसायिक ८४, व्यक्तियों से सम्बन्धित ७८, खेल एवं मन बहलाव ३४, पालतू पशु ६, पाठन १३, विभिन्न क्रियाएँ २३, विद्यालय के विषय २५।

स्ट्रांग की व्यावसायिक रुचि परिसूची
(Strong Vocational Interest Blank)

इस परिसूची की सहायता से किसी व्यक्ति की आसक्ति एवं विरक्ति का किसी वस्तु के प्रति उदासीनता का जानना सम्भव है। इसमें ४२० विभिन्न पद हैं जो विभिन्न व्यवसायों, मनोविनोद, क्रियाओं, स्कूल के विषयों एवं व्यक्तिगत विशेषताओं से सम्बन्धित हैं। कई हजार व्यक्तियों ने इस परिसूची को भरा है जो विभिन्न व्यवसायों में कार्य करते हैं, जैसे वकील, इन्जीनियर, डाक्टर, विक्रेता, अध्यापक, किसान, दन्त-चिकित्सक, वास्तुकार आदि। स्ट्रांग ने पता लगाया है कि इनमें से किसी भी व्यवसाय में कार्य करने वाले व्यक्तियों की रुचियाँ अन्य व्यक्तियों की रुचियों से भिन्न होती हैं। जब कोई व्यक्ति परिसूची भर लेता है और उसकी प्रतिक्रियाओं का उचित भारण हो जाता है तो यह ज्ञात कर लिया जाता है कि उसकी रुचियाँ व्यवसाय में सफल व्यक्तियों की रुचियों की ही भाँति हैं या नहीं। यह परिसूची योग्यता का मापन नहीं करती। और यह १७ वर्ष से अधिक योग्यता के व्यक्तियों के लिए अधिक उपयुक्त है, पर १५-१६ वर्ष की अवस्था के लोगों पर भी इनका प्रयोग सम्भव है। १५ वर्ष से कम अवस्था के लड़कों की रुचियों का मापन अधिक वैध नहीं है, क्योंकि उनकी रुचियों में स्थायित्व नहीं होता।

इस परिसूची के चार प्रतिरूप हैं। प्रतिरूप 'A' पुरुषों के लिए है तथा प्रतिरूप 'WA' स्त्रियों के लिए। पर ये प्रतिरूप उन व्यक्तियों पर प्रयुक्त होते हैं जो पढ़ना छोड़ चुके हैं। प्रतिरूप 'B' तथा 'WB' इसी प्रकार क्रमशः स्कूल में पढ़ने वाले लड़के तथा लड़कियों के लिए हैं। विभिन्न व्यवसाय जिनके लिए कुंजियाँ बनाई गई हैं, ये हैं—

भौतिकशास्त्री, गणितज्ञ, इन्जीनियर, रसायन-शास्त्री, दन्त-चिकित्सक, वास्तुकार, मनोवैज्ञानिक, कलाकार, संगीतकार, वकील, पत्रकार, अध्यापक,

1. Cowdery's : *Interest Inventory*, published by the Stanford University Press.

वाई० एम० सी० ए० सचिव, स्कूल सुपरिन्टेन्डेन्ट, एकाउन्टेन्ट, क्रय-अभिकर्त्ता, जीवन-बीमा विक्रेता आदि।

स्त्रियों के लिए निम्न व्यवसायों का मापन सम्भव है—

कलाकार, लेखिका, दन्त-चिकित्सक, वकील, गृहपत्नी, नर्स, सामाजिक कार्यकर्त्ता, स्टेनोग्राफर-सचिव, आदि।

इसके प्रशासन के लिए सभी निदेश स्वयं परिसूची पर छपे होते हैं। परीक्षार्थी को परिसूची देते समय उसे इसका व्यावसायिक रुचि मापन का लक्ष्य बना देना चाहिए ताकि वह अपने आसक्ति-विरक्ति कथनों को असत्य न बताए। उत्तरों का निर्णय शुद्ध-अशुद्ध के आधार पर नहीं किया जाता, अतः पर्यवेक्षण की विशेष आवश्यकता नहीं है। समय की भी पाबन्दी नहीं है, पर परीक्षार्थियों को शीघ्रातिशीघ्र सूची भरने के लिए कहना चाहिए। अधिकांश परीक्षार्थी ५० मिनिट में परिसूची भर देंगे। पर कुछ व्यक्ति आधे घण्टे में ही उत्तर दे देते हैं और कुछ दो घण्टे से भी अधिक समय लेते हैं। पूरी परिसूची में प्रत्येक व्यवसाय में रुचि का अलग फलांकन मापदण्ड है। फलांकन में प्रत्येक व्यवसाय में लगभग २०-२५ मिनिट लगते हैं।

लगभग ४७ पुरुषों के व्यवसायों के लिए कुंजियाँ प्राप्त हैं। स्त्रियों की परिसूची में दन्त-चिकित्सक, नर्स, स्टेनोग्राफर तथा २४ व्यवसायों के लिए कुंजियाँ उपलब्ध हैं। स्ट्रांग तालिका के प्रश्न-पद वास्तव में इतने विभिन्न प्रकार के हैं कि इन्हें किसी भी क्षेत्र में पूर्वकथन करने के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है। किसी भी व्यवसाय या विशिष्ट समूह के लिए एक नई कुंजी भी बनाई जा सकती है। कुञ्जियों को केवल व्यावसायिक रुचियों के लिए बनाया जाय, यह भी आवश्यक नहीं है। उदाहरण के लिए उन उत्तरों का फलांकन करके जो मुख्यतः पुरुषों ने दिए थे और स्त्रियों ने कम, स्ट्रांग ने एक 'पुरुषत्व-स्त्रीत्व कुञ्जी' (Masculinity-Femininity Key) भी बनाई। शैक्षिक अभियोग्यता या मनोदौर्बल्य प्रवृत्ति के मापन के लिए भी इसी प्रकार कुञ्जियाँ बनाई जा सकती हैं। कई व्यवसायों को मिलाकर सामूहिक कुञ्जियाँ भी बनाई गई हैं। ये समूह ग्यारह हैं।

परिसीमाएँ—

यद्यपि यह तालिका सामान्य एवं विशिष्ट रुचियों का पता लगाने में अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुई है, इसमें अनेक त्रुटियाँ हैं। हम इनमें से कुछ का यहाँ वर्णन करेंगे: —

१. अपनी रुचियों का उल्लेख करते समय व्यक्ति जो निर्णय देता है, उसकी सत्यता-असत्यता की जाँच सम्भव नहीं है।

२. इसे प्रयुक्त करके हम यह नहीं जान सकते कि व्यक्ति की रुचि स्थायी है, उसके व्यक्तित्व का अंग है, या केवल किसी व्यवसाय में पड़ जाने के कारण ही वह उससे सम्बन्धित कार्यों में रुचि लेने लगा है।

३. विद्यार्थियों पर परिसूची का प्रयोग करके उनकी जिन रुचियों का पता चलता है, वास्तव में वे उनके वातावरण का एवं जिन क्रियाओं में वे संलग्न हैं, उसका परिणाम है। इसके आधार पर हम यह नहीं कह सकते कि वास्तव में वे रुचियाँ उनके भावी व्यावसायिक चुनाव की ओर कोई संकेत करती हैं।

४. स्ट्रांग ने यद्यपि उल्लेख किया है कि प्रत्येक व्यावसायिक समूह के लिए अन्य व्यवसायों से अलग रुचियाँ होती हैं और उसने अपनी तालिका की रचना भी इसी आधार पर की है, पर इन रुचियों में काफी प्रतिच्छादन (Overlapping) होता है। अनेक व्यवसायों में एक-सी ही रुचियों की आवश्यकता पड़ती है।

५. रुचियाँ स्थायी नहीं होतीं, विशेषकर किशोरों और बालकों की। अतः रुचि तालिका प्रयुक्त करके वर्तमान रुचियों के आधार पर उनकी भावी व्यावसायिक सफलता का पूर्व कथन करना अनुचित है। प्रौढ़ों की रुचियाँ यद्यपि किशोरों की तुलना में अधिक स्थायी होती हैं, पर अनेक वर्षों के बाद की उनकी रुचियों के साथ अधिक ऊँचा सहसम्बन्ध प्राप्त नहीं हुआ है।

६. व्यावसायिक रुचियों का समूहों में वर्गीकरण अधिक वैज्ञानिक नहीं है। अनेक व्यवसायों में एक ही प्रकार की क्रियायें एवं रुचियाँ सम्भव हैं।

कूडर अधिमान लेखा
(Kuder Preference Record)

इसमें पदों के फलांकन में स्ट्रांग तालिका से भिन्न विधि प्रयुक्त की गई है। इसका उद्देश्य कुछ विस्तृत क्षेत्रों में सापेक्षिक रुचि का मापन करना है, न कि विशिष्ट व्यवसायों में। पदों की रचना एवं वर्गीकरण तर्कसंगत वैधता के आधार पर है। इस लेखे के कई प्रतिरूप हैं, जैसे औद्योगिक, व्यावसायिक, व्यक्तिगत। इसके व्यावसायिक प्रतिरूप में १६८ पद हैं। प्रत्येक में तीन क्रियाओं का वर्णन है। परीक्षार्थी यह बताता है कि वह इनमें से किस क्रिया को सबसे ज्यादा पसन्द करता है और किसको सबसे कम। पूरे लेखे में कुल १० रुचि-मापदण्ड हैं और एक सत्यापन (Verification) मापदण्ड, जिसका उद्देश्य यह

पता लगाना है कि परीक्षार्थी ने असावधानी तो नहीं बरती तथा वह निदेशों को समझने में असफल तो नहीं रहा। ये दस मापदण्ड हैं : बाह्य, यान्त्रिक, गणनात्मक, अनुनयात्मक, वैज्ञानिक, कलात्मक, साहित्यिक, संगीतात्मक, समाज-सेवा एवं क्लैरीकल।

इसका प्रयोग माध्यमिक विद्यालयों में, महाविद्यालयों में तथा प्रौढ़ों पर सम्भव है। पर माध्यमिक विद्यालयों में इसका प्रयोग स्ट्रांग तालिका की अपेक्षा अधिक श्रेयस्कर है। लेखे की विश्वसनीयता ·९ के आसपास है। पर इस लेखे द्वारा मापित रुचि में कालान्तर में कितना स्थायित्व होगा, इस सम्बन्ध में अधिक सूचना प्राप्त नहीं है। परीक्षार्थियों द्वारा असत्य उत्तरों का दिया जाना भी सम्भव है। 'कूडर अधिमान लेखा' के सम्बन्ध में काफी अनुसन्धान कार्य हुआ है, तथापि अनुभवजन्य वैधता के सम्बन्ध में अधिक आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। इसकी पूर्वकथन वैधता पर भी प्रदत्त एकत्र हुए हैं।

फलांक कुंजियाँ पदों की आन्तरिक सम्बन्धता पर आधारित हैं। जब परीक्षार्थी एक प्रकार की क्रिया को पसन्द करता है तो वह दूसरी प्रकार की क्रिया को भी पसन्द करता है। वास्तविक फलांकों (Raw Scores) का प्रतिशतक फलांकों (Percentiles) में परिवर्तन कर लिया जाता है। पुरुषों एवं स्त्रियों के लिए विवरण-पुस्तिका में अलग-अलग मानक दिए गए हैं।

अन्य रुचि-मापक

क्लीटन की व्यावसायिक रुचि तालिका (Cleeton's Vocational Interest Inventory)—

इसमें पुरुषों एवं स्त्रियों के लिए अलग प्रतिरूप हैं और यह नवीं या इससे ऊपर की कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए उपयुक्त है। ऐसे व्यक्तियों का भी रुचि-मापन सम्भव है जो स्कूल छोड़ चुके हैं। पुरुषों की तालिका में ६३० ऐसे पद हैं जिनकी पड़ताल करनी होती है और ४० प्रश्नों का उत्तर 'हाँ' या 'न' में देना होता है। पड़ताल के पद ९ समूहों में वर्गीकृत हैं। इसमें इन्जीनियर, मिनिस्टर, अध्यापक, सामाजिक कार्यकर्त्ता, जीवन-बीमा विक्रेता, जीवशास्त्रीय, वैज्ञानिक आदि का रुचि-मापन सम्भव है।

गैरिटसन तथा साइमन्डस् की रुचि प्रश्नावलि (Garretson and Symonds' Interest Questionnaire)—

यह केवल ९ वीं तथा १०वीं कक्षा के लड़कों के लिए उपयुक्त है। और

इसमें तीन समूहों में लड़कों की रुचियों का मापन किया जाता है—शैक्षिक, तक्नीकी, एवं व्यापारिक।

ली-थार्पे तालिका (Lee-Thorpe Inventory)—

इसमें प्रश्नों का संकलन सांख्यिकीय आधार पर न करके निर्णय के आधार पर किया गया है। ली-थॉर्पे ने विभिन्न व्यवसायों की व्याख्या यूनाइटेड स्टेट्स एजूकेशनल सर्विस द्वारा प्रकाशित 'व्यावसायिक शीर्षकों के कोष' (Dictionary of Occupational Titles) में ली। ६ विभिन्न क्षेत्रों में उच्च, मध्यम तथा निम्न उत्तरदायित्व के स्तरों के प्रतिनिधित्व का निर्णय करने के लिए पदों का संकलन किया गया। कृत्य (Job) का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया जाता है और प्रयोज्य से अपना अधिमान (Preference) बताने के लिए कहा जाता है। ६ क्षेत्र हैं:—

प्राकृतिक, यांत्रिक, वैज्ञानिक, कला, व्यापार, व्यक्तिगत-सामाजिक।

गिल्फोर्ड-श्नीडमैन-ज़िमरमैन रुचि सर्वेक्षण (Guilford-Shneidman-Zimmerman Interest Survey)—

इसमें ३६० क्रियाएँ दी जाती हैं और परीक्षार्थी को बताना पड़ता है कि इनमें से प्रत्येक को वह व्यासंग के रूप में पसन्द करेगा या व्यवसाय के रूप में। क्रियाएँ इस प्रकार की हो सकती हैं जैसे नृत्य करने जाना, किसी व्यवसायिक व्यक्तियों के समूह का सर्वेक्षण करना आदि। इन क्रियाओं को ९ क्षेत्रों में बाँटा गया है और प्रत्येक क्षेत्र को दो उपवर्गों में :—

इसके मानक अन्तिम नहीं हैं और केवल छोटे समूहों पर किए गए प्रमापीकरण पर आधारित हैं। बाह्य-वैधता के सम्बन्ध में प्रदत्त उपलब्ध नहीं हैं।

थर्स्टन रुचि अनुसूची (Thurston Interest Schedule)—

यह एक संक्षिप्त पड़ताल-सूची है। इसकी मुख्य सुविधा है प्रशासन तथा फलांकन की सरलता। इस अनुसूची में १०० व्यावसायिक शीर्षकों के युग्म दिए रहते हैं। प्रयोज्य को बताना पड़ता है कि वह प्रत्येक युग्म में से कौन-सा व्यवसाय पसन्द करता है। प्रशासन में कुल १० मिनिट लगते हैं। व्यवसाय १० क्षेत्रों से सम्बन्धित हैं : भौतिक विज्ञान, जीवशास्त्रीय विज्ञान, गणना, व्यापार, अनुनयात्मक, भाषा-विज्ञान, प्रशासन, कलात्मक, संगीतात्मक, समाजोपकार। इस अनुसूची की अर्द्ध-विच्छेद विश्वसनीयता ·९० के लगभग है। इसके मानक तथा बाह्य वैधता के सम्बन्ध में प्रदत्त उपलब्ध नहीं हैं।

रुचि-मापन का मूल्यांकन

रुचियों का स्थायित्व[1]—

रुचियों के स्थायित्व के बारे में अनेक अध्ययन हुए हैं जिनसे यह ज्ञात हुआ है कि संक्षिप्त अवधि में रुचियाँ स्थायी होती हैं, पर एक लम्बी अवधि के बीत जाने पर उनमें परिवर्तन हो जाता है। प्रौढ़ों की रुचियाँ अधिक स्थायी होती हैं, पर किशोरों और विशेषकर बालकों की नहीं। **स्ट्रांग** ने स्टोन्फोर्ड विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों की रुचियों का आठ वर्ष बाद पुनर्परीक्षण किया। विभिन्न मापदण्डों में परीक्षण-पुनर्परीक्षण सहसम्बन्ध ·५४ और ·७६ के बीच था।

हर्ज़बर्ग तथा बूटन (Herzberg and Bouton) ने १९५४ में १७ से २१ वर्ष तक के व्यक्तियों की रुचियों का मापन 'कूडर अधिमान लेखे' से किया। विभिन्न मापदण्डों में सहसम्बन्ध ·५० और ·७५ के बीच था। इसी प्रकार अन्य अनेक अन्वेषण हुए हैं। इनसे ज्ञात होता है कि जैसे-जैसे आयु बढ़ती है, बालक अपने अनुभव की विभिन्न बातों में स्पष्ट विभेद करके अपनी चेतन भावनाओं को समझने लगता है, अतः उसकी रुचियाँ भी अधिक स्थायी होने लगती हैं। हाईस्कूल तक इन रुचियों का पूर्ण विकास नहीं हो पाता, अतः इस आयु में व्यावसायिक संदर्शन का उद्देश्य केवल परीक्षार्थी की रुचियों की छानबीन होना चाहिए।

स्ट्रांग की तालिका से रुचियों का मापन करने पर उनके स्थायित्व के बारे में निम्न आंकड़े उपलब्ध हुए हैं।

समय-अन्तर	प्रारम्भिक विद्यालय	माध्यमिक विद्यालय	महाविद्यालय प्रवेशार्थी
१ या २ वर्ष	·५५	·६५	·८०
३ से ५ वर्ष तक	·३०	...	·७५
६ से १० वर्ष तक	...	·५०	·५५

रुचियों के स्थायित्व के सम्बन्ध में अन्य अध्ययन थॉर्नडाइक, विलेट, कार्थोर्न, फ्रेन्कलिन तथा फ्रायर ने किए हैं। थॉर्नडाइक ने पता लगाया कि क्रियाशीलता के ७ क्षेत्रों—गणित, इतिहास, साहित्य, विज्ञान, संगीत, चित्रण तथा हाथ के कार्य—में व्यक्तियों की रुचियों में प्रारम्भिक स्कूल तथा कॉलिज के वर्षों के बीच ·६ का सहसम्बन्ध रहता है।

1. Stability of Interests.

रुचियों के मापन का पूर्वकथनात्मक महत्व—

केवल अभिव्यक्ति से किसी व्यक्ति की रुचियों के बारे में जो सूचना मिलती है, उसकी अपेक्षा मापन द्वारा मिलने वाली सूचना अधिक श्रेष्ठ तथा महत्वपूर्ण है। दोनों में क्रास्बी तथा विन्सर ने १९४१ में ·५२ का सहसम्बन्ध ज्ञात किया। पर इसका यह अर्थ नहीं है कि रुचि-परीक्षण अभिव्यक्त रुचियों की अपेक्षा अधिक वैध हैं। पर स्ट्रांग तथा कूडर दोनों परीक्षणों से यह ज्ञात हुआ है कि इनसे मापन करने पर व्यक्ति की जिन रुचियों का पता चलता है, अधिकांशतः व्यक्ति बाद में चलकर उन्हीं व्यवसायों को अपनाते हैं। रुचि-परीक्षणों से यह पता लगाना भी सम्भव है कि कौन व्यक्ति अपने व्यवसाय से सन्तुष्ट है और कौन नहीं। स्ट्रांग[1] के अध्ययनों से यह भी ज्ञात हुआ है कि रुचियों में अन्तर होने पर व्यक्ति किस व्यवसाय में सन्तोष प्राप्त करेगा, क्योंकि वे व्यक्ति जो १० वर्ष या इससे भी अधिक समय तक किसी व्यवसाय में रहते हैं उनके उस व्यवसाय में अन्यों की अपेक्षा अच्छे फलांक आते हैं। स्ट्रांग की सबसे अधिक महत्वपूर्ण खोज यह है कि महाविद्यालय में विद्यार्थियों के रुचि-मापन से प्राप्त फलांकों के आधार पर १८ वर्ष बाद व्यक्ति का क्या व्यवसाय होगा, यह ज्ञात हो सकता है। पर मैकार्थर[2] ने इस मान्यता को चुनौती दी है कि रुचि-फलांकों से भावी व्यवसाय का पूर्वकथन सम्भव है, क्योंकि उसके अनुसार व्यवसाय के चुनाव में रुचि के अतिरिक्त अनेक अन्य तथ्य भी प्रभावी होते हैं। रुचि-तालिकाओं से व्यावसायिक प्रशिक्षण में सफलता का भी पूर्वकथन नहीं होता। इस सम्बन्ध में केली के १९५१ के अध्ययन महत्वपूर्ण हैं। उसने उपचार मनोविज्ञान में प्रशिक्षण के लिए प्रवेश करने वाले विद्यार्थियों का रुचि-परीक्षण किया। रुचि-फलांकों एवं प्रशिक्षण में सफलता के मध्य सम्बन्ध ·२० के आसपास था।

रुचि एवं योग्यता—

यह आवश्यक है कि रुचि एवं योग्यता के मापकों में सम्भ्रम न हो। यदि कोई परीक्षार्थी किसी रुचि-परीक्षण के वैज्ञानिक रुचि-मापदण्ड पर उच्च फलांक

1. Stroug, E. K jr. : *Vocational Interests of Men and Women.* Stanford University Press, 1943, pp. 412-456.
2. McArthur, C. & Stevens, L. B. : The Validation of Expressed Interests as Compared wilh Invent oried Interests : A Fourteen Year Follow-up. *J. Appl. Psychol,* 1955, 39, pp. 184-189.

प्राप्त करता है तो इसका यह अर्थ नहीं है कि उसमें भौतिक शास्त्र के सिद्धान्तों को ग्रहण करने की आवश्यक बौद्धिक सामर्थ्य या अभियोग्यता है। रुचि के मापक प्रत्यक्ष रूप से योग्यता के बारे में कोई संकेत नहीं देते। उनमें केवल इतना ही सम्बन्ध है कि ये दोनों मापक समुपयुक्तता के जिन दो पक्षों का मापन करते हैं वे एक-दूसरे के पूरक हैं। रुचि एवं योग्यता के सहसम्बन्ध को ज्ञात करने के लिए अनेक अध्ययन किए गए हैं। इनसे ज्ञात होता है कि यह सहसम्बन्ध धनात्मक किन्तु निम्न है। किसी विशिष्ट क्षेत्र में रुचि एवं उसमें निष्पत्ति में ·२५ से लेकर ·५० तक सहसम्बन्ध प्राप्त होता है। अतः यदि किसी व्यक्ति की किसी क्षेत्र में योग्यता है तो उसमें उसकी रुचि भी होगी, किसी सीमा तक यह सम्भव है। महत्वपूर्ण अध्ययन थार्नडाइक, डॉलिन्जर, फ्रायर, तथा हार्टमैन आदि के हैं। थार्नडाइक[1] के कथनानुसार ११ तथा १४ वर्ष की अवस्थाओं में रुचि का बाद में चलकर २१ वर्ष की अवस्था में प्राप्त योग्यता के साथ ·६६ सहसम्बन्ध होता है।

---

1. Thorndike, E. L. : Early Interests : Their Permanence and Relations to Ablities, *School and Society*, 1917 5, pp. 178-179.

: २१ :

व्यक्तित्व की प्रकृति

व्यक्तित्व का अर्थ—

'व्यक्तित्व' के अर्थ के बारे में मनोवैज्ञानिकों में मतैक्य नहीं है। तथापि इतना सत्य है कि इस शब्द का सूत्रपात लैटिन भाषा के 'उपाकृति' (Persona) शब्द से हुआ, जिसका अर्थ है बाहरी नकाब या वेशभूषा। अतः व्यक्ति की बाहरी वेशभूषा एवं रंग-रूप को व्यक्तित्व के अर्थों में प्रयुक्त किया गया है। पर व्यक्तित्व का यह अर्थ एकांगी है। अनेक ऐसे व्यक्तियों में भी व्यक्तित्व तो होता ही है जो शारीरिक रूप-रंग में सुन्दर नहीं हैं। निस्संदेह शारीरिक रूप-रंग एवं शारीरिक गठन का व्यक्तित्व में महत्वपूर्ण योगदान है। पर व्यक्तित्व में तो सभी कुछ सम्मिलित है, जैसे आचार-विचार, सिद्धान्त, मनोवृत्ति, वेश-भूषा, बुद्धि, व्यवहार करने का ढंग आदि। यह एक अत्यन्त व्यापक शब्द है।

प्रोफेसर जी० डब्ल्यू० आलपोर्ट (G. W. Allport) ने व्यक्तित्व के विषय पर विशद् प्रकाश डाला है। सन् १९३९ में इस सम्बन्ध में उन्होंने एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पुस्तक प्रकाशित की। उन्होंने अन्य मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रयुक्त व्यक्ति की परिभाषाओं एवं व्याख्याओं का अध्ययन किया एवं ज्ञात किया कि पचास से भी अधिक अर्थों में 'व्यक्तित्व' शब्द का प्रयोग हुआ है। उन्होंने स्वयं व्यक्तित्व की निम्न परिभाषा प्रस्तुत की :—

"व्यक्तित्व व्यक्ति में मनोदैहिक व्यवस्थाओं का वह गत्यात्मक संगठन है, जो वातावरण के साथ उसके अपूर्व अभियोजन का निर्धारण करता है।"[1]

यह व्याख्या स्पष्ट करती है कि व्यक्तित्व में शारीरिक एवं मानसिक दोनों ही पहलू महत्वपूर्ण हैं एवं यह गुणों का केवल समुच्चय नहीं, उनका समन्वय है।

व्यक्तित्व की कुछ अन्य प्रमुख परिभाषाएँ ये हैं :—

"व्यक्तित्व आदत की उन व्यवस्थाओं का समन्वय है, जो वातावरण के साथ व्यक्ति के विशिष्ट अभियोजन का प्रतिनिधित्व करता है।" —कैम्फ[2]

"यह अपने वातावरण के साथ व्यक्तित्व का सामान्य एवं स्थायी सामंजस्य है।" —बोरिंग[3]

"यह जन्म-जात एवं अर्जित प्रवृत्तियों का योग है।" —वैलन्टाइन[4]

"व्यक्तित्व एक ऐसा प्रत्यय है, जिसके अन्तर्गत व्यक्तित्व की सभी विचारात्मक, संवेगात्मक एवं गत्यात्मक प्रतिक्रियाएँ तथा इन प्रतिक्रियाओं का संगठन सम्मिलित है।" —काज एवं शैंका[5]

"व्यक्तित्व सभी जैविक जन्मजात प्रवृत्तियों, इच्छाओं, भूख एवं मूल प्रवृत्तियों का योग है; एवं इसमें अनुभव से प्राप्त अर्जित प्रवृत्तियाँ भी सम्मिलित हैं।" —मोर्टन प्रिन्स[6]

---

1. "Personality is the dynamic organisation within the individual of those psychophysical systems that determine his unique adjustment to his environment."
2. "Personality is the integration of those systems of habits that represent one individual's characteristic adjustments to his environment." —Kemph
3. "It is an individual's typical or consistent adjustment to his environment." —Boring.
4. It is "the sum-total of innate and acquired dispositions." —Valentine.
5. Personality is "the concept under which we subscribe the individual's characteristic ideational, emotional and motor reactions and the characteristic organisation of these responses." —Katz and Shanck.
6. "Personality is the sum-total of all the biological innate dispositions, impulses, tendencies, appetites and instincts of the individual and the acquired-dispositions and tendencies." —Morton Prince,

व्यक्तित्व के प्रकार—

व्यक्तित्व की विभिन्नता के आधार पर अनेक प्रकार से व्यक्तियों का वर्गीकरण किया गया है। प्राचीन काल में भारतीय आयुर्वेद में वात, पित्त एवं कफ, इन तीन प्रकृति के व्यक्ति बताये गए थे। इसी प्रकार धर्म-शास्त्रज्ञों ने सात्विक, राजसी एवं तामसिक, तीन प्रकार की मानसिक वृत्तियों का उल्लेख किया था। अरस्तू ने चार प्रकार की प्रकृति के व्यक्ति बताए थे—(१) विषादी (Melancholic), (२) पैत्तिक (Choleric), (३) कफ प्रकृति के (Phlegmatic), एवं वात प्रकृति के (Sanguine)। विषादी व्यक्तियों में काला पित्त, पैत्तिक व्यक्तियों में पीला पित्त, कफ प्रकृति के व्यक्तियों में कफ, एवं वात प्रकृति के व्यक्तियों में रक्तिम रुधिर की प्रधानता होती है। इस प्रकार अरस्तू के अनुसार व्यक्तित्व का आधार शारीरिक है। अरस्तू के शिष्य **थ्योफ्रास्टस** (Theophrastus) ने अत्यधिक निपुणता से ३० प्रकार के व्यक्तियों का वर्णन किया है, जैसे चापलूस, दरिद्र आदि।

व्यक्तित्व के इन प्रारम्भिक वर्गीकरणों के बाद व्यक्तित्व एवं चरित्र सम्बन्धी अध्ययन का कार्य निरन्तर चलता रहा। बेन जान्सन, जोसेफ एडीसन, सैमुअल बटलर एवं अन्य अनेक दार्शनिकों एवं निबन्धकारों ने इस सम्बन्ध में पर्याप्त प्रकाश डाला है। पर उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में **गॉल एवं स्परज़ीम** प्रभृत्ति विद्वानों ने व्यक्तित्व अध्ययन को एक नया मोड़ दिया। उन्होंने मुखाकृति एवं खोपड़ी के उभार के आधार पर व्यक्तित्व गुणों का वर्गीकरण किया। स्परज़ीम ने ३७ शक्तियों (Faculties) की एक सूची प्रस्तुत की जिसमें जीने की इच्छा, नाश की प्रवृत्ति, रचना-प्रवृत्ति आदि सम्मिलित हैं। इटालियन अपराध-विशेषज्ञ **लोम्ब्रोसो** (Lombroso) ने यह ज्ञात किया कि अपराधियों में उभरा हुआ जबड़ा एवं गाल की हड्डियाँ होती हैं, माथा धँसा हुआ होता है एवं कान बड़े होते हैं। प्रसिद्ध काम-शास्त्र विशेषज्ञ **हैवलक एलिस** ने ज्ञात किया कि त्वचा तथा बालों के रङ्ग का व्यक्तित्व से सम्बन्ध है।

व्यक्तित्व के आधार पर व्यक्तियों के अनेक आधुनिक वर्गीकरण भी प्रस्तुत किए गए हैं। इनमें निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं :—

१. **थार्नडायक** (Thorndike) ने विचार की दृष्टि से व्यक्तियों को सूक्ष्म विचारक (Abstract thinkers), प्रत्यय-विचारक (Idea thinkers), एवं स्थूल-विचारक (Thing-thinkers) में विभाजित किया है। इन्द्रियों की प्रधानता की दृष्टि से उसने व्यक्तियों को दर्शनालु (Visiles), श्रवणालु (Audiles), स्पर्शालु (Tartiles), घ्राणालु (Olfactiles), गमनालु (Motiles), एवं मिश्रित (Mixed) वर्गों में बाँटा है।

२. **वार्नर** (Warner) ने शारीरिक आधार पर बच्चों का निम्न वर्गीकरण प्रस्तुत किया है—स्वस्थ (Normal), अपरिपुष्ट (With Low Nutrition), शारीरिक रूप से अविकसित (Physically undeveloped), अंगविकृत (Crippled), स्नायुविक (Nervous), पिछड़ा हुआ (Backward), तीव्र बुद्धि (Mentally exceptional), मन्द-बुद्धि (Mentally feeble), मृगीग्रस्त (Epileptic), स्नायुरोगग्रस्त (With Abnormal Nerve-signs)

३. **शैल्डन** (Sheldon) के अनुसार तीन प्रकार के व्यक्तित्व हैं—

(अ) **कटि प्रवण या एन्डोडर्म** (Endoderm)—कोमल शरीर के एवं मोटे।

(ब) **अस्थिप्रेशी प्रवण या मैसोडर्म** (Mesoderm)—स्वस्थ एवं सुडौल ढाँचे वाले

(स) **आयतास्थि प्रवण या एक्टोडर्म** (Ectoderm)—दुबले एवं पतले शरीर वाले।

४. **क्रेश्मर** (Kretshmer) के अनुसार शरीर-रचना के आधार पर चार प्रकार का व्यक्तित्व होता है :—

(अ) **पिकनिक टाइप** (Pyknic type)—सिर एवं धड़ बड़ा, हाथ-पैर छोटे, कन्धे छोटे, गोल-सीना, प्रकृति से बहिर्मुखी।

(ब) **एथलैटिक** (Atheletic type)—सबल मांस-पेशियाँ, चौड़ा सीना, हाथ-पैर लम्बे, अण्डाकार चेहरा, प्रकृति से अन्तर्मुखी।

(स) **एस्थैनिक** (Asthenic)—तिकोना चेहरा, चपटा सीना, लम्बे एवं दुर्बल हाथ-पैर, प्रकृति से संघर्षशील।

(द) **डिस्प्लैस्टिक टाइप** (Dysplastic type)—मिश्रित प्रकार के एवं ग्रन्थि-बीमारियों से ग्रसित।

५. **युंग** (Jung) के अनुसार व्यक्ति मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं :—अन्तर्मुखी (Introverts) एवं बहिर्मुखी (Extrovert)। **बहिर्मुखी** व्यक्तियों में सामाजिकता के गुण पाये जाते हैं। फलतः वे संतुष्ट, प्रसन्नचित्त एवं उदार-हृदय होते हैं। इन्हें एकान्त जीवन अच्छा नहीं लगता। ये व्यवहार-कुशल एवं आत्म-विश्वासी होते हैं। देशोद्धारक, राजनीतिज्ञ, देश-सेवक एवं अन्य व्यक्ति प्रायः बहिर्मुखी होते हैं। **अन्तर्मुखी** व्यक्तियों की प्रकृति इसके विपरीत होती है। ये एकान्तप्रिय, वास्तविक जीवन से निराश एवं काल्पनिक संसार में विचरने वाले होते हैं। इनमें संवेगों की प्रमुखता होती है। अतः महात्मा, वैज्ञानिक एवं कलाकार लोग इसी प्रकार के होते हैं। युंग ने एक अन्य प्रकार

के व्यक्ति 'उभयमुखी' (Ambivert) का भी वर्णन किया है । ऐसे व्यक्ति इन दोनों वर्गों के बीच में होते हैं ।

६. **स्प्रैंगर** (Spranger) के अनुसार छः मुख्य प्रकार के व्यक्ति होते हैं :—

(अ) **आर्थिक** (Economic)— ये हर वस्तु का मूल्यांकन उसकी उपयोगिता के आधार पर करते हैं ।

(ब) **सैद्धान्तिक** (Theoretical)—सत्य प्राप्ति की ओर उन्मुख ।

(स) **सौन्दर्यानुभवी** (Aesthetic)—ये कलात्मक मूल्य के आधार पर वस्तु को आँकते हैं ।

(द) **सामाजिक** (Social) —दूसरों के दुःख-सुख में भाग लेने वाले ।

(य) **राजनीतिक** (Political)- नियन्त्रण एवं शक्ति-प्राप्ति में विश्वास करने वाले ।

(र) **धार्मिक** (Religious)—जो धार्मिक विश्वासों एवं आध्यात्मिकता के आदर्श को मानते हैं ।

व्यक्तित्व शीलगुण—

वे बीज-तत्व जिनसे व्यक्तित्व का निर्माण हुआ है शीलगुण कहलाते हैं । सामाजिकता (Sociability),विनयन (Submission), प्रसक्ति (Persistence) आदि ऐसे ही शीलगुण हैं । व्यक्तित्व का विस्तार इन शीलगुणों के ही आधार पर होता है । व्यक्ति जिस प्रकार का व्यवहार करता है, उनमें उसके शीलगुणों की अभिव्यक्ति होती है । पर शीलगुणों में स्थिरता नहीं होती । अनेक प्रयोगों एवं अन्वेषणों से इस सम्बन्ध में निष्कर्ष निकले हैं । मे एवं हार्टशोर्न के चरित्र अध्ययन (May and Hartshorne Character Study) से पता चलता है कि जिन विद्यार्थियों ने एक परिस्थिति में बेईमानी का प्रदर्शन किया, दूसरी में सत्यनिष्ठता का । वास्तव में किसी विशिष्ट शीलगुण की अभिव्यक्ति परिस्थिति पर निर्भर है, ऐसा कुछ मनोवैज्ञानिक मानते हैं । पर अन्य मनोवैज्ञानिक यह विश्वास करते हैं कि शीलगुण व्यक्ति में सामान्य रहता है पर किसी विशिष्ट परिस्थिति में वह अपने इस गुण को प्रदर्शित कर पाता है, अन्य परिस्थिति में नहीं ।

कुल शीलगुणों की क्या संख्या है, इस सम्बन्ध में भी अध्ययन किए गए हैं । एक अध्ययन में अंग्रेजी के चार हजार शब्दों को शीलगुण का नाम दिया गया था । एक अन्य अध्ययन में इनकी संख्या कुल १७१ मानी गई । पर अब

३५ युगल शब्दों को शीलगुण की संज्ञा दी गई है। कुछ विशिष्ट शीलगुण ये हैं :—

१. **सत्यनिष्ठा** (Honesty)—सत्यनिष्ठता का शीलगुण होने पर व्यक्ति विषम परिस्थितियों में भी सत्यनिष्ठा का परिचय देता है। सत्यनिष्ठा एक महान् व्यक्तित्व गुण है। सत्यनिष्ठ व्यक्ति सभी का विश्वास भाजन होता है।

२. **संवेगात्मक स्थिरता** (Emotional Stability)—इस शीलगुण के होने पर व्यक्ति अत्यन्त विषम परिस्थितियों में भी अपना मानसिक सन्तुलन नहीं खोता एवं संवेगात्मक अस्थिरता का शिकार नहीं होता। ऐसा व्यक्ति परिस्थिति का उचित मूल्यांकन करके तदनुसार कार्य करता है।

३. **प्रसक्ति** (Persistence)—प्रसक्ति का अर्थ है अनेक बाधाओं एवं कठिनाइयों के बावजूद भी प्रारम्भ किए हुए कार्य को पूरा करके ही छोड़ने की प्रवृत्ति। अभीष्ट की पूर्त्ति के लिए सतत प्रयास; अर्थात् प्रसक्ति एक उत्कृष्ट शीलगुण है। प्रसक्ति की परीक्षा लेने के लिए व्यक्ति के सम्मुख कठिन परिस्थित उपस्थित की जाती है और फिर यह देखा जाता है कि वह कठिनाई के कारण कार्य छोड़ता है या नहीं।

४. **विषाद** (Depression)—इस शीलगुण के अन्तर्गत व्यक्ति दुखी एवं चिन्ताग्रस्त रहता है। वह अपने भावों को व्यक्त नहीं करता, वरन् अपने अन्तर्मन में असमर्थता एवं साहस की कमी का अनुभव करता है।

५. **सामाजिकता** (Sociability)—इस लक्षण या शीलगुण के फलस्वरूप व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के प्रति विशिष्ट स्वरूप से व्यवहार करता है। उसकी अभिवृत्तियों एवं आचरण का निर्धारण भी तदनुरूप होता है। सभी व्यक्तियों में सामाजिकता की समान मात्रा नहीं होती।

अनेक अध्ययन यह जानने के लिए किए गए हैं कि इन लक्षणों पर शीलगुणों में कोई पारस्परिक सम्बन्ध है या नहीं। निष्कर्षत: ज्ञात हुआ है कि कुछ शीलगुणों में उच्च सहसम्बन्ध (Correlation) है, जबकि अनेक शीलगुणों में ऐसा कोई पारस्परिक सम्बन्ध नहीं है। यह आवश्यक नहीं है कि जो व्यक्ति सत्यनिष्ठ हो, वह वीर भी हो।

व्यक्तित्व के प्रतिकारक—

व्यक्तित्व के विकास एवं निर्धारण में मुख्यतया दो प्रकार के तत्वों का प्रभाव रहता है :—(अ) जैविक (Biological), एवं (ब) वातावरण-जन्य

(Environmental)। हम इनसे सम्बिन्धित कुछ मुख्य अंगों की एक सूची प्रस्तुत करेंगे।

(अ) जैविक निर्धारक :—

(१) शरीर संगठन एवं स्वास्थ्य (Physique and Health)
(२) नाड़ी संस्थान (Nervous System)
(३) शरीर रसायन (Body Chemistry)
(४) अन्त:स्रावी ग्रन्थियाँ (Endocrine Glands)

(ब) वातावरण-जन्य निर्धारक :—

(१) माता-पिता का आपसी सम्बन्ध (Parent's Mutual Relations)
(२) परिवार (Family)
(३) एक मात्र संतान (Only child)
(४) पाठशाला की जीवन (School life)
(५) माता-पिता एवं बालक का सम्बन्ध (Parent-child Relationship)
(६) संगी-साथी (Companions and Community)
(७) घर की आर्थिक स्थिति (Economic Conditions)
(८) सांस्कृतिक प्रभाव (Cultural Influence)
(९) किशोरावस्था में बालिका पर प्रभाव (Puberty Influence)
(१०) वैवाहिक सम्बन्ध (Marital Relations)

व्यक्तित्व के मापक

व्यक्तित्व के मापन की अनेक विधियाँ हैं। इन विधियों का वर्णन विस्तार से आगे के पृष्ठों में किया गया है। ये विधियाँ इस प्रकार हैं :—

१. प्रश्नावली (Questionnaire)
२. रेटिंग स्केल (Rating Scales)
३. सोशियोग्राम (Sociogram)
४. प्रक्षेपण विधियाँ (Projective Techniques)
   (i) रोशा विधि
   (ii) थैमाटिक परीक्षण
   (iii) शब्द-साहचर्य विधि

५. परिवेशात्मक परीक्षण (Situational Tests)
६. शारीरिक परीक्षण (Physiological Tests)
७. व्यक्ति-इतिहास विधि (Case History Method)
८. साक्षात्कार (Interview)
९. मनोविश्लेषण विधि (Psychoanalytic Method)
१०. निरीक्षण (Observation)

अगले अध्यायों में हम इन विधियों का कुछ विस्तार से वर्णन करेंगे ।

: २२ :

प्रश्नावलि विधि

इस विधि में व्यक्ति को कुछ प्रश्नों की एक सूची दे दी जाती है एवं व्यक्ति इन प्रश्नों के उत्तर लिखता है। अनेक व्यक्तियों को एक साथ छपी हुई प्रश्नावली देना सम्भव है, अतः कम समय में अनेक व्यक्तियों के व्यक्तित्व मापन के लिए यह एक उत्तम विधि है। ये प्रश्नावलियाँ या तो व्यक्ति की संवेगात्मक अस्थिरता का पता लगाने के लिए प्रयुक्त होती हैं या किसी विशिष्ट शीलगुण का पता लगाने या रोग का निदान करने के लिए। प्रश्नावली में प्रयुक्त कुछ प्रश्न इस प्रकार के हो सकते हैं :—

१.	क्या आपको बुरे स्वप्न दीखते हैं ?	हाँ, न, ?
२.	क्या आप गप-शप लगाना पसन्द करते हैं ?	हाँ, न, ?
३.	क्या आप काफी चिन्तित रहते हैं ?	हाँ, न, ?
४.	क्या आप कोई कार्य आरम्भ करके बीच में ही छोड़ देते हैं ?	हाँ, न, ?
५.	क्या आप विपरीत यौनि के व्यक्ति से बात करने से कतराते हैं ?	हाँ, न, ?
६.	क्या आप लोगों से मिलना-जुलना पसन्द करते हैं ?	हाँ, न, ?
७.	क्या आप दीर्घ काल से किसी रोग से पीड़ित हैं ?	हाँ, न, ?

८. क्या आप प्रत्येक कार्य में अत्यन्त सावधानी
बरतते हैं ? हाँ, न, ?
९. क्या आपके विचार में लोग आपसे घृणा करते हैं ? हाँ, न, ?
१०. क्या प्रातः उठते ही आपके सर में दर्द रहता है ? हाँ, न, ?

व्यक्तित्व प्रश्नावलियों का वास्तविक प्रारम्भ १९१८ में हुआ, जबकि रॉबर्ट एस० वुडवर्थ (R. S. Woodworth) ने सैनिकों में संवेगात्मक अस्थिरता का पता लगाने के लिए **व्यक्तिगत तथ्य सूची** (Personal Data Sheet) बनाई। इसमें ११६ प्रश्न हैं जिनमें से प्रत्येक का उत्तर 'हाँ' या 'न' में होता है। इसमें विभिन्न शारीरिक लक्षणों, डर, चिन्ताओं, भावनाओं, अभिवृत्तियों आदि से सम्बन्धित पद हैं। कुछ प्रश्न इस प्रकार हैं—"क्या आप प्रायः मूर्च्छित हो जाते हैं ?" "क्या आप अपने आपको पुष्ट एवं स्वस्थ अनुभव करते हैं ?"

इसी प्रकार की एक सूची बर्नरिटर ने बनाई जिसमें १२५ प्रश्न हैं। इसका वर्णन आगे के पृष्ठों में है। अन्य प्रश्नावलियाँ बैल, लिंक, अलपोर्ट आदि की हैं। मिनेसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व सूची तो अत्यन्त ही प्रसिद्ध है। पर वे आधारभूत व्यक्तित्व शीलगुण क्या हैं, जिनका कि मापन किया जाना चाहिए, इस प्रश्न पर मनोवैज्ञानिकों में मतभेद है। जे० पी० गिलफोर्ड (Joy Paul Guilford) एवं आर० बी० गिलफोर्ड (Ruth B. Guilford) ने जिन आधारभूत शीलगुणों का वर्णन किया है, वे हैं सामाजिक अन्तर्मुखी प्रवृत्ति, चिन्तन की अन्तर्मुखी प्रवृत्ति, पुरुषत्व या प्रभुत्व, संवेगात्मकता, विषाद आदि।

प्रैसे (Sidney L. Pressey) ने संवेगात्कता के मापन के लिए एक काटने का परीक्षण (Cross-out Test) बनाया। इसमें अनेक शब्दों की एक सूची दे देते हैं और प्रयोज्य अप्रिय शब्दों को काटता है। इस प्रकार के परीक्षण वास्तव में व्यक्तित्व सूचियों के अन्तर्गत नहीं आते।

नीचे कुछ प्रमुख व्यक्तित्व प्रश्नावलियों का वर्णन किया गया है।

बैल अभियोजन सूची (Bell Adjustment Inventory)—

इस सूची के दो प्रतिरूप हैं, एक प्रौढ़ों के लिए एवं दूसरा विद्यार्थियों के लिए। इसकी रचना थर्सटन व्यक्तित्व सूची के २२३ पदों एवं १८८ अन्य पदों के आधार पर हुई। अनुपयुक्त पद निकाल देने पर शेष १४० पद इस सूची में हैं। इसके चार वर्ग हैं, जिनमें प्रत्येक में ३५ पद हैं—(१) गृह-सांमजस्य, (२) स्वास्थ्य सामंजस्य, (३) सामाजिक सामंजस्य, एवं (४) संवेगात्मक सामंजस्य। प्रौढ़ों के लिए बनाए गए प्रतिरूप में एक अन्य वर्ग भी है—व्यावसायिक सामंजस्य। प्रत्येक का विश्वसनीयता गुणांक इस प्रकार है—**गृह सामंजस्य ·८९;**

स्वास्थ्य सामंजस्य '८०; सामाजिक सामंजस्य '८६ ; संवेगात्मक सामंजस्य '८५; एवं पूरी सूची का विश्वसनीयता गुणांक .९३ । प्रत्येक वर्ग में कितने पदों पर सही का चिन्ह लगा है, इसके आधार पर फलांकन अत्यन्त शीघ्र हो जाता है । इस सूची का वैधकरण करने के लिए प्रत्येक वर्ग का अलग-अलग मूल्यांकन किया गया । तदर्थ ४०० कॉलिज के विद्यार्थियों से समालाप किया गया । पूरे परीक्षण का वैधकरण थर्सटन व्यक्तित्व सूची को कसौटी मानकर किया गया । वैधकरण गुणांक '५८ से '८९ तक थे । वैधकरण करने के लिए एक अन्य विधि भी अपनायी गई जिसमें विद्यार्थियों के समूह पर निर्णय लिया गया कि यह उनमें अभियोजन सम्बन्धी अन्तर बताने में समर्थ है या नहीं । जिन्होंने बैल अभियोजन सूची का प्रयोग किया है , उनका यह अनुभव है कि यह अभियोजन सम्बन्धी कठिनाइयों को बताने में पूर्ण सक्षम है । इस सूची से अपराधी बालकों एवं बालिकाओं का भी परीक्षण किया गया है । पर इसकी वैधता काफी विवादास्पद है ।

बर्नरिटर व्यक्तित्व प्रश्नावली (Bernreuter Pesonality Inventory)—

इस प्रश्नावली में कुल १२५ पद हैं । जिनका उत्तर हां या ना में दिया जाता है । इसके प्रयोग से व्यक्तित्व के ६ पक्षों का मापन होता है । ये हैं— मनोदौर्बल्य, आत्मनिर्भरता, अन्तर्मुखी-बहिर्मुखी प्रवृत्ति, प्रभुत्व-विनयन, आत्म-विश्वास की कमी, एवं सामाजिकता । जब परीक्षण की प्रथम रचना हुई थी तो इनमें से केवल चार पक्षों का मापन किया गया था, पर बाद में ज्ञात हुआ कि इनमें काफी उच्च सहसम्बन्ध हैं । फ्लैनेगन ने इनका तत्व-विश्लेषण किया और इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि दो तत्व मुख्य हैं—आत्म-विश्वास की कमी एवं सामाजिकता । इसमें इस प्रकार के प्रश्न हैं :—

१. क्या आप प्राय: दिवा-स्वप्न देखते हैं ? हाँ, न, ?
२. क्या बिना दूसरों पर निर्भर रहे आप स्वयं काम करना चाहते हैं ? हाँ, न, ?
३. क्या बिना अपमान का अनुभव किए आप अपनी आलोचना सह सकते हैं ? हाँ, न, ?

छः व्यक्ति-पक्षों के मापन के लिए छः अलग-अलग फलांकन विधियाँ हैं । प्रथम चार पक्षों का विश्वसनीयता गुणांक '९ के लगभग है । इस प्रश्नावली के परिणामों का वैधकरण करने के लिए कोई उचित कसौटी प्राप्त नहीं है । अत: इसकी वैधता संदेहजनक है । बर्नरिटर ने जिन अन्य परीक्षणों के आधार पर अपनी प्रश्नावली बनाई थी उनके फलांकों एवं अपने परीक्षणों के फलांकों के

बीच सहसम्बन्ध गुणांक प्रस्तुत किये हैं। ये चार पूर्वरचित प्रश्नावलियाँ हैं :— थर्सटन व्यक्तित्व सूची, बर्नरिटर आत्म-निर्भरता मापदण्ड, लेयर्ड अन्तर्मुखी परीक्षण एवं अलपोर्ट प्रभुत्व-विनयन परीक्षण। बर्नरिटर सूची के सम्बन्ध में अनेक अध्ययन हुए हैं। पर इनके परिमाण स्पष्ट नहीं हैं। संवेगात्मक सामंजस्य न कर सकने वाले व्यक्तियों का पता लगाने में यह उपयुक्त है।

कैलीफोर्निया व्यक्तित्व परीक्षण (California Test of Personality)—

वास्तव में इस परीक्षण में कई सूचियाँ हैं प्राइमरी ए, ऐलीमैन्टरी बी, इन्टरमीडियेट बी, सैकिन्डरी ए, प्रौढ़ सूची। प्रत्येक भाग में फलांक दो मुख्य आधार पर हैं : (१) आत्मअभियोजन, अर्थात् आत्म-निर्भरता, व्यक्तिगत महत्ता, व्यक्ति-स्वातंत्र्य आदि। (२) सामाजिक अभियोजन, अर्थात् सामाजिक मानक, असामाजिक प्रवृत्तियों से मुक्ति आदि। अर्द्ध-विच्छेद विधि के आधार पर इसके निम्नलिखित विश्वसनीयता-गुणांक ज्ञात हुए हैं :

सूची भाग	आत्म-अभियोजन	सामाजिक अभियोजन
प्राइमरी ए	.८९३	·८७३
एलीमैन्टरी बी	.८८८	·८९७
इन्टरमीडियेट बी	.८९८	·८७२
सैकिन्डरी ए	.९०४	·९०८
प्रौढ़ सूची	.८८८	.८९८

इस प्रकार विश्वसनीयता गुणांक काफी उच्च हैं। जहाँ तक वैधता का प्रश्न है, स्वयं पद-चयन अत्यन्त सावधानी से किया गया था। अतः परीक्षण-रचना में ही वैधकरण कर लिया गया था। पद-चयन विशिष्ट परिस्थितियों के प्रति अभियोजन प्रतिक्रियाओं के अध्ययन के परिणामों को ध्यान में रखकर किया गया। चार बातों पर मुख्य ध्यान दिया गया : (अ) अध्यापकों का निर्णय, (ब) परीक्षार्थियों की प्रतिक्रियाएँ, (स) अध्यापकों के निर्णय एवं परीक्षार्थियों की प्रतिक्रियाओं में तुलना, (द) बाइसीरियल सहसम्बन्ध (Biserial Correlation) विधि से पदों का सापेक्षिक महत्त्व। मानक शतांशीय फलांकों (Percentile scores) के रूप में दिए हैं। उप-फलांक भी दिए हैं। पर ये सब वास्तव में परीक्षार्थी के कथनों पर आधारित हैं। वास्तव में परीक्षार्थी वही कहते हैं या उत्तर देते हैं जो वह अनुभव कर रहे हों यह नहीं कहा जा सकता।

अलपोर्ट उन्नयन-विनयन परीक्षण (Allport Ascendence- Submission Scale)—

इसकी रचना गोर्डन डब्ल्यू अलपोर्ट (Gordon W. Allport) एवं फ्लॉयड एच. अलपोर्ट (Floyd H. Allport) ने सर्वप्रथम १६२८ में की और इसका प्रकाशन हफटन मिफिलिन कम्पनी ने किया। सन् १६३६ में इसका पुनर्संस्करण हुआ। इसके दो प्रतिरूप हैं—एक पुरुषों के लिए एवं दूसरा स्त्रियों के लिए। पुरुषों की सूची में ३३ प्रश्न हैं एवं स्त्रियों की सूची में ३४। पुरुषों की सूची के प्रश्न इस प्रकार के हैं :—

"आप जंगल में अन्य व्यक्तियों के समूह के साथ हैं; और यद्यपि मार्ग का निश्चय नहीं है, आप सम्भवतया उतना ही जानते हैं जितना कि अन्य कोई उपस्थित व्यक्ति। क्या आप पूरे समूह के मार्ग-दर्शन का उत्तरदायित्व लेंगे ?

पूर्ण उत्तरदायित्व लेंगे············

सुझाव देंगे एवं उत्तरदायित्व में हिस्सा बँटायेंगे············

किसी दूसरे को अपने निर्णय के अनुसार उत्तरदायित्व सम्भालने देंगे······"

इसी प्रकार स्त्रियों की सूची में एक प्रश्न यह है—

"यदि कोई विद्यार्थी कक्षा के वाद-विवाद में ऐसी बात कहे जिसे आप गलत समझती हैं, तो क्या आप इसका विरोध करेंगीं ?

प्राय: ···············

कभी-कभी············

कभी नहीं············"

इस परीक्षण का उद्देश्य दूसरों पर प्रभुत्व जमाने या स्वयं उनका प्रभुत्व मानने की प्रवृत्ति का पता लगाना है। अतः इसमें अनेक परिस्थितियाँ शब्दों के माध्यम से उपस्थित की जाती हैं। सभी प्रतिक्रियाएँ उन्नयन या विनयन की ओर संकेत नहीं करतीं, क्योंकि अधिकांश व्यक्ति अलग-अलग अवसर पर दोनों ही प्रकार की प्रवृत्तियों का प्रदर्शन करते हैं। पर व्यक्ति में सामान्यतया इनमें से कौन-सी प्रवृत्ति अधिक प्रभावपूर्ण है, इसका पता लग सकता है।

उन्नयन-विनयन परीक्षण को व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों प्रकार से प्रयुक्त करना सम्भव है। पर मानक समूह में प्रयुक्त करके प्राप्त किए गए हैं। समय-अवधि निश्चित नहीं है। पर अधिकांश प्रयोज्य २० मिनिट में सब प्रश्नों के उत्तर दे देते हैं। उचित प्रशासन के लिए प्रयोज्यों का सहयोग आवश्यक है।

फलांकन की विधि अत्यन्त सरल है। मानक दशांशीय मान (Deciles) में दिये गए हैं।

अर्द्ध-विच्छेद विधि से पुरुषों के परीक्षण की विश्वसनीयता ·८५ है और स्त्रियों के परीक्षण की ·९० । दोनों परीक्षणों की पुनर्परीक्षण विश्वसनीयता ·७८ है। वैधता की उचित कसौटी के अभाव में इस सम्बन्ध में कम अध्ययन हुए हैं। निर्णय विधि (Ratings) को कसौटी मान कर ·२९ से लेकर ·७९ तक वैधता गुणांक प्राप्त हुए हैं। पर अन्तिम वैधता तो व्यावसायिक संदर्शन एवं अन्य क्षेत्रों में व्यावहारिक सफलता के आधार पर ही ज्ञात हो सकेगी।

उन्नयन-विनयन परीक्षण उन व्यक्तियों के भी उपयोग का है जो स्वयं अपने शीलगुणों के बारे में जानना चाहते हैं क्योंकि इससे अन्य व्यक्तियों के साथ वस्तुगत तुलना करने में सहायता मिलती है। प्रत्येक व्यवसाय के लिये कुछ विशिष्ट शीलगुण होना आवश्यक हैं, पर उन्नयन या विनयन में से किसी एक की भी साथ में आवश्यकता पड़ती है। अतः केवल इस परीक्षण के आधार पर ही किसी एक व्यवसाय का निश्चय कर लेना आवश्यक नहीं है। अन्य शील-गुणों से उन्नयन-विनयन का क्या सम्बन्ध है इस सम्बन्ध में भी अनेक अध्ययन हुए हैं। जी० वैटर (G. Vetter) के अनुसार रूढ़िवादी पुरुषों एवं प्रगतिशील स्त्रियों में उन्नयन का गुण होता है।

मिनेसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व प्रश्नावली (Minnesota Multiphasic Personality Inventory)—

मिनेसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व प्रश्नावली सर्वप्रथम १९४० में प्रकाशित हुई। १९४३ में मिनेसोटा विश्वविद्यालय प्रेस ने सर्वप्रथम परीक्षण की विषय-वस्तु और विवरण-पुस्तिका (Manual) को प्रकाशित किया। सन १९४५ में 'साइकॉलॉजीकल कॉर्पोरेशन' ने इसके प्रकाशन अधिकार लिए। सन् १९४६ में एक अतिरिक्त विवरण-पुस्तिका निकली और परीक्षण में कुछ संशोधन भी हुए। प्रश्नावली की रचना में हैथावे तथा मैकिनले ने अपने कुछ विद्यार्थियों की भी सहायता ली थी जैसे कैथेरीन फोस्टर, रोजर पेज, विलियम ईस्ट्स आदि। अन्य अनेक विद्यार्थी, अध्यापक एवं अनुसंधानकर्त्ता भी इस परीक्षण के साथ सम्बन्धित रहे हैं। इस ख्याति-प्राप्त व्यक्तित्व प्रश्नावली पर महत्वपूर्ण अनु-सन्धान कार्य हुआ है। और चिकित्सक मनोवैज्ञानिक के लिए यह एक महत्वपूर्ण साधन सिद्ध हुई है मनोविज्ञान और चिकित्सा से सम्बन्धित साहित्य में इस पर २५० से अधिक अनुसन्धान लेख निकले हैं। सन् १९५१ में प्रकाशित इस परीक्षण की संशोधित विवरण-पुस्तिका में कुछ महत्वपूर्ण अनुसंधान साहित्य

का हवाला दिया गया है। किन्तु तत्सम्बन्धी अनुसंधान के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करने के लिए मिनेसोटा विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित। "एन एटलस फौर दी क्लिनीकल यूज़ ऑफ दी एम० एम० पी० आई०"[1] पढ़नी चाहिए।

मिनेसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व प्रश्नावली का अन्तिम उद्देश्य एक ही परीक्षण में व्यक्तित्व के सभी अधिक महत्वपूर्ण पक्षों के बारे में जानकारी प्राप्त करना है। इसमें ५५० कथन हैं, जो शारीरिक दशा से लेकर मनोबल और सामाजिक दृष्टिकोणों तक परीक्षार्थी के व्यक्तित्व के सभी पक्षों से सम्बन्धित हैं। प्रयोज्य से इन सभी कथनों को तीन वर्गों—सत्य, असत्य, ज्ञात नहीं—में छाँटने को कहा जाता है। तत्पश्चात् उसकी प्रतिक्रियाओं की गणना करके उनका अंकीकरण (Scoring) किया जाता है। परीक्षण का समय पूरी तौर से निश्चित नहीं है, पर इसमें प्राय: ९० मिनिट से अधिक समय नहीं लगता और ३० मिनिट से कम। बहुत ही कम निर्देश और देखभाल की आवश्यकता है। परीक्षण के सभी कथनों को २६ शीर्षकों में बाँटा जा सकता है जैसे सामान्य स्वरूप, संवेदनात्मकता आदि।

परीक्षण में प्राप्त मौलिक प्राप्तांक को टी-स्कोर में परिवर्तित कर लेते हैं और तदुपरान्त उसके आधार पर प्रोफाइल बना लेते हैं। विवरण-पुस्तिका में जो मानक प्रस्तुत किए गए हैं वे ७०० व्यक्तियों पर परीक्षण का प्रमापीकरण करके प्रस्तुत किए गए हैं। ये व्यक्ति मिनेसोटा विश्वविद्यालय के अस्पताल से थे और इनमें १६ से ५५ वर्ष तक के पुरुष एवं स्त्री दोनों सम्मिलित थे। इसके अतिरिक्त २५० कॉलिज में प्रवेश से पूर्व के और कॉलिज में पढ़ने वाले विद्यार्थी थे। सामान्य समूह पर परीक्षण करके जो निष्कर्ष आए उनकी असामान्य समूह पर परीक्षण करके और फिर उनसे प्राप्त निष्कर्षों के साथ तुलना करके भी देखा गया है। ऐसे ८०० असामान्य व्यक्ति विश्वविद्यालय के अस्पताल के मनोस्नायु दौर्बल्य रोग विभाग से लिए गए थे।

मिनेसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व कथनावली की विश्वसनीयता के सम्बन्ध में भी सन्तोषजनक परिणाम आए हैं। हैथावे ने परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि से विश्वसनीयता गुणांक निकाले हैं। परीक्षण एवं पुनर्परीक्षण के बीच ३ दिन से लेकर एक वर्ष तक का समय रखा गया। कॉटिल, होल्जबर्ग तथा अलैंसी ने भी मनोदौर्बल्य के रोगियों पर परीक्षण करके ऐसे गुणांक निकाले हैं। एम०एम०पी०आई० के अनेक भागों में अलग-अलग विश्वसनीयता गुणांक आते हैं जो ·५२ और ·९३ के बीच हैं। विशेष विवरण "एन एटलस फौर दी क्लिनी-

1. An Atlas for the Clinical Use of the M.M.P.I.

कल यूज़ ऑफ दी एम०एम०पी० आई०" में उपलब्ध है, जिसमें उपचार-गृह की सहायता लेने वाले ६६८ व्यक्तियों के संक्षिप्त इतिहास दिये गए हैं। जहाँ तक वैधता का प्रश्न है, परीक्षरा के निष्कर्ष उपचार-गृह के निदानात्मक निष्कर्षों से मेल खाते हैं। अतः इसकी ऊँची व्यावहारिक वैधता है।

इस कथनावली के दो प्रतिरूप हैं—(अ) व्यक्तिगत कार्ड प्रतिरूप (Individual Card Form) एवं (ब) सामूहिक पुस्तिका प्रतिरूप (Group Booklet Form)।

(अ) **व्यक्तिगत कार्ड प्रतिरूप**—यह १६ वर्ष या ऊपर के किसी भी प्रयोज्य पर उपयुक्त है। पर प्रयोज्य में पढ़ने की योग्यता होनी चाहिए। इस परीक्षरा में एक बॉक्स में अलग-अलग कार्डों पर छपे ५५० कथन होते हैं। बॉक्स में निर्देश भी रखे रहते हैं। एक रिकॉर्डिंग शीट भी दी होती है। परीक्षक का कार्य केवल यह है कि वह प्रयोज्य को कार्डों का बॉक्स दे दे और उससे स्वयं निर्देश पढ़कर परीक्षरा देने को कहे। वास्तविक परीक्षरा का पर्यवेक्षरा करना आवश्यक नहीं है। अत्यन्त मन्द परीक्षार्थियों को तीन या चार कथनों को छाँट-कर समझा देना उचित है। परीक्षण दे चुकने पर बक्स में देखना चाहिए कि सब कथन छाँटे गए हैं या नहीं। यदि सभी कार्डों के दसवें हिस्से से अधिक कार्ड 'ज्ञात नहीं' वर्ग में छाँटे गए हैं तो प्रयोज्य को उन्हें अन्य दो वर्गों में से किसी में छाँटने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। तत्पश्चात् इनका गणन (Scoring) करना चाहिए। इसके लिए 'सत्य', 'असत्य', तथा 'ज्ञात नहीं' विभागों में छपे कार्डों का गणन विवरण-पुस्तिका में दी हुई विधि के अनुसार करते हैं।

(ब) **सामूहिक पुस्तिका प्रतिरूप**—इस प्रतिरूप का उद्देश्य कथनावली को समूह के लिए उपयुक्त बनाना है। जो प्रश्न-पद व्यक्तिगत प्रतिरूप में कार्डों पर छपे रहते हैं, वे ही इसमें पुस्तिका में छपे रहते हैं। गणन हाथ से भी सम्भव है और 'अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मशीनों' (International Business Machines—I.B.M) से। इसमें १६ प्रश्न पद दुबारा छपे हैं। अतः कुल संख्या ५६६ है। विवरण पुस्तिका में जो मानक (Norms) छपे हैं वे व्यक्तिगत प्रतिरूप के परीक्षण के निष्कर्षों पर आधारित हैं, पर कॉलिज, हाई-स्कूल के क्षात्रों तथा व्यावसायिक व्यक्तियों पर सामूहिक प्रतिरूप का परीक्षरा करके जो निष्कर्ष आए हैं, वे भी उसी प्रकार हैं। सामूहिक प्रतिरूप प्रयुक्त करने में प्रत्येक प्रयोज्य को एक उत्तर-पत्र (Answer sheet) दे देते हैं। इसमें उसे अपना नाम तथा अन्य विवरण देना होता है। तब परीक्षरा पुस्तिका दी जाती है और उसे निर्देश पढ़ने को कहा जाता है। और तब वे उत्तर देते हैं। समय-अवधि निश्चित नहीं है। तब विवरण-पुस्तिका में दी हुई विधि से गणन कर

लेते हैं। सामूहिक प्रतिरूप का एक संक्षिप्त रूप (Short Version) भी है, जिसमें केवल ३६६ प्रश्न-पद ही दिए जाते हैं। वास्तविक प्राप्तांक (Raw Scores) को टी-अंक (T-Scores) में बदल लेते हैं और फिर प्रॉफाइल खींचते हैं।

अमेरिका में बनी कुछ अन्य व्यक्तित्व प्रश्नावलियाँ

नाम	स्तर	प्रकाशक	विश्वसनीयता	विशेष
बैल की स्कूल सूची	हाईस्कूल	स्टेनफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस	·९४	स्कूल संगठन में परीक्षार्थी के अभियोजन का मापन करती है।
ब्राउन की बच्चों की व्यक्तित्व सूची	४–९	साइकॉलॉजीकल कार्पोरेशन	·९०	कुल ८० पद। गृह, स्कूल, शारीरिक लक्षण, असुरक्षा आदि के आधार पर फलांक।
लिंक की कार्यों एवं रुचियों की सूची	७–१३	साइकॉलीकल कॉर्पोरेशन	·७८–·८८	व्यक्तित्व, सामाजिक आत्म-निर्भरता, विपरीत योनि से सामंजस्य आदि का मापन।
डैट्राइट अभियोजन सूची	जूनियर एवं सीनियर हाईस्कूल	पब्लिक स्कूल पब्लिशिंग कम्पनी	—	चौबीस विषयों पर कुल १२० पद। स्वास्थ्य, चिन्ताएँ, स्कूल के प्रति दृष्टिकोण आदि विषय।
मैलर सदाचार निर्णय सूची	प्रौढ़ व्यक्तियों के लिए	टीचर्स कॉलिज, कोलम्बिया विश्वविद्यालय	·९३–·९४	कुल चार भाग। इसमें शब्द देकर व्यक्ति की प्रतिक्रिया ली जाती है।
रॉजर्स व्यक्तित्व अभियोजन सूची	९–१३ वर्ष	एसोसियेशन प्रेस, न्यूयार्क	·७०	चार आधार पर फलांक—व्यक्तिगत हीन भाव, सामाजिक असामंजस्य, पारिवारिक सामंजस्य एवं दिवास्वप्न।

व्यक्तित्व प्रश्नावलियों का मूल्यांकन

व्यक्तित्व प्रश्नावलियों के आधार पर व्यक्तित्व मापन एक अपेक्षाकृत सरल विधि है। इसी कारण पश्चिमी देशों, विशेषकर अमरीका, में अनेक प्रश्नावलियाँ बनी हैं। पर इनकी अनेक **परिसीमायें** हैं। हम यहाँ संक्षेप में इसकी विवेचना करेंगे।

१. सबसे प्रथम कठिनाई भाषा की है। सम्भव है कि प्रश्नावली रचयिता ने किसी विशेष उद्देश्य से कोई प्रश्न पूछा हो, पर उत्तर देने वाला उसका कुछ अन्य अर्थ समझे। उदाहरणार्थ यदि प्रश्न में यह पूछा गया हो कि क्या प्राय: परीक्षार्थी का हृदय धड़कता है, तो वह यह नहीं समझ पायेगा कि सामान्यत: दिल धड़कने से अर्थ है या किसी विशेष संवेग के समय।

२. यह भी सम्भव है कि जिस सम्बन्ध में प्रश्न पूछा गया हो वह बात या घटना परीक्षार्थी के जीवन में घटी तो हो, पर अचेतन में चले जाने या किसी अन्य कारण से वह अब इसे विस्मृत कर चुका हो। अत: वह सही उत्तर न दे पाये। उदाहरणार्थ "क्या आप कभी नींद में चलते थे ?" इस प्रश्न का उत्तर देने में प्रयोज्य कठिनाई का अनुभव कर सकता है।

३. यह सम्भव है कि प्रयोज्य अनेक बातों को अपने तक सीमित रखे एवं किसी को न बताना चाहे, जैसे सैक्स से सम्बन्धित बातें। उदाहरण के लिए "क्या आप कभी हस्तमैथुन करते थे ?", या "आपने कभी किसी से प्रेम किया है ?" आदि प्रश्नों का उत्तर देने में प्रयोज्य का संकोच स्वाभाविक है। इन प्रश्नों का गलत उत्तर दिया जा सकता है जिससे प्रश्नावली अवैध हो जायगी।

४. व्यक्तित्व प्रश्नावलियों में जिन शीलगुणों के मापन के लिए प्रश्न या पद बनाये जाते हैं, उनकी अलग-अलग सत्ता नहीं हैं। इनका एक-दूसरे से सम्बन्ध है। अत: अलग-अलग प्रश्नों के उत्तरों के आधार पर परिणाम पूर्णत: वैध नहीं होंगे।

५. स्वयं प्रयोज्य में अपनी मनोवैज्ञानिक रचना के बारे में पूर्व समझ हो, यह आवश्यक नहीं है। कुछ प्रयोज्य तो यह भी नहीं समझ पाते कि प्रश्न का आशय क्या है। कम अवस्था के बालकों के बारे में यह विशेष रूप से सत्य है। अनेक किशोरों को भी अपने व्यवहार में आवश्यक अन्तर्दृष्टि नहीं होती।

६. अभियोजन के बारे में एक सार्वभौम या सर्वकालीन मापदण्ड बनाना अनुचित है। जो व्यवहार एक व्यक्ति के लिए सामंजस्यपूर्ण है, वही दूसरे व्यक्ति के लिए असामंजस्यपूर्ण।

७. प्रश्नों को पढ़ते समय प्रयोज्य को ऐसे अनेक पद मिलते हैं, जिनका वह एक निश्चित विधि से या समाज द्वारा स्वीकृत विधि से उत्तर देना चाहता है। अतः बिना अपनी वास्तविक भावनाओं को व्यक्त किये वह अशुद्ध उत्तर देता है। प्रयोज्य का यह भय स्वाभाविक है कि उसके व्यक्तिगत संवेगों, एवं व्यक्तिगत यौन-सम्बन्धी एवं अन्य तथ्य अविश्वासी हाथों में पड़ जायेंगे। अतः असत्य उत्तर देना उसके लिए जरूरी हो जाता है।

८. इन प्रश्नावलियों का निदानात्मक महत्व अत्यन्त कम है, क्योंकि प्रश्नों की अलग-अलग विश्वसनीयता एवं वैधता कम है। शीलगुणों को अलग-अलग व्यक्त करना भी सम्भव नहीं है।

व्यक्तित्व प्रश्नावलियों की विश्वसनीयता एवं वैधता

व्यक्तित्व प्रश्नावलियाँ अनेक प्रकार की हैं एवं अनेक नामों से प्रचलित हैं। अतः विशिष्ट रूप से ही उनकी विश्वसनीयता का वर्णन करना उचित है। कुछ प्रमुख प्रश्नावलियों की विश्वसनीयता इस प्रकार है :—

व्यक्तित्व सूची का नाम	अनुसन्धान कर्त्ता	विश्वसनीयता गुणांक
बर्नरिटर व्यक्तित्व सूची	बर्नरिटर, १९३३	.८४–.९०
थर्सटन व्यक्तित्व अनुसूची	थर्सटन, १९३०	.९५
अलपोर्ट उन्नयन-विनयन परीक्षण	रगिल्स एवं अलपोर्ट	
(i) पुरुषों का प्रतिरूप		.८५
(ii) स्त्रियों का प्रतिरूप		.७७
मिनेसोटा बहुपक्षीय व्यक्तित्व सूची		.५२–.९३
मैलर सदाचार निर्णय सूची		.९३–.९४
रॉजर्स व्यक्तित्व अभियोजन सूची		.७०
बैल की स्कूल सूची		.९४

इस प्रकार इन अनुसूचियों का गुणांक काफी उच्च है। इनमें से अधिकांश गुणांक अर्द्ध-विच्छेद विधि से प्राप्त किये गए हैं। प्रायः समांक पदों (Odd-numbered items) में प्राप्त फलांकों का विषमांक पदों (even-numbered items) के साथ सहसम्बन्ध निकाला जाता है। उच्च विश्वसनीयता गुणांक प्राप्त होने के कारण इन प्रश्नावलियों को व्यक्तियों में विभेद जानने के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

इन प्रश्नावलियों की वैधता संदेहास्पद है। प्रश्न यह है कि क्या वास्तव में ये अनुसूचियाँ उन्हीं गुणों का मापन करती हैं, जिन्हें मापन करने के उद्देश्य

से वे बनी हैं। इनके वैधकरण के लिए बाह्य कसौटियाँ ली गई हैं। वुडवर्ड व्यक्तित्व अनुसूची के सम्बन्ध में पूर्वकथन वैधता जानने के लिए इसे ८०० व्यक्तियों पर प्रयुक्त किया। ज्ञात हुआ कि ८५ प्रतिशत व्यक्तियों में यह स्नायु-विकृति सम्बन्धी कठिनाइयों का पूर्वकथन करने के योग्य है। मिनेसोटा बहु-पक्षीय व्यक्तित्व सूची भी अलग-अलग स्नायुविकारों का पता लगाने के योग्य है। पर अनेक अनुसन्धानकर्त्ताओं ने व्यक्तित्व-प्रश्नावलियों की वैधता में अविश्वास प्रकट किया है। सन् १९३८ में हैरीमेन (Harriman) ने यह ज्ञात किया कि वुडवर्थ की व्यक्तित्व अनुसूची इस बात का पूर्वकथन करने में असमर्थ है कि कॉलिज के किस विद्यार्थी में व्यक्तित्व सम्बन्धी कठिनाइयों का विकास होगा। मनरो (Munroe) ने १९४५ में बर्नरिटर सूची के सम्बन्ध में इसी प्रकार के तथ्य प्राप्त किए। वैधकरण के कुछ अध्ययनों में परिचित व्यक्तियों के निर्णय को कसौटी (Criterian) माना गया। बौनी (Bonney) ने १९४३ में कैलीफोर्निया व्यक्तित्व परीक्षण के फलांकों का सोशियोमैट्रिक (Sociometric) फलांकों से सहसम्बन्ध निकाला जो ·४९ था। प्रश्नावलियों के फलांकों एवं मित्रों द्वारा दिये गए निर्णय के बीच लैन्डीस (Landis), जैकोबसन (Jacobsen), ऑलीवर (Oliver) आदि ने भी सहसम्बन्ध निकाला है। पर यह अत्यंत निम्न है। फ्लेमिंग एवं फ्लेमिंग (Flemming and Flemming) ने १९२९ में और क्लार्क एवं स्मिथ (Clark and Smith) ने १९४२ में अध्यापक द्वारा किये गए निर्णय के साथ व्यक्तित्व प्रश्नावलियों के फलांकों का सहसम्बन्ध ज्ञात किया। यह भी अत्यन्त निम्न था।

: २३ :

अवलोकन[1]

अनुसन्धान की विधि के रूप में अवलोकन अत्यन्त महत्वपूर्ण है । हम सभी तथ्यों, घटनाओं एवं अनुभवों को ज्ञानेन्द्रियों से ग्रहण करते हैं । बिना अवलोकन किए हम कुछ भी अध्ययन नहीं कर सकते । शिशुओं के व्यवहार के अध्ययन में हमें अवलोकन का ही सहारा लेना पड़ता है । बालकों, किशोरों एवं प्रौढ़ों की बुद्धि एवं व्यक्तित्व के अनेक पक्षों का ज्ञान भी अवलोकन के ही माध्यम से सम्भव है । आदि मानव द्वारा प्रयुक्त मापन विधियाँ सरल अवलोकन के अतिरिक्त कुछ नहीं हैं । प्रागेतिहासिक काल का खानाबदोश शिकारी जानवरों की चीखें सुनता था, विभिन्न दिशाओं से आने वाली ठंडी हवा का अनुभव करता था, कौन-सी ऋतु जा रही है और कौन-सी ऋतु आने वाली है, इस सबका ज्ञान मुख्यतः अवलोकन विधि से ही करता था । पर 'अवलोकन' का सबसे अधिक प्रयोग आज के वैज्ञानिक युग में ज्योतिष, औषधिशास्त्र, शिक्षा एवं मनोविज्ञान के क्षेत्र में हुआ है । डॉक्टर रोगी को देखकर, उसे छूकर, उसकी नाड़ी की गति का हाथ से अनुमान लगाकर निदान करता है । मनोवैज्ञानिक या उपचारक भले ही अपने निदान में रोशा, थेमेटिक टैस्ट, वाक्यपूर्त्ति, बुद्धि परीक्षणों एवं संवेग का मापन करने वाले अनेक यंत्रों का प्रयोग कर ले, पर उसका निदान बहुत-कुछ रोगी की बातचीत, उसके हाव-भाव एवं मुखाभि-

1. Observaion.

व्यक्तियों के अवलोकन पर आधारित है। शिक्षा में भी 'अवलोकन' का अन्य विधियों से कहीं अधिक उपयोग होता है, क्योंकि व्यवहार के अनेक पक्षों का वैधता से अन्य किसी विधि द्वारा मापन सम्भव ही नहीं है।

अवलोकन वास्तव में एक ऐसा मापन है, जिसमें यंत्रों का प्रयोग न हो और यदि यन्त्र प्रयुक्त हों भी तो वे मापन करने वाले पर लागू हों, न कि मापित किए जाने वाले तथ्य पर। इसमें मापन करने वाला ज्ञानेन्द्रियों के प्रत्यक्ष उपयोग से व्यवहार का अवलोकन करता है, न कि व्यवहार के निर्देशक किसी फलांक का। इसी कारण प्रतिबोधन की त्रुटियों का इस पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। अतः कभी-कभी विश्वसनीयता की कमी के कारण वैज्ञानिक इसमें आस्था नहीं रखते। पर इस विधि से किसी तथ्य या घटना की सामान्य बातें एवं उसके अवयवों, सभी का ज्ञान प्राप्त करना सम्भव है।

अवलोकन में आवश्यक बातें—

यथार्थ अवलोकन के लिए निम्नलिखित बातें आवश्यक हैं :—

१. **कार्यकुशल ज्ञानेन्द्रियाँ** (Efficient sense organs)—यथार्थ मूल्यांकन के लिए कुशल ज्ञानेन्द्रियों, विशेषकर आँखों, का होना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि अधिकांश अवलोकन दृष्टिक होता है। चश्मा के प्रयोग से या रंग अन्धापन होने से अवलोकन अशुद्ध हो सकता है। ध्वनि, स्वाद, सुगन्ध, स्पर्श की तीव्र ज्ञानेन्द्रियाँ भी आवश्यक हैं।

२. **सावधानी** (Alertness)—अवलोकन की अवधि में प्रतियोगी उद्दीपक कभी-कभी गलत समय पर ध्यान आकर्षित कर लेते हैं। अतः शुद्ध अवलोकन के लिए यह आवश्यक है कि अध्ययन की जाने वाली वस्तु की ओर ही ध्यान लगाया जाए।

३. **तात्कालिक एवं यथार्थ लेखा** (Immediate and accurate records)—स्मृति के क्षीण होने पर अवलोकन के समय की स्पष्ट बातें धूमिल हो जाती हैं। अतः यथार्थ अवलोकन के परिणामों को स्थायी रखने के लिए तात्कालिक लेखा ले लेना आवश्यक है।

४. **यथार्थ प्रतिबोधन की योग्यता** (Ability to perceive accurately)—प्रतिबोधन में त्रुटि की काफी सम्भावना रहती है अतः यह आवश्यक है कि अवलोकन करने वाले में वस्तुओं को ठीक से देखने एवं उनका निर्वचन करने की योग्यता हो। उसे यह ध्यान रखना चाहिए कि वह कुछ-एक तथ्यों के आधार पर ही सामान्यीकरण न कर डाले।

५. **यन्त्रों की सहायता बिना यथार्थ अनुमान की क्षमता** (Capacity

for accurate estimates without the help of instruments) —यदि यन्त्र प्राप्य हों, उनका प्रयोग श्रेयस्कर है। पर बिना यन्त्रों के भी संख्या, ऊँचाई, भार, आयतन, समय का अभ्यन्तर, तापक्रम, स्वाद, सुगन्ध आदि का ज्ञान अवलोकन करने वाले को होना चाहिए। अभ्यास से इनका यथार्थ अनुमान सम्भव है।

६. **विभिन्न विकृतियों से मुक्ति** (Freedom from various Pathological States)—यह आवश्यक है कि अवलोकन करने वाला थका न हो, और न ही वह औषधियों, मादक द्रव्यों, या स्नायु मण्डल को प्रभावित करने वाले अन्य पदार्थों के प्रभाव में हो। इनसे अवलोकन यथार्थ नहीं हो पाता एवं विभिन्न तत्वों के आनुपातिक सन्तुलन की क्षमता कम हो जाती है। अवलोकन करने वाले को मन्द-बुद्धि भी नहीं होना चाहिए।

७. **व्यवहार के दो न्यायदर्शों या दो तथ्यों में तुलना या विभेद करने की क्षमता** (Capacity to compare or distinguish between two behaviour samples or facts)—यह योग्यता पूर्व अनुभव पर निर्भर करती है। अवलोकन करने वाले में यह क्षमता होनी चाहिए कि वह किसी भी प्रकार के स्नायु-दौर्बल्य या संवेगात्मक असन्तुलन का पता लगा सके।

८. **अशुद्ध निर्वचन करने की आदत या पूर्वधारणा से मुक्ति** (Freedom from wrong interpretation or prejudice)—किसी भी तथ्य या घटना पर अपने तरीके से टीका-टिप्पणी करना हमारी आदत का एक अभिन्न अङ्ग है। अतः यह ध्यान रखना आवश्यक है कि यह निर्वचन हमारी पूर्वधारणाओं से प्रभावित होने के कारण विकृत न हो जाए, विशेषकर इसलिए कि निर्वचन करते समय कभी दो व्यक्ति एकमत नहीं होते।

अवलोकन के प्रकार—

अवलोकन का वर्गीकरण अनेक प्रकार से हो सकता है, जैसे—

(१) उपपत्ति या निदेशित (Finding or Directed)

(२) नियंत्रित, अनियंत्रित या मिश्रित (Controlled, Uncontrolled or Mixed)

(३) प्रमापीकृत या स्वाभाविक (Standardised or Natural)

(४) बाह्य या स्वयंप्रेरित (External or Internal)

(५) सुनियोजित या अतीत-प्रभावी (Planned or Retrospective)

अब हम इनका संक्षिप्त वर्णन करेंगे।

१. **उपपत्ति या निदेशित अवलोकन** (Finding or Directed Observations)—उपपत्ति-अवलोकन में अवलोकन करने वाला केवल यह जानता है कि उसे दी हुई परिस्थिति का निरीक्षण करना है। वह उस परिस्थिति में निहित तत्वों को जानने का प्रयास कर सकता है। जैसे हाई-स्कूल के विद्यार्थियों की अध्ययन सम्बन्धी आदतों का अवलोकन करते समय उसे यह जानने की आवश्यकता नहीं है कि अध्ययन से क्या अर्थ है या इसकी संघटना किस प्रकार होती है। उसका उद्देश्य तो केवल अध्ययन सम्बन्धी क्रियाओं का सर्वेक्षण करना है।

निदेशित अवलोकन प्रयुक्त अनुसूची तक सीमित रहता है। इसमें पहले से ही क्रियाओं की एक सूची बना ली जाती है और इस सूची के पदों की ओर ही ध्यान केन्द्रित किया जाता है, जैसे पड़ताल सूची (Check List) में। सूची में सम्मिलित प्रत्येक क्रिया के सम्बन्ध में डायरी में विस्तृत लेखा लिया जा सकता है। बाद में इन लेखों का विश्लेषण किया जा सकता है। एक अवसर पर प्रयुक्त पड़ताल-सूची बाद के अनेक अवसरों पर मार्ग-प्रदर्शक का काम करेगी। पड़ताल-सूची में सम्मिलित पदों का आधार उनकी सामाजिक महत्ता तथा विश्वसनीयता होना चाहिए।

२. **नियन्त्रित, अनियन्त्रित या मिश्रित अवलोकन** (Controlled, Uncontrolled or Mixed Observation)—नियन्त्रित अवलोकन में कुछ निश्चित तथा प्रमापीकृत परिस्थितियाँ होती हैं। लुन्डवर्ग के अनुसार इसमें निम्न बातें सन्निहित हैं: (अ) अवलोकन की जाने वाली इकाइयों की परिभाषा, (ब) अवलोकन के लिए संगत तथ्यों का चयन, (स) समय, स्थान, व्यक्ति, तथ्य आदि परिस्थितियों का प्रमापीकरण, (द) जब भी सम्भव हो, यन्त्र-उपकरणों का प्रयोग। नियन्त्रित अवलोकन युवा बालकों के व्यवहार के अध्ययन में उपयोगी नहीं है। परीक्षण एवं यंत्र-उपकरण, जिनका इस प्रकार के अवलोकन में प्रयोग होता है, कई प्रकार के होते हैं जैसे स्टॉप-वाँच, स्क्रीन, चलचित्र आदि।

अनियंत्रित अवलोकन में परिस्थितियों एवं सामग्री का उपयोग अवलोकन करने वाले के विवेक पर छोड़ दिया जाता है। कभी-कभी स्वयं अवलोकन करने वाले जिन व्यक्तियों के व्यवहार का वे अध्ययन कर रहे हैं उनसे घुल-मिलकर एकात्म्य स्थापित कर लेते हैं। इसे भागग्राही अवलोकन (Participant Observation) कहते हैं। सामाजिक व्यवहार के अध्ययन में इसका महती उपयोग है। पर इसमें विभिन्न अवलोकनों की विधियाँ अलग-अलग होती हैं।

मिश्रित अवलोकन में नियंत्रित तथा अनियंत्रित दोनों विधियों को एक साथ प्रयोग करते हैं।

३. **प्रमापीकृत तथा स्वाभाविक अवलोकन** (Standardised or Natural Observation)—प्रमापीकृत अवलोकन में प्रत्येक प्रयोज्य को आवश्यक रूप से एक ही वस्तुस्थिति में रखा जाता है। व्यक्तित्व का अवलोकन किसी मानसिक परीक्षण, किसी सामूहिक वाद-विवाद या अन्य परिस्थिति में किया जा सकता है। कुछ निष्पादन परीक्षाएँ भी प्रयोज्य को दी जा सकती हैं ताकि जब वह हस्त-संचालन में व्यस्त हो, उसका व्यवहार देखा जा सके। इस अवलोकन विधि में व्यक्तियों की तुलना करना एवं उनके विशिष्ट गुणों को जानना सम्भव है। किसी परीक्षण या कार्य में वह किस प्रकार की प्रतिक्रिया करता है, इसके निरीक्षण से हमें उस व्यक्ति के संवेगात्मक संतुलन के बारे में महत्वपूर्ण अन्तर्दृष्टि प्राप्त होती है।

स्वाभाविक अवलोकन में व्यक्ति के दिन-प्रतिदिन की क्रियाओं के न्यादर्श का अवलोकन करते हैं। क्रीड़ास्थल पर बालक अपने व्यक्तित्व एवं आदतों को प्रकट करते हैं और इसी प्रकार कर्मचारी एवं सैनिक भी क्लब में या अपने कार्य में। क्षेत्रावलोकन में अनेक यन्त्र-उपकरणों का प्रयोग सम्भव है।

४. **बाह्य या स्वयंप्रेरित** (External or Self-Observation)—**बाह्य अवलोकन** में प्रयोज्य के व्यवहार का अध्ययन करने के लिए किसी बाहरी व्यक्ति पर निर्भर रहते हैं जैसे अध्यापक, मित्र या परिवार का कोई सदस्य। पर इस विधि का मुख्य दोष यह है कि बाह्य व्यक्ति पूर्ण परिचित न होने से अवलोकन में एक पक्ष का ही अध्ययन कर पाता है। अध्यापक बालक के केवल विद्यालय के जीवन से परिचित है। स्वयं उसकी पूर्व-धारणाएँ एवं परिसीमाएँ भी उसे प्रभावित करती हैं।

आत्म-अवलोकन में व्यक्ति स्वयं अपना विवरण देता है। पर यह भी एकांगी होता है, क्योंकि कोई व्यक्ति स्वयं को भली-भाँति नहीं समझता एवं बहुत-सी बातों को वह दूसरों पर प्रकट भी नहीं करना चाहता। अतः अवलोकन स्वयं किया जाए या दूसरे के द्वारा इसका निर्णय परिस्थिति देखकर करना चाहिए।

५. **सुनियोजित या अतीत-प्रभावी अवलोकन** (Planned or Retrospective Observation)—**सुनियोजित** अवलोकन में विशिष्ट प्रकार से अवलोकन की योजना बनाते हैं, **अतीत-प्रभावी** अवलोकन में केवल भूतकाल में किए गए अनौपचारिक एवं अनिदेशित अवलोकन का आधार लेते हैं। जैसे व्यक्ति में भय की प्रवृत्ति का अध्ययन करने के लिए हम यह विवरण लिखें कि

किसी निश्चित अवधि में उसे कब-कब डर लगा, इसके क्या कारण थे, डर किन परिस्थितियों में लगा, तो यह **सुनियोजित** अवलोकन हुआ। किन्तु यदि हम वे परिस्थितियाँ लिख लें जिनमें व्यक्तियों को प्रायः डर लगता है और पता लगाएँ कि अवलोकित किये जाने वाले व्यक्ति को इनमें से किन परिस्थितियों में डर लगता है तो यह **अतीत प्रभावी** अवलोकन हुआ।

सुनियोजित अवलोकन अत्यन्त श्रमसाध्य है एवं इसमें समय भी काफी लगता है यद्यपि इसमें पूर्वाग्रह एवं स्मृति का प्रभाव कम पड़ता है। अतीत-प्रभावी अवलोकन में वर्गक्रम विधि एवं प्रश्नावलियों का उपयोग सम्भव है। इनका प्रशासन अत्यन्त सरल है, क्योंकि इनमें व्यक्ति के बारे में सभी बातों को सारांशित किया जा सकता है।

क्रमबद्ध अवलोकन की विधियाँ —

व्यवस्थित अवलोकन से प्रारूपिक व्यवहार का यथार्थ वर्णन सम्भव है। पर व्यक्ति को यह ज्ञात नहीं होना चाहिए कि उस पर निगाह रखी जा रही है। वस्तुस्थिति में नित्यप्रति ही परिवर्त्तन नहीं होता रहता है, वरन् पल-पल में। अतः हम सभी अवसरों पर व्यक्ति से एक ही प्रकार के व्यवहार की आशा नहीं कर सकते। अतः अवलोकन विधि से वैध मापन हो सके, इस हेतु हमें समय न्यादर्शन (Time Sampling) को अपनाना पड़ता है। हम इसका वर्णन करेंगे :—

१. **अल्पान्तर विधि** (Short Intervals Method)—इसमें कुछ निश्चित अनुसूची-बद्ध अवलोकन किए जाते हैं। जैसे 'एक मिनट' की अनुसूची हो सकती है। अवलोकक एक मिनट तक बालक को देखता है; उसकी सम्पूर्ण सामाजिक अन्तर्प्रक्रिया का विवरण लिखता है। ऐसा कई बार अनियमित क्रम से होता है। पर अवलोकन की अवधि कितनी हो एवं कितनी बार विवरण लिया जाए, यह एक जटिल विषय है। ऑल्सन ने ५ से लेकर १० मिनट तक दिन में एक बार १५ से २० दिन तक अवलोकन किया। मिस पार्टेन ने 'एक मिनट' की अवधि लेकर ४० अवलोकन किए। निष्कर्ष निकला कि 'अवलोकन' की संख्या बढ़ाने से विश्वसनीयता भी बढ़ जाती है। विश्वसनीयता का बढ़ना तीन बातों पर निर्भर है :—(अ) अवलोकन समयान्तर का कम करना, (ब) अवलोंकनों की संख्या का बढ़ाना, (स) विभिन्न समयों पर अवलोकन करना ताकि न्यादर्श ठीक हो सके।

इस विधि के कुछ गुण ये हैं—(अ) कुछ लम्बी अवधि के अवलोकन की अपेक्षा अनेक अल्पान्तरों में किए गए अवलोकन से प्रारूपिक व्यवहार का

अधिक अच्छा अध्ययन होता है। (ब) अवलोकक अवलोकन के तत्काल पश्चात् ही विवरण लिख लेता है, अतः विस्मरण की त्रुटि दूर हो जाती है। (स) विशिष्ट तथ्यों, जैसे कितने सामाजिक सम्पर्क किए, आदि का अत्यन्त उपयोग है।

इस विधि की ये परिसीमाएँ हैं—(अ) अनेक अल्पान्तरों में किए गए अवलोकन से विभिन्न प्रतिक्रियाओं का केवल एक सांख्यिकीय संकलन प्राप्त होता है जबकि इन विभिन्न समयों या अवलोकित प्रतिक्रियाओं का अर्थ एक नहीं होगा। अतः निर्वचन अशुद्ध रहेगा। (ब) एक वस्तुस्थिति के अवलोकन के आधार पर जो निर्णय किए गए है वे उसी वस्तुस्थिति के लिए उपयुक्त होंगे, चाहे अनेक अवसरों पर अल्पान्तरों में यह अवलोकन किया गया हो।

२. **दिन का विवरण** (Day Recording)—इसका उद्देश्य बालक के उस प्रतिरूप (Pattern) का अध्ययन करना है, जिसमें कि वह संचरण करता है। जैसे यह ज्ञात करना कि ग्रामीण बालकों के दिन की चर्या में ऐसी कौन सी बातें हैं जो नगर के बालकों की दिनचर्या में नहीं होतीं। अवलोकक स्वयं दिन भर बालक के साथ रहता है—जागरण से लेकर संध्या तक, और दिन भर बालक ने कौन-सी क्रियाएँ कीं, इसका विस्तृत वर्णन लिखता है।

यदि अवलोकन का उद्देश्य बालकों के किसी समूह के सामान्य अनुभव का विवरण लेना है, तो यह विधि अत्यन्त उपयुक्त है। किन्तु स्वयं अवलोकक की उपस्थिति से बालकों के व्यवहार में अन्तर आ जाता है एवं आवश्यक नहीं है कि वह प्रारूपिक या स्वाभाविक रहे। इसके अतिरिक्त केवल एक दिन के व्यवहार के अध्ययन के आधार पर हम बालक के सामान्य व्यवहार का मूल्यांकन नहीं कर सकते।

अवलोकन की परिस्थितियाँ—

अवलोकन में वस्तुस्थिति का कितना नियंत्रण किया जाए, अवलोकक स्वयं क्या पार्ट अदा करे, समूह में वह किसी एक ही व्यक्ति पर ध्यान केन्द्रित करे या अवलोकन करे, अवलोकन की अवधि क्या हो, ये महत्वपूर्ण बातें हैं। हम यहाँ इनका अत्यन्त संक्षिप्त वर्णन करेंगे।

१. **वस्तुस्थिति का नियंत्रण** (Control of the Situation)—अवलोकन प्रयोगशाला में भी किया जा सकता है जहाँ तापक्रम, प्रकाश, सामाजिक उद्दीपक सभी कुछ नियंत्रित हों और सामान्य सामाजिक वातावरण में भी। यह आवश्यकता पर निर्भर है। यदि हमारा उद्देश्य विभिन्न तत्वों का स्वतंत्र

प्रभाव जानना है तो निस्संदेह प्रयोगशाला उचित रहेगी। यद्यपि यहाँ भी इनके आधार पर सामान्यीकरण की गुंजाइश रहती है।

२. **अवलोकन के लिए व्यक्तियों की संख्या** (Number of Individuals for Observation)—यदि एक ही समय पर अनेक व्यक्तियों का अवलोकन किया जाए तो यह मितव्ययतापूर्ण रहेगा। यदि स्वाभाविक परिस्थिति में बिना किसी विशिष्ट साधन के उपयोग के अवलोकन हो तो एक ही व्यक्ति पर ध्यान केन्द्रित करना उपयुक्त है किन्तु यदि व्यवहार के किसी पक्ष, जैसे अध्ययन, के सम्बन्ध में कुछ पदों को सारिणीकृत कर लिया जाए तो पूरी कक्षा का एक साथ अवलोकन भी सम्भव है।

३. **अवलोकक का कार्य** (Role of the Observer)—कुछ मनोवैज्ञानिकों का मत है कि अवलोकक को व्यक्तियों से दूर रहना चाहिए, क्योंकि उसके समक्ष रहने पर उनके व्यवहार में परिवर्त्तन होगा। पर अन्य मनोवैज्ञानिकों के अनुसार उसे सम्पूर्ण कार्यक्रम में सक्रिय भाग लेना चाहिए एवं समय-समय पर सुझाव देते रहना चाहिए। कौन-सी विधि इनमें उपयुक्त है यह क्या अवलोकन करना है, इस पर निर्भर है।

४. **अवलोकन की अवधि** (Length of the Observation-Period)–कुछ परिस्थितियों, जैसे निद्रा या औषधियों के प्रभाव, में अवलोकन-अवधि लम्बी की जा सकती है, किन्तु अन्य परिस्थितियों में अत्यन्त कम। विकास के अध्ययन में अवलोकन महीनों चल सकता है।

अवलोकन विधि की परिसीमाएँ—

(१) किसी घटना का निरीक्षण करते समय कोई भी अवलोकक कुछ बातों को देख पाता है एवं अन्य बातों की उपेक्षा करता है। किसी भी सामाजिक वस्तुस्थिति में अन्तर्प्रक्रिया इतनी जटिल होती है कि सर्वतःपूर्ण विवरण सम्भव नहीं है। अपने विचारों, मनोवृत्तियों एवं पूर्वाग्रहों के अनुसार अवलोकक कुछ तथ्यों का अधिमूल्यन करते हैं तथा अन्य का अधोमूल्यन।

(२) विभिन्न अवलोकक विभिन्न विवरण देते हैं। इसका कारण यह है कोई अवलोकक तो व्यवहार के एक पक्ष की ओर अधिक संवेदनशील होता है और कोई किसी अन्य के प्रति। बालक के व्यवहार का अवलोकन करने में एक व्यक्ति नाखून काटने को महत्त्व देगा, दूसरा नहीं। इसी प्रकार एक ही वस्तुस्थिति में कोई अवलोकक तो ध्वनि-परिवर्त्तन, व्याकरण के प्रयोग एवं बातचीत को महत्व दे सकता है और दूसरा मुखाभिव्यक्तियों को।

(३) विभिन्न आलोचक एक ही तथ्य की अलग-अलग व्याख्याएँ प्रस्तुत करते हैं और जो तथ्य उनके निर्वचन में समुपयुक्त नहीं होते, उनकी उपेक्षा करते हैं। व्याख्या करते समय वे अपनी ओर से बिना अवलोकन किये ही कुछ नए तथ्य जोड़ देते हैं।

(४) अवलोकक के स्वयं के भाव, उसकी मनोवृत्तियाँ, उसकी शारीरिक एवं मानसिक स्थिति, थकान आदि का उसके अवलोकन पर प्रभाव पड़ता है। प्रत्येक विषय पर उसके अपने विचार होते हैं।

(५) समय एवं अन्य प्रकार के न्यादर्श की समस्या अत्यन्त जटिल है। व्यक्तियों के व्यवहार में उनकी प्रेरणाओं, निष्पत्ति, रुचि, सभी में अल्पान्तर में ही अनेक परिवर्तन होते रहते हैं। पर अवलोकन में हम एक बड़ी सीमा तक इन परिवर्तनों पर ध्यान नहीं देते। कुछ विशिष्ट अवसरों पर किए गए अवलोकन को ही सामान्य मूल्यांकन का आधार मान लिया जाता है।

अवलोकन विधि में सुधार के सुझाव—

१. **केवल उपयुक्त परिस्थिति में अवलोकन**—अवलोकन तब करना चाहिए जब परीक्षण-विधि उपयुक्त न हो, उसमें अधिक समय लगे या अधिक व्यय हो या जब मापन किये जाने वाले उद्देश्यों के लिए अवलोकन ही वैध विधि हो, या जब अधिक विश्वसनीय साधन उपलब्ध न हों। कला, संगीत, शारीरिक शिक्षा, नागरिकता, सामाजिक अभियोजन आदि क्षेत्रों में यह विधि उपयुक्त है।

२. **उचित उपकरणों का प्रयोग**—किस विषय, क्षेत्र या परिमाण का का अवलोकन करना है, इसी आधार पर यंत्रों-उपकरणों के प्रयोग का निर्णय करना चाहिए। वर्णनात्मक तथ्यों के लिए पड़ताल-सूची तथा वर्गीकरण, श्रेणीकरण आदि के लिए वर्गक्रम मापक (Rating Scales) उपयुक्त हैं।

३. **तत्काल विवरण लेखन**—अवलोकन की अवधि में ही या उसके तत्काल बाद ही उसका विवरण ले लेना चाहिए और यह ध्यान रखना चाहिए कि विवरण अवलोकन के बिल्कुल अनुरूप हो। समय व्यतीत हो जाने पर विस्तृत बातें भूल जाती है। अवलोकन किए गए तथ्यों में गुणात्मक तथा परिमाणात्मक दोनों प्रकार के परिवर्त्तन हो जाते हैं। अतः घंटे आध-घंटे की भी देरी होने पर विवरण अवैध हो जाने की सम्भावना रहती है। यदि अवलोकन की अवधि में ही विवरण लेने से व्यक्ति के व्यवहार में परिवर्त्तन होना सम्भव है तो इस प्रकार विवरण लेना उपादेय नहीं है।

४. **एक के स्थान पर अनेक अवलोकन**---अनेक अवलोकनों के आधार पर मूल्यांकन करना चाहिए, क्योंकि इससे विश्वसनीयता बढ़ जाती है। कई अवलोककों के अवलोकनों को एकत्र करके या एक ही अवलोकक से बार-बार अवलोकन करवा के निष्कर्षों पर पहुँचाना चाहिए। कई अवलोकक होने पर भी यह ध्यान रखना चाहिए कि वे प्रशिक्षित तथा समर्थ हों।

५. **पक्षपात-रहित होने का प्रयास**---अवलोकक को चाहिए कि वह अपने विचारों, अभिवृत्तियों एवं व्यक्ति के प्रति पूर्व-धारणाओं से प्रभावित न होने का प्रयास करे। अवलोकन किए जाने वाले व्यक्ति के प्रति यदि अवलोकक का दृष्टिकोण सामान्य नहीं है, वरन् अत्यधिक प्रतिकूल या अनुकूल है, तो उचित यही होगा कि वह अवलोकन न करे।

: २४ :

वर्गक्रम[1]

वर्गक्रम के उद्देश्य एवं विकास
(Purposes and Development of Ratings)

सभी मनोवैज्ञानिक मापन की विधियों में 'वर्गक्रम मापदण्ड (Rating Scales) सबसे अधिक प्रचलित हैं। व्यवहृत मनोविज्ञान के क्षेत्र में ही नहीं, मौलिक तथा आधारभूत अन्वेषण में भी इनका उपयोग है। व्यक्तियों के मूल्यांकन, उनकी प्रतिक्रिया, उत्पादन, गुण सभी में ये प्रयुक्त होते हैं। औद्योगिक, व्यापारिक एवं आर्थिक संस्थानों में विश्वास के साथ इनकी सहायता ली जाती है। वेतन में बढ़ोतरी का निर्णय करते समय, बदली करने में, तरक्की में, शिक्षा में सभी स्थानों पर इनकी शरण विश्वसनीय है।

वास्तव में वर्गक्रम विधि का सूत्रपात मनोभौतिकी में फैक्नर तथा अन्य व्यक्तियों से हुआ। तथापि प्रथम वर्गक्रम मापदण्ड गाल्टन ने १८८३ ई० में प्रकाशित किया। अपने "मानसिक विम्बसृष्टि के मापदण्ड : प्रातराश-बिम्बसृष्टि" (Scale of Mental Imagery : Imagery of a Breakfast Table) में गाल्टन ने विम्बसृष्टि के विभिन्न प्रकारों में भेद किया, जैसे उच्चतम, उपअष्टमक (Sub-octile), अष्टमक (Octile), चतुर्थक (Quartile), मध्यम, अन्तिम

1. Ratings.

चतुर्थक, अन्तिम अष्टमक-अन्तिम उपअष्टमक, निम्नतम। पियर्सन ने १९०६-७ में बुद्धि का पता लगाने के लिए वर्गक्रम मापदण्ड बनाया। उसने सात वर्गों में निर्णय लिया—मानसिक दृष्टि से हीन, मन्द-सुस्त, मन्द, मन्द-बुद्धिमान, कुछ बुद्धिमान, स्पष्ट रूप से समर्थ एवं अत्यन्त योग्य। युग्म तुलना विधि (Paired Comparison Method) में वर्गक्रम करने वाला किसी निश्चित गुण में प्रत्येक व्यक्ति की प्रत्येक अन्य विधि से तुलना करता है। अनुस्थितिक्रम विधि (Ranking Method) में वर्गक्रम में रखे जाने वाले व्यक्तियों को क्रम-संख्या में रखा जाता है।

वर्गक्रम मापदण्ड के प्रकार
(Types of Rating Scales)

अनेक प्रकार की वर्गक्रम मापन-विधियों का विकास हुआ है। हम यहाँ उनमें से सिर्फ पाँच का विवरण देंगे : (१) संख्यात्मक (Numerical), (२) रेखांकित (Graphic), (३) प्रमापित (Standard), (४) संचयी अंक (Cumulative Points) एवं (५) बलात् विकल्प (Forced Choice)। इन सभी प्रकार के वर्गक्रम मापनों में वर्गक्रम निरीक्षण से किया जाता है। पर इन सभी की संकार्य (Operation) विधि अलग-अलग है।

१. **संख्यात्मक मापदण्ड** (Numerical Scales) :—

इस प्रकार के मापदण्ड में परिभाषित अंकों को खण्डशः निश्चित उद्दीपकों के साथ सम्बन्धित कर देते हैं और इस विधि से व्यक्ति को अपने गुणों के अनुसार अंक मिल जाते हैं। इन अंकों को ३, ५ या ७ के पैमाने पर रख दिया जाता है। जैसे यदि हमें स्त्री-सौन्दर्य के आधार पर संख्यात्मक वर्गक्रम करना हो तो निम्न रूप से मापदण्ड बन सकता है :—

७	सर्वाधिक सुन्दर	—	Most beautiful
६	अत्यन्त सुन्दर	—	Very beautiful
५	सुन्दर	—	Beautiful
४	सामान्य	—	Average
३	कुरूप	—	Ugly
२	अत्यन्त कुरूप	—	Very Ugly
१	सर्वाधिक कुरूप	—	Ugliest possible

या भार एवं वजन का निर्णय करने में पाँच वर्गों में विभाजन सम्भव है :—

५	अत्यन्त भारी	—	Very heavy
४	भारी	—	Heavy
३	मध्यम	—	Medium
२	हल्का	—	Light
१	अत्यन्त हल्का	—	Very light

संख्यात्मक मापदण्ड की संरचना के लिए कुछ सुझाव नीचे दिए हैं :—

(१) संख्यात्मक मापदण्डों की दो-ध्रुवीय (Bipolar) प्रवृत्ति होती है, अर्थात् इनमें दो विरोधी दिशाएँ हैं। इसी कारण कभी-कभी बीच के वर्ग में शून्य (Zero) रख दिया जाता है और इसके एक ओर ऋणात्मक तथा दूसरी ओर धनात्मक क्रम। बीजगणित की विधि से परिचित व्यक्तियों के लिए तो यह ठीक है, पर शेष के लिए नहीं। अत: यह बहतर रहेगा कि मापदण्ड की संतति (Continuum) को विभाजित कर दें और ऋणात्मक चिन्हों का प्रयोग न किया जाय।

(२) परीक्षार्थियों की सामान्य प्रवृत्ति होती है कि अन्तिम वर्गों (Terminal Categories) से बचा जाए और प्रसार के मध्य के थोड़ा आस-पास अपना निर्णय दिया जाए। इस प्रकार वर्गक्रम का प्रसार कम हो जाता है। इसीलिए अधिक वर्गक्रमों का रखना उपादेय नहीं है। संरचक को इस प्रकार वर्गक्रम बनाना चाहिए कि प्रयोज्य केवल मध्य वर्गों में ही अपना निर्णय सीमित न रखे।

संख्यात्मक मापकों के उपयोग एवं परिसीमाएँ निम्न हैं :—

उपयोग :—

१. संख्यात्मक मापकों की संरचना एवं इनका उपयोग करना अत्यन्त सरल कार्य है। इस मापक पर प्राप्त परिणामों को प्रयुक्त करना भी सरल है।
२. यदि वर्गक्रम करने वाला संख्यात्मक वर्गक्रम का गम्भीरता से उपयोग करे तो इनसे एक उच्च प्रकार का मापन सम्भव है। अन्य प्रकार के मापकों की अपेक्षा तो ये अनेक वस्तुस्थितियों में सन्तोष-जनक सिद्ध हो सकते हैं।

परिसीमाएँ :—

१. संख्यात्मक मापकों में पक्षपात एवं त्रुटि की बहुत सम्भावना है।
२. अनेक व्यक्तियों द्वारा किए गए निर्णय एक समान नहीं होते। कभी-कभी एक व्यक्ति द्वारा निर्णय यदि 'सुन्दरतम' है तो वही वस्तु दूसरे

निर्णायक के लिए केवल सामान्य हो सकती है। निर्णायकों के स्तर एवं उनके वर्गक्रम करने की विधियाँ एक-सी नहीं होतीं।

२. रेखांकित मापदण्ड (Graphic Scales) :—

यह मापदण्ड अत्यन्त लोकप्रिय है और व्यापक रूप से प्रयुक्त होता है। बॉयस (Boyce) ने १९१५ से पूर्व एक प्रकार के रेखांकित वर्गक्रम मापदण्ड का प्रयोग किया था, पर वास्तविक रूप से इसका विकास 'स्कॉट कम्पनी लेबोरेटरी' ने किया। इसमें एक लम्बी रेखा के नीचे खण्डश: अनेक विवरणात्मक विशेषण या वाक्यांश लिख दिए जाते हैं। कुछ इस प्रकार से निदेश दिए जाते हैं : "ये वर्गक्रम आपके अपने निर्णय के प्रतिनिधिकारी हैं। प्रत्येक गुण पर अपना निर्णय दीजिए। किसी भी परीक्षार्थी को सभी गुणों में श्रेष्ठ या निकृष्ट मत बताइए, क्योंकि सम्भव है कि कोई परीक्षार्थी किसी गुण में श्रेष्ठ हो, किसी अन्य में मध्यम। आपका निर्णय पूर्ण रूप से गुप्त रखा जाएगा।" उदाहरण के लिए 'लेयर्ड व्यक्तिगत तालिका' में इस प्रकार का पद है :—

सामाजिक बातचीत में आप कैसे रहे हैं :
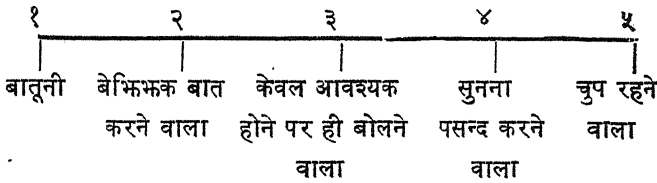
एक प्रभावशाली **रेखांकित मापदण्ड की संरचना** के लिए निम्न सुझाव दिए गए हैं :

१. रेखा पर्याप्त लम्बी होनी चाहिए जैसे लगभग ५", पर अत्यधिक लम्बी नहीं ताकि संतति (Continuum) की एकता बनी रहे। यदि रेखा अधिक लम्बी होगी तो निर्णायक अपने निर्णयों को मध्य के वर्गों में संकुचित करने का प्रयास करेगा। रेखा अनेक भागों में विभाजित भले ही की जाए, उसे खण्डित करना ठीक नहीं है, क्योंकि खण्डित रेखा से अनिरन्तरता प्रकट होती है जिससे मापन योग्य परिवर्त्ती की जटिलता बढ़ जाती है।

२. अच्छे गुणों से सम्बन्धित विवरणात्मक विशेषण या वाक्यांश प्रारम्भिक छोर पर होने चाहिए एवं प्रतिकूल अभियुक्तियाँ अन्तिम या बाद के छोर पर, क्योंकि एक सामान्य निर्णायक पहले अनुकूल गुणों के बारे में सोचना चाहता है, बाद में प्रतिकूल।

३. आवश्यक नहीं है कि रेखांकित संकेतों के मध्य समान दूरी हो। उदारता (Leniency) की त्रुटि को दूर करने के लिए अनुकूल पक्ष की ओर के संकेतों के मध्य अधिक अन्तर रखा जा सकता है एवं इन संकेतों की संख्या भी अधिक रखी जा सकती है। मध्य के समीप निर्णय देने की प्रवृत्ति का प्रतिकार करने के लिए मध्य संकेतों में अधिक अन्तर रखा जा सकता है।

४. दो-ध्रुवीय (Bipolar) गुणों पर निर्णय करने के लिए संरचित मापदंड में केन्द्रीय संकेत का केन्द्र या मध्य में ही रखना आवश्यक नहीं है। कोई अन्य व्यवस्था भी की जा सकती है।

५. प्रत्येक गुण के लिए अलग-अलग भाग में संकेत लिखने चाहिए। एक गुण का दूसरे पर अतिच्छादन (Overlapping) नहीं होना चाहिए।

रेखांकित मापकों का निम्न मूल्यांकन किया जा सकता है।

उपयोग :—

१. इनकी संरचना एवं प्रशासन अत्यन्त सरल है।

२. अत्यन्त रुचिकर होने से इनके प्रशासन में अतिरिक्त प्रेरणा की आवश्यकता नहीं पड़ती।

३. इन्हें शीघ्रता से भरा जा सकता है। अतः निर्णायक को संख्याओं तथा शब्दों से सिर-दर्द नहीं करना पड़ता।

४. इनमें निर्णायक को अत्यन्त सूक्ष्म विभेद करने का अवसर मिलता है।

५. फलांक-विधि को चाहे जब परिवर्तित किया जा सकता है।

६. इसमें तुलनात्मक निर्णय करने की सुविधा रहती है और यह आवश्यक नहीं रहता कि निर्णायक समूह के सभी सदस्यों से परिचित हो।

परिसीमाएँ :—

१. यद्यपि फलांक-विधि में परिवर्त्तन की सम्भावना रहती है पर फलांकों की गणना कठिन होती है एवं इसमें काफी परिश्रम पड़ता है।

२. इस विधि में भी व्यक्ति में गुण है या नहीं, या किस संकेत के अनुरूप है, इसका निर्णय करना सरल नहीं है।

वर्ल्ड बुक कम्पनी द्वारा १६३० में प्रकाशित "हैगर्टी-ओल्सन-विकमैन बिहेवियर रेटिंग स्केल" (Haggerty-Olson-Wickman Behaviour Rating Scale) एक रेखांकित वर्गक्रम मापदण्ड है। "अमेरिकन काउन्सिल ऑन एजूकेशन" द्वारा संरचित व्यक्तित्व वर्गक्रम मापदण्ड (Personality Rating Scale) भी इसी प्रकार का है।

३. **प्रमापित मापदण्ड** (Standard Scales)—

वे वर्गक्रम मापक जिनमें निर्णायक के समक्ष अनेक प्रमाप या मानक प्रस्तुत कर दिए जाते हैं, **प्रमापित मापदण्ड** कहलाते हैं, जैसे हस्तलेख मापदण्ड, मनुष्य का मनुष्य से मिलान, आदि ।

हस्तलेख मापदण्ड (Hand-writing Scales)—आज के मुद्रलेखन के युग में हस्तलेखन कला का महत्व काफी कम हो गया है । व्यापारिक पत्र-व्यवहार, कचहरी की कार्य-विधि, व्यवहार, मृत्यु, पुस्तक-लेखन, सभी स्थानों पर मुद्रलेखन (Type-wrting) का चलन है, तथापि हस्तलेखन अनेक स्थानों पर उपयोगी है । महत्व कम होने के कारण हस्तलेखन के माप-दण्ड भी अधिक नहीं बने । आयर्स (Ayres) तथा थॉर्नडाइक (Thorndike) ने इस दिशा में काम किया है । इन मापदण्डों में अनेक प्रमापित प्रादर्श दिए रहते हैं, जिन्हें किसी विधि से श्रेष्ठता के मापक पर स्वंकित या शोधित (Calibrated) किया हुआ होता है । जिस हस्तलेख के बारे में निर्णय दिया जाना है, उनकी इन प्रमापों या मानकों से तुलना करते हैं ।

सुवाच्यता, गुण एवं गति—हस्तलेखन के तीन मुख्य परिमाण हैं, जिनका कि मापन किया जाता है । निस्संदेह इनमें से प्रथम दो के बारे में अवलोकन करने वालों के निर्णय में अन्तर की सम्भावना रहती है । अतः सुवाच्यता (Legibility) के मापन को वस्तुनिष्ठ बनाने के लिए इसका अनेक घटकों में विश्लेषण करते हैं, जैसे अक्षर-रचना, अन्तर, तिरछापन, अक्षर की ऊँचाई, नियमितता आदि । गुण या आकर्षकता का वस्तुनिष्ठीकरण (Objectification) सफल रूप से अभी तक नहीं हो पाया है । हस्तलेखन गति के मापन के लिए एक निश्चित अवधि में कौन परीक्षार्थी कितना लिख लेता है, यह ज्ञात किया जाता है और इस प्रकार प्रति सैकिन्ड कितने अक्षर लिखे इसका मापन सम्भव है । लगभग २ मिनट का समय-परीक्षण (Timed Test) इस दृष्टि से उपयुक्त है । निष्पत्ति-परीक्षा के अध्याय में इनका विस्तृत वर्णन दिया गया है ।

मनुष्य का मनुष्य से मिलान मापदण्ड (Man to Man Scale)—इस मापदण्ड का अब केवल ऐतिहासिक महत्व है । इसका विकास एवं प्रयोग मुख्यतया सेना में हुआ । सन् १९१७ में कार्नेगि इन्स्टीट्यूट ऑफ टैक्नोलॉजी के ब्यूरो ऑफ सेल्समेनशिप रिसर्च विभाग में डाक्टर वाल्टरडिल स्कॉट ने भी इस प्रकार का मापदण्ड बनाया था । इसमें पाँच शीर्षकों के अन्तर्गत सैन्य कर्मचारियों का वर्गक्रमांकन होता है—शारीरिक गुण, बुद्धि, नेतृत्व, व्यक्तिगत गुण एवं सैन्य-सेवा में उनका सामान्य महत्व । प्रत्येक गुण-विशेष के लिए एक अफसर को पाँच व्यक्ति छाँटने थे : वह जिसमें अधिकतम मात्रा में यह गुण-

विशेष हो, वह जिसमें निम्नतर मात्रा में हो, वह जो मध्य में हो, वह जिसमें सामान्य से कुछ अधिक, और एक वह जिसमें सामान्य से कम गुण हो। इन व्यक्तियों से तुलना करके अन्य व्यक्तियों के बारे में निर्णय किया जाता था। इस विधि से अनेक व्यक्तियों को उनके किसी एक गुण के अनुसार क्रमित किया जा सकता है। परन्तु इसमें निर्णायकों के लिए यह आवश्यक है कि वे उन अनेक व्यक्तियों से, जिन्हें वे किसी गुण के अनुसार क्रमित करना चाहते हों, परिचित हों।

उदाहरण के लिए वर्गक्रम इस प्रकार सम्भव है :—

१. देशपाण्डे	हिम्मत की दृष्टि से इस बटालियन में सर्वश्रेष्ठ।			
२. चटर्जी	,,	,,	,,	श्रेष्ठ।
३. लोकनाथन	,,	,,	,,	सामान्य।
४. प्रतापसिंह	,,	,,	,,	कायर।
५. मिश्रा	,,	,,	,,	बहुत कायर।

इस विधि की निम्नलिखित उपयोगिता एवं परिसीमाएँ हैं :—

उपयोग :—

१. इस मापदण्ड के आधार पर गुण या लक्षणों के सम्बन्ध में एक स्थायी पैमाना बनाया जा सकता है। एवं अनेक निर्णायकों द्वारा किए गए वर्गक्रमों की प्रत्यक्ष रूप से पारस्परिक तुलना की जा सकती है।
२. इसमें केवल अमूर्त संख्याओं का प्रयोग नहीं होता एवं व्यक्ति के वास्तविक लक्षणों पर निर्णय किया जाता है।

परिसीमाएँ :—

१. इसमें विभिन्न निर्णायकों के मत व्यवहार में शायद ही कभी एक समान हों।
२. इस मापदण्ड में वर्गक्रमांकित व्यक्तियों में स्केल-दूरी समान नहीं होती।
३. किसी व्यक्ति के बारे में निर्णय करते समय अध्यागणन (Over estimation) तथा अवागणन (Under estimation) सम्भव है।
४. मापदण्ड का सैन्य प्रतिरूप नागरिक जीवन तथा औद्योगिक संस्थानों में व्यवहार-योग्य नहीं है।

४. संचयी अङ्क-विधि से वर्गक्रम (Rating by Cumulative Points)—

इस विधि में अनेक विवरण-पदों पर व्यक्ति का मूल्यांकन करके अंक प्रदान कर दिए जाते हैं। इन अंकों के कुल योग या संचय के आधार पर व्यक्ति

के बारे में निर्णय करते हैं। ये मापदंड मनोवैज्ञानिक परीक्षण की भाँति हैं। किन्तु अन्तर यह है कि इनमें अङ्क किसी वस्तुनिष्ठ कसौटी के आधार पर नहीं दिए जाकर केवल निर्णय के आधार पर दिए जाते हैं। पड़ताल-सूची (Check-list Method) तथा अनुमान विधि (Guess Who Technique) इसी के अन्तर्गत आते हैं।

पड़ताल-सूची विधि (Check-list Method)—हार्थशोर्न तथा मे ने इस विधि का प्रयोग बच्चों के चरित्र का मूल्यांकन करने के लिए किया। ८० लक्षणों के नाम छाँटे गए, जैसे निर्दयी, सहयोगी दयालु, लालची, अहसानमन्द आदि; एवं प्रत्येक निर्णायक ने यह जाँच की कि सूची के लक्षणों में से कौन-कौन बालक पर व्यवहृत है। अङ्कों के संचय (Total Score) से बालक के गुणों के बारे में निर्णय किया गया। प्रत्येक अनुकूल लक्षण के लिए + १, तथा प्रतिकूल लक्षण के लिए − १ अंक दिया गया। अह्रब्रोक (Uhrbrock) ने अपनी पड़ताल-सूची में ७२४ कथन सम्मिलित किए हैं। ये २० कार्यदेशकों (Foremen) के निर्णय पर आधारित थे और इनका उद्देश्य कर्मचारियों का मूल्यांकन करना था।

अतः पड़ताल-सूची एक ऐसी विधि है जिसमें अवलोकन के लिए पद दिए रहते हैं। स्कूलों, औद्योगिक संस्थानों, दफ्तरों, सेना में, सभी स्थानों पर इनका प्रयोग होता है। इन्हें कभी-कभी अवलोकन अनुसूची (Observation Schedules) भी कहते हैं, विशेषकर तब जब वे बहुत लम्बी हों। प्रकाशित पड़ताल सूचियाँ स्वयं संरक्षित पड़ताल सूचियों से अधिक विश्वसनीय नहीं होतीं। हार्थशोर्न तथा मे के अनुसार अध्यापक द्वारा विद्यार्थी के मूल्यांकन में इस विधि का विश्वसनीयता गुणांक ·६ से अधिक है।

इस विधि का निम्न मूल्यांकन किया गया है :—

उपयोग :—

१. इसकी संरचना एवं प्रशासन अत्यन्त सरल कार्य है।
२. इनके लिए आवश्यक नहीं है कि निर्णायक प्रशिक्षित हो एवं उसमें विभेदकारी सामर्थ्य हो।
३. फलांक-गणना अत्यन्त सरल है, विशेषकर तब जब पदों में + १ या ० अङ्क देना हो।
४. पड़ताल-सूची विधि का प्रयोग अत्यन्त जटिल परिवर्त्तियों पर किया जा सकता है, जैसे किसी कर्मचारी का अपनी संस्था में क्या उपयोग है। व्यक्ति के किसी एक विशिष्ट गुण या सभी सामान्य गुणों के मूल्यांकन में इनका प्रयोग किया जा सकता है।

५. यदि पड़ताल-सूची के पद व्यक्ति की उन विशिष्ट क्रियाओं से सम्बन्धित हैं जिनका कि निर्णायक अवलोकन कर रहा हो, तो यह सूची एक निष्पत्ति-परीक्षण का काम देती है ।

परिसीमाएँ :—

१. प्रत्येक पद की केवल दो सम्भावित प्रतिक्रियाएँ होने से फलांक विधि अधिक वैज्ञानिक नहीं है। यदि तीन प्रतिक्रियायों (Three Category Responses) का प्रयोग किया जाए तो इसमें सुधार सम्भव है। अनुकूल प्रतिक्रिया का मूल्य या फलांक तटस्थ (Neutral) प्रतिक्रिया से अधिक होना चाहिए ।

२. पड़ताल-सूची विधि में निर्णायक से केवल उन पदों या कथनों की पड़ताल करने को कहा जाता है, जो उस पर प्रयुक्त हों । इससे निर्णायक को प्रत्येक पद के सम्बन्ध में प्रतिक्रिया नहीं करनी पड़ती। अतः उसकी प्रतिक्रिया में अनावश्यक झुकाव या पक्षपात आ जाता है ।

अनुमान लगाने की विधि (Guess-who Technique)—इस विधि में विद्यार्थियों से अपने सहपाठियों का नामकरण करने को कहा जाता है जिनका कुछ शब्द-चित्रों से वर्णन किया गया होता है । हार्थशोर्न तथा मे ने इस विधि का प्रयोग बालकों का मूल्यांकन करने के लिए किया । इसमें कुछ इस प्रकार निर्देश दिए जाते हैं: —"यहाँ कुछ ऐसे बालकों के शब्द-चित्र दिए गए हैं, जिन्हें तुम जानते हो । प्रत्येक कथन को ध्यान से पढ़ो और यह जानने का प्रयत्न करो कि यह किस के बारे में है । यदि कोई कथन किसी सहपाठी के लिए उपयुक्त नहीं है तो उस कथन को छोड़कर आगे के कथनों के बारे में सोचो ।"

प्रत्येक शब्द-चित्र एक संक्षिप्त विवरण होता है, न कि केवल लक्षण का नाम, जैसे—"यहाँ एक ऐसा बालक है जो दूसरों को खुश रखने के लिए कुछ न कुछ किया करता है ।" या "यहाँ एक ऐसा बालक है जो बिना अपने स्थान से हिले-डुले चुपचाप करता है ।" प्रत्येक कथन अनुकूल होता है या प्रतिकूल । प्रत्येक शब्द-चित्र के आगे इतना स्थान छोड़ देते हैं कि वह वर्णन जिन-जिन सहपाठियों के लिए उपयुक्त है, उनके नाम लिखे जा सकें । इस प्रकार एक प्रिय विद्यार्थी का नाम बार-बार वांछनीय विशेषताओं के साथ लिया जायगा, जबकि अप्रिय विद्यार्थी का नाम अवाच्छनीय विशेषताओं के साथ । अनेक शब्द-चित्रों के आगे विद्यार्थी अपना नाम भी लिख सकता है । इस विधि में किसी एक-आध

कथन के आधार पर विद्यार्थी के बारे में निर्णय नहीं करना चाहिए, वरन् सभी कथनों के आधार पर। सहपाठियों में किसकी कितनी ख्याति है इसका मापन इस विधि से अच्छी प्रकार हो सकता है। "ओहियो अभिज्ञान मापदण्ड : मेरे समूह में कौन क्या है" (Ohio Recognition Scale : Who's Who in My Group)[1] एक प्रसिद्ध मापक है।

५. बलात् विकल्प वर्गक्रम (Forced Choice Ratings)—

'मनुष्य का मनुष्य से मिलान' माप-विधि की भाँति बलात् विकल्प विधि का सूत्रपात भी सैन्य अफसरों का मूल्यांकन करने के लिए किया गया। इस विधि में लक्षणों के जोड़े दिए जाते हैं और निर्णायक से यह बताने के लिए कहा जाता है कि निर्णय किये जाने वाले व्यक्ति के सम्बन्ध में इन दोनों लक्षणों में से कौन-सा सही है। सामान्यतया कथनों के दो जोड़े, जिनमें दो अनुकूल हों और दो प्रतिकूल, एक साथ चतुष्टय (Tetrad) में प्रस्तुत होते हैं। इनमें कभी-कभी एक तटस्थ कथन मिलाकर पंचष्ट (Pentad) भी बना देते हैं। चतुष्पद का उदाहरण है : गम्भीर, उत्साही, लापरवाह, असभ्य। इसमें प्रथम दो लक्षण अनुकूल हैं एवं अन्तिम दो प्रतिकूल। निर्णायक प्रत्येक चतुष्टय को एक पद मानकर अपना निर्णय देता है और बताता है कि कौन-सा लक्षण उस व्यक्ति के लिए सबसे उपयुक्त है और कौन-सा सबसे कम। फिर एक फलांक-कुंजी के आधार पर गणना करली जाती है।

बलात् विकल्प विधि के निम्नलिखित उपयोग एवं परिसीमाएँ हैं :—

उपयोग :—

१. इसमें उदारता की त्रुटि कम होती है क्योंकि चतुष्टय पद में निर्णयक की अध्यागणन एवं अवागणन करने की सामान्य प्रवृत्ति या पूर्वयश प्रभाव (Halo Effect) का प्रतिकार हो जाता है। पड़ताल-सूची विधि में यदि निर्णायक किसी व्यक्ति के बारे में अनुकूल विवरण देने का इच्छुक है तो वह अनेक अनुकूल लक्षणों की पड़ताल करेगा और प्रतिकूल विवरणों की जाँच से बचेगा, पर बलात् विकल्प विधि में उसे सम्बन्धित तथा असम्बन्धित सभी लक्षणों को अंकित करना पड़ेगा। असम्बन्धित लक्षणों के ऋणात्मक अंकों से सम्पूर्ण फलांकों का योग कम हो जाएगा और वह उदार नहीं रह सकेगा।

२. इसमें पड़ताल-सूची विधि की अपेक्षा अधिक सूक्ष्म विभेद का अवसर मिलता है।

---

1. Ohio State University, 1946.

परिसीमाएँ :—

१. यह संदेहजनक है कि इस विधि से अन्य विधियों की त्रुटियाँ दूर होती हैं या नहीं। एक सामान्य निर्णायक निश्चित रूप से यह नहीं कह सकता कि चतुष्टय पद का कौन-सा कथन व्यक्ति से अधिक सम्बन्धित है। यह ज्ञात करने के लिए भी कोई अध्ययन नहीं हुए हैं कि एक सामान्य निर्णायक कितने सम्बन्धित लक्षणों का पता लगा सकता है।

२. इस विधि का 'बलात् विकल्प वर्गक्रम' यह नामकरण बिल्कुल अनुपयुक्त है। यद्यपि चतुष्टय तथा पंचद प्रकार के पदों के कारण विकल्प कुछ सीमा तक बलात् हो जाता है, पर कोई भी निर्णायक यह सुनना नहीं चाहता कि निर्णय देने में वह स्वतंत्र नहीं है।

३. चतुष्टय पद में संबंधित तथा असंबंधित दोनों प्रकार के निर्णय दिए रहते हैं अतः निर्णायक के निर्णय से व्यक्ति में इन चार लक्षणों में आंशिक अनुस्थिति क्रम बन जाता है। अनुमान (Guessing) की संभावना भी विद्यमान रहती है।

४ इस प्रकार के मापदण्ड की संरचना अत्यन्त जटिल है और इसमें पर्याप्त प्रशिक्षण एवं समय की आवश्यकता पड़ती है। अधिक शोध कार्य भी उपलब्ध नहीं है।

निर्णायकों के बारे में कुछ तथ्य
(Some Facts About Raters)

वर्गक्रम मापदण्डों के बारे में अनेक अध्ययन हुए हैं, उनसे निर्णायकों की विशेषताओं पर प्रकाश पड़ा है। निर्णायकों में व्यक्तिगत विभेद होता है, क्योंकि वे अलग-अलग परिस्थितियों में व्यक्तियों का अवलोकन करते हैं। यदि वे अपने निर्णयों में रुचि लें और यदि उनके पास पर्याप्त समय हो तो निर्णय में सुधार सम्भव है। इसके अतिरिक्त शैक्षिक एवं व्यावसायिक प्रशिक्षण मिलने से एवं इस प्रकार की पृष्ठ-भूमि होने से भी अच्छा निर्णय हो जाता है। यह आवश्यक नहीं है एक अच्छा निर्णायक आत्म-संगत हो, अर्थात् दुहराए जाने पर उसका निर्णय वही हो जो पहले था। यदि निर्णायकों को योग्यता के सामान्य वितरण, मापदण्ड की प्रकृति एवं सम्भावित त्रुटियों का ज्ञान हो तो निर्णय करने में सहायता मिलती है। अध्ययनों से यह भी ज्ञात हुआ है कि निर्णायक अधिकांश लक्षणों में स्वयं का अध्यागणन करते हैं और बहुत कम लक्षणों में

अवागणन। निर्णय करने में पुरुष स्त्रियों की अपेक्षा अधिक उदार हैं। निर्णायक अपने सहपाठियों, सहयोगियों, अध्यापकों आदि के बारे में अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक अनुकूल निर्णय करते हैं। विरोधी योनि की अपेक्षा सहयोनि के सदस्यों के सम्बन्ध में निर्णय करने में निर्णायकों में अध्यागणन की प्रवृत्ति होती है। माता-पिता अपने बच्चों का अधिमूल्यांकन करते हैं, पर वे श्रेष्ठ बच्चों का अधोमूल्यांकन (Under Rating) करते हैं। वाञ्छनीय लक्षणों के सम्बन्ध में स्वयं अपने बारे में किए गए निर्णय में अध्यागणन की प्रवृत्ति होती है एवं अवाञ्छनीय लक्षणों के सम्बन्ध में अवागणन की। निर्णायकों की बुद्धि-लब्धि का उनके द्वारा किए गए निर्णयों की विश्वस्तता से सम्बन्ध है। स्टॉकफोर्ड तथा बिसेल के अनुसार इन दोनों में ·३३ सहसम्बन्ध है।

वर्गक्रम मापदण्डों की संरचना के कुछ सुझाव
(Some Suggestions For the Construction of Rating Scales)

(१) **पदों की संख्या** (Number of Steps)—वर्गक्रम मापदण्ड की संरचना करने से पहले एक महत्वपूर्ण निर्णय यह करना पड़ता है कि कितने वर्ग लिए जाएँ। इस सम्बन्ध में कुछ अनुसन्धान भी हुए हैं। बॉयस ने ५४ अध्यापक-वर्गक्रम मापदण्डों के एक-एक पर्यवेक्षण में ज्ञात किया कि इनमें से कुछ में केवल दो ही पद थे जबकि कुछ अन्य में ७ तक। पर प्राय: ४ पदों का प्रयोग होता है। कॉन्कलिन ने पता लगाया है कि विभिन्न प्रकार के वर्गक्रम मापदण्डों में २ से लेकर २० तक पद प्रयुक्त होते हैं। यदि पदों की संख्या बहुत कम है तो निर्णायक को सूक्ष्म भेद करने का अवसर नहीं मिलता। दूसरी ओर यदि इनकी संख्या अत्यधिक है तो सम्भव है कि निर्णायक इनका उपयोग न कर पाए। कॉन्कलिन २३,००० वर्गक्रमों का विश्लेषण करने के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि अप्रशिक्षित निर्णायकों के लिए पदों की अधिकतम संख्या ५ होनी चाहिए। साइमण्ड्स के अनुसार ७ आदर्श संख्या है, क्योंकि इससे अधिक संख्या बढ़ाने से विश्वस्तता नहीं बढ़ती। ७ से कम संख्या होने पर सूक्ष्म विभेद न होने के कारण विश्वस्तता कम हो जाती है। कितने पद लिए जाएँ, यह बहुत कुछ उन लक्षणों की प्रकृति पर भी निर्भर है जिनके बारे में निर्णय किया जाना है। चैम्पनी तथा मार्शल के अनुसार यदि निर्णायक प्रशिक्षित है और अपने निर्णयों में दिलचस्पी लेता है तो पदों की संख्या २१ तक बढ़ सकती है।

(२) **निर्णय करने के लिए गुणों या लक्षणों का चयन** (Selection of Qualities or Traits to be Rated)—वर्गक्रम करने के लिए कुछ गुण

प्रासंगिक (Relevent) हैं एवं अन्य अप्रासंगिक। उदाहरण के लिए एक लिपिक (Clerk) के लिए उसके स्वभाव का वर्गक्रम अप्रासंगिक है। एक वर्गक्रम मापदण्ड के लिए विवरणात्मक विशेषणों का चयन करने की अच्छी विधि वह है जिसमें किन्हीं व्यक्तियों को उनकी सामान्य कार्यकुशलता एवं अलग-अलग गुणों दोनों पर निर्णीत किया जाए। कथनों का चयन इस प्रकार करना चाहिए कि वे पारस्परिक अतिच्छादन (Overlapping) न करें, क्योंकि कभी-कभी अनेक लक्षण एक-समान दिखाई देते हैं। कितने कथनों को सम्मिलित किया जाए, यह निर्णय वर्ग-क्रम के उद्देश्य को ध्यान में रखकर करना चाहिए। साइमण्ड्स के अनुसार शीघ्र विश्लेषण के हेतु इनकी संख्या ३ से लेकर ५ तक होनी चाहिए।

(३) **प्रत्येक क्रमांकित वर्ग में व्यक्तियों का सामान्य वितरण** (Normal distribution of individuals in each Class)—प्रत्येक वर्ग में कितने व्यक्ति क्रमांकित होने चाहिए, इसकी यदि कोई योजना बनाली जाय तो इससे निर्णय करने में बहुत सहायता मिलती है। यह योजना सामान्य वितरण के आधार पर ज्ञात की जा सकती है।

(४) **वर्गक्रम मापदण्ड के कथनों का वस्तुनिष्ठ होना** (Objectivety of items in a rasing Scale)—कथन इस प्रकार होने चाहिए कि निर्णायक उनका वस्तुगत मूल्यांकन कर सकें और उस कथन या लक्षण के बारे में प्रमाण एकत्र हो सकें। उदाहरण के लिए किसी अध्यापक वर्गक्रम मापदण्ड (Teacher Rating Scale) में कथन ऐसे हों कि अध्यापक के रूप, आवाज, भाषा के प्रयोग आदि के सम्बन्ध में वस्तुगत प्रमाण एकत्र हो सकें।

(५) **कथन पूर्णतया एवं वस्तुनिष्ठ रूप से परिभाषित होने चाहिए**—वर्गक्रम की सफलता बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करती है कि कथन किस सीमा तक एवं कितनी स्पष्टता से परिभाषित कर दिए गए हैं। बुद्धि, चरित्र आदि शब्दों का अलग-अलग व्यक्तियों के लिए अलग-अलग अर्थ होता है क्योंकि ये शब्द बहुअर्थक हैं। कुछ व्यक्तियों के लिए चरित्र का अर्थ है मैथुन शुद्धता, पर कुछ अन्य के अनुसार—नैतिकता या तत्परता। अतः यह आवश्यक है कि लक्षण का अर्थ स्पष्ट कर दिया जाए। केवल पर्य्यायवाची दे देने से काम नहीं चलता। औसत, अत्यन्त, अतीव, बहुत अधिक, आदि शब्दों से बचना चाहिए क्योंकि इनका अर्थ अस्पष्ट होता है।

वर्गक्रम मापदण्डों का प्रशासन
(Administration of Ratings)

वर्गक्रम मापदण्डों को शुद्ध एवं वस्तुनिष्ठ बनाने के लिए वे परिस्थितियाँ, जिनमें वर्गक्रमों की संरचना की जाए, प्रमापीकृत होनी चाहिएँ। पहले से ही बनाए गए चार्ट पर सब लेख लिखे होने चाहिए। फाइलिंग सुविधाजनक हो सके, इसके लिए यह आवश्यक है कि एक ये समान आकार के कार्डों पर होने चाहिए। एकसमान रूप से मुद्रित वर्गक्रम सूचियाँ भी प्रयुक्त की जा सकती हैं ताकि विभिन्न वर्गक्रमों में तुलना सम्भव हो सके। यदि एकसमान तथा प्रमापीकृत सूचियाँ तैयार की जाएँ तो निर्णय में आसानी होती है और विभेद भी सूक्ष्म हो सकता है। पड़ताल-पत्र (Checking Sheets), सारांश-पत्र (Summary Sheets) आदि का प्रयोग भी सम्भव है।

समय-समय पर किए गए निर्णयों का अत्यधिक उपयोग है। पर वर्गक्रमों का इस प्रकार उपयोग किया जाना चाहिए कि परिमाणात्मक फलांक प्राप्त किए जा सकें। परिमाणों के सांख्यिकीय प्रतिपादन के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है। इस दृष्टि से रेखांकित वर्गक्रम मापन का उपयोग करते है पर संख्यात्मक वर्गक्रम विधि का भी बहुत उपयोग है। एक मनोवैज्ञानिक को चाहिए कि वह प्रयोज्य की प्रतिक्रियाओं का स्थायी लेखा ले ले।

निर्णायक के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह अत्यन्त गम्भीरता से निर्णय करे। उसकी मनोवृत्ति तटस्थ नहीं होनी चाहिए, वरन् उसे इस बात में क्रियाशील रुचि रखनी चाहिए कि उसके अपने निर्णय अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। सर्वश्रेष्ठ परिणाम तब प्राप्त होते हैं जब निर्णायक को वर्गक्रम की विधि में प्रशिक्षण दे दिया जाए और साथ ही अवलोकन एवं टिप्पण लेने (Note-taking) की कला में भी। निर्णायकों को वर्गक्रम विधि का प्रयोग करने, फलांक प्राप्त करने और परिणामों का साँख्यिकीय प्रतिपादन करने का भी प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। इस बात की भी व्यवस्था होनी चाहिए कि दिए हुए निर्णयों का योग्य व्यक्तियों द्वारा समालोचन हो सके।

वर्गक्रम विधि की विश्वस्तता
(Reliability of Ratings)

वर्गक्रम विधि अधिक विश्वसनीय नहीं है। वैब, पेटर्सन, गैलप आदि अन्वेषकों के अनुसार इसका विश्वसनीयता गुणांक ·४५ और ·६६ के बीच है।

अतः ·५५ या इसके आस-पास विश्वसनीयता गुणांक प्रारूपिक कहा जा सकता है। वर्गक्रमों की विश्वसनीयता अनेक बातों पर निर्भर है, जैसे मापन किए जाने वाले लक्षणों की प्रकृति, लक्षणों की संख्या, निर्णायक, निर्णायकों का उन व्यक्तियों से परिचय जिनके बारे में निर्णय किया जाना है आदि। यदि अनेक लक्षणों के बारे में स्वतन्त्र रूप से निर्णय किया जाए एवं उनके परिणामों को मिला दिया जाए तो विश्वसनीयता बढ़ सकती है। पर एक ही व्यक्ति द्वारा किया गया निर्णय अविश्वसनीय है। कम से कम तीन निर्णायक उपयुक्त हैं।

वर्गक्रम की विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले तत्वों में से कुछ ये हैं :—

(१) **कुछ व्यक्तियों के बारे में निर्णय करना अन्य की अपेक्षा अधिक सुविधाजनक**—निर्णीत किए जाने वाले व्यक्तियों में काफी अन्तर होता है। अतः कुछ व्यक्तियों के बारे में राय प्रकट करना सरल है, कुछ के बारे में कठिन। निर्णायक यदि प्रयोज्यों से परिचित हों, तो भी इस बात पर प्रभाव पड़ता है।

(२) **मूल्यांकित लक्षणों में अन्तर**—कुछ लक्षणों के बारे में मूल्यांकन करना सरल है, अन्य के बारे में कठिन। रग (Rugg) के अनुसार एक सामान्य अर्थक लक्षण का अधिक विश्वसनीयता से मूल्यांकन सम्भव है, बजाय एक विशिष्ट अर्थक लक्षण के, क्योंकि किसी संकीर्ण लक्षण पर मूल्यांकन करने के लिए अधिक विस्तृत अवलोकन की आवश्यकता पड़ती है।

(३) **निर्णायकों के मूल्यांकन की योग्यता में अन्तर**—व्यक्तियों का यथार्थ मूल्यांकन करने की योग्यता में अन्तर होता है। अतः अनेक निर्णायकों द्वारा किया गया मूल्यांकन एकसमान नहीं होता। इसमें पर्याप्त विचलन होता है। निर्णय करने की योग्यता अनेक बातों पर निर्भर है, जैसे सामान्य निर्णय योग्यता, बुद्धि, ज्ञान, संगति इत्यादि।

वर्गक्रम विधि की वैधता
(Validity of Ratings)

वर्गक्रम विधि की संरचना एवं इसके प्रयोग में अनेक त्रुटियाँ आती हैं। हम यहाँ उनका संक्षिप्त वर्णन करेंगे—

(१) **उदारता की त्रुटि** (The Error of Leniency)—इसका अर्थ यह है कि निर्णायक उन व्यक्तियों का अधिमूल्यांकन करते हैं जिनसे वे परिचित

हैं या जिनमें वे अहंसंन्निहित (Ego-involved) रहते हैं। पर कुछ निर्णायक परिचित होने पर व्यक्ति का अधोमूल्यन करते हैं। इस प्रकार कुछ निर्णायक **'उदार'** होते हैं और कुछ **'कठोर'**। और परिणामस्वरूप 'धनात्मक उदारता' (Positive leniency) तथा 'ऋणात्मक उदारता' (Negative leniency) की त्रुटि सम्भव है। यदि प्रतिकूल लक्षणों की अपेक्षा अनुकूल लक्षणों की संख्या कम हो तो यह त्रुटि कम की जा सकती है।

(२) **केन्द्रीय प्रवृत्ति की त्रुटि** (The Error of Central Tendency)—केन्द्रीय प्रवृत्ति की त्रुटि का मुख्य कारण यह है कि निर्णायक उभयान्त (extreme) निर्णय देने में संकोच करते हैं एवं उनमें मध्य के आसपास निर्णय देने की प्रवृत्ति होती है, विशेषकर तब जब वे प्रयोज्यों से ठीक से परिचित नहीं होते। इस त्रुटि को दूर किया जा सकता है यदि (अ) मध्यस्थ (intermediate) विवरणात्मक वाक्यांशों के बीच अधिक अन्तर दिया जाए, (ब) विवरणात्मक विशेषण इस प्रकार हों कि इस त्रुटि का प्रतिकार हो सके, (स) उभयान्त पदों के पास विवरणात्मक विशेषणों में अधिक अन्तर हो और मध्यस्थ पदों के पास कम।

(३) **व्यतिरेक त्रुटि** (Contrast Error)—**मुरे** के अनुसार इसका अर्थ है किसी लक्षण में अन्य व्यक्तियों को अपने से विरोधी दिशा में मूल्यांकन करने की निर्णायकों की प्रवृत्ति उदाहरण के लिए 'सहयोग', 'स्वच्छता' आदि लक्षणों का मूल्यांकन करते समय यदि निर्णायक स्वयं सहयोग करता है एवं स्वच्छ रहता है तो दूसरों में 'असहयोग' एवं 'अस्वच्छता' की प्रवृत्ति का अवलोकन करेगा। इसका कारण यह है कि हम दूसरों को भी अपने अनुरूप देखना चाहते हैं और जब वे ऐसे नहीं होते तो हम उनकी आलोचना करते हैं।

(४) **तार्किक त्रुटि** (Logical Error)—न्यूकॉम्ब के अनुसार निर्णायकों के मस्तिष्क में जिन लक्षणों में तार्किक सम्बन्ध होता है, उनका वे एक समान मूल्यांकन करते हैं। इसे 'तार्किक त्रुटि' कहते हैं। यदि वस्तुनिष्ठ रूप से अवलोकन-योग्य क्रियाओं के बारे में मूल्यांकन किया जाय, न कि अमूर्त्त लक्षणों के बारे में, तो इस त्रुटि से बचा जा सकता है।

(५) **पूर्व-प्रभाव त्रुटि** (Halo Effect)—इस त्रुटि का उल्लेख सर्वप्रथम वैल्स ने १९०७ में किया; पर 'पूर्व-प्रभाव त्रुटि' यह संज्ञा सर्वप्रथम १९२० में थॉर्नडाइक ने दी। इसका अर्थ यह है कि हम किसी व्यक्ति का मूल्यांकन उसके बारे में अपनी सामान्य मनोवृत्ति के आधार पर करते हैं। अतः हमारे

निर्णय अधिक वैध नहीं होते। साइमण्ड्स के अनुसार पूर्व प्रभाव त्रुटि उन लक्षणों में अधिक होती है जिन्हें सरलता से परिभाषित तथा अवलोकित नहीं किया जा सकता या जिन पर बारम्बार विचार नहीं होता। नैतिक महत्व के लक्षणों में भी यह त्रुटि अधिक होती है।

(६) **सान्निध्य त्रुटि** (Proximity Error) --इसका अर्थ यह है कि यदि दो या अधिक लक्षणों में समय या स्थान का सामीप्य हो तो निर्णायक में उनमें सहसम्बन्ध स्थापित कर लेने की प्रवृत्ति होती है। इस त्रुटि का पता स्टॉकफोर्ड (Stockford) तथा बिसेल (Bissell) ने लगाया। यदि समान लक्षणों को अधिक दूरी पर रखा जाये और असमान लक्षणों को पास-पास, तो कुछ सीमा तक इस त्रुटि से बचा जा सकता है।

वर्गक्रम का प्रयोग व्यक्ति के बारे में पूर्वकथन (Prediction) करने के लिए किया गया है। 'अमरीकन मिलटरी अकादमी' (U. S. Military Acaddemy) ने 'सैन्य-सेवा के लिए अभियोग्यता' इस लक्षण पर वर्गक्रम विधि से मूल्यांकन के पूर्वकथनात्मक महत्व के बारे में जो तथ्य प्रकाशित किए हैं, उनसे ज्ञात होता है कि इनकी पूर्वकथनात्मक वैधता ·५ थी।

निर्णायक की मूल्यांकन करने की योग्यता को प्रभावित करने वाले तत्व

यदि निर्णायक ठीक से मूल्यांकन करना भी चाहें, तो भी कुछ ऐसी बातें हैं जिनसे उनके निर्णय की वैधता कम हो सकती है। ये हैं : (१) लक्षण की अस्पष्टता (Ambiguity of trait), (२) लक्षण की प्रच्छन्नता (Covertness of trait), (३) मूल्यांकन किये जाने वाले व्यक्ति को अवलोकन करने का अवसर (Opportunity to observe the person rated), (४) निर्णायकों की विलक्षणताएँ (Rater's idiosyncrasies) आदि।

(१) **लक्षण की अस्पष्टता**—कभी-कभी अनेक अमूर्त लक्षणों जैसे 'नागरिकता' के बारे में मूल्यांकन करना पड़ता है। पर इनका अर्थ स्पष्ट नहीं दिया रहता। इसी प्रकार 'व्यक्तित्व,' 'पर्यवेक्षण योग्यता', 'मानसिक लचीलापन' आदि शब्द हैं। अलग-अलग व्यक्ति इनसे अलग-अलग अर्थ समझते हैं। अतः उनका निर्णय भी अलग-अलग हो सकता है। आवश्यक यह है कि इन्हें पहले परिभाषित कर लिया जाए।

(२) **लक्षण की प्रच्छन्नता**--मूल्यांकन उस लक्षण के बारे में अधिक

औचित्य से किया जा सकता है, जिसे अवलोकित किया जा सके या जिसकी प्रतीति हो सके, जैसे 'आकर्षक आवाज' ! पर कुछ लक्षण जैसे 'असुरक्षा की भावना', 'मानसिक द्वन्द्व', 'अकेलापन' ऐसे हैं जिनका व्यक्ति स्वयं तो अनुभव करता है पर निर्णायक इनका अवलोकन नहीं कर सकता । इन प्रच्छन्न लक्षणों पर निर्णय देना आसान नहीं है ।

(३) **व्यक्ति का अवलोकन करने का अवसर**—मूल्यांकित किए जाने वाले व्यक्ति का जब तक ठीक से अवलोकन न किया जाए, मूल्यांकन ढंग से नहीं हो पाता । अनेक परिस्थितियों में यह सम्भव नहीं है, जैसे स्कूल में किसी अध्यापक को, जो ३-४ कक्षाएँ पढ़ाता है, एक साथ अनेक विद्यार्थियों का मूल्यांकन करना पड़ता है, जिनके कि वह केवल भौतिक सम्पर्क में ही आया है । इससे वैधता कम होती है ।

(४) **निर्णायकों की विलक्षणताएँ**—निर्णायकों की पसन्द, नापसन्द, रुचियाँ, अनुभव का भण्डार, योग्यता, व्यक्तित्व के लक्षण, गुणों का सम्बोधन करने की क्षमता आदि अलग-अलग होने से उनकी निर्णय-शक्ति भी अलग-अलग होती है । एक कम्पनी के मालिक के अनुसार तड़क-भड़क से रहना क्रिया-शीलता का प्रतीक हो सकता है, दूसरे के लिए केवल अधिक कार्य करना ।

वर्गक्रम विधि का उपयोग
(Uses of Ratings)

(१) **प्रशासन में सहायता**—यदि किसी उद्योग या संस्था में कार्य करने वाले व्यक्तियों के सम्बन्ध में किए गये निर्णयों का वस्तुनिष्ठ एवं स्थायी लेखा रखा जाए तो इससे भविष्य में उनकी नियुक्ति, बदली, पदोन्नति आदि के बारे में बुद्धिमत्तापूर्ण निर्णय करने में सहायता मिल सकती है । इन वर्गक्रमांकित निर्णयों के आधार पर किए गए निर्णय अधिक वस्तुनिष्ठ एवं उपयोगी होंगे ।

(२) **निर्णय का विश्लेषणात्मक होना**—निर्णय-विधि के बिना किसी व्यक्ति के बारे में हमारी राय केवल सामान्य प्रभाव (Ceneral impression) पर निर्भर करती है । किन्तु वर्गक्रम विधि से अनेक अलग-अलग लक्षणों या गुणों के सम्बन्ध में राय का विश्लेषण सम्भव है, क्योंकि इसमें निर्णायक एक समय में एक गुण या लक्षण पर ध्यान केन्द्रित कर सकता है ।

(३) **वर्गक्रम विधि में निर्णीत किया जाने वाला व्यक्ति भी प्रेरित रहता है**—यदि किसी ऐसे व्यक्ति को, जिसके बारे में निर्णय किया गया है, निर्णय के परिणाम बता दिए जाएँ और यदि उसे विश्वास हो जाए कि निर्णय

ईमानदारी से किया गया है और यह अनेक व्यक्तियों के निर्णय पर आधारित है, तो उसे अपनी कमियों का आभास हो जाएगा और वह स्वयं में सुधार कर सकेगा।

(४) **नियमित वर्गक्रम से निर्णय प्रतिनिधिकारी हो जाते हैं**—अतः यह आवश्यक है कि वर्गक्रम आपात (Emrgency) में न किए जाएँ और न पक्षपाती वस्तुस्थित में, क्योंकि इस प्रकार किए गए निर्णय व्यक्ति के प्रारूपिक व्यवहार (Typical behaviour) के प्रतिनिधिकारी नहीं होंगे। अतः वर्गक्रम की एक सुव्यवस्थित योजना बनानी चाहिए।

(५) **वर्गक्रम विधि निर्णायकों को व्यक्तियों के बारे में अच्छा निर्णय देने में सहायक होती है**—निर्णायक अनुभव करते-करते यह जान जाता है कि कौन से गुण वाञ्छनीय हैं। अतः वह अवाञ्छनीय गुणों के प्रति संवेदनशील हो जाता है। वांच्छनीय गुण क्या हैं, यह जानकर वह व्यक्तियों को समझने में अधिक समर्थ होता है और कालान्तर में इस योग्यता का प्रयोग उनमें श्रेष्ठतर मनोबल लाने में प्रयुक्त हो सकता है।

(६) **अन्वेषण एवं अनुसन्धान में उपयोग**—वर्गक्रम का उपयोग अनेक वस्तुनिष्ठ विधियों के वैधकरण में किया जाता है। दफ्तरों, स्कूलों एवं औद्योगिक संस्थानों में संचयित वर्गक्रम सम्बन्धी तथ्य अन्वेषण में महत्वपूर्ण तथ्य प्रदान करते हैं।

सोशियोग्राम
(Sociogram)

समूह की सामाजिक रचना ज्ञात करने के लिए यह एक उत्तम विधि है। इसके द्वारा समूह में नेतृत्वशील व्यक्तियों, गुटबन्दी आदि का ज्ञान सम्भव है। इस विधि का विकास सन् १९३४ में मुरेनो (Moreno) ने किया। यद्यपि इस विधि में कालान्तर में पर्याप्त परिवर्त्तन हो चुका है, पर इसमें प्रायः किसी समूह के सदस्यों से किसी विशेष गुण की दृष्टि से अपने साथियों का चुनाव करने को कहा जाता है। प्रत्येक सदस्य यह बताता है कि किसी विशिष्ट सामाजिक परिस्थिति या क्षेत्र में कौन व्यक्ति या साथी उसकी पहली, दूसरी एवं तीसरी पसन्द का होगा।

निस्संदेह जब व्यक्ति समूह में रहते या कार्य करते हैं, जैसे कि स्कूल या कॉलिज में, तो उनमें किसी न किसी प्रकार का सामाजिक सम्बन्ध स्थापित हो जाना अवश्यम्भावी है। कुछ व्यक्तियों में अत्यन्त घनिष्ठता या मित्रता हो जाती है एवं कुछ अन्य में भेद या सामाजिक दूरी। पर सामाजिक परिस्थितियाँ

इतनी विभिन्न होती हैं कि एक सामाजिक परिस्थिति में जिस व्यक्ति को सब चाहते हैं, किसी अन्य सामाजिक परिस्थिति में उसे सब त्याग भी सकते हैं। वाद-विवाद में जो विद्यार्थी अत्यन्त जनप्रिय हो, आवश्यक नहीं है कि क्रिकेट के खेल में भी उसकी उतनी ही प्रसिद्धि हो। सोशियोग्राम की विधि से किसी विशिष्ट क्षेत्र में समूह के सदस्यों के सामाजिक स्तर का पता चलता है। सर्वाधिक जनप्रिय व्यक्ति, सबसे कम जनप्रिय, नेता, परित्यक्त बालक आदि का पता लगाने में इससे अच्छी कोई विधि नहीं है।

सोशियोग्राम की रचना करने के लिए इस प्रकार के निर्देश दिए जा सकते हैं :—"हम एक खेल खेलने जा रहे हैं। इसके लिए हमें समूहों की रचना करनी है। इस उद्देश्य के लिए आप उन बालकों के नाम लिखिए जिनके साथ आप बैठना पसन्द करेंगे, काम करना चाहेंगे, एवं खेलना पसन्द करेंगे। आप किसी भी बालक का नाम लिख सकते हैं, चाहे वह यहाँ उपस्थित हो या नहीं।" इस प्रकार निर्देश देकर बालकों ने किन का चयन किया इस सम्बन्ध में तथ्य एकत्र कर लिए जाते हैं। इनके आधार पर प्रत्येक बालक का क्रमांकन कर लेते हैं और तब सोशियोग्राम बनाते हैं। सर्वाधिक जनप्रिय बालक केन्द्र में आता है एवं परित्यक्त बालक हासिये पर। सोशियोग्राम निम्न प्रकार का हो सकता है :—

सोशियोग्राम
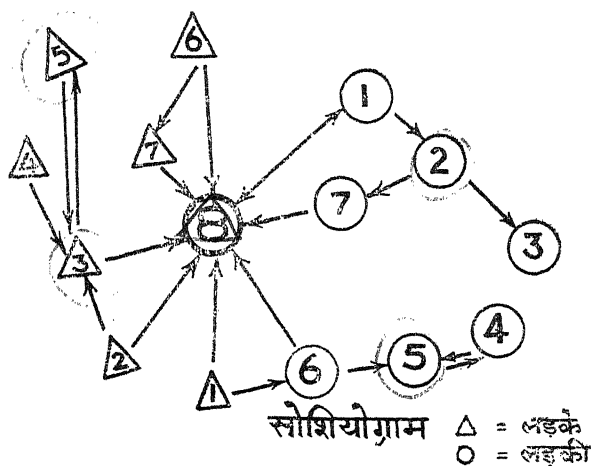
ऊपर के चित्र में साथ खेलने के लिए किस प्रकार विद्यार्थियों ने साथी का चयन किया, इसका चित्रण है। आठवीं लड़की कक्षा का आकर्षण केन्द्र है। सब उसे चाहते हैं। पर चौथी लड़की एवं प्रथम लड़का परित्यक्त हैं। लड़कों में

तीसरा लड़का आकर्षण केन्द्र है पर वह भी आठवीं लड़की के प्रति आकर्षित है। लड़का नं० ५, २, एवं लड़कियाँ नं० ३, ४, आदि उपेक्षित हैं।

लड़कों और लड़कियों में भेद करने के लिए उन्हें अलग-अलग क्रमशः त्रिभुज एवं वृत्त से दिखाया गया है। यदि समूह बड़ा हो तो सोशियोग्राम अत्यन्त जटिल हो जाता है। अतः स्पष्ट प्रतीकों का प्रयोग करना आवश्यक है।

: २५ :

प्रक्षेपण-विधियाँ

प्रक्षेपण का अर्थ

'प्रक्षेपण' शब्द की व्याख्या अनेक प्रकार से की गई है। **हीलर, ब्रॉनर** एवं **बॉवर्स**[1] के अनुसार प्रक्षेपण सुखवाद सिद्धान्त के अन्तर्गत एक सुरक्षात्मक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से अहम् बाह्य जगत में अचेतन इच्छाओं एवं विचारों को फेंकता है जिन्हें यदि चेतन में प्रवेश करने दिया जाए तो वे अहम् के लिए दुःखदायी हों। **वारेन्**[2] के अनुसार यह बाह्य जगत में दमित मानसिक प्रक्रियाओं का आरोपण करने की प्रवृत्ति है, जिन्हें व्यक्तिगत स्रोत से उत्पन्न नहीं माना जाता एवं परिणामस्वरूप इन प्रक्रियाओं की विषय-वस्तु को बाह्य जगत में अनुभव करते हैं। **फ्रायड** के अनुसार प्रक्षेपण में निम्न बातें मुख्य हैं :—

1. Healy, Bronner and Bowers, "a defensive process under the sway of the pleasure prinriple whereby the ego thrusts forth on the external world unconscious wishes and ideas which if allowed to penetrate into consciousness, would be painful to the ego.
2. Warren "tendency to ascribe to the external world repressed mantal processes which are not recognised as being of personal origin and as a result of which the content of these processes is experienced as an outer perception."

१. अशुद्ध बोध, अर्थात् रोगी दूसरे व्यक्ति के बारे में ऐसी बात का विश्वास कर लेता है जो वास्तव में सत्य नहीं है और जो निरीक्षित तथ्यों पर आधारित नहीं है।
२. प्रक्षेपक या प्रयोज्य प्रक्षेपित वस्तु में ऐसी प्रवृत्ति आरोपित करता है जो या तो स्वयं अपने प्रति हो या किसी अन्य वस्तु के प्रति।
३. यह आरोपित प्रवृत्ति प्रक्षेपक, अर्थात् प्रयोज्य के स्वयं के व्यक्तित्व का कोई पक्ष होती है।
४. आरोपित बात प्रक्षेपक को स्वीकार-योग्य नहीं होती। अतः इसका दमन होता है। प्रयोज्य स्वयं अपने आप में इसकी सत्ता से अवगत नहीं होता।
५. प्रक्षेपी प्रक्रिया का अर्थ अपराध की भावना से मुक्ति पाना या आत्म-सम्मान बनाए रखना होता है।

इस प्रकार फ्रायड ने प्रक्षेपण को अस्वीकृत प्रवृत्तियों के दमन तक सीमित रखा है। पर प्रक्षेपण विधियों में इस शब्द को व्यापक अर्थों में प्रयुक्त करते हैं। स्वीकार-योग्य-दमन न की हुई एवं चेतन प्रवृत्तियाँ भी इसके अन्तर्गत आ जाती हैं। मुरे (Murray) एवं अन्य व्यक्तियों ने इसी अर्थ में 'प्रक्षेपण' शब्द प्रयुक्त किया है।

प्रक्षेपण परीक्षणों की प्रकृति

प्रक्षेपण परीक्षणों से व्यक्तित्व का मापन करते हैं। इससे दिए हुए तथ्य का बोध करने में क्या अशुद्धि या परिवर्त्तन हुआ, इसका अध्ययन करते हैं। प्रत्यक्षीकरण में रूपान्तर के कई कारण हैं: (१) सांवेदनिक क्षमता एवं बौद्धिक योग्यता, (२) स्मरण एवं अनुभवधारण की क्षमता, तथा (३) पूर्व संवेगात्मक अनुभव एवं वर्त्तमान व्यक्तित्व रचना। प्रक्षेपण विधि में बाद के दोनों कारणों से जो वस्तुस्थिति का रूपान्तर होता है, उसका अध्ययन करते हैं। इसी कारण मुरे ने अपने परीक्षण का नाम 'बोध परीक्षण' (Apperception Test) रखा है।

संवेगात्मक कारणों से वस्तुस्थिति का जो रूपान्तर होता है उसके निम्न प्रतिकारक हो सकते हैं :—

१. परिवर्त्तनशील एवं संवेगात्मक अवस्थाएँ।
२. चेतन व्यक्तित्व में समन्वित स्थायी गुण।
३. स्थायी गुण जिन्हें व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का भाग बनाने में असफल रहा है और परिणामस्वरूप जो अभी अचेतन या उपचेतन में हैं।

व्यक्तित्व की ये अवस्थाएँ अनेक प्रकार से बोध का रूपान्तर करती हैं। जैसे व्यक्ति यह सोच सकता है कि अन्य व्यक्ति वही अनुभव करते हैं जो वह कर रहा है, या वह अपनी इच्छाओं का आरोपण कर सकता है। या फिर अपने मन की परिस्थितियों के अनुसार ही प्रक्षेपक दी हुई वस्तुओं का निर्वचन करता है। उदास होने पर हमें अन्य व्यक्तियों का स्वभाव उतना मित्रतापूर्ण नहीं लगता।

प्रक्षेपण विधियों की विश्वसनीयता एवं वैधता

विश्वसनीयता—

परीक्षण की विश्वसनीयता का अर्थ है वह संगति जिसके साथ परीक्षण सूचना प्रदान करता है; अर्थात् बार-बार प्रयुक्त करने पर इसके परिणामों में अन्तर तो नहीं है। उन परीक्षणों की विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए, जिनमें परिमाणात्मक फलांक आते हैं, अनेक विधियाँ हैं। पर प्रक्षेपण परीक्षणों में गुणात्मक परिमाण होते हैं। अत: इन सांख्यिकीय विधियों को प्रयोग नहीं कर सकते। प्रक्षेपण परीक्षणों की विश्वसनीयता ज्ञात करने के दो मुख्य तरीके हैं :—(१) मिलान विधि (Matching Method), (२) संकेत फलांक विधि (Coding and Rating Approach)। मिलान विधि में उसी प्रयोज्य द्वारा किये गए दो रूपान्तरों का मिलान करते हैं। यदि निर्णायकों के अनुसार इनमें समानता हो तो विश्वसनीयता उच्च मानी जाती है। संकेत-फलांक विधि में प्रयोज्य की प्रतिक्रियाओं से कुछ संकेत लिए जाते हैं। इन्हें वर्गीकृत कर लेते हैं। तत्पश्चात् इन्हें परिमाणात्मक फलांक दे देते हैं। इतना कर लेने पर अब परीक्षण-पुनर्परीक्षण, अर्द्ध-विच्छेद विधि या समानान्तर प्रतिरूप विधि से विश्वसनीयता ज्ञात करते हैं। परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि में कठिनाई यह है कि पुनर्परीक्षण में व्यक्तित्व में परिवर्त्तन सम्भव हैं। अत: फलांकों में परिवर्त्तन हो जाता है। अर्द्ध-विच्छेद विधि तब उपयोगी है जब समानान्तर प्रतिरूप उपलब्ध न हों। उदाहरण के लिए रोशा कार्डों को दो भागों में बाँट कर इनमें प्राप्त फलांकों का सह-सम्बन्ध ज्ञात कर सकते हैं। समानान्तर प्रतिरूप विधि केवल कुछ ही परिस्थितियों में उपयुक्त हो सकती है। उदाहरण के लिए हस्त-लेखन परीक्षण में प्रयोज्य की लिखाई के दो न्यादर्श लिए जा सकते हैं। पर 'थैमाटिक अपरसैप्शन' या 'रोशा' परीक्षण में यह सम्भव नहीं है, क्योंकि विश्वास के साथ यह नहीं कहा जा सकता कि दो उद्दीपक वस्तुएँ समान हैं।

वैधता—

वैधता का अर्थ है कि परीक्षण मापित आयाम (Dimension) के बारे में सही सूचना दे सके। परीक्षण की वैधता ज्ञात करने से पूर्व किस सम्बन्ध में वैधता ज्ञात करनी है यह, अर्थात् वैधता का लक्ष्य, निश्चित करना चाहिए। उदाहरण के लिए हमारा लक्ष्य यह जानना हो सकता है कि परीक्षण से व्यक्तित्व गुण का जिस प्रकार मापन हुआ है क्या वास्तव में परीक्षार्थी व्यवहार में वही गुण प्रकट करता है। जीवन की परिस्थितियों में स्वयं को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त करने वाले व्यक्ति का गुण 'रोशा परीक्षण' से स्पष्ट परीक्षित हो जाता है। पर वैधता ज्ञात करने का लक्ष्य अत्यन्त सामान्य भी हो सकता है, जैसे किस सीमा तक परीक्षण आधार-भूत व्यक्तित्व का मापन करता है।

रोज़नवीग चित्र-नैराश्य अध्ययन
(Rosenzweig Picture Frustration Study)

चित्र-नैराश्य अध्ययन विधि का सूत्रपात ही सम्भवतया रोजनवीग से हुआ। इन्होंने दमन एवं नैराश्य सम्बन्धी अध्ययन के निष्कर्ष में एक लेख में प्रकाशित किये। यह विधि शब्द-साहचर्य विधि एवं थैमाटिक बोध विधि के मध्य में है और एक नियन्त्रित प्रक्षेपण विधि है। १९४४ में प्रौढ़ों के लिए परीक्षण प्रकाशित हुआ और १९४८ में इसका परिवर्द्धन हुआ। तभी बालकों के लिए भी परीक्षण निकाला। यह अत्यन्त सफल रहा। इसमें कार्टून की तरह बने २४ चित्र हैं जिनमें किसी न किसी नैराश्य परिस्थिति का चित्रण होता है। प्रयोज्य इसके बारे में अपने विचार प्रकट करता है। इस विधि का प्रयोग व्यक्तिगत एवं सामूहिक दोनों प्रकार से सम्भव है। अब इस अध्ययन के सम्बन्ध में अनेक अन्य लेख एवं शोध-निबन्ध प्रकाशित हो चुके हैं।

डा० उदय-पारिख ने इसका भारतीयकरण किया है। मूल परिस्थितियों को ज्यों का त्यों रख लिया गया है। इसका प्रथम संस्करण 'मानसायन'[1] नामक संस्था से सन् १९५९ में प्रकाशित हुआ। इसे ४ से लेकर १३ वर्ष की अवस्था के १००० बालकों पर प्रमापीकृत किया गया। इसमें भी कार्टून जैसे २४ चित्र हैं। विश्वसनीयता गुणांक, जैसा कि विवरण पुस्तिका से ज्ञात होता है, उच्च है। वैधता ज्ञात करने के लिए अनेक विधियों का प्रयोग किया गया, जैसे फलांकों की तुलना, अध्यापकों द्वारा किया गया निर्णय आदि। प्रशासन में लगभग २० मिनट लगते हैं। सामूहिक परीक्षण ९ वर्ष या अधिक आयु के बालकों के

1. Mansayan, 32 Faiz Bazar, Delhi.

लिए अधिक उपयुक्त है, पर व्यक्तिगत परीक्षण कम आयु के बालकों पर भी सम्भव है।

प्रसंगात्मक बोध-परीक्षण
(Thematic Apperception Test--T. A. T.)

प्रसंगात्मक बोध-परीक्षणों में कुछ चित्र प्रस्तुत किए जाते हैं एवं विद्यार्थी प्रसंग या कथा की रचना करके इनका निर्वचन करता है। अंग्रेजी के शब्द 'थैमामिट' का अर्थ है 'थीम' या प्रसंग से सम्बन्धित। चित्र में क्या घटना घट रही है, दृश्य किस कारण है, इसका क्या परिणाम निकलेगा, ये सभी बातें कथानक में आ सकती हैं। कथानक में व्यक्त प्रतिक्रियाओं से प्रयोज्य के अनुभव, उसके मन के संघर्ष, इच्छाओं, अभिवृत्तियों आदि पर प्रकाश पड़ता है। वास्तव में व्यक्ति चित्रित दृश्य में अपना प्रक्षेपण करता है। इस प्रकार का सर्वाधिक प्रमुख बोध-परीक्षण श्री मुरे (Murray) का है जो १९३८ में प्रकाशित हुआ। हम इसका संक्षेप में वर्णन करेंगे।

वर्णन—

इसमें २० चित्र हैं। यह मुख्यतः प्रौढ़ व्यक्तित्व के अध्ययन के लिए बना था। चित्रों के अतिरिक्त एक साधारण कार्ड भी होता है। चित्र जीवन की साधारण घटनाओं से सम्बन्धित होते हैं। कुछ चित्र बालकों के लिए भी होते हैं। पर बालक-बालिकाओं, पुरुष-स्त्री सबके चित्र अलग-अलग होते हैं। अतः इन चित्रों पर संकेतक चिन्ह बने होते हैं।[1] पूरे परीक्षण को लगभग एक-एक घण्टा व्यतीत करके दो अवसरों पर प्रयुक्त करना पड़ता है। संक्षिप्त परीक्षण का भी प्रयोग सम्भव है। एक-एक करके चित्र दिखाते हैं एवं निम्न निर्देश देते हैं—

"मैं तुम्हें कुछ चित्र दिखाऊँगा। इनके आधार पर तुम्हें प्रत्येक चित्र पर अलग-अलग कथानक बनाना है। इसमें यह बताना है कि चित्र की घटना का कारण क्या है, इस समय चित्र में क्या घटना घट रही है, एवं इसका परिणाम क्या होगा।"

कथानक बनाने में परीक्षार्थी कितना समय लगाए, इसका कोई बन्धन नहीं है। तथापि प्रत्येक कथानक में पाँच मिनट से अधिक समय लगाने पर परीक्षार्थी से इसका निष्कर्ष पूछ लिया जाता है। प्रत्येक चित्र पर आधारित कथानक

---

1. BG = Boys and Girls, BM = Boys—Man; GF = Girls—Female.

को अलग-अलग अक्षरशः लिख लेते हैं। परीक्षा के अन्त में यह भी पूछ लेते हैं कि परीक्षार्थी के अनुसार सबसे अच्छा एवं सबसे बुरा कथानक कौन-सा है। चार-पाँच दिन पश्चात् परीक्षार्थी से पुनः मिलकर कथानकों के सम्बन्ध में अन्य सम्बन्धित सूचनाएँ प्राप्त करना सम्भव है। परीक्षा के समय का परीक्षार्थी का व्यवहार, उसका प्रतिक्रिया करने का ढंग, सतर्कता, संदेहास्पद होना, सभी बातों का लेखा ले लेते हैं। परीक्षार्थी के हाव-भाव, भंगिमा, मुखाभिवृत्तियों पर भी ध्यान रखा जाता है।

कथानकों का विश्लेषण एवं निर्वचन—

'प्रसंगात्मक बोध-परीक्षण' को प्रयुक्त करने के बाद कथानकों का विश्लेषण एवं निर्वचन किया जाता है। विश्लेषण करने के अनेक ढंग हैं। पर सामान्यतः मुख्य बातों की ओर ध्यान दिया जाता है। कथानक में निराशा की प्रवृत्ति, योनि सम्बन्धी बातों से लगाव या अन्य किसी बात का पता चल सकता है। परीक्षार्थी की शैली एवं उसने सम्पूर्ण चित्र को आधार मानकर कथानक बनाया है या इसके किसी अंश पर, इन बातों का भी ध्यान रखते हैं। निर्वचन करने वाला एक-एक कथानक को देखता है एवं शैली, कथानक तथा प्रतीकों के आधार पर मुख्य परिकल्पना बनाता है।

मुरे (Murray), टामकिन्स (Tomkins) तथा बैलक (Bellak) ने अपने-अपने सिद्धान्तों के अनुसार विश्लेषण की विभिन्न विधियाँ अपनायी हैं। पर सभी का विश्लेषण एवं मूल्यांकन गुणात्मक है। वस्तुगत एवं परिमाणात्मक फलांकन विधियों का भी विकास हुआ है। श्नीडमैन[1] ने सन् १९५१ में फलांकन की पन्द्रह विधियों का वर्णन किया है। ये विधियाँ परिमाणात्मक हैं एवं विभिन्न मनोचिकित्सकों द्वारा प्रयुक्त की गई हैं। हैनरी[2] ने १९५६ में प्रसंगात्मक बोध-परीक्षणों का स्वैरकल्पना (Fantasy) के विश्लेषण में प्रयोग किया।

कथानकों के विश्लेषण एवं निर्वचन के आधार पर जो निष्कर्ष निकाले जाते हैं, वे अन्तिम नहीं होते। अन्य आधारों पर निष्कर्ष निकाल कर तुलना की जा सकती है। या कई निर्वाचकों द्वारा की गई व्याख्याओं की तुलना की जा सकती है। प्रसंगात्मक बोध-परीक्षणों के फलांकों का काफी

1. Shneidman, E. S. (ed.), *Thematic Test Analysis*, New-York, Grune and Stratton, 1951.
2. Henry W. E., *The Analysis of Fantasy*, Wiley & Co., New York, 1956.

निदानात्मक उपयोग है। आक्रमणात्मक प्रवृत्ति, दमन, अवसाद एवं अनेक व्यक्तित्व गुणों तथा सामान्य एवं असामान्य मनोदशाओं की ओर इससे संकेत मिलता है।

विश्वसनीयता एवं वैधता—

प्रसंगात्मक बोध-परीक्षणों का सहसम्बन्ध गुणांक ·३ से लेकर ·९ तक ज्ञात हुआ है। टामकिन्स के एक अध्ययन में २ माह के अभ्यन्तर पर पुनर्परीक्षण करने पर सहसम्बन्ध गुणांक ·८ था जबकि ८ माह के अन्तर पर ·६; एवं १० माह का अभ्यन्तर होने पर ·५। अधिक अभ्यन्तर पर सहम्बन्ध गुणांक कम आने का कारण यह है कि इस अन्तर पर व्यक्ति की आवश्यकताओं एवं इच्छाओं में परिवर्तन सम्भव है। अतः प्राप्त फलांकों में संगति नहीं रहती।

जहाँ तक वैधता का प्रश्न है, प्रसंगात्मक बोध परीक्षणों एवं रोशा परीक्षण के परिणमों में पर्याप्त समानता मिली है। इसके निष्कर्षों को वास्तविक जगत में व्यक्ति के व्यवहार का निरीक्षण करके आँका गया है। इस आधार पर टी० ए० टी० द्वारा किया गया मूल्यांकन सही बैठता है।

बालकों का बोध-परीक्षण

(Children Apperception Test—CAT)

प्रसंगात्मक बोध-परीक्षण प्रौढ़ों के लिए उपयुक्त है, पर यह परीक्षण बालकों के लिए बना है। बालकों के बोध परीक्षण का विचार सर्वप्रथम डा० अर्न्सट क्रिस (Dr. Ernst Kris) ने प्रस्तुत किया। तदनन्तर ल्योपोल्ड बैलक (Leopold Bellak) ने १९४८ में परीक्षण प्रकाशित किया। इसमें कुल १० चित्र होते हैं जो सब किसी न किसी जानवर के होते हैं। पर इनमें जानवरों को भी मानवीय व्यवहार करते हुए दिखाया जाता है। ये ३ वर्ष से लेकर १० वर्ष के बालकों के लिए उपयुक्त हैं। इनके माध्यम से बालकों की अनेक समस्यायों जैसे पारस्परिक या भाई-बहिन की प्रतियोगिता, संघर्ष आदि के बारे में सूचना प्राप्त की जाती है।

रोशा परीक्षण

(Rorschach Ink-Blot Test)

रोशा परीक्षण विधि का प्रारम्भ स्विस मनोवैज्ञानिक हरमन रोशा (Hermann Rorschach) ने किया। उसने वस्तु-प्रत्यक्षीकरण के प्रयोगात्मक अध्ययन में धब्बों को प्रयुक्त किया और इस परिणाम पर पहुँचा कि विभिन्न

प्रकार के रोगी विभिन्न विधियों से धब्बों के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं। उसकी नैदानिक विधि का प्रथम प्रकाशन १९२१ में हुआ। तब से इस सम्बन्ध में व्यापक शोध-कार्य हो चुका है। फलांकन विधि में भी सुधार हुआ है। विशिष्ट रूप से बैक तथा क्लोप्फर ने फलांक विधि में सुधार की योजनाएँ प्रस्तुत की हैं।

परीक्षण का वर्णन एवं प्रशासन

इस परीक्षण में दस स्याही के धब्बे छपे कार्ड दिया जाते हैं। इनका रूप अनियमित होता है। अतः इनकी व्याख्या अलग-अलग परीक्षार्थी अलग-अलग विधि से कर सकते हैं। परीक्षार्थी से पूछते हैं कि वह इन धब्बों में क्या देखता है। धब्बे अनेक रंगों के हैं, जैसे गहरे लाल, काले एवं चमकीले भूरे। इनके प्रति संवेगात्मक प्रतिक्रिया करना सम्भव है। इनके रूप एवं आकार से विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का बोध हो सकता है, जैसे दैत्य, विशालकाय पशु, लिंगेन्द्रिय आदि।

कार्डों को एक-एक करके क्रम से प्रदर्शित करते हैं। परीक्षार्थी से पूछते हैं कि कार्ड किस प्रकार का प्रतीत होता है एवं यह क्या हो सकता है। समय का बन्धन नहीं होता। परीक्षक प्रयोज्य के उत्तरों को अक्षरशः लिखता जाता है। प्रत्येक कार्ड के उत्तर में कितना समय लगा, उत्तर देने का ढंग क्या था, परीक्षार्थी का व्यवहार आदि बातें भी लिख ली जाती हैं। पूछताछ करके परीक्षार्थी के बारे में अन्य बातों का भी स्पष्टीकरण कर लेते हैं।

रोशा फलांकन विधि—

फलांकन करने के तीन मुख्य आधार हैं—

(१) **निरीक्षण क्षेत्र** (Location or Area)—अर्थात् कुल देखा हुआ क्षेत्र; धब्बे का वह भाग जिसका कि परीक्षार्थी अवलोकन करता है। वह सम्पूर्ण धब्बा (Whole blot—W) देखता है, उपभाग (Sub-division—D) देखता है या असाधारण विस्तार (Unusual Detail—Dd)।

(२) **निर्धारक** (Determinants)—अर्थात् स्याही के धब्बे की विशेषताएँ जैसे आकार एवं रंग। परीक्षार्थी गति (Movement—M) देखता है या उसकी प्रतिक्रिया रूप एवं रंग इन दोनों पर निर्भर है (Colour and Form—CF).

(३) **विषय-वस्तु** (Content)—इसका अर्थ है कि प्रतिक्रिया मनुष्य, पौधे, पशु, दृश्य, किस बात पर निर्भर है; वह मानवीय (Human—H) है, या मानव-अंश (Human-division—Hd) या कपड़े (Clothing—Cg) आदि।

Rorschach Ink-Blot

उदाहरण के लिए प्रयोज्य की प्रतिक्रिया कुछ इस प्रकार की हो सकती है : 'दो छोटे लड़के', 'पुरुषेन्द्रिय', 'बिगुल बजाती हुई बालिकाएँ' आदि । इनके निर्वचन के लिए मानक एकत्र किए गए हैं । परीक्षण की विधि का भी प्रमापीकरण किया गया है ।

निर्वचन एवं व्याख्या—

प्रतिक्रियाओं से परीक्षार्थी के बौद्धिक स्तर एवं संवेगात्मक प्रकृति का पता चलता है । यह भी ज्ञात होता है कि उसका अपनी संवेगात्मक प्रतिक्रियाओं पर कितना नियन्त्रण है । विस्तृत न्यादर्श से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर फलांकों की विवेचना की जाती है । गति प्रक्रियाओं से कल्पना एवं रचनात्मक प्रवृत्ति का आभास मिलता है । रंग प्रतिक्रियाएँ बाह्य उद्दीपकों के प्रति संवेगात्मकता प्रकट करती हैं । स्वयं रोशा[1] के अनुसार गति प्रतिक्रियाएँ बौद्धिक व्यक्तित्व की ओर संकेत करती हैं, जिनका जीवन बाह्य संसार में केन्द्रित न होकर अपने अन्तर्मन में रहता है । बैरन[2] के अनुसार गति प्रतिक्रियाएँ क्रियात्मकता, रुचि-व्यापकता, अन्तर्दर्शनात्मक प्रवृत्ति एवं विचारात्मकता की द्योतक हैं । क्लोप्फर के अनुसार गति प्रतिक्रिया बौद्धिकता की ओर संकेत करती है । इसी प्रकार अन्य फलांकों की भी व्यापक अनुभव एवं प्रयोग के आधार पर विवेचना की गई है । रूप का स्पष्ट अवलोकन करना बौद्धिक क्रिया पर नियंत्रण बताता है, एवं सम्पूर्ण धब्बा देखना बौद्धिक संगठन ।

अन्तिम विश्लेषण करने में परीक्षार्थी से सम्बन्धित अन्य तथ्यों को भी ध्यान में रखते हैं, जैसे पारिवारिक पृष्ठभूमि, शिक्षा, प्रशिक्षण, स्वास्थ्य, गत जीवन, एवं अन्य परीक्षकों का निर्णय । विवेचना करने में परीक्षार्थी या निर्वचक की योग्यता, प्रशिक्षण, एवं अन्तर्दृष्टि का विशेष महत्व है ।

विश्वसनीयता एवं वैधता—

रोशा परीक्षण की **विश्वसनीयता** निश्चित रूप से ज्ञात नहीं की जा सकी है । तथापि तीन विधियों को प्रयुक्त करके अनेक निष्कर्ष निकाले गए हैं । ये

---

1. Rorschach, Hermann. *Psychodiagnostics*, (frans.) 2nd edition, Paul Lemkan Bernard Kronenberg, Huber, 1942. p. 7.
2. Barron, Frank. Threshold for the Perception of Human Movement in Inkblot, *J. Consult. Psychol*, 1955, 19, pp. 33-38.

हैं—(१) अर्द्ध-विच्छेद विधि, (२) परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि, (३) अनेक निर्णायकों द्वारा दिए गए अंकों की तुलना। अर्द्ध-विच्छेद विधि से सहसम्बन्ध गुणांक ·६ से ·६ तक प्राप्त हुआ है; परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि से भी लगभग इतना ही, एवं अन्तिम विधि से भी यह काफी उच्च है—·८७।

रोशा परीक्षण की **वैधता** ज्ञात करने के लिए प्राय: दो विधियों का प्रयोग किया है—(१) रोशा-परीक्षण के परिणामों की अन्य परीक्षा-परिणामों से तुलना, (२) मानसिक रोगों से ग्रस्त व्यक्तियों पर परीक्षण प्रयुक्त करके परिणामों की उन व्यक्ति के परीक्षण परिणामों से तुलना करना जिनके बारे में पूर्व ज्ञान हो। इनसे ज्ञात होता है कि ऐसा परीक्षण पर्याप्त वैध एवं प्रामाणिक है। ज्ञात हुआ है कि रोशा परीक्षण की चिकित्सा-सिद्धान्त से संगति है। रोशा से व्यक्तित्व के बारे में जो संकेत मिलते हैं, वास्तविक व्यवहार के साथ उनका काफी सम्बन्ध है। पर रोशा सिद्धान्त में अनेक त्रुटियाँ भी हैं।

रोशा परीक्षण का उपयोग—

रोशा-परीक्षण व्यक्तिगत रूप से प्रशासित किया जाता है। पर इसका सामूहिक परीक्षण भी सम्भव है। इससे औपचारिक क्षेत्र में मानसिक रोगों का निदान करना सम्भव है एवं व्यक्तित्व के अनेक गुणों एवं सामान्य प्रवृत्तियों का पता लगाया जा सकता है। इसी कारण चिकित्सा क्षेत्र में इसका व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है। तथापि अनेक चिकित्साविज्ञों ने इस बात की आलोचना की है एवं इसकी उपयोगिता में अविश्वास प्रकट किया है। रोशा की प्रसिद्धि का एक मुख्य कारण यह है कि इसमें व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों का जो वर्णन मिलता है वह चिकित्साविदों के लिए बड़े काम का है। यह बुद्धि-परीक्षणों का महत्वपूर्ण पूरक है। युद्ध-काल में अमरीका के मानसिक अस्पतालों में प्राय: इसे प्रयुक्त करते थे। अत: अनेक डाक्टरों एवं अन्य व्यक्तियों को इसके प्रशासन में प्रशिक्षण दिया गया था।

शब्द-साहचर्य विधि
(Word-Association Method)

शब्द-साहचर्य विधि का विकास—

शब्द-साहचर्य विधि का प्रथम वैज्ञानिक प्रयोग **गाल्टन** ने सन् १८७९ में किया। गाल्टन से पूर्व भी साहचर्य सम्बंधी अध्ययन हुए थे, एवं साहचर्य के अनेक अमुख एवं गौण नियमों का पता चला था। परंतु गाल्टन ने साहचर्य के परिमाणात्मक अध्ययन किए। उसने ७५ शब्दों की

एक सूची बनाई एवं स्वयं अपने को प्रयोज्य मानकर साहचर्य शब्दों को स्मरण किया। कुछ परिस्थितियों में उसे शब्दों के स्थान पर मानसिक चित्रों एवं प्रतिमाओं का स्मरण होता था। साहचर्य काल के मापन के लिए उसने क्रोनोमीटर का प्रयोग किया। तदनन्तर गाल्टन ने इन साहचर्य शब्दों का विश्लेषण किया और इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि अनेक प्रतिक्रियात्मक साहचर्य शब्दों का स्रोत बाल्यकाल या किशोरावस्था थी। इससे पता चला कि भावी व्यक्तित्व के विकास में बाल्यकाल एवं किशोरावस्था का अत्यन्त महत्व है। सन् १८८० में लीपज़िग विश्वविद्यालय में **वुन्डट** ने भी इसी आधार पर साहचर्य सम्बन्धी प्रयोग किए।

वर्त्तमान शताब्दी के प्रारम्भ में **युंग** ने व्यक्तित्व ग्रन्थियों का पता लगाने के लिए साहचर्य विधि का प्रयोग किया। उसने १०० ऐसे शब्दों की सूची बनाई जिनसे संवेगात्मक ग्रन्थियों का पता चल सके। प्रतिक्रिया-शब्द एवं प्रतिक्रिया-काल दोनों को लिखा गया। परीक्षण के प्रशासन के पश्चात् इसका पुनरोत्पादन किया गया, जिसमें प्रयोज्य से मौलिक प्रतिक्रियाओं का प्रत्या-स्मरण करने को कहा जाता था। युंग ने प्रतिक्रिया शब्दों का निम्न में वर्गी-करण किया।

१. **अहंकेन्द्रित प्रतिक्रियाएँ** (Egocentric responses)—जैसे साह-चर्य शब्द संज्ञा होने पर प्रतिक्रिया शब्द उसका विशेषण; क्रिया शब्द की प्रति-क्रियास्वरूप कर्त्ता, कर्म या नामवाचक संज्ञा; प्रतिक्रिया का अभाव; व्यक्तिगत या भावात्मक प्रतिक्रिया।

२. **वर्गोपरि** (Super-ordinates)—उद्दीपक शब्द जिस वर्ग से सम्बन्ध रखता है उसे बताने वाला प्रतिक्रिया शब्द।

३. **विरोधी शब्द** (Contrast or opposite)।

४. **विविध** (Miscellaneous)—कार्य-कारण सम्बन्ध; मूल शब्द जो अहं-केन्द्रित न हो।

५. **स्वभाववश बोल** (Speech Habit)—ध्वन्यात्मक प्रतिक्रिया शब्द या सामान्ध मुहावरे।

युंग ने प्रतिक्रिया में व्यतीत काल पर पर्याप्त बल दिया। प्रतिक्रिया-काल अधिक होने का अर्थ, उसके अनुसार, यह है कि प्रतिक्रिया प्रयोज्य की भावना-ग्रन्थि से सम्बन्धित है। प्रतिक्रिया काल का बहुत कम होना भी संवेगात्मक असन्तुलन की ओर संकेत करता है।

युंग के अतिरिक्त एक महत्वपूर्ण अध्ययन **केन्ट-रोसानोव** (Kent-Rosanoff) का है। युंग की भाँति इन्होंने भी अपनी सूची में १०० शब्दों को प्रयुक्त किया। प्रतिक्रिया-काल को कोई महत्व नहीं दिया गया। प्रयोज्य ने

कितनी असाधारण प्रतिक्रियाएँ कीं, इस आधार पर संवेगात्मक असन्तुलन का मापन किया गया। केन्ट-रोसानोव ने १००० सामान्य एवं २४७ मनोग्रन्थियों से ग्रसित व्यक्तियों पर परीक्षण प्रयुक्त करके उनकी प्रतिक्रियाओं का आवृत्ति-वितरण किया। इनका मध्यमान निकालकर उन्होंने सामान्यीकरण निर्देशांक ज्ञात किए। उनके निष्कर्ष के अनुसार सामान्य प्रौढ़ों ने ९१.७ प्रतिशत साधारण, १.५ प्रतिशत संदेहजनक एवं ६.५ प्रतिशत व्यक्तिगत या असाधारण प्रतिक्रियाएँ कीं। दूसरी ओर मनोविकृतियों से पीड़ित व्यक्तियों ने ७०.७ प्रतिशत साधारण, २.५ प्रतिशत संदेहास्पद एवं २६.८ प्रतिशत असाधारण या व्यक्तिगत प्रतिक्रियाएँ कीं।

बाद में चलकर शब्द-साहचर्य विधि में अन्य अनेक सुधार हुए। निर्देश के द्वारा प्रतिक्रिया की प्रकृति एवं प्रतिक्रिया-काल के अध्ययन किए गए हैं। अवसाद या उत्तेजना की अवस्था में प्रतिक्रिया काल अधिक आया। कुछ अन्वेषकों ने बजाय बोलकर दृष्टिक उपस्थिति की। एक अन्य प्रयोग में उद्दीपक शब्द प्रस्तुत करने से पहले प्रयोज्य को भूखा रखा गया। ज्ञात हुआ कि भूख एवं भोजन से सम्बन्धित प्रतिक्रियाएँ बढ़ गईं।

रैपापोर्ट ने कुछ समय पूर्व शब्द-साहचर्य विधि से एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अध्ययन किया। प्रतिक्रिया की प्रविधि का तीन चरणों में विश्लेषण किया गया : पूर्वअभिज्ञा की स्थिति, विश्लेषणात्मक पक्ष एवं संश्लेषणात्मक पक्ष।[1] प्रतिक्रिया शब्दों का वर्गीकरण इस प्रकार किया गया—

१. **समीपस्थ प्रतिक्रियाएँ** (Close Reactions)—जैसे उद्दीपक शब्द का दुहराना, अनेक शब्दों में व्याख्या, उद्दीपक की प्रतिमा, कर्त्ता की प्रतिक्रिया-स्वरूप कर्म शब्दों का नामकरण आदि।

२. **दूरस्थ प्रतिक्रियाएँ** (Distant Reactions)—उद्दीपक एवं प्रतिक्रिया-शब्द में सम्बन्ध का पता न चलना या सम्बन्ध का अत्यन्त क्षीण होना, वर्गोपरि सामान्यीकरण।

३. **विषय-विश्लेषण** (Content Analysis)—असाधारण शब्द, कुछ विशिष्ट उद्दीपकों में असन्तुलन का एकत्र होना।

४. **पुनरोत्पादक क्षोभ** (Reproductive Disturbance)—विचार-संगठन की स्थिरता की ओर संकेत करने वाला शब्द।

५. **परम्परागत ग्रन्थियों के संकेतक** (Traditional Complex Indicators)—जैसे प्रतिक्रिया काल आदि।

---

1. Anticipation, Analytic Phase, Synthetic Phase.

शब्द-साहचर्य की प्रकृति एवं विश्लेषण—

शब्द-साहचर्य विधि में प्रयोज्य के समक्ष उद्दीपक शब्दों को प्रस्तुत करते हैं और उत्तर स्वरूप प्रयोज्य कुछ अन्य शब्दों से प्रतिक्रिया करता है। साहचर्य मूलतः दो प्रकार का होता है : (१) **मुक्त साहचर्य** (Free Association), एवं (२) **नियन्त्रित साहचर्य** (Controlled Association)। मुक्त साहचर्य में उद्दीपक शब्द की प्रतिक्रियास्वरूप प्रयोज्य जो शब्द मन में आता है उसे निःसंकोच कह देता है। किसी भी शब्द द्वारा प्रतिक्रिया करने में वह स्वतन्त्र होता है। किसी विशेष विधि द्वारा उसकी प्रतिक्रिया को सीमित नहीं करते। दूसरी ओर नियन्त्रित साहचर्य में प्रतिक्रिया का स्वरूप पहले से ही निश्चित होता है। उदाहरणस्वरूप प्रयोज्य को यह निर्देश दे सकते हैं कि वह प्रतिक्रिया में उद्दीपक का कोई अंश-शब्द कहे, जैसे स्कूल कहने पर विद्यार्थी।

शब्द-साहचर्य विधि से प्रयोज्य के व्यक्तित्व के बारे में तीन आधार पर संकेत मिल सकते हैं—(१) उद्दीपक शब्द के प्रति प्रयोज्य का रुख, जैसे शब्द का सुन न पाना आदि; (२) प्रयोज्य की उन प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण जिनसे प्रयोज्य संवेगात्मक क्षोभ प्रकट करता है; एवं (३) सामान्य मानकों की तुलना में असाधारण शब्दों का विश्लेषण।

साइमन्ड्स[1] के अनुसार सांवेगिक ग्रन्थियों के निम्न संकेतक हैं—

१. अधिक प्रतिक्रिया काल—**साइमन्ड्स** के अनुसार २.६ सैकिन्ड से अधिक प्रतिक्रिया काल महत्वपूर्ण है।

२. किसी भी प्रकार की प्रतिक्रिया करने में असमर्थता—इसके कई कारण हो सकते हैं, जैसे प्रतिक्रिया का निरोध, प्रतिक्रियाओं में संघर्ष।

३. अत्यन्त कम प्रतिक्रिया काल।

४. उद्दीपक शब्द की पुनरावृत्ति।

५. उद्दीपक शब्द को गलत समझना। पिछले शब्दों की प्रतिक्रियाओं के व्यर्थ स्मरण के कारण प्रयोज्य में उद्दीपक शब्द को न समझने की तीव्र भावना का होना सम्भव है।

६. उद्दीपक शब्द के दूसरी बार प्रस्तुत करने पर प्रतिक्रिया का अशुद्ध पुनरोत्पादन। यदि पुनरोत्पादित प्रतिक्रिया प्रथम प्रतिक्रिया से

1. Symonds, P. M. *Diagnosing Personality and Conduct*, Appleton-Century, New York, 1931.

भिन्न है तो यह सम्भव है कि उद्दीपक शब्द प्रयोज्य के लिए क्षोभ-जनक है ।

७. कई उद्दीपक शब्दों के प्रति एक ही शब्द से प्रतिक्रिया । इसका एक कारण विचारों का अभाव भी हो सकता है ।

८. अपरिचित या अर्थहीन प्रतिक्रिया-शब्द ।

९. विचारों का व्यर्थ-स्मरण । एक ही विचार का अनेक प्रतिक्रियाओं में बार-बार आना ।

१०. विशिष्ट अभिवृत्तियाँ, शरीरांगों का चलाना, चेहरा लाल हो जाना, खाँसना आदि ।

शब्द-साहचर्य विधि की विश्वसनीयता एवं वैधता ज्ञात करने के लिए अनेक अध्ययन किए गए हैं । वैधता के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अध्ययन वे हैं जिनमें व्यक्तित्व ग्रन्थियों के संकेतकों एवं दैहिक मापकों में सहसम्बन्ध ज्ञात करते हैं । स्वयं शब्द-साहचर्य विधि अधिक विश्वसनीय नहीं है । अतः व्यक्तित्व मापन में इस विधि को प्रयुक्त करने के साथ अन्य विधियाँ भी प्रयुक्त होती हैं ।

शब्द-साहचर्य विधि का उपयोग—

शब्द-साहचर्य विधि का उपयोग व्यक्तित्व-ग्रन्थियों, सांवेदिक उद्वेगों एवं अपराध का पता लगाने में किया जाता है । उपचार एवं निदान में भी इन्हें प्रयुक्त करते हैं ।

मानसिक रोगों के निदान में इसका प्रयोग जुंग, रोजानोव, रिक्लीन आदि मनोचिकित्सकों ने किया था । पर अब इसका सामान्य उपयोग होता है । इस हेतु उद्दीपक शब्दों की एक सूची ली जाती है, जिसमें प्रयोज्य के जीवन के विभिन्न पहलुओं, जैसे रोग, व्यवहार, विवाह, क्लेश आदि को व्यक्त करने वाले शब्द होते हैं । इनके साथ अन्य शब्द भी सम्मिलित रहते हैं । प्रयोज्य की प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण करके तत्सम्बन्धी निर्णय किया जाता है ।

अपराधी का पता लगाने में अपराध की परिस्थिति से सम्बन्धित उद्दीपक-शब्द सूची में सम्मिलित करते हैं । परीक्षार्थी की प्रतिक्रियों का लेखा लेने के अतिरिक्त उसके रक्त-चाप, स्नायु-गति, श्वास-गति आदि का भी मापन कर लेते हैं । परीक्षार्थी की वे प्रतिक्रियाएँ जो अपराध से सम्बन्धित हों लिख ली जाती हैं । अन्य संकेतकों का भी प्रयोग करते हैं । कभी-कभी इस विधि का प्रयोग करने से पूर्व संदिग्ध अपराधी को सम्मोहनावस्था में ले आते हैं । फिर सम्मोहनावस्था के पूर्व एवं बाद में उसकी प्रतिक्रियाओं की तुलना की जाती है । कुछ व्यक्तियों ने अपराध की खोज हेतु इस विधि के प्रयोग का विरोध

किया है, क्योंकि कई बार केवल परिस्थिति की वीभत्सतावश अनेक निर्दोष व्यक्ति अपराधियों की सी प्रतिक्रियाएँ कर सकते हैं।

वाक्य-पूर्ति परीक्षण
(Sentence Completion Test)

वाक्य-पूर्ति परीक्षण का इतिहास—

व्यक्तित्व गुणों के मापन में वाक्य-पूर्त्ति परीक्षण का प्रारम्भ **पाइन** (Pyne) ने किया। तदनन्तर **टैन्डलर** (Tendler) ने १९३० में एक वाक्य-पूर्त्ति परीक्षण प्रकाशित किया। उसने इसका 'संवेगात्मक अन्तर्दृष्टि का परीक्षण' नाम रखा। इसमें २० पद थे, जैसे "मैं सुख अनुभव करता हूँ......", "मैं असत्य बोलता हूँ......।" आदि उसका उद्देश्य परीक्षार्थी की प्रवृत्ति, उसकी अभिवृत्तियों, इच्छाओं के संघर्ष, सन्तोष एवं असन्तोष आदि का पता लगाना था। उसकी कसौटी एक ऐसे परीक्षण की रचना करना था जो प्रत्यक्ष रूप से संवेगात्मक प्रतिक्रियों का पता लगा सके। अतः उसने व्यक्तित्व प्रश्नावली एवं स्वतन्त्र साहचर्य विधि का प्रयोग नहीं किया। **व्हीलर** (Wheeler) ने वाक्य-पूर्त्ति परीक्षण के एक अन्य प्रतिरूप का प्रयोग किया। इसमें परीक्षार्थी से कुछ विशेषणों के रूपक देने को कहा जाता है, जैसे, "इतना प्रसन्न जितना......।" १९३८ में **कैमरोन** ने सामान्य बालकों, सामान्य प्रौढ़ों एवं मनोविकृति से ग्रस्त वृद्धों पर वाक्य-पूर्त्ति का एक अध्ययन प्रकाशित किया। इसमें १५ अपूर्ण वाक्य थे, जैसे "मैं अस्पताल में हूँ क्योंकि......।", एक व्यक्ति सड़क पर गिर पड़ा, क्योंकि......' आदि परीक्षण का प्रशासन मौखिक रूप से किया गया एवं विश्लेषण गुणात्मक आधार पर।

सन् १९४१ में **लॉर्ज** (Lorge) एवं **थार्नडाइक** (Thorndike) ने एक अध्ययन के परिणामों को प्रकाशित किया। इसमें परीक्षार्थियों के एक समूह को २४० अपूर्ण पद दिए गए और शीघ्रातिशीघ्र इन्हें पूर्ण करने को कहा गया। विभिन्न गुणों एवं रुचियों के आधार पर विश्लेषण किया गया। १९४३ में **सेनफोर्ड** (Sanford) ने ३० अपूर्ण वाक्यों का एक परीक्षण प्रकाशित किया। १९४६ में **र्होड** (Rhode) ने वाक्य-पूर्त्ति परीक्षण प्रकाशित किया। इसमें अन्यन्त छोटे पद थे, जैसे "मेरे स्कूल का काम......।" मुरे की योजना के आधार पर र्होड ने इनका विश्लेषण किया। परीक्षण-पुर्नपरीक्षण विधि से विश्सनीयता गुणांक बालकों के लिए ·८२ है, एवं बालिकाओं के लिए ·७६। युद्ध काल में सैनिक अस्पतालों में **होल्ज़बर्ग** एवं अन्य व्यक्तियों ने सैनिक अस्पतालों में एक परीक्षण प्रयुक्त किया, जिसका नाम 'आत्म-विचार पूर्त्ति

परीक्षण' था। परीक्षार्थियों को निर्देश दिया गया, "अपनी वास्तविक भावनाओं को व्यक्त करने के लिए वाक्य-पूर्ति कीजिए।" उदाहरण है : "मैं अनुभव करता हूँ, ······।" प्रतिक्रियाओं का इस प्रकार विश्लेषण किया गया कि उनका औपचारिक निर्वचन हो सके। एक नवीन परीक्षण **रॉटर** द्वारा बनाया गया "अपूर्ण वाक्य अनुसूची" है। हम इसका वर्णन आगे के पृष्ठों में करेंगे।

वाक्य-पूर्ति परीक्षण की प्रकृति –

इस प्रकार के परीक्षणों में प्रयोज्य को शीघ्रातिशीघ्र कुछ वाक्यों को पूर्ण करना पड़ता है, जिसके प्रथम शब्द परीक्षक स्वयं दे देता है। अन्य प्रक्षेपण-विधियों की भाँति यह माना जाता है कि वाक्य की पूर्त्ति में वह अपनी इच्छाओं, डर एवं अभिवृत्तियों की अभिव्यक्ति करता है। पर इसमें एवं अन्य प्रक्षेपण-विधियों में मुख्य अन्तर यह है कि इसमें प्रयोज्य की अभिव्यक्ति प्रमापित उद्दीपक के निर्वचन पर निर्भर नहीं करती। मुक्त शब्द-साहचर्य के औपचारिक उपयोग की मुख्य परिसीमाएँ ये हैं कि इसके माध्यम से प्रयोज्य के व्यवहार-जगत के अनेक क्षेत्र अछूते रह जाते हैं, इसकी शब्द प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण काफी कठिन होता है एवं इसका प्रशासन प्रायः व्यक्तिगत रूप से करना पड़ता है। वाक्य-पूर्त्ति परीक्षण में ये सब कमियाँ नहीं हैं। इसके पक्ष में मुख्य तर्क यह है कि इसे समूह में सरलता से प्रयुक्त कर सकते हैं। एवं प्रयोगात्मक परिस्थितियों में भी यह एक श्रेष्ठ परीक्षण है। पर इसका रूप उतना प्रत्यक्ष नहीं है, जितना अन्य प्रक्षेपण विधियों में। अपढ़ या संवेगात्मक रूप से अत्यन्त क्षोभग्रस्त व्यक्तियों के लिए भी यह उपयुक्त नहीं है। शुद्ध वाक्य-पूर्त्ति के लिए पर्याप्त एवं उचित शब्द-भण्डार आवश्यक है।

वाक्य प्रारम्भ करने के अनेक ढङ्ग हैं। इसे नामवाचक संज्ञा या प्रथम द्वितीय या तृतीय किसी भी वाचक से प्रारम्भ कर सकते हैं। कुछ परीक्षण-रचयिताओं के अनुसार किसी प्रथम वाचक शब्द से वाक्य प्रारम्भ करना अधिक श्रेयस्कर है। "थैमाटिक अपरसैप्शन टैस्ट" की भाँति यह परीक्षण व्यक्तित्व के गुणों के बारे में सूचना देता है न कि व्यक्तित्व-रचना के सम्बन्ध में। यह इच्छाओं, अभिवृत्तियों, व्यक्तियों के प्रति विशिष्ट प्रतिक्रियाओं आदि पर प्रकाश डालता है। सामाजिक अभिवृत्तियों के मापन में इस विधि का उपयोग हुआ है। **लैजरफीड** (Lazerfied) ने नीग्रो लोगों के प्रति अभिवृत्ति मापन में इससे लाभ उठाया है।

रॉटर की अपूर्ण-वाक्य अनुसूची

इस अनुसूची में ४० अपूर्ण वाक्य हैं। प्रत्येक प्रतिक्रिया पर शून्य से लेकर

६ तक अङ्क दिए जाते हैं। सम्पूर्ण फलांक के आधार पर कुअभियोजन (Mal-adjustment) कितना है, यह ज्ञात करते हैं। यह केवल सामान्य रूप से व्यक्तित्व एवं संवेगात्मक क्षोभ को मापन करने में समर्थ है न कि यथार्थ निदान के लिए। वाक्य में प्रथम, या कुछ अन्य, शब्द दे देते हैं और प्रयोज्य से वाक्य-पूर्त्ति के लिए कहा जाता है। यह माना जाता है कि वाक्य-पूर्त्ति करते समय प्रयोज्य अपनी इच्छाओं एवं अभिवृत्तियों की अचेतन अभिव्यक्ति कर देता है। अर्द्ध-विच्छेद विधि से इसकी विश्वसनीयता ·८३ है। वैधता ज्ञात करने के लिए अभियोजित तथा अनभियोजित व्यक्तियों के इस परीक्षण पर फलांकों की तुलना की गई। परीक्षण इनमें स्पष्ट विभेद करने में समर्थ है। प्रतिक्रियाओं को कई वर्गों में बाँट देते हैं।

: २६ :

साक्षात्कार एवं अन्य विधियाँ

साक्षात्कार या समालाप

(Interview)

साक्षात्कार एक जटिल प्रक्रिया है। साक्षात्कार लेने वालों में अनेक अन्तर होते हैं एवं साक्षात्कार देने वालों में भी। अतः इनके पारस्परिक सम्बन्धों एवं साक्षात्कार की विषय-वस्तु में काफी विभिन्नता सम्भव है। पर किसी भी साक्षात्कार को नित-प्रति के जीवन से दूर कोई अलग घटना नहीं समझा जा सकता। इसकी प्रक्रिया अत्यन्त आत्मनिष्ठ (Subjective) है। तथापि संदर्शन एवं व्यावसायिक निर्देशन में इसका महती प्रयोग है। इसके आधार पर परीक्षार्थी या साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के बारे में सभी सूचनाएँ एवं तथ्य एकत्र हो सकते हैं। इसके आधार पर हम किसी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँच सकते हैं। वास्तव में इसका उद्देश्य व्यक्ति की सहायता करना है ताकि वह अपने आप को व्यक्त कर सके। अतः मापन एवं मूल्यांकन की सभी विधियों में इसकी प्रमुखता है।

साक्षात्कार के प्रकार—

ध्येय के अनुसार साक्षात्कार अनेक प्रकार के हो सकते हैं—परिचयात्मक (Introductory), तथ्य ज्ञात करने के लिए (Fact Finding),

सूचनात्मक (Informative), उपचारात्मक (Therapeutic or Treatment Interview) आदि।

१. **परिचयात्मक साक्षात्कार**—प्रथम साक्षात्कार का उद्देश्य साक्षात्कार देने वाले से परिचय प्राप्त करना, एवं उससे एकतानता (rapport) स्थापित करना है, ताकि भावी कान्फ्रेन्स या मीटिंग में उसके बारे में उचित सूचना मिल सके। अतः इसका मुख्य लक्ष्य मित्रता का वातावरण स्थापित करना, अन्तर्दृष्टि बढ़ाना एवं पारस्परिक समझ पैदा करना है। अतः संवेगात्मक बाधाओं को दूर करना आवश्यक है। साक्षात्कार लेने वाले के लिए उचित शब्दों का चयन एवं प्रयोग करना उपादेय है। इस साक्षात्कार में बाद में कौन-सी विधियों का उपयोग किया जाएगा एवं साक्षात्कार की विधि क्या होगी, इस बारे में समझाया जा सकता है। अतः साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के प्रश्नों का स्पष्ट रूप से एवं पूर्ण उत्तर देना चाहिए। यद्यपि इस साक्षात्कार का पूरा विवरण लिखा जा सकता है, इसके आधार पर साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के बारे में कोई सिफारिश करना उचित नहीं है।

२. **तथ्य निरूपणात्मक साक्षात्कार**—इस प्रकार के साक्षात्कार में साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के बारे में इस प्रकार के तथ्य एकत्र किये जाते है जिन्हें अन्य विधियों या प्रमापीकृत प्रश्नावलियों से ज्ञात नहीं किया जा सकता, जैसे व्यक्तियों एवं परिस्थितियों के प्रति साक्षात्कार देने वाले के दृष्टिकोण एवं अभिवृत्तियों को ज्ञात करना जिन्हें वह लिख कर व्यक्त करना पसन्द नहीं करेगा। साक्षात्कार की विधि से व्यक्ति की तत्सम्बन्धी छिपी हुई भावनाओं का पता लगाया जा सकता है, और व्यक्ति की रुचियों एवं उनके स्रोत का पता चल सकता है।

३. **सूचनात्मक साक्षात्कार**—इस प्रकार के साक्षात्कार में व्यक्ति को उसके बारे में विभिन्न स्रोतों से जो तथ्य ग्रहण किये गए हैं, उनकी सूचना दी जा सकती है। विभिन्न अधिकारियों की उसके बारे में क्या राय है, उसने जो अनेक परीक्षण दिए हैं उनके क्या परिणाम निकले हैं; एवं किसी विशेष पद या नियुक्ति के लिए उसने कोई आवेदन-पत्र दिया था उसका क्या हुआ, इन सभी एवं अन्य बातों के बारे में उसे बताया जा सकता है। किसी प्रधानाधिकारी, कमीशन, बोर्ड, या विशेषज्ञ का उसके बारे में क्या निर्णय है, उसे इसकी सूचना दी जा सकती है। इससे आवश्यक सूचना के अभाव में व्यक्ति किसी पद या स्थान के लिए आवेदन-पत्र भेजते समय जो परेशानी या समस्या का अनुभव करता है, वह दूर हो जाती है। परिशुद्ध एवं नवीन सूचना ज्ञात होने पर अनेक व्यावसायिक एवं शिक्षात्मक समस्याएँ स्वतः ही हल हो जाती हैं।

४. **उपचारात्मक साक्षात्कार**—उपचार के उद्देश्य के लिए भी समालाप या साक्षात्कार की विधि का उपयोग किया जाता है। समालाप में परामर्श पाने वाले व्यक्ति को अपने बारे में, अपने भूत, वर्त्तमान एवं इच्छाओं और चिन्ताओं को व्यक्त करने का अवसर मिलता है। केवल अपने भावों को व्यक्त करने से ही हमें नई अन्तर्दृष्टि मिलती है और अपनी चिन्ताओं एवं परेशानियों से मुक्ति भी। परामर्श देने वाले व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह इस बात का पूरा लेखा ले कि साक्षात्कार देने वाला समालाप की परिस्थिति में किस प्रकार का व्यवहार करता है और वह उसे प्रेरित करे कि अपनी सभी भावनाओं एवं आशाओं को व्यक्त कर सके। 'क्या' सूचना प्राप्त होती है यह तो महत्वपूर्ण है ही, परन्तु 'कैसे' इसका भी अपना महत्व है।

उपचारात्मक समालाप तीन प्रकार के होते हैं—(अ) परामर्शक-केन्द्रित या निदेशित (Counsellor-centered or Directed), (ब) अनिदेशित (Non-directed), एवं (स) सारसंग्राहक (Eclectic)। हम इनका संक्षेप में वर्णन करेंगे।

(अ) निदेशित समालाप—इस प्रकार के समालाप में विशिष्ट समस्याओं, सम्भावनाओं एवं उनके हल की ओर ध्यान केन्द्रित किया जाता है। समालाप एक सुनिश्चित योजना के अनुसार होता है। इसी सुनिश्चित योजना के अनुसार परामर्श लेने वाला अपनी भावनाओं, विचारों एवं अनुभवों पर प्रकाश डालता है। पर इस योजना का निर्धारण समालापक (Interviewer) ही करता है क्योंकि वह इसमें अधिक सक्षम है। परामर्श लेने वाला समालापक की योजना एवं उसके निदेशों के अनुसार ही किसी निष्कर्ष या निर्णय पर पहुँचता है।

(ब) अनिदेशित समालाप- इसमें परामर्श लेने वाला स्वयं वाद-विवाद का नेतृत्व ग्रहण करता है। समालापक तो केवल मित्रता के वातावरण में रुचि प्रकट करके साक्षात्कार देने वाले को उन्मुक्त अभिव्यक्ति के लिए प्रोत्साहन देता है। वह परिस्थिति में अपने मूल्यांकन, निर्वचन या निर्णय का आरोपण नहीं करता। उन्मुक्त अभिव्यक्ति के पश्चात् अन्तर्दृष्टि का विकास होता है। साक्षात्कार देने वाला स्वयं अपनी शक्ति एवं कमजोरियों का आभास पा लेता है। वह जान लेता है कि उसकी वास्तविक अभिवृत्तियाँ एवं इच्छाएँ क्या हैं। अतः इसमें क्रमशः विकास या प्रगति का वातावरण रहता है। इसमें बौद्धिक पक्ष की अपेक्षा संवेगात्मक तत्वों पर अधिक बल दिया जाता है।

(स) सार-संग्राहक समालाप—इस प्रकार के समालाप में उपरिलिखित दोनों विधियों को प्रयोग करके दोनों की अच्छी बातों का समावेश कर लेते हैं। इसमें साक्षात्कार देने वाला अनेक प्रकार की अलग-अलग अन्तर्दृष्टियाँ प्राप्त

करता है। शब्दों के माध्यम से अपने भावों को अभिव्यक्त करते समय परामर्श लेने वाले से निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचने एवं सारांश कथन देने को कहा जाता है। यदि वह ऐसा नहीं कर पाता तो समालापक स्वयं निर्वचनात्मक सारांश प्रस्तुत करता है। इस प्रकार समालापी की आवश्यकताओं, न कि किसी पूर्वनिश्चित सिद्धान्त, के आधार पर उपचार करते हैं।

समालाप की परिस्थितियाँ (Conditions of the Interview)—

समालाप की कुछ आवश्यक परिस्थितियों का वर्णन नीचे किया गया है :—

(१) **योजना** (Setting)—यह आवश्यक है कि समालाप शान्ति से प्रेम के वातावरण में बिना किसी दबाव के किया जाय। समालाप-कक्ष में घुसते ही साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति का स्वागत करके मित्रता एवं सद्भावना का विश्वास दिलाया जा सकता है। अच्छे समालापक पूर्ण सफलता-प्राप्ति के लिए केवल भौतिक ही नहीं, संवेगात्मक वातावरण को भी उत्तम बनाने की चेष्टा करते हैं।

(२) **गुप्तता** (Privacy)—यह आवश्यक है कि समालाप की परिस्थिति, इसकी घटनाएँ, एवं इसका वार्त्तालाप गुप्त रखा जाए।

(३) **समय** (Time)—साक्षात्कार में कितना समय दिया जाय, यह इसके उद्देश्य पर निर्भर है। यदि समालाप का उद्देश्य अगले सत्र में अध्ययन की योजना करना है तो केवल आध घण्टा या इसके लगभग उचित रहेगा। यदि मनोविश्लेषण करके विद्यार्थी को आगे के लिये संदर्शन देना है तो अधिक समय देना आवश्यक है। सत्र की किस अवधि में साक्षात्कार लिया जाये या दिन के किस समय, इसका भी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए पूर्व निर्णय करना आवश्यक है।

सामालापक के गुण—

साक्षात्कार की सफलता बहुत कुछ समालापक पर निर्भर है। यदि समालापक स्वयं सामान्य सन्तुलित विचारों का व्यक्ति है, और उसने अपनी एवं दूसरों की समस्याओं में अन्तर्दृष्टि प्राप्त करली है, तो वह समालाप में अपने व्यक्तित्व की शक्ति के आधार पर ही व्यक्ति को प्रभावित कर लेगा। पर इसके लिए आवश्यक है कि वह मानव-प्रेरणाओं एवं व्यवहार का ज्ञान रखता हो। यदि समालापक की ख्याति अच्छी है और उसमें समालापी का दृष्टिकोण समझने की क्षमता है तो साक्षात्कार अधिक सुव्यवस्थित रूप से किया जा सकता है। पर इसके लिए अन्तर्दृष्टि, मानसिक रोगों से मुक्ति, संवेगात्मक सामंजस्य एवं उचित प्रशिक्षण आवश्यक है। समालापी का विश्वास-भाजन बनने के लिए

उसे स्पष्ट वक्ता एवं गम्भीर होना चाहिए। वार्त्तालाप का प्रारम्भ मित्रता के वातावरण में अभिनन्दन से होना चाहिए। घुमा-फिराकर मुख्य विषय पर आने में कोई लाभ नहीं है। बातचीत का स्तर समालापी के बौद्धिक एवं संवेगात्मक स्तर के अनुरूप होना आवश्यक है। यदि समालापक स्वयं अपनी भावनाओं एवं संवेगों पर नियन्त्रण पा सके तो वह साक्षात्कार देने वाले को बिना झिझक अपनी बात कहने में सहायक होगा।

साक्षात्कार विधि की विश्वसनीयता एवं वैधता—

केवल एक साक्षात्कार के आधार पर किसी विशिष्ट व्यक्ति की योग्यता या उपयुक्तता का मापन या उसकी भावी क्रियात्मकता का पूर्वकथन विश्वनीय नहीं है। नियुक्ति के लिए किए गए साक्षात्कार प्राय: प्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा नहीं होते। अत: इनकी विश्वसनीयता अत्यन्त कम होती है। हॉलिन्गवर्थ (Hollingworth) ने १६२२ में एक अध्ययन किया जिसमें विक्रय कार्य के लिए ५७ प्रार्थियों का १२ सुयोग्य विक्रय-अधिकारियों द्वारा साक्षात्कार किया गया। पर प्रत्येक ने अपना अलग-अलग निर्णय दिया। यहाँ तक कि एक प्रार्थी को एक अधिकारी ने सर्वोच्च स्थान दिया, जबकि दूसरे ने सबसे निम्न।

अवास्तविक परिस्थिति में होने के कारण साक्षात्कार में वैधता की भी कमी होती है। सम्भव है साक्षात्कार के दौरान में दबाव के अन्तर्गत व्यक्ति जिस प्रकार के व्यवहार या सक्षमताओं का प्रदर्शन करे, वे उसमें न हों। अनेक भूलें उसके व्यवहार के निरीक्षण को प्रभावित कर सकती हैं। १६४२ में फ्रीमैन ने एक अध्ययन किया। इसके अनुसार आलोचना, ध्यान-भंग या उत्तेजना के वातावरण के अन्तर्गत किया गया साक्षात्कार सामान्य एवं शान्त वातावरण के अन्तर्गत किए गए साक्षात्कार की अपेक्षा अधिक वैध होता है। तथापि अनियमित ढंग से (At random) किए गए व्यक्ति-चयन की अपेक्षा साक्षात्कार के आधार पर किया गया व्यक्ति-चयन अधिक वैध होगा। अमरीका में एक प्रशिक्षण केन्द्र में अनियमित ढंग से चुने गए व्यक्तियों में ७१% व्यक्ति प्रशिक्षण की अवधि के पूरा होने से पहले ही छोड़ कर चले गए, जबकि साक्षात्कार के आधार पर चुने गए व्यक्तियों में से केवल १६%।

परिवेशात्मक परीक्षण
(Situational Tests)

इस प्रकार के परीक्षणों में प्रयोज्य कार्य-अनुस्थापित (Task-oriented) रहता है, न कि विवरण-अनुस्थापित (Report-oriented), जैसा कि व्यक्तित्व

प्रश्नावलियों में होता है। अर्थात् उसे एक वस्तुनिष्ठ कार्य करने को दे दिया जाता है। अपने व्यवहार का वर्णन करने को नहीं कहा जाता। परीक्षण का उद्देश्य प्रच्छन्न या गुप्त रहता है। प्रयोज्य को यह पता नहीं चलता कि उसके व्यवहार या क्रिया के कौन से पक्ष का अवलोकन या फलांकन किया जा रहा है। दिया जाने वाला कार्य प्रक्षेपण विधियों से भी अधिक संरचित (Structured) रहता है। प्रयोज्य के दृष्टिकोण से प्रत्येक समस्या या कार्य का एक न एक हल अवश्य दिया रहता है।

परिवेशात्मक परीक्षण मुख्यतया दो प्रकार के होते हैं—(१) दिन-प्रतिदिन जीवन के परीक्षण, (२) प्रत्याबल परीक्षण।

दिन-प्रतिदिन जीवन के परीक्षण (Everyday Life Tests)—

हार्टशोर्न तथा मे ने सन् १९२८ में अपने 'प्रवञ्चना सम्बन्धी अध्ययन'[1] प्रकाशित किए। तत्पश्चात् १९२९ में 'सेवा तथा आत्म-नियन्त्रण सम्बन्धी अध्ययन'[2] तथा १९३० में 'चरित्र गठन सम्बन्धी अध्ययन'।[3] इनमें उसके 'चरित्र-शिक्षण समन्वेषण' (Character Education Inquiry) सम्बन्धी निष्कर्ष संकलित हैं। इस सम्बन्ध में हार्टशोर्न तथा मे ने जो परीक्षण बनाए उनमें कोई वस्तुस्थिति दी हुई होती है और उसमें बालक को अशुचि (Dishonest) होने का अवसर। कुछ समस्याएँ प्रस्तुत की जाती हैं, जैसे बच्चों से कहा जाता है कि वे दिए हुए बाँटों को वजन के क्रम से व्यवस्थित करके रखें। वास्तविक वजन बाँट के नीचे लिखे रहते हैं। यह देखा जाता है कि क्या आँख बचाकर बालक बाँट के नीचे लिखा वजन देख लेते हैं। निष्कर्षों से ज्ञात होता है कि सभी बालकों में समान रूप से 'शुचि' जैसा कोई लक्षण विद्यमान नहीं होता, वरन् बालक का शुचि होना या न होना दी हुई परिस्थिति पर निर्भर है। एक बालक आर्थिक लेन-देन में बिल्कुल ईमानदार हो सकता है, पर परीक्षा-भवन में धोखा दे सकता है। प्रौढ़ों के साथ भी यही बात है।

हार्टशोर्न तथा मे ने चरित्र-शिक्षण समन्वेषण में अनेक प्रकार के परीक्षणों का प्रयोग किया है, जिनमें से कुछ ये हैं—

१. **प्रतिलिपि विधि** (Duplicating Technique)—इसमें शब्द-भण्डार,

---

1. Hartshorne, H., and May, M. A. : *Studies in Deceit.* New. York., Macmillan, 1928.
2. Harstshorne, H., and May, M. A. : *Studies in Service and Self-Control.* New York, Macmillan 1929.
3. Hartstrorne, H., and May, M. A.: *Studies in the Organisation of Character.* New York, Macmillan. 1930.

गणितीय तर्क, वाक्यपूर्त्ति आदि सामान्य परीक्षणों का कक्षा में प्रशासन करते हैं एवं परीक्षण-पत्रों को एकत्र करके प्रत्येक बालक की प्रतिलिपि ले ली जाती है। कुछ समय पश्चात् मौलिक बिना अंकित किए परीक्षा-पत्र उन्हें लौटा देते हैं और प्रत्येक बालक से स्वयं अपने परीक्षा-पत्रों का एक कुंजी के आधार पर फलांकन करने को कहा जाता है। इन फलांकित किए परिणामों की तुलना प्रतिलिपि से करते हैं और यह ज्ञात किया जाता है कि प्रयोज्य ने अपने उत्तरों में परिवर्तन तो नहीं किया।

२. **दुहरी परीक्षण-विधि** (Double Testing Technique)—इसमें परीक्षण की दो समानान्तर विधियों का प्रशासन करते हैं—एक पर्यवेक्षित तथा दूसरी अपर्यवेक्षित परिस्थिति में। पर्यवेक्षित किए जाने पर वंचना की सम्भावना नहीं रहती, पर न किए जाने पर रहती है। इन दोनों से प्राप्त परिणामों की तुलना कर लेते हैं।

३. **असम्भावित निष्पत्ति विधि** (Improbable Achievement Technique)—ऐसी परिस्थितियों में एक परीक्षण दिया जाता है कि एक निश्चित स्तर से अधिक निष्पत्ति से वंचना प्रकट होती है। जिन विभिन्न कार्यों का प्रयोग होता है, वे हैं पहेलियाँ, कागज़-पेन्सिल परीक्षण, भार-विभेद, गति-संचालन आदि।

प्रवंचना परीक्षणों के अतिरिक्त व्यवहार के अनेक अन्य पक्षों का मापन करने के लिए भी हार्टशोर्न तथा मे ने अनेक परीक्षण बनाए। उनमें से कुछ ये हैं—

१. **चोरी** (Stealing)—चोरी का पता लगाने के लिए एक गणितीय पहेली दी गई, जिसे हल करने के लिए सिक्के दिए जाते हैं। सिक्कों को इस प्रकार व्यवस्थित करना पड़ता था कि कतारों, स्तम्भों, विकर्णों सभी का योग समान हो। कार्य की समाप्ति पर प्रयोज्यों से सिक्कों को लौटाने के लिए कहा जाता था। पहेलियों पर लिखे संकेत-अंकों के द्वारा यह ज्ञात हो जाता था, किस प्रयोज्य ने कम सिक्के लौटाए हैं।

२. **झूठ बोलना** (Lying)—झूठ बोलने का पता लगाने से पहले प्रयोज्य को एक लिखित प्रश्नावली दी जाती थी, जिसमें ऐसे प्रश्न होते थे—"क्या मुसीबत में तुम सदैव मुस्कराते हो ?" "क्या तुम सदैव समय पर स्कूल जाते हो ?" आदि। यह ज्ञात कर लिया गया कि जो प्रयोज्य २४ या अधिक प्रश्नों का उत्तर समाज से अनुमोदित दिशा में देते हैं, वे सम्भवतया झूठ बोल रहे हैं।

३. **दान प्रवृत्ति** (Charitability)—प्रयोज्य को दस वस्तुएँ, जैसे पैन्सिल,

फुटा, प्याला आदि देते हैं। जब वह इनकी जाँच-पड़ताल कर लेता है, तब उसे इस बात का अवसर देते हैं कि वह एक या अधिक वस्तुओं को दे दे।

४. **चिरलग्नता परीक्षण** (Persistence Tests)—इनमें प्रयोज्य को अनेक प्रकार के कार्य दिए जाते हैं, जैसे पहेली, कहानी की पूर्ति आदि। तदुपरान्त प्रयोज्यों से कहा जाता है कि वे जब तक चाहें, इन पर कार्य करें। विराम से पूर्व उन्होंने कितनी अवधि तक कार्य किया, इस आधार पर फलांक देते हैं।

हार्टशोर्न तथा मे के चरित्र-शिक्षण समन्वेषण परीक्षणों के निम्नलिखित गुणावगुण हैं—

१. चरित्र-शिक्षण समन्वेषण परिवशात्मक परीक्षणों के विकास की दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास था, पर सभी क्षेत्रों का समान व्यापकता से समन्वेषण नहीं किया गया। शुचि परीक्षणों (Honesty Tests) पर सेवा, सहयोग, दान, आत्म-नियंत्रण, चिरसंलग्नता आदि परीक्षणों से अधिक बल दिया गया।

२. इन विधियों का अच्छा विभेदकारी मूल्य सिद्ध हुआ है और इनसे फलांकों में व्यक्तिगत विभेद का पता चला है।

३. इनका विश्वस्तता गुणांक परीक्षण-पुनर्परीक्षण विधि एवं विकल्प या समानान्तर विधि का प्रयोग करके ·७ एवं ·८ के आसपास है, पर इनके सम्बन्ध में सन्तोषजनक वैधता-गुणांक प्राप्त नहीं हुए हैं। अनुभवजन्य वैधता ज्ञात करने के लिए इनके फलांकों का अध्यापकों के मूल्यांकन एवं सहपाठियों के मूल्यांकन से सहसम्बन्ध निकाला एवं ·२—·४ गुणांक प्राप्त हुआ, पर ये कसौटियाँ स्वयं ही विश्वस्त नहीं हैं। सैद्धान्तिक एवं विषय-वस्तु सम्बन्धी वैधता पर अधिक बल दिया गया है। एक अध्ययन में वैधता का विश्लेषण परीक्षणों के अनेक समूहों के अन्तर्सहसम्बन्धों में किया गया। शुचि परीक्षण की वैधता ·२२७ थी।

४. चरित्र-शिक्षण समन्वेषण व्यवहार के समालोचनात्मक एवं सामाजिक मूल्यांकन से सम्बन्धित है, पर जिन अर्थों में 'लक्षण' शब्द अवयव-विश्लेषण में प्रयुक्त हुआ है, उन अर्थों में हम इसे लक्षण नहीं कह सकते।

५. चरित्र-शिक्षण समन्वेषण के परिणाम काफी विवादास्पद रहे हैं क्योंकि यद्यपि इनमें प्रमापित विधियों का प्रयोग होता है, इसके अनेक परीक्षणों में अवास्तविक (Artificial) वस्तुस्थिति है।

प्रत्याबल परीक्षण (Stress Tests)—

इन परीक्षणों से प्रयोज्य में चिन्ता या अन्य संवेगात्मक बाधाएँ उत्पन्न करते हैं। संवेगात्मक प्रत्याबलों को उत्पन्न करने के लिए अनेक उद्दीपकों का प्रयोग करते हैं; जैसे बिजली का शॉक, पतन, शारीरिक संतुलन का प्रविदारण (Disruption), किसी कार्य को करने में समय की पाबन्दी, असफलता, असफलता की आशंका आदि। संवेग के शारीरिक परिवर्त्तनों के मापन, कार्य में प्रगति का वस्तुनिष्ठ लेखा, गुणात्मक अवलोकन, मूल्यांकन विधियों आदि की सहायता से प्रत्याबल परिस्थितियों में प्रयोज्य की प्रतिक्रिया का निर्धारण करते हैं। अतिरिक्त सूचना लेने के लिए बाद में साक्षात्कार भी किया जा सकता है।

द्वितीय महायुद्ध में सेना में व्यक्तियों के चयन के लिए अमरीका में 'ऑफिस ऑफ स्ट्रेटेजिक सर्विसिज़'[1] ने परिवेशात्मक प्रत्याबल परीक्षणों का प्रयोग किया। इनमें इन गुणों का परीक्षण किया गया : (१) दत्त कार्य में प्रेरणा (motivation for assignment), (२) शक्ति एवं प्रत्युत्क्रम (energy and initiative), (३) प्रभावशाली बुद्धि एवं निर्णय (effective intelligence and good judgement), (४) संवेगात्मक स्थिरता (emotional stability), (५) नेतृत्व (leadership), (६) सामाजिक सम्बन्ध (social relations), (७) रहस्यों को गुप्त रखने की योग्यता (ability to keep secrets) आदि। दत्त कार्यक्रम में प्रायः तीन दिन लगते हैं। प्रत्याशियों को छोटे-छोटे समूहों में बाँट देते हैं। सम्पूर्ण कार्यक्रम में अनेक बातें होती हैं—अभियोग्यता परीक्षण, प्रक्षेपण परीक्षण, साक्षात्कार, सामूहिक वाद-विवाद, अवलोकन आदि। कुछ प्रमुख प्रत्याबल परीक्षण भी देते हैं, जैसे—

१. **भित्ति परिवेश**—सैनिकों एवं सैन्य-उपकरणों को एक दुहरी दीवार के आर-पार ले जाना जिसके बीच स्थान छूटा हो।

२. **रचना-परीक्षण**— लकड़ी के लट्ठे, ब्लाक आदि से एक पाँच फीट का घन बनाना। प्रयोज्य को बता दिया जाता है कि चूँकि यह कार्य अकेले करना असम्भव है अतः उसे दो सहायक दिए जाएँगे। पर ये सहायक मनोवैज्ञानिक होते हैं। इनमें से एक कार्य में बाधा डालता है, जबकि दूसरा निष्क्रिय रहता है।

---

1. O. S. S. Assessment Staff : *Assessment of Men. Selection of Personnel for the Office of Strategic Services*, New-York, Rinehart, 1948.

३. प्रत्याबल साक्षात्कार —इसमें कठोर संवेगात्मक तथा बौद्धिक तनाव को सहने की व्यक्ति की क्षमता का पता लगाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को एक कहानी बनाने के लिए १२ मिनट दिए जाते हैं। इसका भ्रमात्मक एवं प्रतिकूल प्रति-परीक्षण (cros-examination) किया जाता है और प्रयोज्य को बचाव करना पड़ता है।

प्रत्याबल परीक्षणों के गुणावगुण निम्नलिखित हैं :—

१. इनका वैधता गुणांक ·३९ या इससे कुछ ही अधिक है। कसौटी के रूप में तात्कालिक अफसरों का निर्णय, अफसरों के विवरण, साक्षात्कार, आदि का प्रयोग किया गया। पर ये कसौटियाँ स्वयं विश्वस्त नहीं हैं।

२. ओ० एस० एस० मूल्याङ्कन कार्यक्रम में जिन विधियों का प्रयोग किया जाता है, वे अत्यन्त अपरिष्कृत हैं। केवल समयाभाव एवं तात्कालिक माँग के कारण इनका प्रयोग किया गया।

३. इस विधि की नवीनता के कारण ओ० एस० एस० मूल्यांकन परीक्षणों में काफी रुचि ली गई है। अतः इस आधार पर और भी कार्य हुआ है, जैसे 'मिशीगन मूल्याङ्कन कार्यक्रम'।

व्यक्ति-इतहिास पद्धति
(Case-History Method)

इस पद्धति में व्यक्ति के परिवार, इतिहास, आय, चिकित्सा-पद्धति, वातावरण, सामाजिक स्थिति, व्यक्तिगत अभिवृत्तियाँ, प्रतिक्रियाओं आदि का विस्तृत अनुसन्धान करते हैं। इसका उद्देश्य सामंजस्य की समस्याओं का पता लगाना है। यह पद्धति मानसिक चिकित्सा में अधिक उपयोगी है। इस प्रकार के व्यक्ति-इतिहास में अध्यापक संकलित लेखा-पत्रों का प्रयोग कर सकता है। कभी-कभी मनोचिकित्सक यह चाहता है कि विद्यार्थी के बारे में अध्यापक से उसे कुछ एकत्र तथ्य मिलें। अतः व्यक्ति-इतिहास देने में अध्यापक द्वारा सावधानी बरतना आवश्यक है।

मनोवैज्ञानिक चिकित्सक या सामाजिक कार्यकर्त्ता व्यक्ति-इतिहास में प्रायः जिन तथ्यों को एकत्र करता है, उनमें निम्नलिखित सम्मिलित हैं :—

१. नाम, पता, एवं अन्य तथ्य।

२. वर्त्तमान समस्याएँ एवं रोग—कारण, निदान।

३. स्वास्थ्य-इतिहास—बीमारियाँ, ऑपरेशन।

४. विकासात्मक इतिहास—शैशव, बाल्यावस्था आदि में विकास ।

५. शिक्षात्मक विकास—स्कूल एवं कॉलिज की प्रगति ।

६. परिवार की प्रकृति—व्यक्तियों के आपसी सम्बन्ध, इसकी रचना ।

७. व्यवसाय इतिहास—सेवा की अवधि, कार्य से सामंजस्य का लेखा ।

८. मनोयौनिक सम्बन्ध—यौन सम्बन्धी आदतें ।

९. वैवाहिक सम्बन्ध—पति-पत्नी का आपसी सामंजस्य ।

१०. व्यक्तित्व के शीलगुण—संवेगात्मक सामंजस्य, सामाजिकता आदि ।

यद्यपि केवल व्यक्ति-इतिहास को रोग के निदान एवं चिकित्सा का आधार नहीं बनाया जा सकता तथापि मनोविश्लेषण एवं अन्य विधियों के प्रयोग के साथ इस क्षेत्र में इसका महती उपयोग है ।

मनोविश्लेषण विधि
(Psycho-analytical Method)

मनोविश्लेषण पद्धति का स्वरूप फ्रायड ने विकसित किया । सभी प्रकार की मनोविश्लेषण पद्धतियों का अभी तक यही आधार है । इस विधि से व्यक्ति की इच्छाओं, आशाओं, चिन्ताओं एवं महत्वाकांक्षाओं का पता लगाया जाता है । इस विधि के मुख्य स्वरूप हैं :—(१) स्वतन्त्र साहचर्य, (२) स्वप्न विश्लेषण ।

(१) **स्वतन्त्र साहचर्य**—सर्वप्रथम व्यक्ति के बारे में आवश्यक तथ्य एकत्र करके उससे निश्चित समय पर किसी आराम कुर्सी पर लेटने को कहा जाता है । तत्पश्चात् उससे कहा जाता है कि जो कुछ भी उसके मन में आये, अच्छा या बुरा, कहने योग्य या न कहने योग्य, वह बेझिझक कह दे । मनोविश्लेषण करने वाला अपनी डायरी में इसका विस्तृत लेखा ले लेता है । प्रारम्भ में व्यक्ति इस प्रकार मुक्त साहचर्य स्थापित करने में कठिनाई का अनुभव करता है, पर कुछ दिन बाद उसमें मुक्त रूप से अपने को अभिव्यक्त करने की आदत पड़ जाती है । वह अपनी दबी हुई इच्छाओं एवं भावनाओं को व्यक्त करता है । आवश्यक नहीं है कि उसने जिन घटनाओं पर प्रकाश डाला हो, वे क्रम में ही हों । बाधाओं का होना, साहचर्य में आने वाले विचारों को रोकने का प्रयास करना, असम्बन्धित बातें कहना, सभी सम्भव है । जो कुछ भी हो, पर इस प्रकार व्यक्त किये गए तथ्यों में बौद्धिकता की कमी होती है, पर संवेगात्मकता अधिक होती है । इन तथ्यों के आधार पर मनोविश्लेषक इनके पीछे छिपे रहस्यों, व्यक्ति की वास्तविक मनोवृत्ति एवं उसके व्यक्तित्व की

कठिनाइयों को जानने का प्रयास करता है। इससे कालान्तर में वह उचित उपचार करने में भी समर्थ होता है।

(२) **स्वप्न-विश्लेषण**—स्वप्न-विश्लेषण भी मनोचिकित्सा की एक विधि है। जोसेफ ब्रूयर (१८४२-१९२५) इस विधि का प्रयोग करता था। फ्रायड ने देखा कि स्वप्न अचेतन मन की गहराई में इसकी विषय-वस्तु के बारे में महत्वपूर्ण संकेत देते हैं। अतः उसने स्वप्न-विश्लेषण पर काफी बल दिया। मनोविश्लेषक व्यक्ति से अपने स्वप्नों का स्मरण करने के लिए कहता है। पर इसमें उसे पर्याप्त कठिनाई हो सकती है। मुक्त साहचर्य का अभ्यास हो जाने पर स्वप्न-स्मरण में सुविधा सम्भव है। स्वप्नों की विषयवस्तु एवं इनमें छिपी समस्याओं को फिर भावी मुक्त-साहचर्य का आधार बनाया जाता है। फ्रायड के अनुसार स्वप्नों में प्रकट (manifest) एवं अप्रकट (latent) दोनों ही प्रकार के तत्व होते हैं। स्वप्न प्रतिमाएँ एवं उनका अर्थ प्रकट तत्व हैं जबकि अचेतन संघर्ष-शील विषयवस्तु, जिसके लिए कि स्वप्न प्रतिमाएँ प्रतीक हैं, अप्रकट तत्त्व हैं। प्रकट तत्व का निर्धारण वातावरण एवं जीवन की समीपस्थ एवं दूरस्थ घटनाओं के आधार पर होता है। अप्रकट तत्व में इसके लिए जो प्रतीक चुने जाते हैं वे सार्वभौमिक भी होते हैं एवं स्थानीय भी। सार्वभौमिक प्रतीकों का एक ही अर्थ होता है पर स्थानीय प्रतीकों का अर्थ व्यक्ति के अनुभव एवं घटना पर । स्वप्न-विश्लेषण, एवं इसके आधार पर व्यक्ति की समस्याओं का निदान किस प्रकार किया जाय, यह वास्तव में किस स्वप्न सिद्धान्त का प्रयोग किया गया है इस पर निर्भर करता है।

निर्वचन करना एक कठिन कार्य है एवं एक विशेषज्ञ ही इसका साहस करता है। व्यक्ति जिस किसी भावना या महत्वाकांक्षा को व्यक्त करे, उसका लेखा लेना आवश्यक है। यह निर्वचन (interpretation) दो प्रकार का हो सकता है—(अ) व्यक्ति का ध्यान उन संवेगों में केन्द्रित करना, जिन्हें उसने व्यक्त किया है, (ब) अप्रिय भावों के दमन में व्यक्ति ने जिन सुरक्षा-यन्त्रिकाओं (defence-mechanisms) का प्रयोग किया है, उसे उनकी पहचान कराना। दोनों ही विधियों में समय एवं अवसर से लाभ उठाने की चेष्टा करनी चाहिए। तभी व्यक्ति अपनी कठिनाइयों में अन्तर्दृष्टि पा सकेगा।

शारीरिक परीक्षण
(Physiological Tests)

अनेक शारीरिक लक्षणों को व्यक्तित्व के सम्बन्ध में अनुमान लगाने के लिए प्रयुक्त करते हैं। हम इनका संक्षिप्त वर्णन करेंगे।

(क) **हृदय-गति एवं रक्तचाप का मापन** एलेक्ट्रो कार्डियोग्राफ (Electro-cardiograph) हृदयगति मापन में प्रयुक्त होता है। संवेग की अवस्था में इस गति में परिवर्तन हो जाता है। स्कॉट (Scott) ने एक अध्ययन में भय, क्रोध आदि के संवेगों की अवस्था में हृदय-गति एवं रक्तचाप का मापन किया। कुछ प्रयोज्यों का रक्तचाप बढ़ गया एवं कुछ का घट गया। पर कामोत्तेजक परिस्थिति में निश्चित रूप से रक्तचाप बढ़ा। रक्तचाप के मापन के लिए अंग-चाप मापक (plethysmograph) का प्रयोग करते हैं।

(ख) **श्वास-गति का मापन**—संवेग की अवस्था में श्वास-गति में परिवर्त्तन होते हैं। संवेग की अवस्था में साँस की गति एवं तीव्रता बढ़ जाती है। अतः व्यक्ति की संवेगात्मक अस्थिरता का पता लगाया जा सकता है। रेह्वोल्ट (Rehwoldt) के एक प्रयोग में जब प्रयोज्य ने अभिनय के एक संवेगात्मक दृश्य की कल्पना की तो उसके साँस की गति बढ़ गई। भय की अवस्था में भी श्वास-गति बढ़ जाती है। श्वास-गति मापन का यन्त्र 'न्यूमोग्राफ' (Pneumograph) है।

(ग) **वैद्युतिक त्वचा-अनुक्रिया**—संवेग की अवस्था में वैद्युतिक त्वचा-क्रिया (Galvanic Skin Response) में परिवर्त्तन होता है। इसका कारण स्वेद ग्रन्थि (Sweet gland) के स्राव में परिवर्त्तन है।

व्यक्तित्व के मापन में अन्य शारीरिक परीक्षण भी होते हैं, जैसे मस्तिष्क तरङ्ग (Brain waves) का मापन, रसपाकपरिवर्तन (metabolic changes) आदि।

संकलित आलेख-पत्र
(Cumulative Record Cards)

संकलित आलेख में अनेक स्वतन्त्र एवं वस्तुगत अध्ययनों के परिणामों को एक ही पत्र पर संकलित कर लेते हैं ताकि सम्बन्धित व्यक्ति के बारे में व्यापक सूचना प्राप्त हो सके। इन पत्रों के आधार पर किया गया संदर्शन

निश्चय ही अधिक उपयोगी होगा। मुरे थॉमस[1] के अनुसार संकलित आलेख-पत्र किसी बालक के बारे में एक लम्बी अवधि में एकत्र सूचना है। यह सूचना एक अध्यापक दूसरे अध्यापक को दे देता है। इस प्रकार बालक की एक कक्षा से दूसरी कक्षा में प्रगति के साथ ही उसके बारे में अधिकाधिक सूचना भी एकत्र होती जाती है। इसमें प्राप्त फलांक, उपस्थिति, स्वास्थ्य, परिवार, विद्यालय में प्रगति, अभियोग्यताएँ, सामंजस्य सभी के सम्बन्ध में सूचना रहती है। ये आलेख-पत्र गुप्त रखे जाते हैं एवं इनकी विषय-वस्तु का निदान एवं उपचार में प्रयोग सम्भव है। पर इनमें दिया गया विवरण अत्यन्त संक्षिप्त एवं सार-रूप होता है।

महत्व एवं उपयोग--

संकलित आलेख-पत्र विद्यार्थी के बारे में लिखित, प्रामाणिक एवं सम्पूर्ण वर्ष की विस्तृत सूचना प्रदान करते हैं। ये विद्यार्थी की प्रगति एवं व्यवस्था का चित्राङ्कन करते हैं। उसके व्यक्तित्व, अभिवृत्तियाँ, रुचि, कौशल आदि का विवरण जानने के लिए ये आदर्श हैं। ये उसके पथ-प्रदर्शन में सहायता प्रदान करते हैं। सभी स्तर के विद्यार्थियों के लिए अलग-अलग आलेख-पत्र तैयार किये जा सकते हैं। संयुक्त राज्य अमरीका के शिक्षा-कार्यालय की "**संकलित आलेखों की पुस्तिका**" (Handbook of Cumulative Records) में इन आलेख-पत्रों की महत्ता को इन शब्दों में व्यक्त किया गया है :

"निरन्तर विकसित होने वाले पाठ्यक्रम में आलेख आवश्यक हैं। इनमें विद्यालय के कार्यक्रम में भाग लेने पर विद्यार्थियों की आवश्यकताओं, रुचियों, एवं योग्यताओं में जो व्यक्तिगत विभेद प्रगट होते हैं, उनका लेखा होना चाहिए। इन अन्तरों से विद्यार्थियों को अपने व्यक्तिगत विकास के विभिन्न स्तरों पर संदर्शन की जिस मात्रा की आवश्यकता पड़ती है, उसकी ओर संकेत मिलता है।"[2]

---

1. Thomas R. Murray : *Judging Student Progress*, Longman Green & Co., London, 1959.
2. "Records are essential to a constantly evolving curriculum. Individual differences in the needs, interests and abilities of pupils, as revealed through participation in the school programme should be recorded. Such differences indicate the nature and amount of guidance needed by individual pupils at various stages of their development."
—*Handbook of Cumulative Records*, U. S. Office of Education.

विद्यार्थी, अध्यापक या किसी कार्यालय के अधिष्ठाता, सभी के लिए संकलित आलेख-पत्र उपयोगी हैं। विद्यार्थी इनके आधार पर अपनी शक्तियों एवं कमजोरियों को जान लेता है एवं भावी मार्ग निश्चय करने में उसे लाभ हो सकता है। अध्यापक विद्यार्थी के बारे में जानकर उनका संदर्शन उचित रूप से कर सकता है। किसी औद्योगिक संस्थान का अधिष्ठाता व्यक्ति की रुचियों, व्यक्तित्व, अभिवृत्तियों आदि के बारे में जानकर उनकी पदोन्नति, विभाग-परिवर्त्तन, वेतन, आदि का निश्चय कर सकता है। किसी भी व्यक्ति का वर्त्तमान एवं उसका भविष्य वास्तव में उसके भूत की सुदृढ़ भित्ति पर निर्भर है। संकलित आलेख-पत्र इस दिशा में महत्वपूर्ण हैं। भूत के आधार पर भविष्य का विश्लेषण करने में व्यवहार की कठिनाइयों एवं असफलताओं के बारे में संकेत देने में इनका उपयोग है।

संकलित आलेख-पत्रों की विषय-वस्तु—

संकलित आलेख-पत्रों का क्या मसविदा हो, यह विद्यालय की प्रकृति, बालक का कक्षा-स्तर, प्रदेश का वातावरण एवं आलेख-पत्र के उद्देश्य पर निर्भर करेगा। प्राथमिक, जूनियर एवं माध्यमिक इन सभी विद्यालयों में रखे जाने वाले आलेख-पत्रों में एक ही सा मसविदा हो, यह उचित नहीं है। प्राथमिक विद्यालयों में शिक्षार्थी की भावनाएँ, स्वभाव, लगन, अपने से बड़ों के प्रति भाव, नृत्य-गान आदि में कौशल आदि का ब्यौरा हो सकता है। जूनियर विद्यालयों में रुचि, सामाजिक एवं शारीरिक विकास, स्वभाव एवं अन्य गुणों का ब्यौरा लिखा जाना उचित है। पर माध्यमिक विद्यालयों में विस्तृत विषय-वस्तु सम्मिलित की जानी चाहिए। इनमें प्रयुक्त संकलित आलेख-पत्रों में शिक्षा का इतिहास, विभिन्न विषयों में सफलता-विफलता, परिवार-रचना, व्यक्तित्व रचना, रुचियाँ, विद्यालय की परिस्थिति से सामंजस्य आदि सभी बातों का संक्षिप्त वर्णन आवश्यक है। सामान्य रूप से इन पत्रों में निम्नलिखित तथ्य होने चाहिए—

व्यक्तिगत—नाम, जन्म-तिथि, जन्म-स्थान, लिंग, जाति आदि।

परिवार—माता-पिता एवं अभिभावकों के नाम, पते एवं व्यवसाय; माता-पिता जीवित हैं अथवा नहीं; परिवार में प्रयुक्त-भाषा; माता-पिता के वैवाहिक सम्बन्ध; भाई-बहिन की संख्या; माता-पिता का जन्म-स्थान, एवं प्रदेश।

विद्यालय—विभिन्न वर्षों में प्राप्त फलांक; विशिष्ट सफलताओं एवं विफलताओं का वर्णन; पाठन-गति; कक्षा में स्थान; बुद्धि-

परीक्षणों में प्राप्त प्रज्ञांक; व्यक्तित्व-परीक्षणों के आधार पर किया गया मूल्यांकन; अन्य परीक्षणों के फलांक; विद्यालय में उपस्थिति के आँकड़े।

स्वास्थ्य— स्वास्थ्य का सम्पूर्ण विवरण; शारीरिक अयोग्यताओं का वर्णन एवं उनका इतिहास; रोगों का वर्णन; वंश-परम्परा या माता-पिता से प्राप्त रोग, यदि कोई हो; लम्बाई, चौड़ाई, कद, वज़न आदि का माप।

अन्य— व्यावसायिक योजनाएँ; संदर्शकों द्वारा दिए गए विवरण एवं उनका मूल्यांकन; शिक्षार्थी की पढ़ाई के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में की गई प्रगति, जैसे वाद-विवाद, खेल-कूद आदि; अध्यापकों एवं अन्य व्यक्तियों द्वारा दी गई टिप्पणियाँ; नियुक्ति-विवरण, यदि विद्यालय की अवधि में शिक्षार्थी की कोई कहीं नियुक्ति हुई हो।

संकलित आलेख-पत्रों के प्रकार—

संकलित आलेख-पत्र मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं—(१) एक-पत्र लेखा (Single-card Record), (२) पैकेट या परत (Packet or Folder), (३) संकलित परत (Cumulative Folder)। इनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है—

एक-पत्र लेखा—इनमें एक ही पत्र होता है। इसके दोनों ओर लिखा जा सकता है। अतिरिक्त सूचना के लिए प्रत्येक विद्यार्थी के लिए एक अतिरिक्त परत का प्रबन्ध आवश्यक है।

पैकेट या परत—ये पैकेट अनेक आकार के होते हैं। इनमें अनेक पत्र रखे जा सकते हैं। इनके प्रयोग से विभिन्न समयों पर प्राप्त सूचनाओं को अलग-अलग पत्र में लिखकर पैकेट के अन्दर रखा जा सकता है। विषयों का वर्गीकरण करके प्रत्येक पत्र अलग-अलग रंग का बनाया जा सकता है। इससे कालान्तर में इन्हें निकालने या [illegible] में सुविधा रहती है।

संकलित परत—ये बड़े पत्र होते हैं जिनका आकार १२″ वर्ग तक सम्भव है या इससे भी अधिक। इनके दोनों ओर विभिन्न प्रकार की सूचना के लिए अलग-अलग स्थान दिए होते हैं।

परत में अतिरिक्त सूचना लिखने की भी व्यवस्था होती है।

एक अच्छे संकलित आलेख-पत्र की विशेषताएँ—

संकलित आलेख-पत्र का समुचित उपयोग हो सके, इसके लिए उसमें निम्न-लिखित गुण होना आवश्यक है—

१. इसमें वस्तुगत विवरण होने चाहिए, न कि आत्मगत। जो कुछ लिखा जाय, संक्षिप्त एवं सार रूप होना आवश्यक है, न कि विस्तृत।

२. आलेख-पत्र विद्यार्थी की प्रगति का सम्पूर्ण चित्र प्रस्तुत कर सके, इसके लिए आवश्यक है कि विद्यालय या उसके बाहर, एवं सभी परिस्थितियों में, परिवार हो या कक्षा, खेल का मैदान हो या पढ़ाई, विद्यार्थी का संक्षिप्त विवरण दिया जाना चाहिए। विकास के विभिन्न क्षेत्रों में विद्यार्थी की प्रगति का ब्यौरा भी आवश्यक है। विभिन्न घटनाओं का तथ्यपूर्ण एवं तिथि सहित वर्णन होना उचित है। केवल एक परिस्थिति में व्यवहार के आधार पर मूल्यांकन करना अवैज्ञानिक होगा।

३. निश्चित लक्ष्य या उद्देश्यों को ध्यान में रखकर ही आलेख-पत्र में विभिन्न स्थानों पर लिखना चाहिए। पर ये आलेख इतने जटिल न हो जाएँ कि उनका उपयोग न हो सके। पूर्व-नियोजन आवश्यक है।

४. यदि सम्भव हो सके तो किसी एक व्यक्ति द्वारा किए गए मूल्यांकन की अपेक्षा अनेक अध्यापकों या विद्यालय के संचालकों के सामूहिक मूल्यांकन आधार पर आलेख-पत्रों में विभिन्न टिप्पणियाँ लिखनी चाहिए। इससे पत्र अधिक वस्तुगत एवं विश्वसनीय हो सकेंगे।

५. इस उद्देश्य से कि ये आलेख-पत्र विद्यालय में विद्यार्थी की आवश्यकता की पूर्ति कर सकें, यह आवश्यक है कि विद्यार्थी के स्कूल में प्रविष्ट करते ही आलेख-पत्र का लिखना प्रारम्भ कर दिया जाए एवं तदनन्तर निरन्तर उसकी आवश्यकताओं, इच्छाओं, योजनाओं के बारे में उसमें यथासमय लिख लिया जाए। इस प्रकार विभिन्न कक्षाओं या स्तरों पर उसने क्या व्यवहार किया एवं उसकी क्या आकांक्षाएँ—महत्वाकांक्षाएँ थीं, इसका विवरण सम्भव हो सकेगा। इस विवरण के आधार पर संदर्शन करने एवं शिक्षार्थी की सामंजस्य समस्याओं को सुलझाने में पर्याप्त सहायता मिलती है।

६. चूँकि आलेख-पत्र संकलित होते हैं, यह आवश्यक है कि विभिन्न अवसरों पर जो कुछ इनमें लिखा जाय, स्वतन्त्र हो; अर्थात् बाद में जो कुछ लिखा जाय, वह पहले जो कुछ लिखा गया है, उससे प्रभावित न हो। प्रत्येक व्यक्ति द्वारा किया गया मूल्यन स्वयं अपना एवं स्वतन्त्र होना चाहिए। विद्यार्थी के बारे में एक अध्यापक या संचालक ने जो गुप्त सूचना लिखी है वह दूसरा अध्यापक न पढ़ पाये जब तक कि वह उसके आधार पर संदर्शन करने या विद्यार्थी की कोई समस्या सुलझाने को उत्सुक न हो।

७. यह आवश्यक है कि आलेख-पत्रों का लिखना एवं फायल करना सुविधाजनक एवं कम खर्चीला हो। इन्हें विद्यालय में रखना भी ऐसे स्थान पर चाहिए जहाँ सरलता से इनका उपयोग हो सके। यदि प्रधानाचार्य के कार्यालय में ही इन्हें रखा जाय तो सम्भव है कुछ परिस्थितियों में ये अध्यापक या संदर्शक की पहुँच के बाहर हों। अतः इस सम्बन्ध में उचित निर्णय करना आवश्यक है।

८. समय-समय पर संकलित आलेख-पत्रों का पुनर्मूल्यन करना चाहिए।

: २७ :

अभिवृत्तियाँ एवं उनका मापन

अभिवृत्तियों का स्वरूप

अभिवृत्तियाँ व्यक्ति के उस दृष्टिकोण की ओर संकेत करती हैं, जिनके कारण वह किसी वस्तु, परिस्थिति, संस्था या व्यक्ति के प्रति किसी विशिष्ट भाँति व्यवहार करता है। किन्तु 'अभिवृत्ति' शब्द इतना सरल नहीं है। विभिन्न विद्वानों ने अलग-अलग शब्दों में इसे परिभाषित किया है। **थर्स्टन**[1] के अनुसार यह किसी विशिष्ट विषय के प्रति व्यक्ति की प्रवृत्तियों, पूर्वाग्रहों, पूर्व-निर्धारित विचारों एवं आतंकों का योग है। इस प्रकार धर्म, युद्ध एवं शान्ति, राजनीतिक दलों, संस्थाओं आदि के प्रति व्यक्ति की कोई निश्चित अभिवृत्ति होती है।

व्यक्ति किसी निश्चित समाज में रहता है और शिक्षालय में शिक्षा प्राप्त करता है। अतः इनका उसकी अभिवृत्तियों पर प्रभाव पड़ता है। बहुत सी अभिवृत्तियाँ उसे अपने माता-पिता से प्राप्त होती हैं। यों तो जन्म से ही हमारी अभिवृत्तियों का विकास होता रहता है। भोजन, वस्त्र, माता-पिता, संगी-साथियों के बारे में बचपन में ही हम एक निश्चित अभिवृत्ति बना लेते हैं।

1. "···sum total of a man's inclinations and feelings, prejudices or bias, preconceived notions, ideas, threats, and convictions about any specific topic."

अभिवृत्तियाँ नकारात्मक तथा सकारात्मक[1] दोनों प्रकार की हो सकती हैं। यदि हम किसी व्यक्ति से घृणा करते हैं, उससे निराश हैं, उसने हमें हानि पहुँचाई है या किसी राजनीतिक दल या धर्म में हमारा विश्वास नहीं है तो उसके प्रति हमारी अभिवृत्ति 'नकारात्मक' होगी। अनेक हिन्दू मुसलमानों के प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति रखते हैं, और मुसलमान हिन्दुओं के प्रति। यदि हम किसी व्यक्ति या वस्तु को चाहते हैं, या किसी संस्था, धर्म, दल आदि में हमारा विश्वास है तो उसके प्रति हमारी 'धनात्मक' अभिवृत्ति होगी।

अभिवृत्तियों एवं मत[2] **या राय में अन्तर** है। 'मत' वास्तव में 'अभिवृत्ति की शाब्दिक अभिव्यक्ति' है। यदि कोई व्यक्ति यह कहे कि हमने संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता ग्रहण करके भूल की तो यह उसका मत हुआ। किन्तु इससे यह भी ज्ञात होता है कि उसकी अभिवृत्ति संयुक्त राष्ट्र संघ विरोधी है।

अभिवृत्तियों की परिभाषाएँ—

अभिवृत्ति की कुछ मुख्य परिभाषाएँ ये हैं—

१. अभिवृत्ति आवश्यक रूप से एक पूर्वज्ञापी प्रतिक्रिया है, कार्य का आरम्भ जिसकी निश्चित पूर्त्ति न हुई हो।"

—किम्बाल यंग[3]

२. "अभिवृत्ति तत्परता की एक मानसिक एवं तटस्थ परिस्थिति है जो सभी सम्बन्धित वस्तुओं एवं परिस्थितियों के प्रति व्यक्ति की प्रक्रियाओं पर निर्देशात्मक एवं गत्यात्मक प्रभाव डालती है।"

—ब्रिट[4]

३. "अभिवृत्ति को व्यक्ति के संसार के किसी अंग के प्रति प्रेरणात्मक, संवेगात्मक, प्रत्यक्षात्मक एवं ज्ञानात्मक प्रक्रियाओं के स्थायी

---

1. Negative and Positive.
2. Opinion.
3. "An attitude is essentially a form of anticipatory response, a beginning of action not necessarily completed".
—K. Young.
4. "An attitude is a mental and neutral state of readiness, exerting directive or dynamic influence upon the individual's response to all objects and situations with which it is related."—Britt.

संगठन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।"

—क्रैच एवं क्रचफील्ड[1]

४. "अभिवृत्तियाँ मत, रुचि या उद्देश्य की थोड़ी बहुत स्थायी प्रवृत्तियाँ हैं, जिनमें किसी प्रकार के पूर्व ज्ञान की प्रत्याशा और उचित प्रक्रिया की तत्परता निहित है।" — वुडवर्थ[2]

अभिवृत्तियों की विशेषताएँ—

इनकी मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं —

१. अभिवृत्तियों का प्रसार असीमित है। हमारी पसन्द, नापसन्द आराध्यदेव, भोजन की पसन्द आदि सभी बातें अभिवृत्ति के अन्तर्गत आती हैं।
२. यह बाह्य वस्तुओं के प्रति हमारी स्थिति है—पक्ष में या विपक्ष में।
३. अभिवृत्तियों में व्यक्तिगत विभेद होते हैं।
४. अभिवृत्तियाँ हमारे व्यवहार का अधार हैं।
५. ये अव्यक्त भी हो सकती हैं और व्यक्त भी।
६. अभिवृत्तियाँ हमारे सम्पूर्ण व्यवहार-संगठन में समन्वित होती हैं।
७. ये वातावरण से प्राप्त हैं न कि जन्मजात। हिन्दू, मुसलमान, पारसी, जनसंघ, कांग्रेस आदि के प्रति जन्म से ही किसी की पक्ष या विपक्ष में अभिवृत्ति नहीं होती।
८. किसी वस्तु या परिस्थिति के प्रति अभिवृत्ति आवश्यक रूप से उसकी उपयोगिता पर आधारित नहीं है।
९. विभिन्न संस्कृतियों में व्यक्ति की अभिवृत्तियाँ अलग-अलग होती हैं। विभिन्न समुदायों की अभिवृत्तियाँ भी अलग-अलग होती हैं।
१०. अभिवृत्तियाँ पर्याप्त रूप से स्थायी होती हैं। पर इनमें परिवर्त्तन या संशोधन सम्भव है।

---

1. "An attitude can be defined as an enduring organisation of motivational, emotional, perceptual and cognitive processes with respect to some aspect of the individual's world."—Krech and Crutchfield.

2. "Attitudes are more or less "stable set or disposition of opinion, interest or purpose, involving expectancy of certain kind, previous experience, and readiness with an appropriate response."—Woodworth.

११. अभिवृत्तियाँ एक व्यक्ति या वस्तु के प्रति हो सकती हैं या अनेक के प्रति। उदाहरणार्थ, एक राष्ट्र से लड़ते समय उसके अधिकांश व्यक्तियों को हम शत्रु समझते हैं।
१२. इनके दो पक्ष हैं—जिसकी अभिवृत्ति है, और जिसके प्रति है।

अभिवृत्ति एवं शील-गुण—

अभिवृत्ति एवं शील-गुणों में निम्न अन्तर हैं—

१. शीलगुण विशेषणात्मक शब्द हैं। अभिवृत्तियाँ दूसरों के प्रति हमारी व्यवहार करने की प्रवृत्तियों की ओर संकेत करती हैं।
२. अभिवृत्तियाँ पक्ष या विपक्ष में होती हैं। शीलगुणों का इस प्रकार वर्गीकरण नहीं हो सकता।
३. शीलगुण अपेक्षाकृत अधिक सामान्यीकृत होते हैं। उदाहरणार्थ—'विनाशात्मक' एक सामान्य शीलगुण है। इस शीलगुणों से विभिन्न वस्तुओं के प्रति व्यक्ति का व्यवहार निर्धारित होगा।

अभिवृत्तियों का वर्गीकरण—

बोगार्डस ने अपनी पुस्तक "समाज-मनोविज्ञान के आधार" में अभिवृत्तियों को तीन भागों में बाँटा है—(१) कार्य-सम्बन्धी, (२) खेल-सम्बन्धी, एवं (३) वैज्ञानिक।

(१) **प्राप्ति एवं कार्य-सम्बन्धी अभिवृत्तियाँ**[1]—क्लाइन्बर्ग के अनुसार संग्रह एवं प्राप्ति की अभिलाषा जन्मजात नहीं है, वरन् इसका निर्धारण संस्कृतिजन्य है। आधुनिक युग की असमानता एवं संघर्ष प्राप्ति-सम्बन्धी अभिवृत्ति के फलस्वरूप हैं।

(२) **खेल-सम्बन्धी अभिवृत्तियाँ**[2]—ये स्वस्थ जीवन के लिए आवश्यक हैं।

(३) **जिज्ञासात्मक एवं वैज्ञानिक अभिवृत्तियाँ**[3]—विद्वानों एवं वैज्ञानिकों की अभिवृत्तियों को इसके अन्तर्गत रखा जा सकता है।

अभिवृत्तियों के निर्धारक[4]—

निम्नलिखित प्रतिकारक अभिवृत्तियों के निर्धारण या परिवर्त्तन को प्रभावित करते हैं—

---

1. Acquisitive and Work Attitudes.
2. Play Attitudes.
3. Inquisitive and Scientific Attitudes.
4. Determinants of Attitudes.

(१) **सांस्कृतिक निर्धारक**—इस सम्बन्ध में कुछ अध्ययन हुए हैं। कार्लसन[1] के अनुसार यहूदी एवं विद्यालयों के पूर्व-स्नातक विद्यार्थी ईश्वर एवं जन्म-नियन्त्रण के प्रति उदार होते हैं। प्रोटेस्टैन्ट अपेक्षाकृत कम उदार होते हैं। विशिष्ट शिक्षा संस्थानों में पढ़ने वाले कैथोलिक फासिज्म में विश्वास रखते हैं।

(२) **मनोवैज्ञानिक निर्धारक**[2]—तनाव, आवश्यकताएँ, संवेगात्मक अनुभव, प्रत्यक्षीकरण आदि अभिवृत्तियों को प्रभावित करते हैं। उदाहरणस्वरूप, किसी देश या स्थान से दूसरे देश या स्थान में जाने वाले शरणार्थियों की अभिवृत्ति काफी सीमा तक उनकी मानवीय एवं भौतिक हानि द्वारा निर्धारित होती है।

(३) **कार्यात्मक निर्धारक**[3]—इस सम्बन्ध में व्यक्ति के स्वाभाव की चर्चा करना उपयुक्त है। इससे काफी सीमा तक वस्तुओं, व्यक्तियों एवं परिस्थितियों के प्रति व्यक्ति की अभिवृत्तियों का निर्धारण होता है।

अभिवृत्ति-निर्माण के सिद्धान्त—

अभिवृत्तियों के दो सिद्धान्त अधिक प्रमुख हैं :—

(१) आसन-प्रतिक्रिया सिद्धान्त,[4] एवं (२) मानसिक वृत्ति सिद्धान्त[5]।

(१) **आसन-प्रतिक्रिया सिद्धान्त**—यह अभिवृत्ति निर्माण की एक अवयवी व्याख्या प्रस्तुत करती है। प्रत्येक व्यक्ति दूसरों के प्रति प्रतिक्रिया करता है एवं दूसरे उसके प्रति। इस अर्न्तप्रक्रिया में दूसरों के प्रति उसकी अभिवृत्ति का निर्माण होजाता है। अभिवृत्तियाँ उद्दीपक-प्रतिक्रिया एवं माँसपेशियों की तत्परता के फलस्वरूप उत्पन्न होती हैं।

(२) **मानसिक वृत्ति सिद्धान्त**—इसके अनुसार कुछ अभिवृत्तियाँ पूर्व-निश्चित होती हैं अतः हमारे स्वभाव का ंश बन जाती हैं। ये चेतन एवं सप्रयास होती हैं। यदि कोई व्यक्ति यह कहे कि पूँजीवाद या साम्यवाद बुरी व्यवस्था है तो इसका यह अर्थ है कि उसकी मानसिक वत्ति पूँजीवाद या साम्यवाद विरोधी है।

---

1. Carlson.
2. Psychological Determinants.
3. Functional Attitudes.
4. Postural Response Theory.
5. Mental Set Theory.

अभिवृत्तिओं का मापन

अभिवृत्तियों के मापन में निम्न मुख्य आयाम हैं—

१. **दिशा**[1]—अर्थात् पक्ष में है या विपक्ष में।

२. **सीमा या मात्रा**[2]—अर्थात् पक्ष या विपक्ष कितना है।

३. **शक्ति**[3]—अभिवृत्ति की तीव्रता।

४. **उन्मुक्तता**[4]—अर्थात् अभिवृत्ति की अभिव्यक्ति कितनी मुक्त है।

५. **स्थिरता**[5]—विभिन्न परिस्थितियों में व्यक्ति अपनी अभिवृत्ति को कितनी स्थिर रखता है।

अभिवृत्तियों के मापन की अनेक विधियाँ हैं। इनमें से कुछ का वर्णन व्यक्तित्व-मापन के सम्बन्ध में किया जा चुका है। प्रक्षेपण विधियों में रोशा, टी. ए. टी. शब्द साहचर्य आदि सम्मिलित हैं। इन सभी को अभिवृत्तियों के मापन में प्रयुक्त किया जा सकता है। प्रश्नावलियाँ, पारिस्थितियिक परीक्षण, साक्षात्कार आदि का भी प्रयोग किया जा सकता है। पर अभिवृत्ति-मापन के लिए मुख्यतया 'स्केलिंग विधि'[6] का प्रयोग किया जाता है। थर्स्टन एवं चेव, गुटमैन, लाइकर्ट आदि द्वारा रचित इस प्रकार के कुछ परीक्षण बने हैं। हम इनका यहाँ वर्णन करेंगे—

थर्स्टन एवं चेव का चर्च के प्रति अभिवृत्ति परीक्षण[7]—

सर्वप्रथम व्यक्तियों से चर्च के बारे में अपनी राय लिखने को कहा गया। चर्च के बारे में उपर्युक्त कथन एकत्र करने के लिए तत्कालीन साहित्य का भी अध्ययन किया गया। इस प्रकार कुल १३० कथन एकत्र हुए। ये चर्च के प्रति पक्ष एवं विपक्ष दोनों प्रकार की अभिवृत्तियों से सम्बन्धित थे। कथन एकत्र करने में कुछ निम्नलिखित व्यावहारिक बातों का ध्यान रखा गया।

(i) कथन अत्यन्त संक्षिप्त थे ताकि प्रयोज्य थक न जाये या नीरसता अनुभव न करे।

(ii) कथन इस प्रकार के थे ताकि इनको क्रम में रखा जा सके।

---

1. Direction.
2. Degree.
3. Strength.
4. Salience.
5. Consistency.
6. Scaling Technique.
7. Thurston and Chave's Scale for Attitude Toward Church.

(iii) कथन की स्वीकृति एवं अस्वीकृति दी हुई समस्या के प्रति पाठक की अभिवृत्ति को व्यक्त करती थी।

(iv) अस्पष्ट एवं द्विअर्थक कथनों को नहीं लिया गया।

इन सब सावधानियों के बावजूद भी निर्णायकों के निर्णय से ज्ञात हुआ कि कुछ कथन अस्पष्ट थे। इन्हें अन्तिम परीक्षण में नहीं लिया गया। निर्णायकों से इन १३० कथनों को ग्यारह ढेरियों में छाँटने के लिए कहा गया। उन्हें चर्च के बारे में स्वयं अपना मत प्रकट न करने के लिए निर्देश दिया गया। कथनों को छोटी-छोटी कागज की पट्टियों पर माइक्लोस्टाइल कर लिया गया। तीन सौ निर्णायकों को कागज की ये पट्टियाँ दे दी गईं। निर्णायकों ने ग्यारह ढेरियों में पट्टियाँ छाँट कर रखीं ताकि इन ढेरियों के कथनों में समान दूरी होगई।

अब प्रमाप एवं विचलन मूल्य ज्ञात किये गए। प्रत्येक कथन के लिए अलग-अलग प्रतिशत वक्र बनाये गए। इसमें पचास प्रतिशत स्तर प्रमाप-मूल्य[1] होगा एवं Q_3 तथा Q_1 (७५° एवं २५°) के बीच का अन्तर विचलन-मूल्य।[2] यदि विचलन-मूल्य अधिक आया तो इसका यह अर्थ हुआ कि निर्णायकों के निर्णय में पर्याप्त असमानता है; अर्थात् कथन अस्पष्ट एवं अनुचित है। अतः उसे निकाल दिया गया।

उदाहरणार्थ, कथन संख्या १, १, ६५ एवं १३० को विभिन्न ढेरों में रखने वाले निर्णायकों के प्रतिशत इस प्रकार हैं—

कथन संख्या	ढेरी निर्णायकों का संकलित प्रतिशत										
	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
१	०	०	०	०	०	८	१७	२३	३३	५२	१००
२	२	१३	३५	७२	९३	९७	९८	९९	१००	१००	१००
६५	०	०	०	०	०	१	१	३	८	१८	१००
१३०	३८	६८	८७	९२	९७	९८	९९	१००	१००	१००	१००

स्पष्ट है कि प्रथम कथन को ८% निर्णायकों ने छठवीं ढेरी में रखा, ९% ने सातवीं ढेरी में, ६% ने ८ वीं ढेरी में, १०% ने ९ वीं ढेरी में, १९% ने १० वीं ढेरी में, एवं ४८% ने ११ वीं ढेरी में। इसी प्रकार अन्य कथनों के प्रतिशत दिये हैं। कथन संख्या पेंसठ वीं तथा एक-सौ तीस के ये प्रतिशत इस प्रकार दिखाये जा सकते हैं—

1. Scale-Value.
2. Quartile-Value.

कथन सं ६५

ढेरी	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
निर्णायकों का प्रतिशत	०	०	०	०	०	१	०	२	५	१०	८२
संकलित प्रतिशत	०	०	०	०	०	१	१	३	८	१८	१००

कथन सं १३०

ढेरी	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
निर्णायकों प्रतिशत	३८	३०	१९	५	५	१	१	१	०	०	०
संकलित प्रतिशत	३८	६८	८७	९२	९७	९८	९९	१००	१००	१००	१००

इस प्रकार प्रमाप तथा विचलन मूल्य निकालकर अनुपयुक्त कथनों को अलग कर दिया गया। १३० कथनों में से अब अन्तिम रूप से ४५ कथन बचे। इन कथनों के कुछ उदाहरण ये हैं—

१. चर्च एक ऐसी संस्था है जो नैतिक शिक्षा बढ़ाने में मदद करती है।

२. हमें चर्च को शीघ्र ही समाप्त कर देना चाहिए।

३. शिक्षा की प्रगति में चर्च का कोई महत्व नहीं है।

इन सभी कथनों को क्रम में रखकर फिर सम-विषम आधार पर **विश्वसनीयता** ज्ञात की गई। सम्पूर्ण मापदण्ड की विश्वसनीयता ·९२ है। मापदण्ड में आत्म-निर्णय[1] द्वारा प्रयोज्य से उसकी अभिवृत्ति पूछने के लिए एक रेखा दी है। इसके साथ मापदण्ड के फलांकों की तुलना करके **वैधता** ज्ञात की गई। वैधता गुणांक ·६७ आया।

थर्स्टन एवं चेव के चर्च के प्रति अभिवृत्ति-मापदण्ड को शिकागो विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों पर प्रयुक्त किया गया। मध्यमान फलांकों को देखने से ज्ञात हुआ कि कैथोलिक चर्च के अधिक पक्ष में थे; यहूदी उदासीन या विरोधी थे एवं प्रोटेस्टेन्ट इन दोनों के मध्य। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियाँ चर्च के अधिक पक्ष में थीं।

थर्स्टन अभिवृत्ति मापदण्ड काफी प्रचलित हुआ है। इसके आधार पर अनेक अन्य मापदण्ड बनाये गए हैं। एक प्रमुख मापदण्ड रैमर्स ने बनाया है। कूम्ब तथा ट्रैवर्स ने "अध्यापन के प्रति अभिवृत्ति मापदण्ड" की रचना की है।

कूम्ब तथा ट्रैवर्स का अध्यापन के प्रति अभिवृत्ति मापदण्ड—

कूम्ब तथा ट्रैवर्स ने इस मापदण्ड में अध्यापन के कार्य के सम्बन्ध में कुछ कथन दिए हैं। प्रयोज्यों से प्रत्येक कथन पर विचार करने को कहा गया।

1. Self-rating.

जिस कथन से वह सहमत है उसके बारे में 'हाँ' एवं जिससे वह असहमत है उसके बारे में 'ना' में उसकी प्रतिक्रिया ली गई । कुछ कथन ये हैं—

१. बहुत योग्य व्यक्ति अध्यापन में अपने समय का अपव्यय करेंगे।
२. अच्छी नागरिकता के विकास में अध्यापक महत्वपूर्ण भाग अदा करता है।
३. अध्यापन का मुख्य आकर्षण यह है कि इसमें आर्थिक सुरक्षा मिलती है।
४. अध्यापन कार्य में बहुत योग्य व्यक्तियों को प्रवेश करने की आवश्यकता नहीं है।

निस्सन्देह इस मापदण्ड की रचना थर्स्टन के मापदण्ड की अपेक्षा अत्यन्त सरल है।

बोगार्डस का सामाजिक दूरी मापदण्ड[1]—

बोगार्डस ने विभिन्न राष्ट्रों के व्यक्तियों के प्रति अमरीकनों की अभिवृत्तियाँ ज्ञात करने के लिए मापदण्ड बनाया। उसने सात कथन बनाये—

१. वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करना,
२. व्यक्तिगत मित्र के रूप में क्लब में बुलाना,
३. पड़ोसी की तरह अपने मार्ग में आने देना,
४. अपने व्यवसाय में नौकरी करने देना,
५. अपने देश की नागरिकता ग्रहण कर लेने देना,
६. अपने देश में केवल दर्शक के रूप में आने देना,
७. अपने देश से निकाल देना।

कनाडियन, चीनियों, जापानियों, तुर्क, आर्मीनियन, हिन्दू आदि के बारे में इन कथनों को पूछा गया। ज्ञात हुआ कि अमरीकन लोग हिन्दू, तुर्क आदि की अपेक्षा कनाडियन आदि को अपने अधिक समीप समझते थे।

लाइकर्ट का पाँच-बिन्दु मापदण्ड[2]—

लाइकर्ट ने कुछ कथन बनाकर पाँच आधार पर प्रश्न पूछे—(१) पूर्ण रूप से सहमत, (२) सहमत, (३) अनिश्चित, (४) असहमत, एवं

1. Bogardus, E.S. : A Social Distance Scale. *Social and Sic.* Res., 1933, 17, pp. 265-271.
2. Likert, R A. : Technique for the Measurement of Attitudes, *Arch. Psychol*, 1932, No. 140.

(५) पूर्ण रूप से असहमत । प्रत्येक के लिए ५ से लेकर १ तक अंक दिए गए। अधिक अंक प्राप्त होने पर कथन के पक्ष में अभिवृत्ति थी ।

इसी प्रकार अन्य मापदण्ड हैं जैसे **गुटमैन** की स्केलोग्राम विधि, क्रिल्पैट्रिक की आत्म-विभेद विधि, काट्ज़ तथा आल्पोर्ट का अभिवृत्ति मापन परीक्षण आदि । इनका विशद् वर्णन समाज-मनोविज्ञान की पुस्तकों में दिया गया है ।

:२८:

संदर्शन एवं परामर्श

संदर्शन वह सहायता है जो किसी व्यक्ति की समस्याओं का समाधान करने के लिए दी जाती है। वास्तव में जिस व्यक्ति को संदर्शन दिया जाता है, अपनी समस्याओं का समाधान तो वह स्वयं ही करता है, उसे केवल इस कार्य में सहायता दी जाती है। संदर्शन एक सक्रिय एवं गत्यात्मक प्रक्रिया है। व्यक्ति अपनी कार्यक्षमताओं, योग्यताओं, रुचि, एवं अपने ही व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों से अनभिज्ञ रहता है। प्रत्येक व्यक्ति की समस्यायें भी एक विशिष्ट प्रकार की ही होती हैं। संदर्शन के द्वारा उसे स्वयं अपनी इन क्षमताओं एवं रुचियों का ज्ञान कराया जा सकता है। जोन्स[1] के अनुसार, "संदर्शन वह व्यक्तिगत सहायता है जो एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को अपने जीवन के लक्ष्यों का निर्धारण करने के लिए, अभियोजन करने के लिए एवं उन समस्याओं को हल करके के लिए देता है, जो लक्ष्य-प्राप्ति में बाधा डालें।"

---

1. "Guidance is the personal help that is given by one person to another in developing life-goals, making adjustments and solving-problems that confront him in the attainment of goals."—Jones, A. J. : *Principles of Guidance*, McGraw Hill Book Co., 1951, p. 85.

संदर्शन की ऐतिहासिक प्रगति

पाश्चात्य देशों में संदर्शन—

यद्यपि आजकल अधिकांश देशों में संदर्शन एवं परामर्श की व्यवस्था है, पर इसका सर्वाधिक प्रचलन अमरीका में ही है। इसका प्रारम्भ भी अमरीका में ही हुआ। सन् १८५० के पश्चात् रॉलिन्स ने एक प्रसिद्ध पुस्तक लिखी : "मनुष्य क्या कर सकेगा ?"[1] सन् १९०६ में संयुक्त राज्य अमरीका के बोस्टन नगर में पार्सन्स ने 'रोटी कमाने वालों की एक संस्था'[2] बनाई। न्यूयार्क में इसी वर्ष वीवर ने एक 'विद्यार्थी सहायक समिति'[3] बनाई। दो वर्ष पश्चात् सन् १९०८ में पार्सन्स ने बोस्टन नगर में एक व्यवसाय केन्द्र स्थापित किया एवं "व्यवसाय-चयन"[४] नामक अपनी एक प्रसिद्ध पुस्तक लिखी। उसने अपनी एक रिपोर्ट में सर्वप्रथम 'व्यावसायिक संदर्शन' शब्द का प्रयोग किया एवं स्वयं को 'परामर्शदाता' कहा। अतः संदर्शन काफी प्रचलित हुआ। यहाँ तक कि इसके राष्ट्रीय सम्मेलन होने लगे। सन् १९१० में 'बोस्टन व्यावसायिक संदर्शन केन्द्र' की ओर से बोस्टन नगर में एक द्वि-दिवसीय परामर्श-सम्मेलन हुआ। १९१२ में न्यूयार्क में एक अन्य सम्मेलन हुआ। सन् १९१३ में संयुक्त राज्य अमरीका में एक 'राष्ट्रीय व्यावसायिक संदर्शन संस्था'[5] की नींव पड़ी। कालान्तर में अन्य संस्थाएँ भी खुलने लगीं। 'अमरीका की कर्मचारी एवं संदर्शन संस्था'[6] १९५१ में बनी।

संदर्शन एवं परामर्श पर अब तक अनेक पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं। हम कुछ प्रमुख पुस्तकों का उल्लेख तिथि-क्रमानुसार नीचे कर रहे हैं—

ओकली, सी० ए० : **हैन्डबुक ऑफ वोकेशनल गाइडैन्स**, यूनीवर्सिटी ऑफ लन्दन प्रेस, १९३७.

सुपर, डी० ई० : **अप्रेसिंग वोकेशनल फिटनैस**, हार्पर एण्ड ब्रादर्स, न्यूयार्क १९४९.

रैन, सी० जी० एवं लार्सन : **स्टडिंग एफ़ैक्टिवली**, स्टैन्फोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, १९४९.

विलियमसन, ई० जी० : **काउन्सिलिंग एडोलैसैन्ट्स**, मैक्ग्रो-हिल बुक कम्पनी, १९५०.

---

1. Rollins, F. W. : *"What Can a Man Do ?"*
2. Bread Winners, Institute.
3. Students' Aid Committee.
4. Parsons, F. : *Choosing a Vocation.*
5. National Vocational Guidance Association.
6. American Personnel and Guidance Association.

जोन्स, ए० जे० : प्रिन्सीपिल्स ऑफ गाइडेन्स, मैक्ग्रो-हिल बुक कम्पनी, १९५१.

रथ स्ट्रांग : एजूकेशनल गाइडेन्स, मैकमिलन एण्ड कम्पनी, न्यूयार्क, १९५४.

हम्फ्री एवं टैक्सलर : गाइडेन्स सर्विसिज, साइन्स रिसर्च एसोसियेट्स, शिकागो, १९५४.

अमरीका में प्रकाशित संदर्शन पर इस प्रकार की बहुत सी पुस्तकें हैं। योरुप में भी अनेक पुस्तकें लिखी गई हैं। अनेक संस्थाएँ भी खोली गई हैं। सन् १९१८ में जर्मनी में परामर्श प्रारम्भ हुआ। फ्रान्स में १९२२ में 'व्यावसायिक संदर्शन की राष्ट्रीय संस्था'[1] की स्थापना हुई। इसी वर्ष इंग्लैण्ड में भी 'औद्योगिक मनोविज्ञान की राष्ट्रीय संस्था'[2] की स्थापना हुई। इसमें अतिशयोक्ति नहीं है कि औद्योगिक मनोविज्ञान का संदर्शन से बहुत सम्बन्ध है। जापान, कनाडा, भारत सभी स्थानों पर अब अनेक संदर्शन केन्द्रों एवं संस्थाओं की स्थापना हो चुकी है।

भारतवर्ष में संदर्शन एवं परामर्श—

पिछले कुछ वर्षों में भारतवर्ष में संदर्शन एवं परामर्श का कार्य बहुत तेजी से बढ़ा है। अनेक नगरों में रोजगार कार्यालयों की स्थापना हो चुकी है। सन् १९४५ में सर्वप्रथम एक रोजगार समिति की स्थापना हुई थी, जिसका नाम था, "प्रशिक्षण एवं रोजगार सेवा संगठन समिति"[4]। तत्पश्चात् पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत अनेक रोजगार कार्यालय खुले। शिक्षा मन्त्रालय, युवक ईसाई संस्था,[5] श्रम मन्त्रालय एवं अन्य केन्द्रों से तथा व्यक्तिगत रूप से अनेक प्रकाशकों द्वारा सन्दर्शन के सम्बन्ध में अनेक पुस्तक-पुस्तिकाएँ प्रकाशित हुई हैं। शैक्षिक एवं व्यावसायिक सन्दर्शन के लिए अनेक प्रादेशिक संस्था खोले गये हैं। दिल्ली में इस प्रकार का एक केन्द्रीय संस्थान[6] भी खुला है। इन संदर्शन केन्द्रों में बम्बई की 'पारसी पंचायत वोकेशनल ब्यूरो' एवं इलाहाबाद का 'ब्यूरो ऑफ साइकॉलॉजी' सन् १९४७ में खुले। 'ब्यूरो आफ ऐजूकेशनल एण्ड

1. National Institute of Vocational Guidance.
2. National Institute of Industrial Psychology.
3. Employment Exchanges.
4. Training and Employment Service Organisation Committee.
5. Youngmen Christian Association. (Y. M. C. A.)
6. Central Bureau of Educational and Vocational Guidance.

वोकेशनल गाइडैन्स, पटना' १९५४ में स्थापित हुआ। केन्द्रीय संस्थान, दिल्ली १९५६ में खुला एवं राजस्थान का 'ब्यूरो ऑव एजूकेशनल एवं वोकेशनल गाइडैन्स' १९५९ में। अनेक विश्वविद्यालयों में भी व्यावसायिक संदर्शन विभाग खुले हैं। इस प्रकार के कुछ उल्लेखनीय विभाग बड़ौदा विश्वविद्यालय, पंजाब विश्वविद्यालय, बलवन्त राजपूत कॉलिज आगरा, एवं अलीगढ़ विश्वविद्यालय में हैं। इसी वर्ष से अलीगढ़ विश्वविद्यालय ने संदर्शन के लिए एक डिप्लोमा कोर्स भी प्रारम्भ किया है।

उत्तर-प्रदेश में संदर्शन एवं परामर्श--

भारतवर्ष के इस प्रमुख राज्य उत्तर-प्रदेश की सरकार ने भी संदर्शन की ओर उल्लेखनीय कार्य किया है। सन् १९४७ में इलाहाबाद में एक मनोवैज्ञानिक केन्द्र[1] की स्थापना हुई थी। सन् १९५१ में इस मनोवैज्ञानिक केन्द्र की देखरेख में एक संदर्शन योजना का प्रारम्भ हुआ। सन् १९५२ में इसके अन्तर्गत पाँच जिला केन्द्र खोले गए। ये लखनऊ, मेरठ, कानपुर बरेली तथा बनारस में हैं। इन केन्द्रों द्वारा शैक्षिक एवं व्यावसायिक संदर्श दिया जाता है। इनमें 'जिला मनोवैज्ञानिकों'[2] के अतिरिक्त अनेक अन्य कर्मचारियों की नियुक्त गई है। इनमें कुछ 'विद्यालय मनोवैज्ञानिक'[3] भी हैं। देवरिया, इटावा, बुलन्दशहर, फैजाबाद आदि अनेक स्थानों पर विद्यालय मनोवैज्ञानिकों की नियुक्ति की गई है। अनेक व्यावसायिक संदर्शकों की भी नियुक्ति की गई हैं।

इन केन्द्रों में अनेक परीक्षण भी बनते हैं। अनेक पाश्चात्य देशों में बने परीक्षणों का भारतीय संस्करण भी किया गया है। इलाहाबाद केन्द्र से स्टेनफोर्ड-बिने परीक्षण का हिन्दी संस्करण प्रकाशित हुआ है। रेविन के प्रगतिशील परीक्षण का भी संस्करण हुआ है। व्यावसायिक रुचि की परीक्षा लेने के लिए भी परीक्षण बने हैं।

इस सब के बावजूद भी अभी संदर्शन कार्य की प्रगति अत्यन्त धीमी है। आवश्यकता इस बात की है कि सभी स्थानों एवं जिलों में मनोवैज्ञानिक केन्द्र खोले जाएँ। संदर्शन देने वालों को प्रशिक्षण देने की व्यवस्था करना भी आवश्यक है। विश्वविद्यालयों में इस दिशा में कार्य किया जाना चाहिए।

---

1. Bureau of Psychology, Allahabad.
2. District Psychologists.
3. School Psychologists.

शैक्षिक, व्यावसायिक एवं वैयक्तिक संदर्शन

पाश्चात्य देशों में अनेक प्रकार का संदर्शन होता है। पर तीन क्षेत्रों—शिक्षा, व्यवसाय एवं व्यक्तिगत—में संदर्शन अधिक उल्लेखनीय है। **शैक्षिक** संदर्शन में विद्यार्थी को इस बात का ज्ञान कराया जाता है कि वह अपनी रुचि के अनुसार किस विषय का चयन करे। स्वयं विद्यार्थी कभी-कभी यह नहीं निश्चित कर पाते कि उनके लिए कौन सा विषय उचित रहेगा या उनकी किस में रुचि है। संदर्शन एवं परामर्श द्वारा यह कठिनाई दूर हो जायगी। **व्यावसायिक** संदर्शन में व्यक्ति के लिए किस प्रकार का व्यवसाय उचित रहेगा, इस सम्बन्ध में सहायता दी जाती है। व्यवसाय में सफलता का व्यक्ति की निपुणता एवं उसकी रुचि-अभिरुचि से घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् विषयों का चयन करते समय, एवं वैकल्पिक विषयों में से कौन सा उचित रहेगा, इसका निर्णय करते समय भावी व्यवसाय का ध्यान रखना चाहिए। इससे विभिन्न व्यवसायों में उचित व्यक्ति प्रवेश कर सकेंगे। **वैयक्तिक** संदर्शन में व्यक्ति को अपनी समस्याओं को हल करने, एवं सरल मानसिक असामान्यताओं के निदान में सहायता दी जाती है। व्यक्ति की समस्यायें अनेक प्रकार की हो सकती हैं, जैसे शिक्षा, विवाह, प्रेम, सामाजिकता, व्यवसाय, परिवार आदि से सम्बन्धित। हीन-भाव, अतिशय चिन्ता, अकारण भय, लज्जा, घबड़ाना, हकलाना आदि बातों के कारण भी व्यक्ति को समाज के साथ सामंजस्य में कठिनाई का अनुभव हो सकता है। संदर्शन का इन सबमें उपयोग है। इसका क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। वास्तव में तो शैक्षिक, व्यावसायिक एवं वैयक्तिक इन तीनों प्रकार के संदर्शन में स्पष्ट विभेद-रेखा नहीं खींची जा सकती। तीनों एक-दूसरे के पूरक हैं।

शैक्षिक संदर्शन—

शैक्षिक संदर्शन की आवश्यकता बालक के स्कूल प्रवेश से लेकर विश्व-विद्यालयों तक पड़ती है। पर प्रारम्भिक पाठशाला-काल में यह उतना महत्व-पूर्ण नहीं है जितना माध्यमिक कक्षाओं में। आठवीं कक्षा पास करने के बाद जब बालक नवीं कक्षा में प्रवेश करता है, तब उसे इस बात पर विचार करना पड़ता है कि कला, विज्ञान, साहित्य, कृषि आदि में से किसका चयन करे। संदर्शन इसमें सहायता पहुँचा सकता है। वैसे तो माता-पिता स्वयं ही बालकों को इस प्रकार की राय देते हैं, पर उनकी राय प्रायः अवैज्ञानिक होती है। बिना समझे-बूझे माँ-बाप प्रायः अपने बच्चों को विज्ञान पढ़ने पर मजबूर करते हैं, जबकि सम्भव है वे साहित्य में रुचि रखते हों। कछ माँ-बाप स्वयं ही इस

बात का निश्चय कर लेते हैं कि उनका बालक, डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, या कुछ और बनेगा। इसी बात को ध्यान में रखकर वे विषय का चुनाव कराते हैं। यह बालकों के भावी जीवन के लिए अत्यन्त हानिकर है।

विद्यालयों में संदर्शन अनेक क्षेत्रों में आवश्यक है, जैसे (१) पाठ्य-विषय का चयन, (२) उचित अध्ययन-विधि का ज्ञान (३) किसी विषय में विशेष कमजोरी को दूर करने के लिये, एवं (४) विफलता के कारणों को जानकर उनका समाधान करने में।

पाठ्य-विषय के चयन में संदर्शन अत्यन्त आवश्यक है। चयन पूर्व शिक्षार्थी के बारे में सम्पूर्ण तथ्य एकत्र कर लेने चाहिए। संचित वृत्त[1] एवं समालाप[2] का इस दृष्टि से विशेष उपयोग है। माता-पिता एवं अभिभावकों से भी महत्वपूर्ण सूचना प्राप्त की जा सकती है। संचित वृत्त में शिक्षार्थी की आयु, उसका स्वास्थ्य, माता-पिता का व्यवसाय, पारिवारिक पृष्ठभूमि, रुचि, बुद्धि-लब्धि आदि सभी बातों का लेखा लिया जा सकता है। इन सभी बातों को दृष्टि में रखकर यह परामर्श देना उचित रहेगा कि उसके लिए कौन-सा विषय उचित रहेगा—साहित्य, कला, विज्ञान, कृषि, या कोई और। इसी प्रकार एम० ए० या एम० एस-सी० में विषय का चुनाव करने से पूर्व परामर्श अत्यन्त उपयोगी हो सकता है।

उचित अध्ययन-विधि का ज्ञान कराने के लिए संदर्शन का विशेष उपयोग है। विद्यार्थी प्रायः यह नहीं जानते कि अध्ययन करते समय नोट्स एवं टिप्पणियाँ किस प्रकार लें, किस प्रकार पढ़ें, पढ़ी हुई सामग्री का सारांश कैसे लें, विश्राम कितना लिया जाए इत्यादि। इस सम्बन्ध में मनोवैज्ञानिक एवं संदर्शन देने वाले व्यक्ति निश्चित रूप से शिक्षार्थियों को लाभ पहुँचा सकते हैं। एक अच्छी अध्ययन-विधि में नोट्स का महत्वपूर्ण स्थान है। ये क्रमबद्ध एवं विषयानुसार, या सम्भव हो तो अध्याय के अनुसार, वर्गीकृत होने चाहिए। याद करने में सूत्रों एवं साहचर्य का उपयोग किया जा सकता है। केवल रटने से काम नहीं चलता। पढ़ने में उचित विश्राम देना आवश्यक है। विभिन्न विषयों में पढ़ने के लिए उचित समय-विभाजित करना चाहिए। इसके साथ ही ध्यान का केन्द्रीकरण एवं प्रेरणा भी आवश्यक है।

किसी विशिष्ट विषय में विद्यार्थी की **कमजोरी का समाधान करने के**

---

1. Cumulative Records.
2. Interview.

लिए सर्वप्रथम नैदानिक परीक्षाओं का उपयोग करना चाहिए । तत्पश्चात् उचित सलाह एवं पाठ्य-सामग्री के चयन का सुझाव देना जरूरी है । कभी-कभी भाषा एवं अभिव्यक्ति में कमी होने के कारण अन्य विषयों में भी शिक्षार्थी कमजोर रहता है । इसका उचित निदान आवश्यक है ।

परीक्षा में **विफल विद्यार्थियों के संदर्शन में** सर्वप्रथम विफलता का कारण पता लगाना आवश्यक होगा । इसके अनेक कारण सम्भव हैं---निम्न बुद्धि-स्तर, आर्थिक चिन्ता, रोग, स्कूल से लम्बी अनुपस्थिति, गलत अध्ययन-विधि । तदनन्तर इन बातों को ध्यान में रखकर परामर्श दिया जा सकता है ।

व्यावसायिक संदर्शन—

सभी व्यक्ति समान बुद्धि या व्यक्तित्व नहीं रखते । प्रत्येक व्यक्ति में अलग-अलग योग्यताएँ होती हैं । इसी प्रकार व्यावसायिक रुचि में भी विभेद पाया जाता है । यह पता लगाना आवश्यक है कि कौन व्यक्ति किस व्यवसाय में अधिक निपुणता से कार्य करेगा । प्रत्येक व्यवसाय के लिए अलग-अलग योग्यताएँ भी आवश्यक हैं । अतः व्यावसायिक संदर्शन के दो पहलू हुए : (१) व्यक्ति-विश्लेषण[1], एवं (२) कार्य या व्यवसाय विश्लेषण[2] । व्यक्ति-विश्लेषण का उद्देश्य यह जानना है कि व्यक्ति में कौन-कौनसी योग्यताएँ हैं एवं कार्य-विश्लेषण का उद्देश्य यह जानना है कि किस व्यवसाय के लिए कौन-कौन सी योग्यताएँ आवश्यक हैं । अतः ये दोनों बातें एक-दूसरे की पूरक हैं ।

व्यक्ति-विश्लेषण करने का अभिप्राय है व्यक्ति के विभिन्न गुणों जैसे बुद्धि, अभियोग्यता, रुचि, ज्ञानोपार्जन, व्यक्तित्व आदि के बारे में पता लगाना । इस हेतु विभिन्न परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है । हम अन्यत्र इनका वर्णन कर चुके हैं । कुछ परीक्षणों के प्रयोग से यह भी ज्ञात हुआ है कि किस व्यवसाय, वर्ग, जाति या लिंग के व्यक्ति में कितनी बु० ल० होती है । ये परिणाम व्यक्ति-विश्लेषण की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी हैं । पर इन परिणामों का उपयोग सावधानी से करना अनिवार्य है । कुछ उपयोगी परीक्षणों की रूप-रेखा निम्नलिखित है—

१. बुद्धि-परीक्षण—व्यक्तिगत, सामूहिक एवं निष्पादन । प्रमुख परीक्षण हैं : स्टेनफोर्ड-बिने, वैश्लर-बैलैव्यू, आर्मी अल्फा, आर्मी बीटा, पिन्टनर-पैटर्सन परीक्षण, भाटिया-परीक्षण-माला ।

२. ज्ञानोपार्जन परीक्षण—इनमें विभिन्न विषयों में परीक्षण सम्मिलित हैं :

---

1 Individual--Analysis.
2. Job or Work-Analysis.

जैसे अर्थशास्त्र, भूगाल, कला, पाठन, भाषा, गणित आदि। ये मुख्यत: दो भागों में विभाजित किये जाते हैं—सर्वे एवं नैदानिक।

३. अभियोग्यता परीक्षण—व्यक्ति में अनेक मौलिक योग्यताएँ हैं जैसे शब्द-व्यवहार, स्मृति, प्रत्यक्षात्मक गति, तर्क-योग्यता, सांख्यिक योग्यता आदि। इनसे मिलकर व्यक्ति में कलात्मक, यांत्रिक, क्लैरीकल, संगीतात्मक, सर्जीकल या अन्य किसी प्रकार की अभियोग्यता हो सकती है। प्रमुख परीक्षण हैं—सीशोर संगीत प्रतिभा परीक्षण, मिनेसोटा लेखन-परीक्षण, वैधानिक अभियोग्यता परीक्षण आदि।

४. रुचि-परीक्षण—रुचि परीक्षणों में कूडर रुचि-अभिलेख, स्ट्रांग व्यावसायिक रुचि सूची, एवं अलीगढ़ में प्रिन्सीपल झिंगरन की देख-रेख में बना व्यावसायिक रुचि-परीक्षण उल्लेखनीय है।

५. व्यक्तित्व परीक्षण—इसकी अनेक विधियाँ हैं, जैसे प्रश्नावली, साक्षात्कार, वर्ग-निर्णय, निरीक्षण, एवं प्रक्षेपण विधियाँ। प्रक्षेपण विधियों में थैमाटिक अपर्शेप्सन टैस्ट, रोशा-स्याही के धब्बों का परीक्षण, शब्द-साहचर्य विधि, वाक्य-पूर्त्ति आदि प्रमुख हैं।

कार्य-विश्लेषण में कार्य में अन्तर्निहित योग्यताएँ कौन-कौनसी हैं, यह ज्ञात करते हैं। इसकी अनेक विधियाँ हैं, जैसे व्यक्तिगत मनोरेखांकन विधि, प्रश्नावली विधि, क्रिया-विधि आदि। किसी औद्योगिक मनोविज्ञान की पुस्तक में इनका विवरण देखिये। अमरीका एवं अन्य देशों में अब अनेक व्यावसायिक कोश प्रकाशित हो गए हैं। इनमें व्यवसाय में प्रयुक्त होने वाले कार्यों का विश्लेषण रहता है। १९३९ में ऐसा प्रथम कोश अमरीका में प्रकाशित हुआ था।

वैयक्तिक संदर्शन—

• बालकों एवं प्रौढ़ों सभी को कुछ ऐसी व्यक्तिगत समस्यायें होती हैं, जिनका गुप्त रहना आवश्यक है। विश्वस्त व्यक्ति के सम्मुख ही कुछ व्यक्ति इनका रहस्योद्घाटन करना उचित समझते हैं। संदर्शन देने वाले पर इस दृष्टि से विश्वास किया जा सकता है। ये वैयक्तिक समस्यायें अनेक प्रकार की होती हैं जैसे (१) पारिवारिक—माता-पिता एवं सहोदरों से सम्बन्ध, (२) आर्थिक—आय-व्यय, भविष्य की चिन्ता, नौकरी, बेकारी, (३) शारीरिक—अस्वस्थता, रोग, अपगुंता आदि, (४) सामाजिक—समाज में लोगों से सम्बन्ध, रीति-रिवाज, शाख, अनादर, (५) वैवाहिक—पत्नी से सम्बन्ध, यौनि-क्रिया में

क्षीणता, नंपुसकता, प्रेम में विफलता, पत्नी का दुराचारिणी होना आदि, (६) संवेगात्मक—चिन्ता, क्रोध-भय, अतिशय निराशा।

प्रत्येक समस्या का कोई न कोई कारण अवश्य होता है। पर ये कारण उलझे हुए एवं जटिल होते हैं। इन्हें पता लगाना विशेषज्ञ का ही कार्य है। परामर्श देने वाले के लिए आवश्यक है कि इन कारणों की तह में जाकर सत्य का पता लगाए। संदर्शन करते समय धैर्य से काम लेना चाहिए एवं क्रमशः इन पाँच सोपानों में संदर्शन किया जा सकता है :—(१) तथ्य ज्ञात करना,[1] (२ निदान,[2] (३) पूर्वकथन या प्रगति का अनुमान,[3] (४) उपचार,[4] (५) अनुसरण।[5]

तथ्य एकत्र करने के लिए संचित वृत्ति एवं समालाप का उपयोग करना चाहिए। इनकी सहायता से व्यक्ति की शारीरिक दशा, स्वास्थ्य, वंश-परम्परा, माता-पिता एवं सहोदर, आर्थिक दशा, विद्यालय में व्यवहार। प्रगति, बुद्धि-लब्धि, रुचि, अभियोग्यता, व्यक्तित्व गुण, संवेगात्मक अस्थिरता, सभी के बारे में सूचना एकत्र की जा सकती है।

तथ्य एकत्र करने के पश्चात् समस्या के कारणों का पता लगाकर **निदान** करते हैं। ऐसा करने के लिए तथ्यों का विश्लेषण करते हैं एवं यह देखते हैं कि उनमें क्या सम्बन्ध है। अनावश्यक तथ्यों पर ध्यान नहीं देते। इससे व्यक्ति की रुचि, योग्यता एवं उसके गत जीवन की घटनाओं की पृष्ठ-भूमि में उसकी वर्त्तमान समस्या का मूल्यांकन करते हैं।

निदान के पश्चात् सम्भावित **प्रगति का अनुमान** करते हैं। इसका आशय यह जानना है कि किस सीमा तक व्यक्ति अपनी समस्या का सामंजस्य कर पायेगा, वह किस सीमा तक सफल होगा, और किस सीमा तक विफल।

सम्भावित प्रगति को ध्यान में रखते हुए **उपचार** प्रारम्भ करते हैं। संदर्शन चाहने वाले व्यक्ति को उसकी समस्याओं का ज्ञान कराया जाता है। यदि केवल समझाने या परामर्श देने से काम न चले तो विशेष चिकित्सा का प्रारम्भ करते है। पर इस हेतु किसी विशेषज्ञ की सहायता लेनी चाहिए।

उपचार के पश्चात् भी **अनुसरण** करते रहना चाहिए। इससे यह पता चलता है कि संदर्शन पाने का इच्छुक व्यक्ति वास्तव में कुछ लाभ उठा सका

1. Collection of Facts.
2. Diagnosis—to find out causes.
3. Estimate of Progress—Prognosis.
4. Treatment by Therapy or Counselling.
5. Follow-up Study.

या नहीं है। प्रायः इस आवश्यक बात की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया गया है। यह बात दुर्भाग्यपूर्ण है। अनुसरण करने में व्यक्तिगत सम्पर्क अत्यधिक उपयोगी है। एक अन्य उपयोगी विधि है या तो टेलीफोन पर बात कर लेना या पत्रों द्वारा परामर्श के इच्छुक व्यक्ति का हाल-चाल पूछ लेना। पर टेलीफून व्यवस्था सब व्यक्तियों के घर नहीं होती। केवल धनी लोग ही इनसे लाभ उठा सकते हैं। अतः पत्र की विधि का प्रचार अधिक उपादेय सिद्ध होगा।

: २९ :

शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक सांख्यिकी—१

सांख्यिकी का अर्थ

सांख्यिकी का अर्थ है संकलित सांख्यिक तथ्य एवं कथन। सांख्यिकी के सिद्धान्त के लिए भी इसे प्रयुक्त करते हैं। सांख्यिकी विज्ञान अब नया नहीं रह गया है। इसकी परिभाषा अनेक रूप से की गई है। **बाउले**[1] के अनुसार सांख्यिकी खोज के किसी विभाग में तथ्यों का सांख्यिक कथन है। **सैक्रिस्ट**[2] के अनुसार सांख्यिकी तथ्यों का संकलन है, जो काफी हद तक अनेक कारणों

---

1. "···numerical statements of facts in any department of enquiry placed in relation to each other." —Bowley, A. L. *Elements of Statistics* King and Staples, London.
2. "Aggregate of facts, affected to a marked extent by a multiplicity of causes, numerically expressed, enumerated or estimated according to reasonable standards of accuracy, collected in a systematic manner for a determined purpose, and placed in relation to each other."
—Secrist, H. *Introduction to Statistical Methods*, MaMillan, New York.

से प्रभावित होता है, जिसकी अभिव्यक्ति अंकों में होती है, जो उचित रूप से परिशुद्ध होते हैं और जिनका संकलन नियमित विधि से पूर्व निर्धारित उद्देश्य के लिए होता है। **वैब्सटर** ने इसे किसी राज्य में व्यक्तियों की परिस्थिति के सम्बन्ध में वर्गीकृत तथ्यों के रूप में परिभाषित किया है।

ऊपर की सभी परिभाषाएँ सांख्यिकी के अनेक सामान्य गुणों की ओर संकेत करती हैं। ये बताती हैं कि सांख्यिकी अंकों में व्यक्त तथ्यों का संकलन है, ये तथ्य उचित रूप से परिशुद्ध होते हैं, नियमित विधि से संकलित किये जाते हैं, और अनेक बातों का इन पर प्रभाव पड़ता है।

सांख्यिकी का विकास

सभ्यता के आरम्भ से ही जब कबीली जीवन का अन्त हुआ और नगर बसाये जाने लगे तो इस बात की आवश्यकता पड़ी कि कर लगाए जाएँ, जन-गणना की जाए एवं शत्रु की सैन्य-शक्ति का पता लगाया जाए। अतः किसी न किसी रूप में सांख्यिकी का प्रयोग किया जाता था। **हैरोडोटस**[1] ने ३०५० ई० पू० में पिरामिड बनाने के सम्बन्ध में **मिस्र** की जनसंख्या एवं धन के सम्बन्ध में आंकड़े एकत्र किये। १४०० ई० पू० में मिस्र के शासक रैमेसस द्वितीय[2] ने प्रजा में वितरण करने के लिए सम्पूर्ण भूमि का लेखा-जोखा कराया। मूसा[3] ने **इजरायल** के सभी कबीलों में व्यक्तियों की संख्या का पता लगाया ताकि उनकी लड़ने की शक्ति का निर्धारण किया जा सके। १०१८ ई० पू० के समीप डेविड[4] ने भी यही किया, जैसा कि ईसाइयों के धर्म-ग्रन्थ बाइबिल[5] से पता चलता है। इसी प्रकार **चीन** में १२०० ई० पू० में विभिन्न प्रदेशों के बारे में तथ्य एकत्र किये गए। **रोम** में कर-विधान के सिलसिले में बिस्तृत जनगणनाएँ की गईं।

पर सांख्यिकी का प्रचुर उपयोग मुख्यतः मध्ययुग के पश्चात् औद्योगीकरण के प्रारम्भिक वर्षों से ही किया गया है। **जर्मनी** में मध्ययुग में सामन्त लोग अपने शासित प्रदेशों में जनगणना कराया करते थे। उदाहरणस्वरूप शार्लमैन[6],

1. Herodotus.
2. Remesis II.
3. Moses.
4. David.
5. Bible : Book of Numbers, Samuel XXIV.
6. Charlesmagne.

विजेता विलियम[1] एवं फ्रैडरिक द्वितीय[2] ने इस प्रकार की जनगणनाएँ करायी थीं। १५७५ ई० में स्पेन में फिलिप द्वितीय[3] ने स्पेन के विभिन्न जिलों के बारे में विस्तृत आंकड़े एकत्र कराये। वास्तव में इस युग में सांख्यिकी के विकास का कारण था सरकारी कार्यों एवं व्यापार में इसकी आवश्यकता।

सन् १५४४ ई० में हीडलबर्ग[4] विश्वविद्यालय के प्रोफेसर **सैबिस्टियन मुइन्सटर**[5] ने प्राचीन देशों के बारे में नियमित आंकड़े प्रकाशित किये। ये इनके संगठन, सेना, व्यापार, धन आदि के बारे में थे। सन् १६१२ ई० में स्ट्रास्बर्ग[6] विश्वविद्यालय के प्रोफेसर **ज्यॉर्ज ऑब्रैक्ट**[7] ने यह प्रस्तावित किया कि सरकार अपराधियों, व्यापार, सेना, कृषि आदि पर विस्तार से तथ्य एकत्र किया करे। १६६१ ई० में केप्टेन **जॉह्न ग्रॉन्ट**[8] ने प्रथम बार 'आवश्यक सांख्यिकीय तथ्यों'[9] का विश्लेषण किया। इसमें जन्म-मृत्यु, परिवार, पुरुष-स्त्री आदि से सम्बन्धित तथ्य थे। १६९८ में लन्दन में प्रथम जीवन-बीमा संस्था की स्थापना हुई और प्रत्येक आयु पर सम्भावित 'जीवन प्रत्याशा'[10] के आंकड़े एकत्र किये गए। १६९९ में 'विधवाओं एवं अनाथों के लिए सुरक्षा संस्था' की स्थापना की गई। सन् १७०० में प्रसिद्ध गणितज्ञ **जैक्स बरनूली**[11] ने 'सम्भावना सिद्धान्त'[12] की खोज की। सन् १७१९ में प्रशा के **फ्रैडरिक विलियम प्रथम**[13] ने जनसंख्या, व्यवसाय, कर, नगर आदि के बारे में तथ्य एकत्र करवाना प्रारम्भ किया। १८६१ में **एर्नस्ट एँजिल**[14] ने सांख्यिकीय विधियों को सावधानी से प्रयोग करने पर बल दिया।

उन्नीसवीं शताब्दी में सांख्यिकी अपने विकास के महत्वपूर्ण चरण तक पहुँच चुकी थी। **मीत्जिन**[15], **एँजवर्थ**[16], **गाल्टन**[17], **यूल**[18], **डैवनपोर्ट**[19] आदि महानुभावों ने इसके विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। सन् १९०० में अमरीका में स्थायी रूप से जनगणना ब्यूरो की स्थापना की गई। अब लगभग सभी देशों में विभिन्न प्रकार की सांख्यिकीय संस्थाएँ स्थापित हो चुकी हैं।

1. William the Conquerer.
2. Fredrick II.
3. Philip II.
4. Heidelberg.
5. Sebastian Muenster.
6. Strassbury.
7. George Obrecht.
8. Captain John Graunt.
9. Vital Statistical Data.
10. Life Expectancy.
11. Jacques Bernoulli.
12. Theory of Probability.
13. Fredrick William I.
14. Ernst Engel.
15. Meitzen.
16. Edgeworth.
17. Galton.
18. Yule.
19. Davenport.

मनोविज्ञान एवं शिक्षा में सांख्यिकी का महत्व

अब अनेक क्षेत्रों में, विशेषकर समाज-विज्ञानों में, सांख्यिकी का प्रचुर उपयोग होने लगा है। इसका कारण यह है कि प्रत्येक क्षेत्र में सांख्यिकीय गणनाओं के आधार पर ही निर्णय लिया जाना आवश्यक है। **अर्थशास्त्र** में मूल्य, आयात-निर्यात, राष्ट्रीय आय, उत्पादन आदि के सम्बन्ध में तथ्य एकत्र करना एवं उनका निर्वचन करना आवश्यक है। **उद्योग** में कच्चे माल, कर्मचारी, संचार-साधनों के बारे में तथ्य एकत्र किये बिना काम नहीं चलता। **राष्ट्रीय पुर्ननिर्माण** के कार्यों में संयोजन के सम्बन्ध में आय-वितरण, पूँजी-निर्माण, जन-संख्या आदि के आंकड़े काम में आते हैं। **सट्टा करने वाले** भी बाजार भाव, बाजार में कितना माल है, कितना माल और आयेगा, यह जानना चाहते हैं। **राज्य** के बजट में एवं अन्य आवश्यक परिस्थितियों में सेना, आय, कर, व्यय आदि के आंकड़ों का उपयोग करते हैं। ऋतु-विशेषज्ञ वर्षा, तापक्रम आदि के बारे में तथ्य एकत्र करते हैं। बीमा कम्पनियाँ जन्म-मरण की सम्भावनाओं, विभिन्न आयु में जीवन-प्रत्याशा[1] आदि का लेखा रखती हैं। समाज-शास्त्री सामाजिक बुराइयों के निराकरण, निरक्षरता, वैश्यावृत्ति, भिक्षावृत्ति आदि के सम्बन्ध में तथ्य जानना चाहते है। शिक्षाविदों एवं मनोवैज्ञानिकों को परीक्षण-रचना, प्रयोगों एवं अनुसंधान में सांख्यिकीय का प्रयोग करना पड़ता है।

शिक्षा एवं मनोविज्ञान में तो सांख्यिकीय के बिना काम चल ही नहीं सकता। गिल्फोर्ड के अनुसार विद्यार्थी को सांख्यिकी से अनेक प्रकार से सहायता मिलती है—

(१) **मनोवैज्ञानिक साहित्य के अध्ययन में**—सांख्यिकीय प्रतीकों, प्रत्ययों एवं विचारों की सहायता के बिना समाज-विज्ञानों, विशेषकर शिक्षा एवं मनोविज्ञान में, उच्च एवं विशिष्ट साहित्य का समझना सम्भव नहीं है।

(२) **प्रयोग एवं अनुसंधान का निर्वचन करना**—अनेक मनोवैज्ञानिक अनुसंधानों में सांख्यिकी की आवश्यकता पड़ती है। बिना इसके परिणामों एवं विवरणों की ठीक से व्याख्या करना सम्भव नहीं है।

(३) **व्यावसायिक प्रशिक्षण प्राप्त करना**—प्रशिक्षित मनोवैज्ञानिक के लिए सांख्यिकीय ज्ञान प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है।

(४) **अनुसंधान से सम्पर्क बनाये रखना**—अधिकांश अनुसंधान सांख्यिकीय भाषा में व्यक्त रहते हैं। इन्हें समझने के लिए सांख्यिकीय ज्ञान आवश्यक है।

---

1. Life Expectancy.

अनुसंधान में तो वास्तव में सांख्यिकी के बिना कार्य चल ही नहीं सकता। जैसा कि गिल्फोर्ड बताते हैं, सांख्यिकी के द्वारा निश्चित एवं यथार्थ रूप से विचारों का प्रकट करना सम्भव है एवं निश्चित विधियों का प्रयोग भी किया जा सकता है। सांख्यिकी हमें सुविधाजनक एवं अर्थपूर्ण शब्दों में तथ्यों का सारांशीकरण करने एवं उनके आधार पर सामान्य निष्कर्ष निकालने में सहायता पहुँचाती है। हम यह भी जान सकते हैं कि निष्कर्ष निकालने में हमने कितनी त्रुटि की और हमारे परिणामों के अन्तर सार्थक हैं या नहीं। सांख्यिकीय निष्कर्षों के आधार पर पूर्वकथन किया जा सकता है एवं जटिल घटनाओं के कारणों पर प्रकाश डाला जा सकता है।

मनोविज्ञान एवं शिक्षा में हमें अनेक कार्य करने पड़ते हैं, जैसे परीक्षण-रचना, व्यक्ति-विभेद का पता लगाना, शिक्षण के परिणामों को जानना आदि। शिक्षा का संगठन एवं व्यवस्था भी शैक्षिक क्षेत्र के अन्तर्गत है। निस्संदेह सांख्यिकी हमें इन सब में सहायता देती है।

मनोवैज्ञानिक अनुसंधान में ही क्या अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, जीव-विज्ञान, कृषि-विज्ञान सभी में सांख्यिकी का उपयोग होता है। जैसा कि 'टेट' अपनी पुस्तक "शिक्षा में सांख्यिकी" में लिखते हैं, सांख्यिकी दो प्रकार से अनुसंधान में सहायता पहुँचाती है। प्रथमतः यह तथ्यों के वर्गीकरण, संगठन, सारांशीकरण आदि में सहायक है ताकि उनका उचित रूप से निर्वचन किया जा सके। उदाहरणस्वरूप, मौसम-कार्यालय यदि दस वर्ष तक प्रत्येक घंटे के तापक्रम का लेखा रखे तो कुल २४ × ३६५ × १० निरीक्षण एकत्र हो जाएँगे। अतः इनके आधार पर मौसम की ठीक से व्याख्या करने के लिए इनके औसत, विचलन आदि निकालना आवश्यक है। द्वितीयतः सांख्यिकी की सहायता से इन तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। न्यादर्श के आधार पर पूरे समग्र के लिए निष्कर्ष निकालना भी सम्भव है। उदाहरणस्वरूप हम यह कह देते हैं कि सभी मनुष्य मरणशील हैं। पर यह निष्कर्ष कुछ लोगों को मरते हुए देखकर निकाला गया है। यदि हमें उत्तर प्रदेश की स्त्रियों की सामान्य ऊँचाई ज्ञात करना है तो इसके लिए उत्तर प्रदेश में बसने वाली प्रत्येक स्त्री की ऊँचाई ज्ञात करना सम्भव नहीं होगा, वरन् उनका एक न्यादर्श लेकर पूरे समय के निष्कर्ष निकालने होंगे। ऐसा करने में जो त्रुटि होगी, वह भी सांख्यिकीय आधार पर ही निश्चित करनी पड़ेगी।

वुडवर्थ ने गैरट की पुस्तक "मनोविज्ञान और शिक्षा में सांख्यिकी" की भूमिका में सांख्यिकी के कुछ महत्वपूर्ण उपयोगों की ओर संकेत किया है। संक्षेप में सांख्यिकी के उद्देश्य हैं—(१) व्यक्ति का अध्ययन करना, यह जानना कि वह

कैसे सोचता, अनुभव करता एवं सीखता है, (२) समूहों के अध्ययन में सहायता, एक समूह की दूसरे से तुलना, (३) व्यक्ति की अपनी आयु, कक्षा या जाति के अन्य व्यक्तियों से तुलना, (४) विकास एवं प्रगति के वक्र खींचना, (५) गुणों के पारस्परिक-सहसम्बन्धों का अध्ययन, (६) वंश-परम्परा एवं वातावरण के प्रभाव का अध्ययन । इन्हीं कारणों से आधुनिक शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक साहित्य सांख्यिकीय शब्दों एवं प्रत्ययों से भरा पड़ा है ।

सांख्यिकी का दुरुपयोग एवं इसकी परिसीमाएं

संख्याशास्त्रियों को लोग असत्यवादी समझते हैं एवं संशयात्मक दृष्टि से देखते हैं, क्योंकि वे आँकड़ों का दुरुपयोग करके गलत बात को भी सही सिद्ध करने का प्रयास करते हैं । सांख्यिकी के आधार पर किसी भी बात को सही या गलत सिद्ध करना सम्भव है । प्रचारवादी के हाथों में निस्सन्देह सांख्यिकी एक खतरनाक हथियार है । एक ही तथ्यों का अनेक प्रकार से विश्लेषण एवं निर्वचन किया जा सकता है । अपने पूर्व-निर्धारित विचारों को सही सिद्ध करने के लिए संख्याशास्त्र में निपुण व्यक्ति आंकड़ों को साक्षी स्वरूप प्रस्तुत कर सकता है । अतः सांख्यिकी का उपयोग कम होता है एवं दुरुपयोग अधिक । इसके कुछ सामान्य दुरुपयोग निम्नलिखित हैं—

(१) **सामान्य निष्कर्षों के आधार पर वैयक्तिक तथ्यों का निर्वचन करना**—जैसे यह कहना कि यदि किसी छात्र की बुद्धि-लब्धि अधिक है तो स्कूल में उसकी शैक्षिक प्राप्ति भी अधिक होगी । वास्तव में यह बात केवल सामान्य रूप से ही सही है । सम्भव है कि किसी विशिष्ट व्यक्ति की अन्य परिस्थितियाँ ऐसी हों कि बुद्धि-लब्धि ऊँची होने पर भी वह शिक्षा में प्रगति न कर सके ।

(२) **न्यादर्श की भूलों को ध्यान में रखे बिना उस न्यादर्श के आधार पर निष्कर्ष निकालना**—वास्तव में यदि न्यादर्श अत्यन्त छोटा है या उचित रूप से नहीं लिया गया है तो उसके आधार पर सही निष्कर्ष नहीं निकलते ।

(३) **औसत या मध्यमान मूल्य का प्रयोग करना जबकि इससे उचित निष्कर्ष निकलने के बजाय तथ्यों के महत्वपूर्ण पक्षों की अवहेलना होती है**—उदाहरणार्थ यदि चार व्यक्तियों का वेतन क्रमशः ५००, १०००, ५०००, एवं १०००० रु० वार्षिक हो, तो यह कहना असंगत होगा कि उनका औसत वेतन ५१०० रु० है, क्योंकि यह औसत न तो ४०० के समीप है न १००० के, और न १०००० के ।

(४) **केवल साहचर्य के आधार पर कारण-कार्य सम्बन्ध बताना**—सांख्यिकीय विधि, जैसे सहसम्बन्ध, से केवल यह पता चलता है कि दो परिवर्त्तियों में

एक साथ प्रगति या विगति होती है, पर यह नहीं कि एक दूसरे पर निर्भर है। उदाहरणार्थ यदि शिक्षा एवं आय में सम्बन्ध है तो इसका यह अर्थ नहीं है कि अधिक शिक्षा का कारण अधिक आय है, या अधिक आय का कारण अधिक शिक्षा।

(५) **सम्पूर्ण तथ्यों को ध्यान में रखे बिना निष्कर्ष निकालना**—यह कहना कि देहली के अध्यापकों की आर्थिक दशा सर्वश्रेष्ठ है तब तक उचित नहीं है जब तक कि अन्य स्थानों में अध्यापकों की आय, मूल्य-स्तर आदि का पता नहीं लगा लिया गया है।

(६) **अनावश्यक यथार्थता के साथ सांख्यिकीय निष्कर्षों का विवरण देना।**

सांख्यिकीय के दुरुपयोग की इन सम्भावनाओं का पता लगाया तो जा सकता है, पर यह एक कटिन कार्य है। बड़े-बड़ विशेषज्ञ भी इस प्रकार की भूलें कर वैठते हैं। सांख्यिकी के दुरुपयोग का कारण कुछ तो स्वयं सांख्यिकी की परिसीमाएँ हैं। इनमें से कुछ ये हैं—

१. तथ्यों का संकलन कठिन कार्य है। इन तथ्यों का विश्लेषण औरभी कठिन है। कभी-कभी तो यह भी नहीं कहा जा सकता कि तथ्य-संकलन औचित्य एवं ईमानदारी से किया गया है।
२. उचित निष्कर्ष निकालने के लिए सांख्यिकी का विशिष्ट ज्ञान होना आवश्यक है। पर सदैव विशेषज्ञ की राय प्राप्त नहीं होती।
३. सांख्यिकीय तथ्य प्रायः समूह के व्यवहार पर आधारित होते हैं। अतः व्यक्ति के व्यवहार की व्याख्या करने में ये अधिक उपयोगी नहीं होते।
४. सांख्यिकीय नियम केवल आंशिक एवं सन्निकट[1] रूप से ही सही हैं, यथार्थ[2] रूप से नहीं।
५. सांख्यिकीय गणनाएँ केवल परिमाणात्मक निष्कर्ष देती हैं, गुणात्मक नहीं। इनसे गुणात्मक व्याख्याएँ करना अनुचित है।
६. सांख्यिकी समस्या के समाधान का साधन प्रस्तुत करती है, न कि स्वयं समाधान।

सांख्यिकी एवं विद्यार्थी

विद्यार्थियों के लिए सांख्यिकी का काफी महत्त्व है अतः यह उनके पाठ्यक्रम में सम्मिलित है। यह उन्हें मूल सिद्धान्तों और तार्किक संगतता को

1. Approximate.
2. Exact.

समझने में सहायता देती है। जैसा कि गिल्फोर्ड कहते हैं, सांख्यिकी पढ़ने में विद्यार्थी के निम्न उद्देश्य हैं—

(१) **सांख्यिकी का शब्द-भण्डार जानना**—अन्य विषयों की भाँति इसका अपना शब्द-भण्डार है; इसके अपने प्रतीक, विचार, नियम एवं प्रत्यय हैं।

(२) **गणना की क्षमता बढ़ाना**—यह वास्तव में समस्याओं के हल करने से ही अर्जित होती है।

(३) **सही निर्वचन सीखना**—सांख्यिकी गणनाएँ एवं व्याख्याएँ किसी घटना के सही या गलत सिद्ध करने में सहायता देती हैं।

(४) **सांख्यिकी की तार्किक संगति समझना**—इसके लिए आवश्यक है कि समस्या-नियोजन उचित रूप से किया जाय।

(५) **यह जानना कि सांख्यिकी का कहाँ उपयोग किया जाय और कहाँ नहीं।**

(६) **इसके आधारभूत गणितीय सिद्धांतों को जानना।**

अनेक विद्यार्थियों को सांख्यिकी कठिन जान पड़ती है। अध्ययन की उचित विधि न जानना ही इसका कारण है। सांख्यिकी के प्रत्यय एवं विधियाँ परिमाणात्मक हैं, एवं इन्हें प्रतीकों से व्यक्त करते हैं। इसे शीघ्रता से नहीं पढ़ना चाहिए। कठिन विषय की प्रारम्भ में उपेक्षा की जा सकती है। विद्यार्थी को सांख्यिकीय शब्द-भण्डार बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए, और साथ ही आधार-भूत तथ्यों को समझने का।

निदर्शन[1]

किसी भी अनुसंधानकर्त्ता के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह पूरे समग्र के सभी व्यक्तियों या वस्तुओं को अपनी खोज का विषय बना सके। उदाहरण के लिए यदि कोई व्यक्ति मैट्रिक की परीक्षा देने वाले विद्यार्थियों की मध्यमान बुद्धि-लब्धि जानना चाहता है तो प्रत्येक ऐसे विद्यार्थी पर परीक्षण का प्रयोग करके फिर उसकी बुद्धि-लब्धि ज्ञात करना सम्भव नहीं होगा। केवल थोड़े से ऐसे विद्यार्थियों को ही लेना पड़ेगा, जो समग्र[2] का प्रतिनिधित्व करें, और जिन पर किये गए अध्ययन के आधार पर समग्र के लिए निष्कर्ष निकाले जा सकें। थोड़े से व्यक्तियों या वस्तुओं के ऐसे समूह को न्यादर्श[3] कहेंगे। इस प्रकार न्यादर्श समग्र में से चुने हुए कुछ व्यक्तियों या वस्तुओं का संग्रह, संकलन

1. Sampling.
2. Population.
3. Sample.

या समूह है, जैसा कि लिन्डक्विस्ट[1] कहता है। 'गैलप पॉल' में समग्र के अन्तर्गत वे सब व्यक्ति सम्मिलित थे, जिन्होंने नवम्बर १९४८ में राष्ट्रपति के चुनाव में वोट दिए और न्यादर्श में वे वोटर थे जिनका साक्षात्कार किया गया। समग्र किसी भी अनुसंधान में सम्पूर्ण व्यक्तियों की संख्या है।

वाकर[2] के अनुसार अनेक परिस्थितियों में न्यादर्श आवश्यक हैं: (अ) मुख्यत: जब समग्र अनन्त हो, जैसे पथजाल के सीखने में प्रयास अनन्त हैं और व्यक्ति आजन्म प्रयास करता रह सकता है, (ब) समग्र अनन्त न हो पर विशाल या असीमित हो, जैसे पिछले बीस वर्षों में स्नातक परीक्षा पास करने वाले सभी विद्यार्थियों का भावी व्यवसाय, (स) जब पूरे समग्र का अध्ययन किया ही न जा सके, जैसे खान में लोहा, (द) जब पूरे समग्र का अध्ययन करना अत्यन्त खर्चीला हो।

निदर्शन विधि के अनेक उपयोग हैं। पूरे समग्र की तुलना में न्यादर्श के उपयोग से काफी बचत होती है। यह अधिक व्यावहारिक भी है। समय की मितव्ययता होने से अनेक सामाजिक अनुसंधानों में न्यादर्श लेकर ही अध्ययन करते हैं। इसमें इकाइयों की संख्या कम होने से विवेचन सरल होता है। यदि न्यादर्श उचित एवं वैज्ञानिक रूप से किया जाय तो इस पर आधारित परिणाम समग्र के परिणामों के अनुरूप ही होते हैं।

किसी भी अच्छे न्यादर्श में कुछ मुख्य बातें होनी चाहिए: (अ) स्वातंत्र्य—अर्थात् न्यादर्श के विभिन्न अंग एक-दूसरे से स्वतन्त्र हों, प्रत्येक के चयन का अवसर समान हो। (ब) समरूपता—चयन इस प्रकार किया जाय कि अंगों में अनेकरूपता न आने पाए। (स) पूर्वाग्रह का अभाव—व्यक्ति जब वस्तु का चयन करता है तो उसके अपने भावों, विचारों आदि का इस पर प्रभाव पड़ता है। आवश्यकता इस बात की है कि इस प्रकार के प्रभाव से न्यादर्श को बचाया जाए।

न्यादर्श की कुछ विधियाँ ये हैं—

(१) दैव निदर्शन[3]—यदि समग्र के प्रत्येक व्यक्ति के चयन होने की समान सम्भावना होती है। दैव निदर्शन की अनेक विधियाँ हैं। एक विधि में अनियमित अंकों का प्रयोग करते हैं। टिपिट्स[4] ने १९२७ में अनियमित अंकों की

1. "A collection consisting of a part or subset of the objects or individuals, which represent the population......
—*Elementery Statistical Methods.*

2. Walker, *Elementary Statisical Methods.* Henry Holt and Co., New York, 1948.

3. Random Sampling. 4. Tippetts.

एक सारिणी प्रस्तुत की है। इसमें ४१,६०० संख्याएँ हैं। उदाहरणस्वरूप कुछ संख्याएँ ये हैं—

६६४१	३९९२	९७९२	७९७९	५९११
९५२४	१५४५	१३९६	७२०३	५३५६
७४८३	३४०८	२७६२	३५६३	१०८९
५२४६	१११२	६१०७	६००८	८१२६

इसी प्रकार १९३८ में श्री **फिशर**[1] ने भी अंक-सारिणी प्रस्तुत की थी।

लॉटरी या कुंजियों द्वारा भी दैव निदर्शन सम्भव है। इस प्रकार की एक विधि में व्यक्तियों के नाम या प्रतीक कार्ड या पत्रांशों[2] पर लिख लेते हैं। इन्हें एक बक्से में रख लेते हैं। इन्हें हिला-डुलाकर फिर एक-एक करके व्यक्ति इन्हें निकालता है।

(२) **स्तरित निदर्शन**[3]—इसमें अनेक-जातीय[4] समग्र को कुछ समजातीय[5] भागों में बाँट लेते हैं, और तब प्रत्येक भाग से अनियमित रूप से चयन कर लेते हैं। उदाहरण के लिए 'गैलप पॉल'[6] में देश को अनेक भौगोलिक भागों में बाँट लिया गया था, और तब निदर्शन किया गया था। इस प्रकार स्तरित निदर्शन का आधार है समग्र को स्तरों[7] में बाँट लेना।

(३) **लक्ष्यपूर्ण या सोद्देश्य निदर्शन**[8]—इसमें पूरे समग्र में से कुछ निश्चित भागों को अलग कर लेते हैं और तब केवल उसमें से ही निदर्शन करते हैं, जैसे पूरे देश में से केवल कुछ नगरों को ले लेना। यह विधि सरल एवं व्यावहारिक है।

(४) **व्यवस्थित दैव निदर्शन**[9]—इसमें समग्र की सभी इकाइयों को व्यवस्थित करके प्रत्येक पाँचवीं, दसवीं, बारहवीं आदि इकाई ले लेते हैं, जैसे टेलीफून डायरेक्टरी में प्रत्येक पाँचवाँ नाम लेना।

(५) **मिश्रित निदर्शन**[10]—यह विधि दैव निदर्शन एवं सोद्देश्य निदर्शन का मिश्रण है। इसमें समग्र को अनेक भागों में बाँट कर प्रत्येक में से अनियमित चयन करते हैं। यह विधि स्तरित निदर्शन से मिलती-जुलती है।

---

1. Fisher.
2. Pieces or slips of paper.
3. Stratified Sampling.
4. Heterogenous.
5. Homogenous.
6. Gallop Poll.
7. Stratas.
8. Purpisive Sampling.
9. Systematic Random Sampling.
10. Mixed Sampling.

: ३० :

शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक सांख्यिकी—२

आज हम अंकों एवं गुणात्मक तथा परिमाणात्मक मापन के युग में रह रहे हैं। ज्ञान के अधिकाधिक क्षेत्रों में अनुसंधान कार्य प्रगति पर है। ज्ञान की अभिव्यक्ति अंकों एवं संख्याओं के माध्यम से होने लगी है ताकि इसे सर्वसाधारण के लिए सुलभ एवं अर्थगम्य बनाया जा सके। शैक्षिक एवं मनोवैज्ञानिक क्षेत्र में भी शिक्षा-शास्त्र को अधिकाधिक वैज्ञानिक बनाने के लिए सांख्यिकी का प्रयोग होने लगा है। इसमें तथ्यों का संकलन, उनका सारिणीकरण, विश्लेषण एवं निर्वचन सभी कुछ सम्मिलित है। सांख्यिकी के प्रयोग से चिन्तन एवं विभिन्न अनुसंधानों के निष्कर्षों में यथार्थता आना सम्भव हो गया है। इसके माध्यम से विस्तृत तथ्यों को कुछ एक प्रतिनिधिकारी तथ्यों के माध्यम से व्यक्त करना भी सम्भव हो गया है।

सामान्यतया सांख्यिकी प्रयोग करते समय निम्नलिखित क्रम अपनाना पड़ता है :—

१. समस्या का चयन एवं उसके अध्ययन की योजना।
२. सम्बन्धित तथ्यों को एकत्र करना एवं उचित इकाई का प्रयोग।
३. तथ्यों का निरीक्षण एवं जाँच, और पता लगाना कि ये अशुद्ध या अपूर्ण तो नहीं हैं।

४. तथ्यों का वर्गीकरण, और इस प्रकार उनका सरलीकरण।
५. सारिणीकरण या ग्राफ आदि के माध्यम से तथ्यों को व्यक्त करना।
६. वर्गीकृत तथ्यों का विश्लेषण एवं गणनाएँ।
७. गणना के आधार पर प्राप्त परिणामों का निर्वचन।
८. भविष्य के बारे में प्राप्त निष्कर्षों के बारे में पूर्वकथन।

सांख्यिकीय विधियों का विस्तृत विवेचन किसी संख्याशास्त्र की पुस्तक में मिलेगा। यहाँ केवल संक्षेप में हम इनका वर्णन करेंगे। इसका मुख्य कारण यह है कि परीक्षणों की रचना में, एवं इनके प्रयोग से प्राप्त परिणामों में सांख्यिकीय का प्रयोग आवश्यक है। अतः बिना इसकी विवेचना मनोविज्ञानिक परीक्षण की कोई भी पुस्तक अधूरी ही कही जायेगी। परीक्षण रचना में यथा-स्थान मानक, शतांशीय मान, विश्वसनीयता एवं वैधता आदि की विवेचना की जा चुकी हैं। पर वितरण, फलांकों की केन्द्रीय प्रवृत्ति, सहसम्बन्ध आदि का वर्णन करना बाकी है। मुख्यतः निम्नलिखित सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया जाता है :—

केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापक—
मध्यांक, मध्यमान, एवं बहुलांक।

विकरण या विचलन के मापक—
प्रसार, चतुर्थक विचलन, मध्यमान विचलन, एवं प्रमाप विचलन; सम्भावित त्रुटि।

सहसम्बन्ध गुणांक—
पियर्सन एवं स्पीयरमैन की विधि; सहसम्बन्ध गुणांक का विचलन।

अब हम विभिन्न सांख्यिकीय प्रक्रियाओं का अति सरल वर्णन करेंगे।

आवृत्ति-वितरण

तथ्यों का संग्रह कर लेने के पश्चात् यह अत्यन्त आवश्यक है कि उन्हें नियमित ढंग से प्रस्तुत किया जाय। इसकी एक विधि है प्राप्त फलांकों का आवृत्ति-वितरण करना। स्वयं तथ्य अनुसंधानकर्त्ता के लिए कोई अर्थ नहीं रखते। अतः इन्हें वर्गों में विभाजित करते हैं एवं किस वर्ग में कितने फलांक हैं यह ज्ञात करते हैं। एक वर्ग में जितने फलांक हों, उन्हें आवृत्ति कहते हैं। इस प्रकार के वर्गीकरण को आवृत्ति-वितरण कहते हैं।

उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि मूल फलांक ये हैं :—

३०	४४	४१	५२	४०
५२	४६	४३	५४	४१
५६	४८	३५	३१	३७
४०	५०	४९	३३	३९
३६	३२	५४	३८	४१
४८	५६	५७	३९	३२
५०	४४	५९	६३	३३
५२	४६	६०	४४	३७

इनका आवृति-वितरण इस प्रकार होगा—

Class-interval	Tally Marks	Frequency
६०—६४	॥	२
५५—५९	॥॥	४
५०—५४	卌 ॥	७
४५—४९	卌	५
४०—४४	卌 ॥॥	९
३५—३९	卌 ॥	७
३०—३४	卌 ।	६
		N = ४०

वर्गीकरण की प्रक्रिया में निम्न नियमों का अनुसरण करते हैं :—

१. वितरण में फलांकों की गणना कीजिए। प्रस्तुत वितरण में यह संख्या ४० है। इसके लिए N अक्षर प्रयुक्त किया गया है।

२. निम्नतम एवं उच्चतम फलांक का अन्तर पता लगाइये। प्रस्तुत वितरण में यह ६३-३० = ३३ है। इसे प्रसार कहते हैं।

३. यह निश्चित कीजिए कि आपको प्रत्येक वर्ग में कितने फलांक रखने हैं। उचित है कि वर्गों की संख्या ५ से कम न हो एवं १५ से अधिक। प्राय: २, ३, ५, १०, १५, या २० फलांकों के वर्ग लिए जाते हैं। प्रसार में वर्गान्तर के आकार का भाग देने से वर्गों की संख्या ज्ञात हो सकती है। यदि पाँच फलांकों को प्रत्येक वर्ग में रखकर वितरण करें तो प्रस्तुत वितरण में $\frac{३३}{५}$ = ७ (लगभग), वर्गान्तर होंगे।

४. अब विभिन्न वर्गान्तर लिख लीजिये। यदि निम्नतम फलांक ३० से

प्रारम्भ करें तो वर्गान्तर ३०-३४, ३५-३९, ४०-४४, ४५-४९ आदि बनेंगे ।

५. अब प्रत्येक वर्ग में जितने फलांक हों उसके अनुसार प्रत्येक फलांक के लिए एक 'टैली मार्क' लिख लीजिए ।

६. इस प्रकार टैली लिख जाने पर आवृत्ति स्तम्भ में उनकी गणना कर लीजिए । तत्पश्चात् कुल योग कर लीजिए ।

वर्गान्तरों की सीमाओं को लिखने के कुछ ढंग निम्नलिखित हैं :—

Class-intervals	Class-intervals	Class-intervals	Class-intervals
६०—६४	५९.५—६४.५	६०—६५	६०—६४.९९...
५५—५९	५४.५—५९.५	५५—६०	५५—५९.९९...
५०—५४	४९.५—५४.५	५०—५५	५०—५४.९९...
४५—४९	४४.५—४९.५	४५—५०	४५—४९.९९...
४०—४४	३९.५—४४.५	४०—४५	४०—४४.९९...
३५—३९	३४.५—३९.५	३५—४०	३५—३९.९९...
३०—३४	२९.५—३४.५	३०—३५	३०—३४.९९...

किसी वर्गान्तर में मध्य-बिन्दु ज्ञात करने का सूत्र है—

मध्यबिन्दु = वर्ग की निम्न सीमा + वर्ग के आकार का आधा ।

इस सूत्र के आधार पर वर्गान्तर ४०—४४ का मध्य-बिन्दु $३९.५ + \frac{५}{२} = ३९.५ + २.५ = ४२$ हुआ । हम वास्तविक सीमाओं को जोड़कर दो से भाग देकर भी मध्य-बिन्दु ज्ञात कर सकते हैं । यह है $\frac{३९.५ + ४४.५}{२} = ४२$

केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापक

केन्द्रीय प्रवृत्ति के तीन मुख्य मापकों का हम यहाँ वर्णन करेंगे—मध्यमान, मध्यांक एवं बहुलांक ।

मध्यमान (Mean)—

मध्यमान या गणितीय औसत ज्ञात करने के लिए सभी फलांकों का योग कर संख्या (N) से भाग दे देते हैं । अव्यवस्थित एवं व्यवस्थित अंक-सामग्री में इसे ज्ञात करने की विधियाँ नीचे दी हैं ।

(क) **अव्यवस्थित अंक-सामग्री** (Ungrouped Data)—अंकों का योग करके संख्या से भाग दे दीजिए । यदि फलांकों को x_1, x_2, x_3, x_4, x_5 ...

आदि से दर्शाया जाय एवं संख्या को N से तो—

$$\text{मध्यमान} = \Sigma \frac{x_1 + x_2 + x_3 + x_4 \ldots\ldots}{N} = \frac{\Sigma x}{N}$$

उदाहरण के लिए १०, १६, १७, २२, २६, २४, २६, ११ का मध्यमान

$$= \frac{१० + १६ + १७ + २२ + २६ + २४ + २६ + ११}{८} = \frac{१५२}{८} = १९$$

(ख) व्यवस्थित अङ्क-सामग्री (Grouped Data)—व्यवस्थित की हुई अर्थात् आवृत्ति में वितरित अङ्क-सामग्री का मध्यमान ज्ञात करने की दो विधियाँ हैं—दीर्घ विधि (Long Method), एवं सरल या संक्षिप्त विधि (Short Method)। निम्नलिखित उदाहरणों से ये स्पष्ट हो जायँगी :—

दीर्घ विधि (Long Method)

C—I	f	x	fx
६०—६४	२	६२	१२४
५५—५९	४	५७	२२८
५०—५४	७	५२	३६४
४५—४९	५	४७	२३५
४०—४४	९	४२	३७८
३५—३९	७	३७	२५९
३०—३४	६	३२	१९२
	N = ४०		Σfx = १७८०

$$\text{Mean} = \frac{\Sigma fx}{N} = \frac{१७८०}{४०} = ४४\cdot५$$

संक्षिप्त विधि (Short Method)

C—I	f	x′	fx′	
६०—६४	२	+३	+ ६	
५५—५९	४	+२	+ ८	
५०—५४	७	+१	+ ७	
४५—४९	५	०	०	+२१
४०—४४	९	—१	— ९	
३५—३९	७	—२	—१४	
३०—३४	६	—३	—१८	—४१
	N = ४०		Σfx′	—२०

$$\text{Mean} = \text{A.M.} + \frac{\Sigma Fx^1 \times i.}{N}$$

$$= ४७ - \frac{२०}{४०} \times ५$$

$$= ४७ - २\cdot५$$

$$= ४४\cdot५$$

ऊपर के उदाहरणों से स्पष्ट है कि दीर्घ विधि में प्रत्येक वर्गान्तर के मध्यबिन्दु (x) का इसकी आवृत्ति (f) से गुणा करते हैं। इन गुणांकों के योग (Σfx) में संख्या (N) का भाग देते हैं। इस उदाहरण में गुणांक हैं २×६२, ४× ५७, ७×५२……इत्यादि। इनका योग है १७८०। इसे ४० से भाग देने पर मध्यमान ४४·५ आया।

संक्षिप्त विधि में पहले कोई अनुमानित मध्यमान (Assumed Mean या A. M.) मान लिया जाता है। इस अनुमानित मध्यमान से वर्गान्तरों का अन्तर ज्ञात कर लेते हैं। इसे अन्तर के स्तम्भ (d या x′) में लिख लिया जाता है। इन्हें आवृत्ति (f) से गुणा करके अगले स्तम्भ (fx′ या fd) मे लिख लेते हैं। इस स्तम्भ का योग करके ($\Sigma fx'$ या Σfd), तत्पश्चात् दिये हुए सूत्र

$$\text{Mean} = AM \pm \frac{\Sigma fx'}{N} \times i$$ से मध्यमान ज्ञात कर लेते हैं।

इसमें A. M = Assumed Mean

Σfx^1 = fx^1 स्तम्भ का योग

N = संख्या अर्थात् आवृत्ति का योग

C = वर्गान्तर का आकार

प्रस्तुत उदाहरण में अनुमानित मध्यमान ४५-४९ वर्गान्तर का मध्य बिन्दु ४४·५ + $\frac{५}{२}$ = ४७ हुआ, Σfx^1 —२० है, N = ४० है, एवं i = ५; अतः मध्यमान = ४४·५। स्पष्ट है कि दीर्घ एवं संक्षिप्त दोनों ही विधियों से मध्यमान एक समान आता है। अनुमानित मध्यमान किसी भी वर्गान्तर में क्यों न माना जाए, उत्तर एक समान रहेगा।

मध्यांक (Median)—

मध्यांक का अर्थ है वितरण का मध्य बिन्दु, अर्थात् वह बिन्दु जिसके दोनों ओर ५०-५० प्रतिशत फलांक हों। ९, १२, १५, १७, २१ में १५ मध्यांक है। मध्यांक निकालने की ये विधियाँ हैं—

(क) **अव्यवस्थित सामग्री** (Ungrouped Data)—यदि फलांकों की संख्या विषम हो तो बीच का अङ्क मध्यांक होगा, जैसे १७, १८, २१, २४, २६ में २१ मध्यांक है। यदि अङ्कों की संख्या सम हो तो इस संख्या में १ जोड़कर दो का भाग देने से जो आए उसी संख्या को मध्यांक कहेंगे। जैसे १७, १८, २१, २४, २६, २९ इस प्रकार ६ संख्यायें दी गई हों तो इसमें १ जोड़कर दो का भाग दीजिए। यह हुआ $\frac{६+१}{२}$ अर्थात् ३·५ वीं संख्या। अर्थात् तीसरी एवं चौथी के बीच की संख्या।

यह है $\frac{२१+२४}{२} = \frac{४५}{२} = २२·५$

सूत्र हुआ : Median = $\frac{N+१}{२}$th number.

(ख) **व्यवस्थित सामग्री** (Grouped Data)—व्यवस्थित सामग्री में अर्थात् फलांकों के आवृत्ति वितरण होने पर मध्यांक निकालने की निम्न विधि है—

C—I	f	cf
६०—६४	२	४०
५५—५९	४	३८
५०—५४	७	३४
४५—४९	५	२७
४०—४४	९	२२
३५—३९	७	१३
३०—३४	६	६
	N=४०	

$$\text{Median} = \text{l} + \left(\frac{\frac{N}{२} - fb}{fw}\right) \times i$$

$$= ३९\cdot५ + \left(\frac{२० - १३}{९}\right) \times ५$$

$$= ४३\cdot३९$$

सूत्र में L=उस वर्गान्तर की निम्न सीमा जिसमें मध्यांक पड़े।

N=वितरण में फलांकों की संख्या, अर्थात् आवृत्तियों का योग।

fb=जिस वर्गान्तर में मध्यांक है, उससे नीचे की राशी आवृत्तियों का योग।

fw=जिस वर्गान्तर में मध्यांक है, स्वयं उसकी आवृत्ति-संख्या।

i=वर्गान्तर का आकार।

कुछ गंख्याशास्त्रविद $\frac{N}{२}$ के स्थान पर सूत्र में $\frac{N+१}{२}$ का प्रयोग करते हैं। कुछ अन्य व्यक्ति N सम (even) होने पर $\frac{N}{२}$ एवं विषम (odd) होने पर $\frac{N+१}{२}$ का प्रयोग करते हैं।

ऊपर दिए हुए सूत्र से मध्यांक निकालने की प्रक्रिया यह है कि सर्वप्रथम आवृत्ति की कुल संख्या का आधा कीजिए। प्रस्तुत उदाहरण में यह $\frac{४०}{२}$ = २० है। तत्पश्चात् निम्नतम फलांक से प्रारम्भ करके तब तक आवृत्ति जोड़िए कि आप २० प्राप्त न कर लें। प्रस्तुत उदाहरण में वर्गान्तर ३०-३४ से लेकर ३५-३९ तक १३ फलांक हैं। बीस लेने के लिए सात फलांक और चाहिए। ये आगे के वर्गान्तर ४०-४४, में से लेने हैं जिसमें ९ फलांक हैं।

चूँकि ९ फलांक ५ इकाइयों के अन्तर्गत हैं

७ फलांक $\frac{५ \times ७}{९}$ " = ३·८९ इकाइयाँ

अतः मध्यांक=३९·५+३·८९=४३.३९। सूत्र से भी इसी प्रकार ज्ञात कर सकते हैं।

बहुलांक (Mode)—

अव्यवस्थित एवं व्यवस्थित अङ्क-सामग्री में बहुलांक निकालने की विधियाँ निम्नलिखित हैं।

(क) **अव्यवस्थित अङ्क-सामग्री** (Ungrouped Data)—यदि अव्यवस्थित अङ्क दिए हों, तो बहुलांक वह फलांक है जो सबसे अधिक बार आये। उदाहरण के लिए १५, १६, १७, १७, १८, १८, १८, २०, २०, २१ में १८ बहुलांक है, क्योंकि १८ सबसे अधिक बार आया है।

(ख) **व्यवस्थित अङ्क-सामग्री** (Grouped Data)—आवृत्ति-वितरण में बहुलांक अधिकतम आवृत्ति-बिन्दु है। अर्थात् यह उस वर्गान्तर का मध्यबिन्दु है जिसकी आवृत्ति-संख्या अधिकतम हो। निम्नलिखित उदाहरण देखिये—

C—I	f
६०—६४	२
५५—५९	४
५०—५४	७
४५—४९	५
४०—४४	९
३५—३९	७
३०—३४	६

इसमें अधिकतम आवृत्ति ९ है, जो वर्गान्तर ४०-४४ में है। अतः इसका मध्य-बिन्दु ४२ ही बहुलांक है।

पर बहुलांक निकालने के लिए एक सूत्र का भी प्रयोग करते हैं। यह है

$$\text{Mode} = L + \left[\frac{fa}{fa + fb} \right] \times i$$

जिसमें L=अधिकतम आवृत्ति वाले वर्गान्तर की निम्न सीमा, fa=अगले वर्गान्तर में आवृत्ति-संख्या; fb=पिछले वर्गान्तर की आवृत्ति-संख्या; एवं i=वर्गान्तर की लम्बाई। इससे बहुलांक का मूल्य कुछ भिन्न आयेगा।

यदि मध्यमान एवं मध्यांक दोनों ज्ञात हों तो बहुलांक निकालने की सरल विधि है :—Mode=३ Median—२ Mean.

केन्द्रीय प्रवृत्ति के विभिन्न मापकों की तुलना—

मनोविज्ञान एवं शिक्षा के विद्यार्थी के लिए यह जानना परम आवश्यक है कि मध्यमान, मध्यांक एवं बहुलांक में से कब किसका प्रयोग किया जाए। अतएव सार रूप में नीचे कुछ नियम दिए गए हैं :—

मध्यमान का प्रयोग

१. जब अत्यन्त शुद्ध एवं सही आंकड़े उपलब्ध करने हों एवं उनके आधार पर अन्य सांख्यकीय प्रक्रियाएँ करनी हों जैसे विचलन, विश्वसनीयता, सहसम्बन्ध, सम्भावित त्रुटि आदि।
२. जब वितरण के प्रत्येक फलांक को महत्व दिया जाना आवश्यक हो।
३. जब वितरण सामान्य हो, अर्थात् अधिकांश अङ्क केन्द्र के आस-पास हों एवं छोर (extreme) पर कम आवृत्तियाँ हों।
४. जब दो या अधिक वितरणों की केन्द्रीय प्रवृत्ति की तुलना करनी हो। या इनके आधार पर अन्य जोड़, बाकी, गुणा, भाग आदि की गणनाएँ करनी हों।

मध्यांक का प्रयोग

१. जब अत्यन्त शीघ्रता से, केन्द्रीय प्रवृत्ति का पता लगाना हो एवं अत्यधिक शुद्धता की आवश्यकता न पड़े। या जब वास्तविक मध्य-बिन्दु का पता लगाना हो।
२. जब वितरण सामान्य न हो, एवं श्रेणी में कुछ अत्यन्त बड़े एवं कुछ अत्यन्त छोटे फलांक हों। इसका कारण यह है कि असामान्य वितरण का मध्यमान पर प्रभाव पड़ता है, मध्यांक पर उतना नहीं।
३. जब वितरण अपूर्ण हो अर्थात् उसमें सब फलांक न दिये हों।

बहुलांक का प्रयोग

१. जब बहुत ही शीघ्रता से केवल निरीक्षण द्वारा केन्द्रीय प्रवृत्ति का पता लगाना हो।
२. जब हमें अपने निष्कर्ष सबसे अधिक बार आने वाले मापक पर आधारित करने हों, जैसे किसी कारखाने में श्रमिकों का औसत वेतन।

विकरण या विचलन
(Dispersion or Variability)

केन्द्रीय प्रवृत्ति के चारों ओर अन्य मापकों के फैलाव या अन्तर को विकरण या विचलन कहते हैं। उदाहरणार्थ यदि हम किसी विषय जैसे गणित में विद्यार्थियों के दो वर्गों के अंकों की तुलना करना चाहें तो सम्भव है कि दोनों वर्गों का मध्यमान समान हो पर उनके अंकों में पर्याप्त विभिन्नता हो। नीचे के अंक देखिए।

प्रथम वर्ग के १५ विद्यार्थी प्राप्तांक		द्वितीय वर्ग के १५ विद्यार्थी प्राप्तांक	
१०		२२	
१२		१८	
१८		३०	
२०		३०	
१७		४२	
३१	मध्यमान	२१	मध्यमान
४०	=२७	३३	=२७
४२		२०	
४८		२५	
५०		२४	
१५		२९	
१६		२८	
२०		२७	
२१		२९	
३५		१७	
कुल ३९५		कुल ३९५	

दोनों वर्गों के विद्यार्थियों द्वारा प्राप्त अंकों का मध्यमान २७ है। पर प्रथम वर्ग द्वारा प्राप्त सबसे कम प्राप्तांक १० है एवं सबसे अधिक ५०; इस प्रकार प्रसार ५०—१०=४० हुआ। जबकि दूसरे वर्ग द्वारा प्राप्त सबसे कम फलांक १७ है एवं सबसे अधिक ४२, अतः प्रसार केवल ४२—१७=२५ हुआ। प्रथम वर्ग के विद्यार्थियों में अत्यन्त कमजोर, बीच के एवं बहुत होशियार सभी प्रकार के विद्यार्थी हैं पर दूसरे वर्ग में प्रायः औसत योग्यता के विद्यार्थी हैं।

अब हम विचलन की चार विधियों : (१) प्रसार (Range), (२) चतुर्थक विचलन (Quartile Deviation), (३) मध्यमान विचलन (Mean or Average Deviation) एवं (४) प्रमाप-विचलन (Standard Deviation) का संक्षेप में वर्णन करेंगे।

विस्तार या प्रसार (Range)—

वितरण के दो छोर के फलांकों के अन्तर को विस्तार कहते हैं। हमारे

पिछले आवृत्ति-वितरणों में सबसे छोटा मापक ३४ है एवं सबसे बड़ा ६४ अतः विस्तार ६४–३४ ३० हुआ।

विस्तार किसी भी वितरण में विचलन बताने वाली उचित विधि नहीं है क्योंकि इसमें केवल छोर की संख्याओं को ही महत्ता दी जाती है।

चतुर्थक विचलन (Q)—

इसे अर्द्ध-अन्तर चतुर्थक विस्तार (Semi-Interquartile Range) भी कहते हैं। यह प्रथम एवं तृतीय चतुर्थकों के अन्तर का आधा है।

अतः सूत्र है $Q = \frac{Q_3 - Q_1}{2}$

जिसमें Q = चतुर्थक विचलन ; Q_3 तृतीय चतुर्थक, एवं Q_1 = प्रथम चतुर्थक। चतुर्थक बिलकुल मध्यांक की भाँति ही निकालते हैं। प्रथम चतुर्थक में $\frac{N}{2}$ के स्थान पर $\frac{N}{4}$ से गणना की जाती है एवं तृतीय चतुर्थक में $\frac{3N}{4}$ से।

सूत्र है $$Q_1 = L + \left(\frac{\frac{3N}{4} - fb}{fw} \right) \times i$$

$$Q_3 = L + \left(\frac{\frac{3N}{4} - fb}{fw} \right) \times i$$

इस आधार पर चतुर्थक विचलन नीचे निकाला गया है।

c-i	f	cf
६०-६४	२	४०
५५-५९	४	३८
५०-५४	७	३४
४५-४९	५	२७
४०-४४	९	२२
३५-३९	७	१३
३०-३४	६	६
	N = ४०	

Q_1 = ३४.५ + (१०–६ / ७) × ५ = ३७.३६

Q_3 = ४९.५ + (३०–२७ / ७) × ५ = ५१.६४

$Q = \frac{Q_3 - Q_1}{२}$ = (५१.६४–३७.३६) / २ = ७.१४

मध्यमान विचलन (Mean or Average Deviation)—

वितरण के मध्यमान से बाकी सब फलांकों का अन्तर निकालकर यदि उनका फिर मध्यमान ज्ञात कर लिया जाए तो यह मध्यमान विचलन होगा। अन्तर निकालते समय धन (+) या ऋण (−) के चिन्हों का ध्यान नहीं रखते। केवल निरपेक्ष अन्तर ही ज्ञात करते हैं। अतः

मध्यमान विचलन या $Md = \frac{\Sigma x}{N}$

जिसमें Md = Mean Deviation

Σx = फलांकों का मध्यमान से विचलन निकालकर योग।

N = वितरण में फलांकों की संख्या।

उदाहरण—५, ७, ९, ११, १३, १५ का मध्यमान विचलन ज्ञात करना है। इन संख्याओं का मध्यमान $\frac{५+७+९+११\times१३+१५}{६} = \frac{६०}{६} = १०$

है। इस मध्यमान से संख्याओं का अन्तर क्रमशः ५, ३, १, १, ३ और ५ है। इनका योग ५+३+१+१+३+५=१८ है। अतः

मध्यमान विचलन $= \frac{१८}{६} = ३$ है।

व्यवस्थित सामग्री में भी इस प्रकार मध्यमान विचलन ज्ञात करते हैं—

C–I	f	x	fx	x′	fx′
६०-६४	२	६२	१२४	१७.५	३५.०
५५–५९	४	५७	२२८	१२.५	५०.०
५०–५४	७	५२	३६४	७.५	५२.५
४५–४९	५	४७	२३५	२.५	१२.५
४०–४४	९	४२	३७८	२.५	२२.५
३५–३९	७	३७	२५९	७.५	५२.५
३०–३४	६	३२	१९२	१२.५	५१.०

N = ४० Σfx = १७८० $\Sigma fx'$ = २७६

$Mean = \frac{\Sigma fx}{N}$

$= \frac{१७८०}{४०} = ४४.५$

$M.D = \frac{\Sigma fx'}{N} = \frac{२७६}{४०}$

$= ६.९$

इस प्रकार सर्वप्रथम वर्गान्तरों के मध्य-बिन्दु (x) निकालते हैं। फिर इन्हें आवृत्ति (f) से गुणा करके fx स्तम्भ बनाते हैं। इससे मध्यमान ज्ञात करते हैं। मध्यमान $\left(\frac{\Sigma fx}{N}\right)$ से फिर मध्यबिन्दु (x) का अन्तर

ज्ञात करते हैं। यह अगले स्तम्भ (x') में है। इसे फिर आवृत्ति (f) से गुणा करके अगले स्तम्भ (fx') में लिखते हैं। इस स्तम्भ का योग बिना चिन्हों का विचार किये करते हैं। इस योग में संख्या (N) का भाग देकर मध्यमान विचलन ज्ञात करते हैं। सूत्र है :—

$$\text{मध्यमान विचलन या M. D.} = \frac{\Sigma fx'}{N}$$

प्रमाप-विचलन (Standard Deviation)—

प्रमाप-विचलन एक श्रेष्ठ विचलन-मापक है। इसीलिए सांख्यिकीय गणनाओं में इसका सर्वाधिक उपयोग है। इसे ज्ञात करने के लिए हम सबसे पहले वितरण का मध्यमान ज्ञात करके उसी प्रकार बाकी फलाङ्कों का अन्तर ज्ञात करते हैं जिस प्रकार मध्यमान विचलन में। पर हम इन्हें बिना चिन्ह का विचार किये नहीं जोड़ते, वरन् इनका वर्ग ज्ञात करके फिर इन वर्गों को जोड़ते हैं। तदनन्तर संख्या (N) से भाग देकर वर्गमूल निकालते हैं। अतः सूत्र है—

$$\text{प्रमाप विचलन या S.D} = \sqrt{\frac{\Sigma X^2}{N}}$$

जिसमें ΣX^2 = वर्ग (Square) निकालकर योग

N = आवृत्ति-संख्या।

उदाहरण के लिए ५, ७, ९, ११, १३, १५ का प्रमाप-विचलन ज्ञात करने के लिए इनका मध्यमान निकाला। यह १० है। इससे फलाङ्कों का विचलन क्रमशः ५, ३, १, १, ३, एवं ५ है। इनका वर्ग ज्ञात किया। यह क्रमशः २५, ९, १, १, ९, २५ है। इनका योग है २५+९+१+१+९+२५=७०, अतः

$$\text{S. D.} = \sqrt{\frac{७०}{६}} = ३.४$$

आवृत्ति वितरण में दी हुई व्यवस्थित अङ्क-सामग्री का प्रमाप-विचलन ज्ञात करने की विधि निम्नलिखित है :—

C-I	f	x	fx		fx^2
६०–६४	२	+३	+६		१८
५५–५९	४	+२	+८		१६
५०–५४	७	+१	+७	+२१	७
४५–४९	५	०	०		०
४०–४४	९	—१	—९		९
३५ ३९	७	—२	—१४		२८
३०–३४	६	—३	—१८	—४१	५४

N=४० Σfx=—२० Σfx^2=१३२

$$\text{S.D. or } \sigma = i \times \sqrt{\frac{\Sigma fx^2}{N} - \left(\frac{\Sigma fx}{N}\right)^2}$$

$$= ५ \times \sqrt{\frac{१३२}{४०} - \left(\frac{-२०}{४०}\right)^2}$$

$$= ५ \times १.७५$$

$$= ८.७५$$

व्यवस्थित सामग्री में प्रमाप-विचलन ज्ञात करने के लिए सर्वप्रथम अनुमानित मध्यमान (A.M.) ज्ञात कीजिए। इससे वर्गान्तरों के अन्तर आवृत्ति के बाद के स्तम्भ (x) में लिखिये। इन अन्तरों का आवृत्ति से गुणा करके अगले स्तम्भ (fx) में लिखिये। fx का x से गुणा करके अगला स्तम्भ (fx^2) लिखिये। fx एवं fx^2 स्तम्भ का अलग-अलग योग कीजिए। तत्पश्चात् निम्न सूत्र प्रयुक्त करके विचलन ज्ञात कीजिए।

$$SD \text{ or } \sigma = i.x \sqrt{\frac{\Sigma fx^2}{N} - \left(\frac{\Sigma fx}{N}\right)^2}$$

प्रमाप-विचलन ज्ञात करने की यह संक्षिप्त विधि है। अन्य विधियों का विस्तार से अध्ययन करने के लिए सांख्यिकी की कोई पुस्तक पढ़िये।

विचलन के विभिन्न मापकों का प्रयोग

निम्नलिखित सामान्य नियमों का पालन उपादेय है।

विस्तार—

१. जब विचलन का शीघ्रता के साथ कोई मापक ज्ञात करना हो।
२. जब केवल छोर के फलाङ्कों को ही सम्पूर्ण विस्तार या विचलन का आधार बनाना हो।

चतुर्थक विचलन

१. जब केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापन के लिए मध्याङ्क का प्रयोग किया गया हो और केवल मध्य के ५०% फलांक ही महत्वपूर्ण हों।
२. जब न्यादर्श छोटा हो अर्थात् उसमें अधिक फलांक न हों।
३. जब फलाङ्कों का वक्र सामान्य (Normal and Symmetrical) न हो।
४. जब वितरण में कुछ फलांक या मापक बहुत बड़े हों एवं कुछ बहुत छोटे।

मध्यमान विचलन—

१. जब मध्यमान को केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापक के रूप में प्रयुक्त किया गया हो।
२. जब प्रत्येक फलांक महत्वपूर्ण हो, या सभी अङ्कों के विचलनों को महत्व दिया जाना हो।
३. जब निष्कर्ष अपेक्षाकृत अधिक सावधानी से निकालना आवश्यक हो।

प्रमाप-विचलन--

१. जब छोर (extreme) के विचलनों का मापक पर अपेक्षाकृत अधिक प्रभाव पड़े। अतः इन्हें महत्व देना आवश्यक हो।

२. जब अन्य सांख्यिकीय विधियाँ जैसे सहसम्बन्ध (Correlation), सम्भावित त्रुटि (Probable Error), प्रमाप त्रुटि (Standard Error) आदि की गणना करनी हो।

३. जब केन्द्रीय प्रवृत्ति का मापक मध्यमान हो एवं वितरण सामान्य (Normal) हो।

४. जब विचलन का अत्यन्त उपादेय एवं विश्वसनीय मापक ज्ञात करना हो।

सहसम्बन्ध
(Correlation)

जब हम किसी दिए हुए समूह में व्यक्तियों के गुणों का मापन करते हैं तो उनके गुणों में आपस में सम्बन्ध पाया जाता है, उदाहरणार्थ बुद्धि एवं कक्षा के विषयों में निष्पत्ति का आपस में सहसम्बन्ध है। अधिक बुद्धिमान छात्रों की निष्पत्ति भी श्रेष्ठ होती है। इसी प्रकार लम्बाई एवं वजन में सम्बन्ध है। दो परिवर्त्तियों (Variables) में जो सम्बन्ध पाया जाता है, उसे सहसम्बन्ध (Correlation) कहते हैं। यदि दो परिवर्त्तियों में इस प्रकार सम्बन्ध हो कि एक में बढ़ोतरी होने पर दूसरे में भी बढ़ोतरी हो, अर्थात् जिसका एक परिवर्त्ती में कम अङ्क आये उसका दूसरे में भी, तो उसे पूर्ण धनात्मक सहसम्बन्ध (Perfect Positive Correlation) कहते हैं। इसका बिल्कुल उल्टा होने पर पूर्ण नकारात्मक सहसम्बन्ध (Perfect Negative Correlation) होता है। पर वास्तव में अनेक परिस्थितियों में न पूर्ण धनात्मक सहसम्बन्ध आता है न पूर्ण नकारात्मक, वरन् इसके बीच में .१, .२, .९······आदि। पूर्ण सहसम्बन्ध १.० से व्यक्त किया जाता है। यदि दो परिवर्त्तियों में बिल्कुल सहसम्बन्ध न हो तो उसे शून्य सहसम्बन्ध (Zero Correlatoin) कहेंगे। सहसम्बन्ध ज्ञात करने की दो प्रमुख विधियों का वर्णन यहाँ किया गया है :—

क्रम-अन्तर विधि (Rank Difference Method)--

इस विधि से ज्ञात सहसम्बन्ध को P (rho) कहते हैं। शिक्षा एवं मनोविज्ञान में जब ऐसे गुणों का मापन किया जाता है जिनमें वास्तविक फलांक देना सम्भव न हो वरन् केवल क्रम या पद ही दिया जा सके तो प्रायः इस विधि

को प्रयुक्त करते हैं । केवल २५ या ३० के लगभग पद होने पर ही यह विधि अधिक उपादेय है । यह विधि स्पीमरमैन (Spearman) की देन है । उदाहरण के लिए निम्न दो परिवर्त्तियों का सहसम्बन्ध देखिए—

विद्यार्थी	भूगोल में अंक	इतिहास में अंक	भूगोल में क्रम	इतिहास में क्रम	क्रमों में अंतर(D)	D^2
१	२५	२३	१	१	०	०
२	१८	२१	४	३	१	१
३	१९	१९	३	४	१	१
४	१६	१८	५	५	०	०
५	२४	२२	२	२	०	०
६	१०	१६	८	७	१	१
७	१५	१७	६	६	०	०
८	१२	१२	७	८	१	१
९	७	१०	९	९	०	०
१०	४	२	१०	१०	०	०

$\Sigma D^2 = ४$

$$\sigma = १ - \frac{६ \times \Sigma D^2}{N(N^2 - १)} = १ - \frac{६ \times ४}{१०(१०^2 - १)} = १ - \frac{२४}{१० \times ९९} = \cdot ९७$$

इस प्रकार क्रम-अन्तर विधि से सहसम्बन्ध निकालने का सूत्र है—

$$\sigma = १ - \frac{६ \times \Sigma D^2}{N(N^2 - १)}$$

जिसमें, σ = सहसम्बन्ध गुणांक ।

ΣD^2 = विभिन्न क्रम के अन्तरों को वर्ग करके उनका योग ।

N = कुल संख्या ।

गुणनफल योग-विधि (Product Moment Method)—

इस विधि का सर्वप्रथम प्रयोग पियर्सन (Pearson) ने किया । अतः इस विधि द्वारा प्राप्त सहसम्बन्ध को 'पियर्सन सहसम्बन्ध' (Pearson's r) कहा जाता है । इसके निकालने की अनेक विधियाँ है यद्यपि सब में आधारभूत सिद्धान्त एक ही काम में लाया जाता है । एक सरल विधि यह है :—

विद्यार्थी	भूगोल में अंक	इतिहास में अंक	x	y	x^2	y^2	xy
१	२५	२३	+१०	+७	१००	४९	७०
२	१८	२१	+३	+५	९	२५	१५
३	१९	१९	+४	+३	१६	९	१२
४	१६	१८	+१	+२	१	४	२
५	२४	२२	+९	+६	८१	३६	५४
६	१०	१६	—५	०	२५	०	०
७	१५	१७	०	+१	०	१	०
८	१२	१२	—३	—४	९	१६	१२
९	७	१०	—८	—६	६४	३६	४८
१०	४	२	—११	—१४	१२१	१९६	१५४
	कुल १५०	कुल = १६०			४२६	३७२	३६७
	M = १५	M = १६					

$\Sigma x^2 = ४२६$

$\Sigma y^2 = ३७२$

$\Sigma xy = ३६७$

Cx = M—AM = ०

Cy = M—AM = ०.

$$\sigma_x = \sqrt{\frac{\Sigma x^2}{N} - Cx^2} = \sqrt{\frac{४२६}{१०} - ०} = \sqrt{४२.६} = ६.५२७$$

$$\sigma_y = \sqrt{\frac{\Sigma y^2}{N} - Cy^2} = \sqrt{\frac{३७२}{१०} - ०} = \sqrt{३७.२} = ६.०९९$$

$$r = \frac{\frac{\Sigma xy}{N} - CxCy}{\sigma_x \sigma_y}$$

$$= \frac{\frac{३६७}{१०} - ०}{\sqrt{४२.६ \times ३७.२}} = \frac{३६.७}{३९.८} = .९२५ \text{ Approximately}$$

सहसम्बन्ध महत्वपूर्ण हो, इसके लिए आवश्यक है कि उसका मूल्य ·५ से अधिक हो। पर परीक्षण रचना में विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए प्रायः ·७ या इससे भी अधिक सहसम्बन्ध आने पर ही उसे महत्वपूर्ण माना जायेगा। पर यह बहुत कुछ परिवर्तियों पर निर्भर करता है। बुद्धि-परीक्षण के फलांकों एवं निष्पत्ति फलांकों में ·६ का सहसम्बन्ध काफी उच्च है। पर परीक्षण का पुनर्परीक्षण करके यदि प्रथम परीक्षण एवं बाद के परीक्षण के अंकों में इतना ही सहसम्बन्ध आये तो इसे निस्संदेह निम्न ही मानेंगे।

विश्वसनीयता एवं वैधता ज्ञात करने, सम्भावित त्रुटि निकालने, एवं इसी प्रकार की अन्य सांख्यिकीय गणनाएँ करने में सहसम्बन्ध अत्यन्त उपयोगी है।

अभ्यास के लिये प्रश्न

१. निम्नलिखित फलांकों का मध्यमान, मध्यांक एवं बहुलांक निकालिए—

८, ७, १२, १६, ९, १०, १०, १८, १८, १८, २०, २२, १९.

२. निम्नलिखित फलांकों का आवृत्ति-वितरण कीजिए एवं तत्पश्चात् मध्यमान, मध्यांक एवं बहुलांक ज्ञात कीजिए--

५	१९	२१	२४	३१	३४
९	१५	२३	३५	२०	९
१२	१६	२७	३०	१९	८
१४	१८	२२	२९	१८	९
१०	२०	२९	२७	६	१०
१८	२२	३२	११	७	१२
२८	२४	३३	१८	८	११
१२	२६	३४	१६	८	१४

३. निम्नलिखित आवृत्ति-वितरण से मध्यमान, मध्यांक एवं बहुलांक ज्ञात कीजिए--

(अ)

वर्गान्तर	आवृत्ति
४०-४४	१
३५-३९	१
३०-३४	२
२५-२९	४
२०-२४	९
१५-१९	६
१०-१४	३
५- ९	२
७- ४	२
	N=३०

(ब)

वर्गान्तर	आवृत्ति
२४–२५	२
२२–२३	५
२०–२१	०
१८–१९	०
१६–१७	९
१४–१५	७
१२–१३	२
१०–११	०
	N=२५

(स)

वर्गान्तर	आवृत्ति
९०–९९	५
८०–८९	६
७०–७९	७
६०–६९	९
५०–५९	१२
४०–४९	९
३०–३९	८
२०–२९	३
१०–१९	१
	N=६०

(द)

वर्गान्तर	आवृत्ति
६– ७	२
८– ९	३
१०–११	५
१२–१३	७
१४–१५	८
१६–१७	०
१८–१९	०
२०–२१	३
२२–२३	२
२४–२५	१
२६–२७	२
	N=३३

४. निम्नलिखित फलांकों से मध्यांक (Median) निकालिए—
२४, २६, २८, २७, १२, २५, २६, ४०, ३१८, ६, २१, २४, ४२, ५६, ५५, ५२, ५०, १६, १८, २४, ३६, ४०, ४८, ५२, ५६, ४२, ४८, १८, २२, २६, ५४, ६० ।

५. निम्नलिखित परीक्षणांकों से मध्यमान विचलन (M. D.), चतुर्थाङ्क विचलन (Q), एवं प्रमाप, विचलन (S. D.) ज्ञात कीजिए—

(अ) ७, ७, ८, ६, १२, १६, १८ ।

(ब) १८, २२, १६, १४, १५, १७, ३१, ४४, १२, ४०, १८, २०, २६, १८, २४, १८, ३४, ३६, ३८, ४०, ४२, ४३, १६, २१, २२, २३, २४, २७, ३२ ।

६. निम्नलिखित आवृत्ति-वितरण से चतुर्थाङ्क एवं प्रमाप-विचलन ज्ञात कीजिए—

(अ)

वर्गान्तर	आवृत्ति
३५–३६	२
३०–३४	३
२५–२६	४
२०–२४	८
१५–१६	४
१०–१४	३
५– ६	१
	N = २५

(ब)

वर्गातन्र	आवृत्ति
६०–६६	२
८०–८६	५
७०–७६	७
६०–६६	१०
५०–५६	१२
४०–४६	१०
३० ३६	८
२०–२६	४
१०–१६	२
	N=६०

७. निम्न फलांकों की श्रेणियों में स्पीयरमैन तथा पियर्सन विधि से सह-सम्बन्ध ज्ञात कीजिए—

X	Y
१४	१२
१८	१८
२०	९
२४	७
२५	६
२७	५
२९	२
३०	१०
४०	५
४२	३

८. निम्न फलाङ्कों में पियर्सन की विधि से सहसम्बन्ध ज्ञात करो—

A	B
१५	४०
१८	३८
२२	३६
२४	४२
३०	२८
३२	१६
३४	१८
३५	२२
३७	१६
३९	१८
४०	३८
४२	२६
४४	२४
४६	१८
५०	१[illegible]

परिशिष्ट

विशिष्ट शब्दों की परिभाषाएँ

अ-आ

असंगत पद (Absurdities Items):—कथन या तथ्य जिनमें कोई असंगत, विरोधात्मक या अपूर्ण तत्त्व हो। परीक्षार्थी से इन असंगत तत्त्वों को ज्ञात करने के लिए कहा जाता है। तर्क योग्यता, आलोचनात्मक चिन्तन या बुद्धि-परीक्षणों में इन पदों का प्रचुरता से उपयोग होता है। जैसे—'चूहे ने खरगोश का पीछा किया।'

आयु-सममूल्यक (Age Equivalents):—प्रमापीकृत परीक्षाओं में अंकों को व्यक्त करने की एक विधि। इसमें सर्वप्रथम विभिन्न आयु के परीक्षार्थियों का वास्तविक प्राप्तांक ज्ञात करते हैं। तदुपरान्त उसे आयुस्तर में परिवर्त्तित कर देते हैं। इसे प्रायः वर्षों तथा महीनों में व्यक्त करते हैं। जैसे—मानसिक आयु=१०-४; पाठन आयु=११-६।

आयु सामान्यक (Age Norms):—प्रमापीकृत परीक्षणों में विभिन्न आयु के परीक्षार्थियों द्वारा प्राप्त प्रारूपिक अंक। इन्हें प्रायः सारिणीकृत या चित्रित रूप में व्यक्त करते हैं। इसके पर्यायवाची शब्द हैं: आयु सारिणीयाँ (Age Tables), आयु चार्ट (Age Charts) तथा आयु परिवर्त्तन सारिणीयाँ (Age Conversion Tables)।

अनुपात पूर्ति-पद (Analogy Items):—एक प्रकार के शाब्दिक प्रश्न-पद जो विशेषकर तर्क-योग्यता एवं सामान्यीकरण करने की सामर्थ्य का मापन करते हैं, जैसे नगर : मेयर: : प्रदेश : ?। इन पदों के दो भाग होते हैं। प्रथम भाग सम्बन्ध या तुलना बताता है, जबकि दूसरे भाग में अन्य तत्त्वों में परीक्षार्थी को इसी प्रकार के सम्बन्ध स्थापित करने होते हैं।

अभियोग्यता परीक्षण (Aptitude Tests) :—वे परीक्षण या मापन प्रविधियाँ जो यह पूर्व सूचना देती हैं कि उपयुक्त प्रशिक्षण दिए जाने पर किस व्यक्ति की किस क्रियाक्षेत्र में अधिक सफल होने की सम्भावना है। ऐसे परीक्षण मुख्यतः प्रमापीकृत हैं एवं बड़े पैमाने पर प्रकाशित हैं जैसे—'सीशोर का संगीत योग्यता परीक्षण।'

अनुमापित परीक्षण (Scaled Test) :—एक ऐसा परीक्षण जिसमें प्रश्नपद बढ़ती हुई कठिनाई के क्रम में हों।

अंशांकन (Calibration) :—मूल्यों की किसी एकरूप विधि के अनुसार क्रमित मापदण्ड में इकाइयों के परिशोधन की प्रक्रिया। परीक्षण संरचना में सफल प्रश्नपदों की केवल गणना के आधार पर प्राप्त परिणामों को समान अन्तराल मापन इकाइयों में परिवर्त्तन करने की प्रक्रिया के अर्थ में इसका प्रयोग होता है।

अंक-विस्तार (Digit Span) :—एक स्मृति-सूचक फलांक, जिसमें यह ज्ञात करते हैं कि कोई व्यक्ति अधिकतम कितने अंकों की संख्या दुहराने में समर्थ है।

अवयव-विश्लेषण (Factor Analysis) :—अनेक परीक्षणों के परिणामों के बीच अन्तर-सहसम्बन्धों (Inter-correlations) का सांख्यिकीय विश्लेषण। इसका उद्देश्य यह ज्ञात करना है कि इन सहसम्बन्धों में कितने अलग अवयवों का निश्चयन आवश्यक है, ताकि सरलतम शब्दों में सम्पूर्ण लक्षण के संगठन का विवरण दिया जा सके। विभिन्न लेखकों द्वारा प्रस्तुत मानसिक संगठन के विभिन्न सिद्धान्तों के अनुसार अवयव-विश्लेषण की भी अनेक रीतियाँ प्रस्तुत की गई हैं। अवयव-विश्लेषण से बुद्धि, व्यक्तित्व एवं अभियोग्यता के मुख्य घटकों का निश्चय करना सम्भव हो सका है।

अशुद्ध विकल्प (Foil or Distractor) :—बहुनिर्वचन प्रश्नपदों में जो एक शुद्ध विकल्प के अतिरिक्त अन्य विकल्प दिए जाते हैं वे अशुद्ध विकल्प होते हैं। जैसे—भारत की राजधानी दिल्ली, **कलकत्ता, मद्रास, बम्बई** है।

अल्पबुद्धि (Imbecile) :—मन्द बुद्धि वाला व्यक्ति, जिसका बुद्धि-स्तर इतना कम है कि वह सामान्य शारीरिक खतरों से अपना बचाव कर सकता है, भोजन करने एवं वस्त्र पहनने की योग्यता रखता है पर जिसमें अपनी जीविका कमाने की योग्यता नहीं होती।

अपेक्षा या प्रत्याशा (Expectancy) :—किसी विशेष परीक्षार्थी के लिए संभावी निष्पत्ति या उपलब्धि का प्रमाप।

अभिवृत्ति परीक्षण (Attitude Tests) :—परिमाणात्मक शब्दों में किसी विशिष्ट व्यक्ति, समूह, वस्तु या सामाजिक संस्था के पक्ष या विपक्ष में व्यक्ति की अभिवृत्तियों के मापक। जैसे युद्ध, स्कूल, अल्पमतों आदि के प्रति अभिवृत्तियों का मापन करने वाले मापदण्ड।

औसत (Average) :—देखिए, मध्यमान।

औसत विचलन (Average Deviation) :—किसी बारम्बारता वितरण में मध्यमान से सभी संख्याओं के निरपेक्ष विचलन के योग में कुल संख्याओं का भाग देने से जो फल आता है, उसे औसत विचलन कहते हैं।

अभियोजन प्रश्नावलि (Adjustment Questionnaire) :—प्रश्नों की एक सारिणी जिसका उद्देश्य बालक को अनुभव होने वाली व्यक्तिगत एवं सांवेदनिक कठिनाइयों का अनावरण करना है। इन्हें व्यक्तित्व प्रश्नावलि (Personality Questionnaire) भी कहते हैं।

आयु-मापदण्ड (Age Scale) :—एक ऐसा मापदण्ड जिसमें प्रश्न-पद इस प्रकार समूहों में संग्रहीत हों जिन्हें एक विशिष्ट अवस्था के परीक्षार्थी पास करने में सफल हों, पर किसी अन्य अवस्था के नहीं। इसे वार्षिक मापदण्ड (Year Scale) भी कहते हैं।

आधार आयु (Basal Age) :—वह आयु-स्तर जिसमें परीक्षार्थी बिने परीक्षण के सभी प्रश्न-पदों को पास कर लेता है।

अनुमान-शुद्धि (Correction for Guessing) :—सत्य-असत्य या बहु-निर्वचन परीक्षणों में परीक्षार्थी अनुमान के आधार पर उत्तर देकर जो अति-रिक्त अंक प्राप्त कर लेता है उन्हें शुद्ध करने की विधियाँ।

अनुमान-सूत्र (Correction Formulas) :—अनुमान का प्रभाव दूर करने के लिए परीक्षणों के वास्तविक प्राप्तांकों को शुद्ध करने के लिए प्रयुक्त सूत्र।

आन्तरिक संगति (Internal Consistency) :—परीक्षण के अलग-अलग भाग किस सीमा तक एक-दूसरे से सहसम्बन्धित हैं, यह इंगित करने के लिए प्रयुक्त एक शब्द।

आभ्यान्तरिक (Intrinsic) :—स्वयं वस्तु में निहित, न कि बाह्य कारणों के परिणाम स्वरूप।

अशाब्दिक परीक्षण या पद (Non-verbal Tests or Intervals) :—इस प्रकार से विकसित परीक्षण या पद परीक्षित व्यक्तियों को पदों का उत्तर देने में भाषा-प्रयोग न करना पड़े, जैसे फॉर्म बोर्ड परीक्षण, ज्यामितिक तथा यान्त्रिक पहेलियाँ, चित्र-स्मृति परीक्षण, हस्तकौशल परीक्षण आदि।

अवलोकन (Observation) :—व्यवहार के मापन की सर्वाधिक व्यापक रूप से प्रयुक्त और प्रायः सर्वाधिक अपरिष्कृत विधि। इसमें मापन की जाने वाली घटना के आयामों का प्रत्यक्ष प्रतिबोधन होता है। यदि उचित ध्यान दिया जाए, एवं उचित निरीक्षण तथा आलेख विधियों का प्रयोग हो तो अव-लोकन एक अत्यन्त विश्वास-योग्य विधि है। जैसे अध्ययन में रत किसी विद्यार्थी के व्यवहार का अवलोकन करके उसके अध्ययन-स्वरूप का पता लगाना।

आत्मनिष्ठ परीक्षण (Subjective Tests) :—ऐसे परीक्षण जिनकी अंकगणना बिना कुंजी के परीक्षक के अपने निर्णय एवं पसन्द के आधार पर होती है। प्राय: ये लम्बी लिखित परीक्षाएँ हैं। देखिए, निबन्ध परीक्षाएँ।

अभिवृत्तियाँ—(Attitudes) शिक्षा एवं निदेश के फलस्वरूप उत्पन्न प्रवृत्ति, जिसमें किसी वस्तु, व्यक्ति या विचार के प्रति कार्य करने की तत्परता निहित होती है, और जो व्यक्ति के व्यवहार पर प्रभाव डालती है।

क

केन्द्रीय प्रवृत्ति (Central Tendency) :—संख्याओं या अन्य मापकों के वितरण में ऐसा बिन्दु या मध्यान्तर, जिस पर अधिकतम संख्याएँ एकत्र हों।

कसौटी (Criterion) :—कोई भी ऐसी वस्तु जिससे तुलना करके किसी परीक्षण की वैधता का निर्णय किया जाए। प्राय: बुद्धि-परीक्षणों के लिए स्टेन्फोर्ड-बिने परीक्षण, स्कूल में प्रगति आदि को कसौटी बनाते हैं; व्यक्तित्व परीक्षणों के लिए रोशा को।

क्रम या श्रेणी (Grades) :—यह शब्द दो अर्थों में प्रयुक्त होता है: (१) प्रारम्भिक एवं हाईस्कूल के वर्षक्रम के अनुसार कक्षाएँ, (२) परीक्षार्थियों के कार्य का मूल्यांकन करने वाले प्रतीक या परीक्षण। दूसरे अर्थों में यह शब्द अंकों का पर्यायवाची है।

कुञ्जी (Key) :—किसी परीक्षण के सही उत्तर या उत्तरों के निर्वचन (interpretation) का आधार। यह एक परीक्षण भी हो सकता है जिसमें सही उत्तर अंकित हों, या विद्युत-गणना यन्त्र (Electric Scoring Machine) में प्रयोग के लिए संकेत-पत्र (Code-sheet)।

कक्षा-कोष्ठ परीक्षण (Class-room Tests) :—विशिष्ट कक्षाओं में या स्कूल की व्यवस्था में अध्यापक द्वारा निर्मित परीक्षण।

कृत्य-विश्लेषण (Job-Analysis):—किसी निश्चित कार्य या कृत्य का उसके तत्त्व, घटक या भागों में विघटन करने की प्रक्रिया।

कार्य-समय परीक्षण (Work-Limit Test):—एक ऐसा परीक्षण जिसमें पर्याप्त समय दिया जाता है, ताकि सभी या लगभग सभी परीक्षार्थी सब परीक्षण-प्रश्नों को हल कर सकें।

कार्य-न्यादर्श परीक्षण (Work-Sample Test) :—एक ऐसा परीक्षण जिसमें मूल्यांकित की जाने वाली सम्पूर्ण योग्यता के केवल एक प्रतिनिधिकारी अंश (न्यादर्श) का मापन किया जाए।

ग

गुणग्राही या संबोध परीक्षण (Appreciation Tests) :—दिए हुए विषयों, विशेषकर कला, संगीत एवं साहित्य में अभिवृत्ति एवं निर्णय का मापन करने वाले परीक्षण।

गुणांक (Coefficient) :—आनुपातिक सम्बन्धों को बताने वाली एक संज्ञा। देखिए, सहसम्बन्ध गुणांक।

गति परीक्षण (Rate or Speed Tests) :—वे परीक्षण जो विभिन्न क्रियाओं, जैसे पाठन, टाईपिंग, शॉर्टहैण्ड आदि में व्यक्ति की गति का मापन करते हैं।

ज

जड़ (Idiot) :—प्रारम्भ में यह शब्द मानसिक हीनता की सभी श्रेणियों के लिए प्रयुक्त होता रहा है। पर अब यह प्रायः निम्नतम बुद्धि-स्तर के व्यक्तियों के लिए प्रयुक्त होता है, अर्थात् परिपक्वता प्राप्त करने पर भी जिनकी मानसिक आयु ३-४ वर्ष या प्रज्ञांक २०-२५ से अधिक नहीं है।

जड़-प्रवीण (Idiot-Savant) :—अवसामान्य मानसिक योग्यता वाला व्यक्ति जो किसी विशिष्ट क्षेत्र जैसे संगीत, कला, आदि में असाधारण प्रतिभा या दक्षता का प्रदर्शन करे।

ट

टी-फलांक (T-Score) :—प्रमाप-फलांकों की एक प्रकार। इसमें प्रमाप-फलांकों (Z-Scores) को १० से गुणा करके ५० जोड़ देते हैं। अतः

$$\text{T-Score} = \frac{१०(X-M)}{\sigma} + ५०$$

द

दीप्ति-सूचक (Brightness Index) :—बुद्धि-परीक्षणों के परिणामों को व्यक्त करने के लिए पूर्वकाल में प्रचलित एक विधि।

द्वय-अवयव परीक्षण (Bi-factor Test) :—बुद्धि-परीक्षण की एक प्रकार, जिसके प्रयोग से मानसिक योग्यता के दो अलग-अलग पक्षों के सम्बन्ध में फलांक प्राप्त करते हैं।

दक्षता (Skill) :—प्रशिक्षण या अवगम के परिणामस्वरूप अर्जित योग्यता जिसमें शारीरिक या गतिवाही क्रिया सन्निहित हो।

द्वय-अवयव सिद्धान्त (Two-Factor Theory) : —स्पीयर मैन का बुद्धि का सिद्धान्त जिसके अनुसार बुद्धि में सामान्य योग्यता एवं अनेक विशिष्ट योग्यताएँ होती हैं।

न

निष्पत्ति, ज्ञानोपार्जन या उपलब्धि (Achievement or Attainment) :—इसका अर्थ है किसी क्षेत्र में पूरी की गई शिक्षा या अवगम की मात्रा। मापन की व्यावहारिक परिस्थिति में अभियोग्यता एवं निष्पत्ति के बीच एक सीमारेखा खींचना असम्भव है। ज्ञानोपार्जन वातावरण एवं शिक्षा पर निर्भर है, पर इसके लिए जन्मजात योग्यता एवं क्षमता आवश्यक है।

निरपेक्ष मापदण्ड (Absolute Scaling) :—एक मापन पद्धति जिसमें एक इकाई से दूसरी तक के अन्तर किसी निश्चित गुण की दृष्टि से समान होते हैं और जिसमें आदि-बिन्दु की स्थिति ज्ञात रहती है।

नियंत्रित अवलोकन (Controlled Observation) :—व्यवहार-निरीक्षण की वह विधि जिसमें प्रयोज्यों को पूर्व-नियोजित उद्दीपक दिए जाते हैं या जिसमें समय, लेखा-विधि, या अन्य बातें पूर्ण रूप से नियमित होती हैं।

निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Tests) :—किसी दिए हुए विषय में परीक्षार्थी के ज्ञान एवं दक्षता में कमजोरियों का पता लगाने वाले परीक्षण। कुछ बुद्धि एवं व्यक्तित्व परीक्षण भी निदानात्मक कहलाते हैं क्योंकि वे विश्लेषणात्मक फलांक प्रस्तुत करते हैं।

निबन्ध-परीक्षाएँ या प्रश्न (Essay tests, items, questions) :—ऐसे प्रश्न जिनका उत्तर विस्तृत रूप में विवेचनात्मक या निबन्धात्मक विधि में देना पड़ता है।

निष्पादन परीक्षण (Performance Tests):—कोई भी ऐसा परीक्षण या मापन की अन्य विधि जो व्यक्ति की शाब्दिक दक्षता से अधिक प्रभावित नहीं होती और जो बुद्धि या निष्पत्ति के किसी अशाब्दिक आयाम का मापन करती है, जैसे फॉर्म-बोर्ड, चित्र-स्मरण, दिशा-प्रतिबोधन परीक्षण आदि। बहुत कुछ **अशाब्दिक परीक्षण** का पर्यायवाची।

न्यादर्श (Sample) :—समग्र का एक भाग जिस पर अन्वेषण करके समग्र के गुण का आभास किया जाए।

निदेशित अवलोकन (Directed Observation) :—व्यक्तित्व अध्ययन की एक विधि जिसमें व्यक्ति के व्यवहार के कुछ विशिष्ट पक्षों का अवलोकन किया जाता है।

निवारक शिक्षा (Preventive Teaching) :—शिक्षण के प्रारम्भ में ही किए गए ऐसे प्रयास ताकि बाद में विद्यार्थी के शिक्षण में कोई कमी या कठिनाई न रह पाए।

प

प्रतिशतक, प्रतिशतक-फलांक (Perecntile, Perecntile Score) :—फलांकों के वितरण में सापेक्षिक स्थिति या श्रेणी का प्रमाप-निर्देशांक। इसका अर्थ है कि किसी दिए हुए बिन्दु या फलांक के नीचे उतने प्रतिशत फलांक हैं, जैसे ७५ वाँ प्रतिशतक वह बिन्दु या फलांक है जिसके नीचे ७५% फलांक हों।

पूर्व-परीक्षण (Pre-test):—निर्देश या प्रयोग से पूर्व प्रशासित परीक्षण। नियमतः पूर्व परीक्षण का उद्देश्य यह ज्ञात करना है कि पूर्व-परीक्षण और पुनर्परीक्षण के बीच प्रयोज्य ने कितना सीखा है।

पूर्वकथन (Prognosis or Prediction):—विधिपूर्वक मापन के आधार पर व्यक्ति के भावी या सम्भावित निष्पत्ति के बारे में पूर्वसूचना देना।

पूर्वकथन परीक्षण (Prognostic or Predictive Tests) :—ऐसे परीक्षण जो कार्यकुशलता से व्यक्तियों की भावी निष्पत्ति के बारे में सूचना देते हैं।

प्रक्षेपण विधि (Projective Techniques or Tests):—व्यवहार के मापन की स्वतन्त्र प्रत्युत्तर की विधि। इसमें परीक्षार्थी को संदिग्ध, अनेकार्थक, अस्पष्ट एवं असंरचित उद्दीपक दिया जाता है और उसके मौखिक या लिखित प्रत्युत्तरों के विश्लेषण के आधार पर व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया जाता है। इस विधि का आधारभूत सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक व्यक्ति उद्दीपक में दी हुई परिस्थिति में अचेतन रूप से अपनी व्यक्तिगत भावनाओं एवं अभि-वृत्तियों को व्यक्त करता है। सर्वाधिक प्रचलित प्रक्षेपण विधियों में गुड़ियों से खेलना, स्याही के धब्बों का निर्वचन, कठपुतली का खेल, चित्र देखकर कहानियाँ बनाना आदि सम्मिलित हैं।

प्रमाप (Standard):—कोई वस्तु, गुण या मात्रा जिसको आधार मानकर अन्य वस्तुओं या गुणों की तुलना की जाए। आवश्यक नहीं है कि एक अनुसंधान में प्रयुक्त प्रमाप दूसरे अन्वेषण में भी उपयुक्त हो।

प्रमाप-विचलन (Standard Deviation):—मापन में विचरण का एक निर्देशांक, जिसकी गणना करने के लिए मध्यमान से सभी संख्याओं का अन्तर या विचलन निकाल कर सब विचलनों का वर्ग करते हैं। फिर इन वर्गों के योग में संख्याओं का भाग देकर वर्गमूल निकाल लेते हैं।

प्रवेश-परीक्षाएँ (Admission Tests):—स्कूलों या विशेष पाठ्यक्रमों में प्रवेश के इच्छुक विद्यार्थियों की नियोज्यता का निर्णय करने के लिए बने

परीक्षण या अन्य मापन-विधियाँ। इसके अन्य पर्यायवाची शब्द हैं : चयन परीक्षाएँ (Selection Tests) तथा प्रच्छादन परीक्षाएँ (Screening Tests)।

परिपूर्त्ति-लब्धि (Accomplishment Quotient):—या परिपूर्त्ति अनुपात। फ्रान्जेन द्वारा प्रस्तावित बालक के शिक्षा-स्तर और बुद्धि-स्तर की परिमाणात्मक तुलना बताने वाली एक विधि। इस विधि में बालक की शिक्षा-आयु को उसकी मानसिक आयु से विभाजित करते हैं। अब प्राय: इस विधि का प्रयोग नहीं करते।

परीक्षण-समूहा (Battery of Tests):—परीक्षणों की एक श्रेणी जो एक ही समूह पर प्रमापीकृत हो और प्रशासित की जाए, पर जिसमें अनेक विषय सम्मिलित हों। जैसे शैक्षणिक परीक्षणों की एक समूहा में स्कूल के पाठ्य-क्रम में सम्मिलित अनेक विषयों—इतिहास, गणित, भाषा, समाज-शास्त्र, भूगोल, विज्ञान—पर परीक्षण हो सकते हैं। इन सभी परीक्षणों को मिलाकर एक सामान्य संज्ञा दे देते हैं।

पूर्ति पद (Completion Items):—प्रश्न-पद जिनमें किसी कथन के एक या अधिक छूटे हुए भागों को भर कर उस कथन को पूरा करना पड़ता है। इन्हें 'Fill-in-items' भी कहते हैं।

पद-विश्लेषण (Item Analysis):—वह प्रक्रिया जिसमें किसी परीक्षण के प्रश्नपदों की सापेक्षिक कठिनाई या विभेदकारी शक्ति का पता लगाते हैं।

पद-दुष्करता (Item Difficulty):—परीक्षार्थियों का वह प्रतिशत जिन्होंने प्रश्नपद को ठीक हल किया हो। ५० प्रतिशत दुष्करता का अर्थ है कि प्रश्नपद को प्रतिक्रिया करने वाले परीक्षार्थियों के आधे ने ठीक किया है।

पूर्व-प्रभाव त्रुटि (Halo Effect):—प्रयोज्य के किसी एक लक्षण के बारे में निर्णय करते समय उसके दूसरे लक्षणों या उसकी सामान्य श्रेष्ठता या हीनता से प्रभावित हो जाने की प्रवृत्ति।

प्रमापीकरण (Standardization):—मानसिक परीक्षण में व्यक्ति या समूहों की योग्यता की तुलना या मूल्यांकन करने के लिए प्रमाप-विधियों के प्रशासन की प्रक्रिया।

प्रमापीकरण समूह (Standardization Group):—परीक्षार्थियों का समूह जिसकी योग्यता को सामान्यक या प्रमाप निर्धारित करने के लिए प्रयुक्त किया जाए ताकि इन सामान्यकों के आधार पर अन्य परीक्षार्थियों का मूल्यांकन किया जा सके।

पठन आयु (Reading Age):—आयु के समकक्ष परीक्षार्थी की पठन-योग्यता का सूचक—एक प्रकार का सामान्यक फलांक। जैसे यह कहना कि चन्द्रकान्ता की पठन-आयु ६ वर्ष ६ माह है।

प्रच्छानन परीक्षण (Screening Tests):—वे परीक्षण जिनका उद्देश्य विद्यालयों, सेना या औद्योगिक संस्थानों में प्रवेश के निमित्त निम्नतम गुणों से रहित व्यक्तियों को अलग से छाँटकर निकाल देना है ताकि योग्य व्यक्तियों को लिया जा सके। देखिये, प्रवेश परीक्षाएँ।

प्रमाप-फलांक (Standard Score or Z-Score):—कोई मापन मध्यमान से कितने प्रमाप-विचलन ऊपर या नीचे है, इसे निर्देशित करने वाला फलांक। इसे ज्ञात करने के लिए वास्तविक फलांक में से मध्यमान घटाकर प्रमाप-विचलन से विभाजित करते हैं :—

$$Z = \frac{X - \bar{X}}{S}$$

प्रमापीकृत परीक्षण (Standardised Tests):—प्राय: बड़े पैमाने पर प्रकाशित परीक्षण जिन्हें किसी ज्ञात गुणों के न्यादर्श पर पूर्व प्रशासित कर लिया गया है। यह न्यादर्श इस प्रकार लिया जाता है कि यह जिस समग्र के लिए परीक्षण नियोजित है, उसका प्रतिनिधिकारी हो।

परीक्षण (Tests):—मापन की प्रविधियाँ जिनमें व्यक्ति सामान्य उद्दीपकों के प्रति प्रतिक्रिया करते हैं, ताकि उनके व्यवहार के किसी पक्ष के बारे में मापन हो सके।

पूर्ति परीक्षण (Completion Tests):—एक प्रकार की नवीन प्रणाली के परीक्षण, जिनमें परीक्षार्थी को शब्दों, अंकों, वाक्यांशों आदि का प्रयोग करके दिए हुए कथनों के खाली स्थानों की पूर्ति करनी पड़ती है।

ब

बुद्धि का क्षेत्र (Area of Intelligence)—थॉर्नडाइक द्वारा प्रयुक्त सम्पूर्ण बुद्धि को लक्षित करने वाला पद।

बुद्धि-लब्धि की स्थिरता (Constancy of the I/Q)—यह सिद्धान्त कि बालक की बुद्धि-लब्धि प्रारम्भिक बाल्यावस्था से लेकर बुढ़ापे तक स्थिर रहती है।

बिन्दुरेखीय (Graphic)—अन्य परिवर्त्तियों की अपेक्षा मात्रा एवं परिमाण का दृष्टिक निरूपण, जैसे हिस्टोग्राम, बार-ग्राफ, लाइन-ग्राफ आदि।

बिन्दुरेखीय निर्णय मापदण्ड (Graphic Rating Scale):—एक प्रकार का निर्णय मानदण्ड, जिसमें व्यवहार के किसी परिमाण के परिवर्त्तन-प्रसार का प्रतीकात्मक निरूपण करने के लिए एक पंक्ति के नीचे परिमाण के विभिन्न अंशों का संक्षिप्त विवरण लिखा रहता है।

बुद्धि-लब्धि (Intelligence Quotient):—अपनी ही आयु के अन्य व्यक्तियों की तुलना में किसी व्यक्ति की बुद्धि का सूचक अंक। १०० औसत बुद्धि-लब्धि है। इससे कम या अधिक बुद्धि इसी आधार पर ज्ञात होती है।

बहु-वरण पद (Multiple-choice Items):—मुख्यत: सामूहिक परीक्षणों में प्रयुक्त पद-रचना की एक विधि, जिसमें एक अपूर्ण कथन देने के पश्चात् अनेक उत्तर दे दिए जाते हैं और परीक्षार्थी को दिए हुए नियम जैसे शुद्धता, व्यक्तिगत रुचि आदि के आधार पर उनमें से एक छाँटना पड़ता है।

भ

भाविसूचक सूत्र (Prophecy Formula):—अर्द्ध विच्छेद विधि से सह-सम्बन्ध गुणांक के आधार पर परीक्षण की विश्वसनीयता ज्ञात करने का स्पीयरमैन-ब्राउन सूत्र।

म

मूल्यन (Appraisal):—किसी वस्तु की स्थिति को व्यक्त करने वाला शब्द। यह प्राय: **मापन** शब्द के पर्याय के रूप में प्रयुक्त होता है, पर यह परिणामों में उतनी यथार्थता व्यक्त नहीं करता। कभी-कभी यह **मूल्यांकन** के पर्याय के रूप में भी प्रयुक्त होता है।

मध्यमान (Mean or Arithmetic Mean):—संख्याओं के योग में उनके नम्बर का भाग दिए जाने पर जो फल आता है, उसे मध्यमान कहते हैं। यह केन्द्रीय प्रवृत्ति का एक प्रतिनिधि मापक है।

मूल्यांकन (Evaluation):—किन्हीं मनोवैज्ञानिक तथ्यों के बारे में प्रतीकों द्वारा निर्णय करने की प्रक्रिया, ताकि इस तथ्य का महत्व निर्णीत किया जा सके।

मापन (Measurement)—किसी संतत श्रेणी में दी हुई मात्रा को प्रमाप मापदण्ड से तुलना करने का परिणाम, ताकि इस मात्रा अथवा अंश की की संख्यात्मक अभिव्यक्ति की जा सके। जैसे यह ज्ञात करना कि सड़क १५ **मील** लम्बी है या कोई विद्यार्थी कक्षा में **तृतीय** है। इसकी अन्य शब्दों जैसे **मूल्यन** (Appraisal), मूल्यांकन (Evaluation), **गणना** (Counting), **विश्लेषण** (Analysis) आदि से तुलना कीजिए।

मापन की अशुद्धि (Error of Measurement):—किसी वस्तु या व्यक्ति के स्थिर गुणों के उत्तरोत्तर मापनों में आये अन्तर। इसे प्रायः मापन की प्रमाप अशुद्धि में व्यक्त करते हैं। यह मापन के वास्तविक मूल्य और निरीक्षित मूल्य का अन्तर है।

मानसिक आयु (Mental Age):—एक अर्द्ध-परिमाणात्मक शब्द जिसकी व्युत्पत्ति प्रमाप-कार्य में बालक की योग्यता की प्रत्येक आयु-स्तरों पर अन्य सामान्य बालकों की योग्यता के साथ तुलना के आधार पर की जाती है।

मानसिक परीक्षण—योग्यता के किसी विशिष्ट पक्ष के मूल्यन, मूल्यांकन या मापन के लिए प्रयुक्त प्रमापीकृत कार्य। प्रायः संकीर्ण अर्थों में यह शब्द सामान्य बुद्धि परीक्षणों के लिए प्रयुक्त होता है।

मानसिक हीनता (Mental Deficiency):—समान आयु के व्यक्तियों से तुलना करने पर मानसिक पिछड़ापन। साधारणतया दुर्बल मनस्कता का पर्यायवाची।

मशीन-स्कोरिंग (Machine-Scoring):—विद्युत मशीनों से अङ्कों की गणना करने की प्रक्रिया।

मनुष्य - से - मनुष्य का मिलान-मापदण्ड (Man-to-Man Rating Scale)—व्यवहार के मूल्यन के लिए निर्णय मापदण्ड का एक प्रकार जिसमें निर्णीत व्यक्ति की तुलना एक अन्य व्यक्ति के शाब्दिक वर्णन से की जाती है।

मिलान पद (Matching Items):—एक प्रकार के प्रत्युत्तर पद जिनमें सम्बन्धित प्रश्न-पदों के दो स्तम्भ होते हैं। प्रत्युत्तर में प्रथम स्तम्भ के प्रत्येक पद्यांश का दूसरे स्तम्भ के सम्बन्धित पद्यांश से मिलान करना पड़ता है, मुख्यतया युद्ध-तिथियों, लेखक-पुस्तकों आदि के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करने लिए।

मध्यमाप (Mid-measure)—परिमाण के क्रम में व्यवस्थित मूल्यों की शृङ्खला के मध्य का माप या मूल्य।

य

योग्यता-परीक्षण (Ability Tests)—वे परीक्षण जो किसी विषय या क्षेत्र में व्यक्ति की निपुणता या कार्यक्षमता का मापन करते हैं। ये कभी-कभी जन्म-जात या अर्जित कार्य-निपुणता में भेद करते हैं। तब जन्मजात योग्यता के मापन-हेतु बने परीक्षणों को योग्यता-परीक्षण (Ability Tests) कहते हैं एवं सीखे हुए पक्ष से सम्बन्धित परीक्षणों को ज्ञानोपार्जन परीक्षण (Achievement Tests).

व

वैकल्पिक प्रतिरूप (Alternate Forms): प्रमाणीकृत परीक्षणों का प्रकाशन कभी-कभी दो प्रतिरूपों में होता है। इनमें प्रश्न-पद अलग-अलग होते हैं, पर आयु-स्तर, सामान्यकों, शतांशीय मान, प्रमाप-अङ्क आदि की दृष्टि से इनमें कोई अन्तर नहीं होता। इनका मुख्य उद्देश्य पुनर्परीक्षण करना है जिस पर अभ्यास का प्रभाव न पड़े। इन दोनों प्रतिरूपों में कम प्रयुक्त होने वाला प्रतिरूप वैकल्पिक कहलाता है। जैसे स्टेन्फोर्ड परीक्षण में Form M। इसके पर्यायवाची हैं सममूल्यक, तुलनात्मक या तुलनात्मक प्रतिरूप (Equivalent, Comparable or Parallel Form)।

विन्यास-पद (Arrangement Items):—वे प्रश्न पद जिनमें कुछ अक्रमित शब्द, चित्र आदि दिए जाते हैं और परीक्षार्थी से उन्हें निश्चित अनुविन्यास (array) या क्रम में रखने को कहा जाता है, जैसे "brought he a me letter". इस प्रकार के प्रश्न-पदों का बुद्धि, व्यक्तित्व एवं अभियोग्यता परीक्षणों में व्यापक प्रयोग होता है।

व्युत्पन्न फलाङ्क (Derived Score): परीक्षण के वे फलांक जिन्हें कोटि, वर्गीकरण या किसी अन्य रूप में परिवर्त्तित कर लिया गया हो और इस प्रकार के वास्तविक फलांकों से भिन्न हों जिनका अर्थ है परीक्षण में वास्तविक प्रतिक्रियाओं की संख्या। प्रतिशतक अनुस्थिति, मानक फलांक, मानसिक आयु आदि इसी प्रकार के व्युत्पन्न फलाङ्क हैं।

विचलन बुद्धि-लब्धि (Deviation I/Q): वास्तविक फलांकों को जब इस प्रकार मानक फलांकों में परिवर्त्तित करके बुद्धि-लब्धि ज्ञात की जाती है कि मापदण्ड पर औसत बु० ल० १०० हो और प्रमाप-विचलन १५ या १६ तो इसे विचलन बु० ल० कहते हैं।

विभेदकारी शक्ति (Discriminating Power): प्रश्नपद का वह गुण जिससे वह किसी वस्तु का अधिक एवं कम ज्ञान वाले व्यक्तियों में विभेद करने में समर्थ है।

व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Tests):—ऐसे परीक्षण जो विभिन्न व्यक्तियों की इच्छाओं, आवश्यकताओं, लक्ष्यों, अभियोजन समस्याओं, प्रेरणाओं आदि का मापन करें।

वर्षायु (Chronological Age) :—वर्ष एवं महीनों में व्यक्त बालक की आयु। बुद्धि-लब्धि, शिक्षा-लब्धि आदि की गणना करने में इसका प्रयोग करते हैं। C. A. १०—८, इसका अर्थ यह है कि बालक की वर्षायु १० वर्ष और ८ महीने है।

व्यापक परीक्षण (Comprehensive Tests):—अनेक विषयों पर व्यापक रूप से बने परीक्षण। यह शब्द प्रायः कॉलिज-स्तर पर बने ऐसे ज्ञानोपार्जन परीक्षणों के लिए प्रयुक्त होता है जो अनेक विद्याविषयों जैसे अर्थशास्त्र, जीव-शास्त्र, शिक्षा आदि को व्याप्त करे।

विकास आयु (Development Age) :—यह मानसिक आयु से अधिक विस्तृत अर्थ वाला शब्द है और इसका अर्थ है सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास का स्तर, न कि केवल बुद्धि का। अनेक ऐसे परीक्षण बनाये गये हैं जिनसे बालक की रुचियों एवं अभिवृत्तियों की परिपक्वता का पता चलता है।

व्यक्तिगत परीक्षण (Individual Tests) :—एक समय में एक ही व्यक्ति पर प्रशासित होने वाले परीक्षण।

वस्तुनिष्ठ परीक्षण (Objective Tests) :—ऐसे मापन-उपकरण जिनमें यांत्रिक, विद्युदणु या अन्य विधियों से अंकगणना हो सके और जो परीक्षक के आत्मनिष्ठ निर्णय से प्रभावित न हो। जैसे सत्य-असत्य एवं बहु-वरण परीक्षण।

वास्तविक फलांक (Raw Scores) :—परीक्षण की अंकगणना से प्राप्त प्रथम परिमाणात्मक परिणाम।

विश्वसनीयता (Reliability) :—मापन-उपकरण का एक आवश्यक गुण, जिसका अर्थ है संगति। जब कोई उपकरण बार-बार प्रयुक्त होने पर वही निष्कर्ष दे तो वह विश्वसनीय कहलाता है।

वैधता (Validity) :—मापन उपकरण या प्रविधि का एक आवश्यक गुण कि वह परीक्षण यथार्थता से उसी उद्देश्य का मापन करता है या नहीं जिसके लिए वह बनाया गया है। वैधता स्थापित करने की प्रक्रिया को वैधकरण (Validation) कहते हैं।

व्यवहार (Behaviour) :—व्यक्ति द्वारा की गई सब प्रकार की प्रतिक्रियाएँ, विशेषकर वे जिनका अवलोकन किया जा सके।

स श

शिखर-सीमा (Ceiling)—किसी दक्षता, ज्ञान या अन्य परिमाण की उच्चतम मर्यादा जिसका कि कोई परीक्षण मापन कर सकता है। किसी भी परीक्षण का अधिकतम प्राप्तांक उसकी शिखर-सीमा है और यदि किसी परीक्षार्थी के अधिकतम अंक आ जाएँ तो हम कहते हैं कि उसने शिखर-सीमा प्राप्त करली है। एक वैध परीक्षण में शिखर-सीमा इस प्रकार होनी चाहिए कि अधिक से अधिक दक्ष व्यक्ति भी वहाँ तक न पहुँच सके।

संयोग प्रतिकारक (Chance Factor):—किसी प्रश्न-पद में उत्तर निश्चित हो सकता है या अनुमानित। किसी पद के उत्तर स्वरूप जितने अधिक विकल्प होंगे, संयोग उतनी ही कम सीमा तक उत्तर को प्रभावित करता है। असत्य-सत्य प्रश्न-पदों में केवल दो विकल्प होने से ५०% संयोग होगा। पाँच विकल्प वाले बहु-निर्वचन प्रश्न-पदों में २०% संयोग होगा। अतः संयोग प्रतिकारक का अर्थ है सम्भावित अधिकतम अंकों का वह अनुपात जो संयोग के कारण है।

सहसम्बन्ध गुणांक (Coefficient of Correlation):—सामीप्य की वह सीमा या मात्रा जिससे कि एक परिवर्त्ती दूसरे से सम्बन्धित हो। दो परिवर्त्तियों में सहसम्बन्ध निकालने के अनेक सूत्र हैं, जिनमें स्पीयरमैन तथा पीयरसन के सूत्र आम प्रयोग में हैं। दो से अधिक परिवर्त्तियों में भी सहसम्बन्ध निकालते हैं।

संस्कृति-मुक्त परीक्षण (Culture-Free Tests):—वे परीक्षण जो किसी भी संस्कृति में समान रूप से प्रशासित हो सकते हैं और सामान्यकों का सभी व्यक्तियों पर समान रूप से प्रयोग हो सकता है। प्रायः ये आरोप लगाए जाते हैं कि बुद्धि-परीक्षण मध्यवर्गीय नागरिक मूल्यों के अधिक अनुरूप होते हैं एवं इससे इतर आर्थिक-सामाजिक स्तर के व्यक्तियों की बुद्धि की ये न्यायसंगत परीक्षा नहीं करते।

सामूहिक परीक्षण (Group Tests):—एक ही साथ अनेक व्यक्तियों के समूह पर प्रशासित होने वाले परीक्षण।

सामान्यक (Norms):—किसी प्रमापीकरण समूह या ऐसे समूह पर आधारित आंकड़े जो किसी बड़े समग्र का प्रतिनिधि हो और जिससे व्यक्तियों एवं समूहों की तुलना की जा सके।

समग्र (Population or Universe):—मापन एवं सांख्यिकी में वस्तुओं के सम्पूर्ण समूह के लिए प्रयुक्त एक अमूर्त शब्द, जैसे विद्यार्थी, अध्यापक, पशु, स्कूल आदि।

सर्वे परीक्षण (Survey Tests):—मापन के उपकरण या प्रविधियाँ, जिनका उद्देश्य कुछ सामान्य आयामों में ज्ञान या योग्यता के विस्तृत क्षेत्रों का मापन करना है। ये निदानात्मक, विश्लेषणात्मक या प्रोफाइल परीक्षणों की उल्टी हैं।

सत्य-असत्य पद (True-False Items):—कथनों के रूप में प्रस्तुत प्रश्न-पद, जिनके बारे में प्रयोज्य को यह निर्णय करना पड़ता है कि वे सत्य हैं या असत्य ।

साहचर्य विधि (Association Method):—व्यक्तित्व के मूल्यांकन की एक विधि, जिसमें कुछ उद्दीपकों की स्वतन्त्र प्रतिक्रिया का विश्लेषण एवं निर्वचन किया जाता है ।

संकेत (Clues) :—परीक्षण-पदों में मिल जाने वाले संकेत, जिनसे उन्हें सही उत्तर का निर्धारण करने में सहायता मिलती है ।

सामूहिक आलेख-पत्र (Cumulative Records):—शैक्षिक प्रगति एवं विद्यार्थियों के मार्ग-दर्शन के लिए महत्वपूर्ण तथ्य लिखने के आलेख-पत्र, जो अध्यापकों द्वारा उत्तरोत्तर प्रयुक्त हो सकें । इनमें बुद्धि-लब्धि, ज्ञानोपार्जन, पाठन आदि परीक्षणों में प्राप्त अङ्कों का लेखा रहता है और प्रयोज्य की कक्षा, उसके व्यवहार के निरीक्षण, स्वास्थ्य आदि से सम्बन्धित तथ्य भी ।

शैक्षिक आयु (Educational Age):—जब किसी विद्यार्थी के विशिष्ट विषयों जैसे गणित, सामाजिक अध्ययन, पाठन, विज्ञान आदि में आयु सामान्यक ज्ञात कर लिए जाते हैं तो इनके औसत को शैक्षिक आयु कहते हैं । यह बालकों की शैक्षिक प्रगति की तुलना करने में अत्यन्त उपयोगी है, जैसे नीलम की शैक्षिक आयु १० वर्ष ४ माह है ।

शक्ति (Faculty):—किसी भी प्रकार की मानसिक योग्यता को सूचित करने वाला शब्द । ऐतिहासिक दृष्टिकोण से 'शक्ति मनोविज्ञान' की संज्ञा में इसका अर्थ है मन की एक विशिष्ट शक्ति जिसके माध्यम से कुछ प्रकार के व्यवहार सम्भव हैं ।

शक्ति मनोविज्ञान (Faculty Psychology):—व्यतीत काल में प्रचलित मनोविज्ञान की एक प्रणाली जो मानसिक प्रक्रियाओं के एक वर्गीकरण पर आश्रित है । इसमें शीर्षकों की कुछेक संख्याओं की अलग सत्ता मानी जाती है, और जिसके आधार पर व्यवहार के निरीक्षित तथ्यों की व्याख्या की जाती है ।

शक्ति-परीक्षण (Power Tests) :—ऐसी मापन-विधियाँ या परीक्षण, क्रम में व्यवस्थित किए जाने पर जिनके प्रश्न-पदों की दुष्करता बढ़ती जाए । इनमें समय की विशेष पाबन्दी नहीं होती और ये व्यक्ति के ज्ञान या उसकी दक्षता के विस्तार या गहराई का मापन करते हैं ।

क्ष

क्षीण-बुद्धि (Moron) :—मन्द-बुद्धि वाला व्यक्ति जिसका बुद्धि-स्तर सामान्य से थोड़ा ही कम है। अनेक क्षीण-बुद्धि व्यक्ति आंशिक या पूर्ण रूप से अपनी जीविका कमाने में समर्थ हैं, यदि उनका ठीक से पर्यवेक्षण किया जाए, किन्तु बिना मार्गदर्शन के वे अपनी क्रियाओं का संचालन नहीं कर पाते।

शब्द-सूची

A

Abilities = योग्यताएँ
Ability, General = सामान्य योग्यता
Ability, Mechanical = यांत्रिक योग्यता
Ability, Musical = संगीत योग्यता
Ablity, Numerical = संख्यात्मक योग्यता
Ability, Perceptual = प्रबोधात्मक योग्यता
Ability, Potential = संभाव्य योग्यता
Ability, Practical = व्यावहारिक योग्यता
Ability, Specific = विशिष्ट योग्यता
Absolute = निरपेक्ष
Absolute Standard = निरपेक्ष मानदण्ड
Abstract = अमूर्त्त
Accomplishment Quotient = निष्पत्ति अंक या लब्धि
Achievement or Attainment = निष्पत्ति, साफल्य
Achievement Test = साफल्य या निष्पत्ति परीक्षण
Administration = प्रयोग, प्रशासन
Aesthetics = सौन्दर्य-बोधशास्त्र
Age = आयु, अवस्था
Age, Basal = आधार आयु

Age, Chronological (C.A.) = वर्षायु
Age, Educational (E.A) = शिक्षायु
Age, Mental (M.A.) = मानसिक आयु
Age, Reading (R.A.) = पठनायु
Age-Norm = आयु-मानक
Age-Scale = आयु-मान या मापक
Age-Score = आयु फलांक
Alternative = वैकल्पिक
Anecdote = घटना
Analogy = अनुपात-पूरक
Apparatus = उपकरण
Application = व्यवहार, प्रयोग
Appreciation = संबोध
Aptitude = अभियोग्यता
ptitude Test = अभियोग्यता परीक्षण
Association = साहचर्य
Attitude = अभिवृत्ति
Aversion = विरुचि
Average Age = औसत आयु

B

Base line = आधार रेखा
Battery = माला
Backward = पिछड़ा हुआ
Behaviour = व्यवहार
Beta = बीटा
Bias = अभिनति
Biased Sample = अभिनति न्यादर्श
Birth Order = जन्म क्रम
Border line = सीमावर्त्ती

C

Capacity = क्षमता, सामर्थ्य
Case Study = व्यक्ति वृत्त अध्ययन
Centile = शतांश परक
Characteristics = लक्षण
Choice = चयन, चुनाव
Classification = वर्गीकरण
Code = संहिता, आचार विधि

Coefficient of Correlation = सहसम्बन्ध गुणांक
Combination = संयोजन
Comparison = तुलना
Compensation = सम्पूर्त्ति, परिपूर्त्ति
Completion Test = रिक्तस्थान-पूर्ति परीक्षण
Component = घटक
Comprehensive = व्यापक
Computation = संगठन
Concept = प्रत्यय, संकल्पना
Confirmation = पुष्टि
Constitution = शरीर-रचना
Construction of Test = परीक्षण-रचना
Correction Formula = शुद्धि-सूत्र
Cunselling = परामर्श
Cramming = रटना
Critical Ratio = क्रान्तिक अनुपात
Cube Construction Test = घन-रचना परीक्षण
Cumulative Record Card = संकलित या संचयी आलेख-पत्र
Curricular Validity = पाठ्यक्रम-वैधता

D

Data = प्रदत्त, तथ्य
Deficiency = हीनता
Dexterity Manual = हस्तकौशल
Discrimination = भिन्नता भेद, विभेद
Diagnosis = निदान
Diagnostic Test = निदान-परीक्षण
Digit Span = अंक-विस्तार
Dimension = आयाम
Discrepency = असंगति
Dull = मन्द-बुद्धि

E

Educational Measurement = शैक्षणिक मापन
Educational Quotient = शैक्षणिक लब्धि
Empirical Validity = अनुभव-जन्य वैधता
Endocrine Balance = अन्तःस्रावी संतुलन
Enrichment = समृद्धि
Examination = परीक्षा
Essay-Type = निबन्धात्मक
Evaluation = मूल्यांकन

F

Factor	= तत्त्व, प्रतिकारक
Fantasy	= कल्पना तरंग
Fatigue	= थकान
First Try-out	= प्रथम बार परख
Final Test	= अन्तिम परख
Forgetting	= विस्मरण
Formula	= सूत्र
Fraternal Twins	= भ्रातृक-यमज

G

Generalised	= सामान्यीकृत
General Achievement Test	= सामान्य साफल्य या ज्ञानोपार्जन परीक्षण
'g' Factor	'g' प्रतिकारक
Gradation	क्रम-स्थापन
Grade	= क्रम, श्रेणी
Grade-Norm	श्रेणी-मानक
Group Intelligence Tests	= सामूहिक बुद्धि-परीक्षण
Grouping	= समूहन
Guessing-Correction	अनुमान-शुद्धि
Guidance	संदर्शन

H

Halo-effect	= पूर्व-प्रभाव त्रुटि
Heredity	= वंश-परम्परा
Heterogenous	विविध जातीय
Hierarchical	= सोपान-क्रमिक
Homogenous	सजातीय
Hormone	= रस

I

Identity	= तादात्म्य
Idiot-Savant	= जड़-कुशल
Inconstancy	= अस्थिरता
Index	= सूचक
Index of reliability	= विश्वसनीयता सूचक
Infantile	= शैशविक
Individual Intelligence Tests	= व्यक्तिगत बुद्धि-परीक्षण

Innate = जन्मजात
Insight = अन्तर्दृष्टि
Intellect or Intelligence = बुद्धि, प्रज्ञा
Intelligence Quotient = बुद्धि-लब्धि प्रज्ञांक
Intelligence Test = बुद्धि-परीक्षण
Intensity = तीव्रता
Interview = साक्षात्कार, समालाप
Interest = रुचि
Interpretation = निर्वचन
Item = पद, प्रश्न
Item-analysis = पद-विश्लेषण

J

Judgement = निर्णय, संबोध
Judgement, Objective = वस्तुनिष्ठ निर्णय
Judgement, Subjective = आत्म-निष्ठ निर्णय

K

Key = कुंजी
Koh's Block Design Test = कोह् काष्ठ-अनुभूति परीक्षण

L

Learning = सीखना, अवगम
Level = स्तर
Logical Validity = तर्क-संगत वैधता

M

Matching-items = मिलान-पद
Mean = मध्यमान
Measurement = मापन
Median = मध्यांक, मध्यका
Memory-Span = स्मृति-विस्तार
Mental Age = मानसिक आयु
Mental Quotient = मानसिक लब्धि
Mentally Deficient = क्षीणमति
Mental Tests = मानसिक परीक्षण
Method of Rational Equivalence = तर्कयुक्त समानता विधि
= बहुनिर्वचन प्रश्न
Multiple Factor Theory = बहुनिर्वचन प्रतिकारक सिद्धान्त

N

New Type Test	नवीन परीक्षण प्रणाली
Non-directive Counselling	अनिदेशात्मक परामर्श
Nonsense-syllable	अर्थहीन अक्षर
Non-Verbal Test	अशाब्दिक परीक्षण
Normal Curve	सामान्य वक्र
Normal Distribution	सामान्य वितरण
Norm	मानक
Age Norm	आयु-मानक
Sex Norm	लिंग-मानक
Grade Norm	श्रेणी-मानक
Normality	सामान्यता
Number Factor	संख्या-प्रतिकारक

O

Objective	ध्येय, उद्देश्य
Objective Test	वस्तुनिष्ठ परीक्षण
Objectivity	वस्तुनिष्ठता
Omnibus Test	सर्वमान
Oposite	विपरीत, विरोधी
Outstanding	उत्कृष्ट
Overt	विवृत्त

P

Paper and Pencil Test	पत्र-पैन्सिल परीक्षण
Parallel-Form Method	समानान्तर विधि
Pattern	प्ररूप-बनत
Perception	प्रत्यक्ष ज्ञान
Performance Test	निष्पादन परीक्षण
Persistent	आग्रही
Personality Tests	व्यक्तित्व परीक्षण
Phrenology	मस्तिष्क-विज्ञान
Power and Speed Tests	शक्ति एवं गति-परीक्षण
Prediction	प्रकथन, पूर्वकथन
Procedure	क्रिया-विधि
Process	प्रक्रिया
Process of reasoning	तर्क प्रक्रिया
Projection	प्रक्षेप
Projective Techniques	प्रक्षेपण विधियाँ
Psycho-analysis	मनोविश्लेषण
Psycho-therapy	मनश्चिकित्सा

Q

Questionnaire = प्रश्नावली
Quick-Scoring = शीघ्र-फलांकन

R

Rapport = एकतानता
Raters = निर्धारक, निर्णय-कर्त्ता
Rational Equivalence Method = तर्कयुक्त समानता विधि
Rating Scale = वर्गश्रेणी या निर्णय मापदण्ड
Raw Score = वास्तविक फलांक
Readiness Principle = प्रस्तुता नियम
Recall Items = प्रत्यास्मरण पद
Regression = प्रतिगमन
Response = प्रतिक्रिया, अनुक्रिया
Relative Measurement = सापेक्षिक मापन
Reliability = विश्वसनीयता
Research = अन्वेषण, शोध
Remedial Teaching = उपचारिक अध्यापन
Rigid = अनम्य

S

Saccadic = संसरणशील
Scatter-diagram = प्रकीर्ण-चित्र
Scholastic = विद्यालय-सम्बन्धी
Score = फलांक
Scoring = फलांकन, अंकन
Score, Centile = शतांशपरक फलांक
Score, Percentile = प्रतिशतक भलांक
Score, Standard = प्रमाप फलांक
Self-Consistency = आत्म-संगति
Self-Correlation = स्व-सहसम्बन्ध
Sequence = अनुक्रम
Sibling = सहोदर
Situational Tests = परिवेशात्मक परीक्षण
Skilled = कुशल
Spearman-Brown prophesy formula = स्पीयरमैन-ब्राउन पूर्वकथन सूत्र
Specific abilities = विशिष्ट योग्यताएँ
Stability = स्थिरता
Standard-Deviation = प्रमाप-विचलन

Standardiration = प्रमापीकरण
Standardised = प्रमापीकृत
Statistician = संख्याशास्त्री
Syllogism = अनुमान प्रक्रिया
Symbol = प्रतीक
System = प्रणाली

T

Test = परीक्षण
Testing Condition = परीक्षण की परिस्थितियाँ
Test Vocational = व्यावसायिक परीक्षण
Test-Items = परीक्षण-पद
Test-Retest = परीक्षण-पुनर्परीक्षण
Tetrad Equation = चार-राशि-समीकरण
Training = प्रशिक्षण
Trait = लक्षण
Trait, Personality = व्यक्तित्व लक्षण
True-False Items = सत्य-असत्य पद
Twins = यमज
    Fraternal Twins = भ्रातृक यमज
    Identical Twins = समरूप यमज
Two-factor theory = द्वि-प्रतिकारक सिद्धान्त

U

Unpredictable = अपूर्वकथनेय
Unique = अनन्य
Usability = उपयोगिता
Uses of Tests = परीक्षणों का उपयोग

V

Value = मूल्य
Visual Perception = दृष्टिक प्रत्यक्ष
Validity = वैधता
    Curricular = पाठ्क्रम-सम्बन्धी
    Logical = तर्क-संगत
    Empirical = अनुभवजन्य
    Statistical = सांख्यिकीय
    Factor = प्रतिकारक
Verbal Factor = शाब्दिक प्रतिकारक

Verbal Group Test = शाब्दिक सामूहिक परीक्षण
Vocational Guidance = व्यावसायिक संदर्शन

W

Word Fluency = शब्द-प्रवाह

—: o :—

SELECTED BIBLIOGRAPHY

1. Allen, W. C. : *Cumulative Pupil Reords.*
   Bureau of Publications, Teachers College, Columbia University, New York, 1943.
2. Allport, G. W. : *Personality : A Psychological interpretation.*
   Holt & Co., New York, 1937.
3. Anastasi, A. : *Psychological Testing.*
   MacMillan Co., New York, 1954.
4. Anastasi, A : *Differential Psychology.*
   McMillan & Co., New York.
5. Anderson, H. H., and Anderson, G. L. (editors) : *An Introduction to Projective Techniques.*
   Prentice-Hall & Co., New York, 1951.
6. Basu, A. N. : *School Record.*
   Ministry of Education, Govt. of India, 1954.
7. Ballard, P. B. : *Mental Tests.*
   University of London Press, London.
8. Ballard, P. B. : *Group Tests of Intelligence.*
   University of London Press, London.
9. Bhatia, C. M. : *Performance Tests of Intelligence.*
   Oxford University Press, 1954.

10. Bean, K. L. : *Construction of Educationl and Personnel Tests.*
McGraw-Hill Book Co., New York, 1953.

11. Bell, J. E. : *Projective Techniques, a Dynamic Approach to the Study of Personality.*
Longmans Green & Co., New York. 1948.

12. Bellak, Leopold : *The Thematic Apperception Test and The Children's Apperception Tests.*
Grunn & Stratton, New York.

13. Bingham, W. V. : *Aptitudes and Aptitude Testing.*
Harper & Brothers, New York, 1937.

14. Bloom, S. B. : *Taxonomy of Educational Objectives.*
Longmans, Green & Co., New York, London, Toronto, 1956.

15. Blum, G. S. : *The Blacky Pictures : Manual of Instructions.*
Psychological Corporation, New York, 1950.

16. Boring E. G. : *A History of Experimental Psychology.*
Appleton-Century Crofts, New York.

17. Bradfield and Mordock : *Measurement & Evaluation in Education.*
MacMillan, New York, 1957.

18. Buros, O. K. (ed.) : *The Fifth Mental Measurements Yearbook.*
Highland Park, N. J., Gryphon Press, 1959.

19. Burt, C. : *Mental & Scholastic Tests.*
Staples Press Ltd., Covendish Place, London, 1921.

20. Cattell, R. B. : *A Guide to Mental Testing.*
University of London Press, London, 1936.

21. Cronbach, Lee J : *Essentials of Psychological Testing.*
Harper and Brothers, New York, 1960.

22. Earle, F. M. : *Reconstruction in the Secondary School.*
University of London Press, London, 1943.

23. Eysenck, H. J. : *Uses and Abuses of Psychology.*
Penguin, London, 1953.

24. Freeman, F. N. : *Mental Tests,* Their History, Principles and *Applications.*
Houghton Mifflin, Boston, 1939.

25. Galton, F. : *Hereditary Genius.*
MacMillan & Co. Ltd., London, 1869.

26. Garrett, H. E. : *Statistics in Psychology & Education.*
Longmans Green & Co., New York, 1947.

27. Gessell, Arnold : *Child Development.*
Harper Brothers, New York, 1949.

28. Good, C. V. : *Dictionary of Education.*
McGraw-Hill, New York, 1945.

29. Goodenough, F. L. : *Mental Testing.*
Rinehart & Co., New York, 1949.

30. Green, E. B. : *Measurements of Human Behaviour.*
Odyssey Press, New York, 1941.

31. Green, Jorgenson, and Gerberich : *Measurement and Evaluation in the Secondary School.*
Longmans Green & Co., New York, 1957.

32. Guilford, J. P. : *Fundamental Statistics in Psychology & Education.*
McGraw-Hill Book Co., New York, 1950.

33. Gulliksen, H. : *Theory of Mental Tests.*
John Wiley & Sons, New York, 1950.

34. Hawkes, H. E., Lindqiust, E. F., and Mann, C. R. : *The Construction and Use of Achievement Examinations.* Houghton Mifflin, Boston, 1936.

35. Hull, C. L. : *Aptitude Testing.*
World Book Co., Yonkers, 1928.

36. Hildreth, Allen and Others : *Metropolitan Achievement Tests.*
World Book Co., New York, 1946.

37. Jordan, A. M. : *Measurement in Education.*
McGraw–Hill Book Co., New York, 1953.

38. Kelley, T. L. : *Interpretation of Educational Measurements.*
World Book Co., Yonkers, 1939.

39. Knight, R. : *Intelligence and Intelligence Tests.*
Metheun, London, 1933.

40. Lindquist. E. F. : *Educational Measurement.*
American Council on Education, Washington, 1951.

41. McCall, W. A. : *Measurements.*
The MacMillan Co., New York, 1939.

42. McNemer. Q. : *The Revision of the Stanford-Binet Scale.*
Houghton Mifflin, Boston, 1942.
43. McNemer, Q. : *Psychological Statistics.*
John Wiley & Sons, New York, Chapman & Hall Ltd., London.
44. Micheels, W. J., & Karnes, M. R. : *Measuring Educational Achievement.*
McGraw-Hill Book Co., New York, 1950.
45. Menzel, E. W. : *Suggestions For the Use of New Type Tests in India.*
Geoffrey Cumberlege, Oxford University Press, London.
46. Monroe, W. S. (ed) : *Encyclopedia of Educational Research.*
MacMillan & Co., New York, 1950.
47. Mursell, J. L. : *Phychological Testing.*
Longmans Green & Co., New York, 1949.
48. Newkirk, L. N. and Green H. A. : *Tests and Measurement in Industrial Education.*
John Wiley & Sons, New York, 1949.
49. Piaget, J. : *The Psychology of Intelligence.*
Routlege & Kegan Paul, London, 1947.
50. Printer, Rudolt : *Intelligence Testing. Methods and Results.*
Henry Holt, New York, 1931.
51. Rawat, D. S. : *Statistics and Measurement in Education.*
Bharat Publication, Agra, 1956.
52. Remmers, H. H. and Cage N. L. : *Educational Measurement and Evaluation.*
Harper Brothers, New York, 1943.
53. Rorschach, H : *Psychodiagnostics.*
Earnest Birchen, Berne, Switzerland, 1921.
54. Ross, C. C. and Stanley, J. C. : *Measurement in Today's Schools.*
Prentice-Hall, New York, 1954.
55. Schonell, F. I. and Schonell, E. F. : *Diagnostic & Attainment Testing.*
Oliver and Boyd, Edinburgh.

56. Seashore, E. C. : *Psychology of Music.*
McGraw-Hill Book Co., New York, 1953.

57. Siegel, Sidney, : *Nonparametric Statistics.*
McGraw-Hill Book Co., New York, 1956.

58. Smith, B. O. : *Logical Aspects of Educational Measurement.*
Columbia University Press, New York, 1938.

59. Smith and Taylor : *Appraising & Recording Student Progress.*
Harper & Brothers, New York, 1942.

60. Spearman, C. & Jones E. : *Human Ability.*
MacMillan & Co., London, New York, 1951.

61. Stoddard, G. D. : *The Meaning of Intelligence.*
MacMillan & Co., New York, 1947.

62. Symonds, P. M. : *Diagnosing Personality & Conduct.*
Appleton Century, New York, 1931.

63. Terman, L. M. : *The Measurement of Intelligence.*
Houghton Mifflin, Boston, 1916.

64. Terman, L. M., and Merrill, M. : *Measuring Intelligence.*
Houghton Mifflin, Boston, 1937.

65. Thomas, R. M. : *Judging Student Progress.*
Longmans, London, 1955.

66. Thomson, G. H. : *The Factorial Analysis of Human Ability.*
Houghton Mifflin, Boston, 1939.

67. Tiffin, J. : *Industrial Psychology.*
Prentice-Hall, New York, 1942.

68. Thorndike, E. L. : *An Introduction to the Theory of Mental and Social Measurements.*
Columbia University, New York, 1904.

69. Thorndike, R. L. : *Personnel Selection, Tests and Measurement Techniques.*
John Wiley & Sons, New York, 1949

70. Thorndike, R. L. and Hagen, E. : *Measurement and Evaluation in Psychology and Education.*
John Wiley & Sons, New York, 1955.

71. Travers, R. M. W. : *Educational Measurement.*
MacMillan & Co., New York, 1955.

72. Torgerson, T. L. & Adams, G. S. : *Measurement & Evaluation for the Elementary School.*
Dryden Press, New York, 1954.

73. Vernon, P. E. : *The Measurement of Abilities.*
University of London Press, London, 1956.

74. Vernon, P. E. : *Personnel Selion in the British Armed Forces.*
University of London Press, London, 1949.

75. Valentine, C. W. and Emmetts, W. G. : *The Reliability of Examinations.*
University of London Press, London, 1932.

76. Whitney, F. L. : *The Elements of Research.*
Prentice-Hall, NewYork, 1950.

77. Walker, H. W. : *Elementary Statistical Methods.*
Henry Holt and Co., New York, 1943.

78. Wechsler, David : *The Measurement of Adult Intelligence.*
Williams & Wilkins Co., Baltimore, 1943.

AGRA UNIVERSITY EXAMINATIONS

M. A. 1959

N. B. Answer five questions selecting, at least two from each part. The questions are of equal value.

Part I

1. What does an intelligence test measure? Distinguish between an 'age scale' and a 'point scale'.
2. What is meant by reliability of a test? Discuss any two methods of determining the reliability of a test.
3. Choosing any particular type of test, outline in brief the method of test construction.
4. Discuss in brief the characteristics of a good test. Evaluate teacher-made tests in the light of these characteristics.

Part II

5. Arrange the following scores in a frequency distribution table and calculate the Q. and S. D. :—

   59, 48, 71, 50, 69, 48, 65, 57, 53, 67, 53, 76, 82. 66, 66, 47, 53, 66, 71 47, 57, 61, 54, 61, 56, 64, 60. 47, 61, 60, 62, 37, 61, 55, 43, 62, 51, 76, 73, 54, 65, 51. 50, 50, 47, 57, 63, 57, 70, 81.

6. A group of school students was given a verbal and a non-verbal test of intelligence. The following statistics were obtained :—

	Verbal	Non-Verbal
Mean	120·0	80·0
SD	7·5	6·5
	r = ·55	

Derive the regression equations in score form.

7. The following is a record of the number of trials taken by two groups of rats in learning a maze :—

Group I				Group II			
10	9	7	9	12	9	8	7
7	6	6	12	7	8	4	9
9	10	9	11	9	10	9	9
6	13	4	15	6	6	6	8
8	9	8	13	5	4	7	11

Test the hypothesis that the two groups are random samples from a common population.

8. Compute the coefficient of correlation between height and weight shown in the correlation table given below :—

Height in Inches (Y)	Weight in pounds (X) 24-28	29-33	34-38	39-43	44-48	49-53	Totals
45-47			1		2		3
42-44			4	35	21	5	65
39-41		5	87	90	7	1	190
36-38	1	18	72	8			99
33-35	5	15	5				25
30-32	2						2
Totals	8	38	169	133	30	6	384

M. A. 1960

N. B. Answer five questions, at least two from each part. All questions are of equal value.

Part I

1. How would you choose an intelligent test if you have

to select in a hurry 100 out of 5000 applicants for ad-mission to a school ? Describe carefully the procedure.

2. How does the 1937 revision of the Binet Scale compare with the Wechsler-Bellevue Adult Intelligence Scale ? In what way are the two scales different and in what way is the Wechsler-Bellevue Adult Intelligence Scale Superior ?
3. Describe briefly the essential features of a good psycho-logical tests.
4. What are the functions of an achievement test ? State some of the problems which arise in determining its validity.
5. In what way do the projective techniques differ from situational tests ? State some of the recent developments in the use of Rorschach Ink-blot Test.

Part II

6. Describe brliefly the criterion for randomness in the sample and give some of the techniques used to insure the criterion of randomness.

Or,

"It is a negligent investigator who works with a sample rather than with the total population." Examine critically the above statement giving reasons as to why one of the two alternatives is needed.

7.

Case	X Score	Y Score
1	40	22
2	37	19
3	39	18
4	28	11
5	42	20
6	46	20
7	37	20
8	35	10

Given above are the two sets of scores obtained by eight students of a class. Determine statistically their closeness.

The equations $x+y=5$, $x+y=1$, $x+y=0$, $x+y=-3$, or in general $x+y=c$ are members of one family. What family characteristics have they in common ?

9.

Age in months	f
155–159	1
150–154	1
144–149	1
140–144	2
135–139	0
130–134	3
125–129	6
120–134	8
115-119	22
110–114	25
105–109	31
100–104	7
95– 99	2

Here is the age distribution of 109 children of a primary school. Compute 50th, 75th and 82nd percentiles.

10. With the help of the data given in question 9, compute the mean and the standard deviation.

M. A. 1961

N. B. Answer five questions, selecting at least two from each part. All questions are of equal value.

Part I

1. Deal briefly with the uses of testing programme.
2. Outline the steps involved in the construction and standardization of an aptitude test.
3. Describe the characteristics of the Wechsler-Bellevue adult intelligence test. State the shortcomings of this test.
4. Discuss fully the value of projective techniques for the assessment of personality.
5. Estimate any two methods of estimating the reliability of a test.

Part II

6. What is sampling ? Explain fully the different methods of sampling.
7. Compute Q and SD for the following frequency distribution ;—

Scores	f
140–144	2
135–139	2
130–134	2
125–129	4
120–124	5
115–119	9
110–114	6
105–109	3
100-104	4
95– 99	2
90– 94	1

8. Plot a frequency polygon to represent the frequency distribution in question 7. Smooth the frequency distribution, and plot the smoothed f's on the same axes.

9. Compute the correlation (P) by rank difference method between the following sets of memory test scores, and interpret it :—

Scores on Test I	Scores on Test II
15	12
14	14
13	10
12	8
11	12
11	9
11	12
10	8
10	10
0	9
19	8
9	7
8	7
7	8
7	6

10. Write notes on *any two* of the following :—
   (a) Coefficient of variation.
   (b) Standard error.
   (c) Regression.

M. A. 1962

N. B. Answer four qnestions in all, selecting two from each part. All questions are of equal value.

1. Discuss fully the characteristics of a good test. Show your acquaintance with some significant practical consideration which must be kept in view in choosing a test.
2. Indicate briefly the nature and scope of psychological measurement today.
3. Discuss the methods of determining the validity of a test. What is the relation of validity to the length of a test ? Explain.
4. What does an intelligent test measure ? Distinguish clearly between achievement tests and aptitude tests.

Part II

5. Explain fully the nature of statistical thinking. What are the important uses of statistical methods in psychology ?
6. Compute SD, MD and Q for the following frequency distribution :—

Scores	f
110–112	3
107–109	2
104-106	5
101–103	3
98–100	7
95– 97	11
92– 94	5
89– 91	4
86- 88	4
83– 85	4
80– 82	2

7. Find out the correlation between height and weight, using the data given below, and interpret the result.

Weight in pounds (X)

Height in Inches (y)	24-28	29-33	34-38	39-43	44-48	49-53	Totals
45-47			1		2		3
42-44			4	35	21	5	65
39-41		5	87	90	7	1	190
36-38	1	18	72	8			99
33-35	5	15	5				25
30-32	2						2
Totals	8	38	169	133	30	6	384

8. Write notes on any three of the following :—
   (a) Regression.
   (b) Measures of central tendency.
   (c) Sampling.
   (d) Symbolism in statistics.

TABLE 1

[Areas Under the Normal Probability Curve (σ units)]

Total area (taken as 10,000) under the normal probability curve, corresponding to distances on the base-line between the mean and successive points from the mean in standard deviation units.

$\frac{x}{\sigma}$	·00	·01	·02	·03	·04	·05	·06	·07	·08	09
0·0	0000	0040	0080	0120	0160	0199	0239	0279	0319	0359
0·1	0398	0438	0478	0517	0557	0596	0636	0675	0714	0753
0·2	0793	0832	0871	0910	0948	0987	1026	1064	1103	1141
0·3	1179	1217	1255	1293	1331	1368	1406	1443	1480	1517
0·4	1554	1591	1628	1664	1700	1736	1772	1808	1844	1879
0·5	1915	1950	1985	2019	2054	2088	2123	2157	2190	2224
0·6	2257	2291	2324	2357	2389	2422	2454	2486	2517	2549
0·7	2580	2611	2642	2673	2704	2734	2764	2794	2823	2852
0·8	2881	2910	2939	2967	2995	3023	3051	3078	3106	3133
0·9	3159	3186	3212	3238	3264	3290	3315	3340	3365	3389
1·0	3413	3438	3461	3485	3508	3531	3554	3577	3599	3621
1·1	3643	3665	3686	3708	3729	3749	3770	3790	3810	3830
1·2	3849	3869	3888	3907	3925	3944	3962	3980	3997	4015
1·3	4032	4049	4066	4082	4099	4115	4131	4147	4162	4177
1·4	4192	4207	4222	4236	4251	4255	4279	4292	4306	4319
1·5	4332	4345	4357	4370	4383	4394	4406	4318	4429	4441
1·6	4452	4463	4474	4484	4495	4505	4515	4525	4535	4545
1·7	4554	4564	4573	4582	4591	4599	4608	4616	4625	4633
1·8	4641	4649	4656	4664	4671	4678	4686	4693	4699	4706
1·9	4713	4719	4726	4732	4738	4744	4750	4756	4761	4667
2·0	4772	4778	4783	4788	4793	4798	4803	4808	4812	4817
2·1	4821	4826	4830	4834	4838	4842	4846	4850	4854	4857
2·2	4861	4864	4868	4871	4875	4878	4881	4884	4887	4890
2·3	4893	4896	4898	4901	4904	4906	4909	4911	4913	4916
2·4	4918	4920	4922	4925	4927	4929	4931	4932	4934	4936
2·5	4938	4940	4941	4943	4945	4946	4048	4949	4951	9452
2·6	4953	4955	4956	4957	4959	4960	4961	4962	4963	4964
2·7	4965	4966	4967	4968	4969	4970	4971	4972	4973	4974
2·8	4974	4975	4976	4977	4977	4978	4979	4979	4980	4981
2·9	4981	4982	4982	4983	4984	4984	4985	4985	4986	4986
3·0	4986·5	4986·9	4987·4	4987·8	4988·2	4988·6	4988·9	4989·3	4989·7	4990·0
3·1	4990·3	4990·6	4991·0	4991·3	4991·6	4991·8	4992·1	4992·4	4992·6	4992·9

TABLE II

[*Areas Under the Normal Curve (PE units)*]

Total area (taken as 10,000) under the normal probability curve, corresponding to distances on the base-line between the mean and successive points from the mean in PE units.

X/PE	·00	·05	X/PE	·00	·05
·0	0000	0135	3·0	4785	4802
·1	0269	0403	3·1	4817	4832
·2	0537	0607	3·2	4846	4858
·3	0802	0933	3·3	4870	4881
·4	1063	1193	3·4	4891	4900
·5	1320	1447	3·5	4909	4917
·6	1571	1695	3·6	4924	4931
·7	1816	1935	3·7	4937	4943
·8	2053	2168	3·8	4984	4953
·9	2281	2392	3·9	4957	4961
1·0	2500	2606	4·0	4965	4968
1·1	2709	2810	4·1	4972	4974
1·2	2909	3004	4·2	4977	4979
1·3	3097	3187	4·3	4981	4983
1·4	3275	3360	4·4	4985	4987
1·5	3442	3521	4·5	4988	4989
1·6	3597	3671	4·6	4990	4961
1·7	3742	3811	4·7	4992	4993
1·8	3876	3939	4·8	4994	4995
1·9	4000	4058	4·9	4995	4996
2·0	4114	4166	5·0	4996	4997
2·1	4217	4265	5·1	4997·1	4997·4
2·2	4311	4354	5·2	4997·7	4998
2·3	4396	4435	5·3	4998·2	4998·5
2·4	4473	4508	5·4	4998·6	4998·8
2·5	4541	4573	5·5	4999	4999·1
2·6	4603	4631	5·6	4999·1	4999·3
2·7	4657	4682	5·7	4999·4	4999·5
2·8	4705	4727	5·8	4999·5	4999·6
2·9	4748	4767	5·9	4999·6	4999·7

TABLE III

[Square and Square Roots from 1 to 500]

Number	Square	S. R.	Number	Square	S. R.
1	1	1·0000	44	1936	6·6332
2	4	1·4142	45	2025	6·7082
3	9	1·7321	46	2116	6·7823
4	16	2·0000	47	2209	6·8557
5	25	2·2361	48	2304	6·9282
6	36	2·4495	49	2401	7·0000
7	49	2·6458	50	2500	7·0711
8	64	2·8284	51	2601	7·1414
9	81	3·0000	52	2704	7·2111
10	100	3·1623	53	2809	7·2801
11	121	3·3166	54	2916	7·3485
12	144	3·4641	55	3025	7·4162
13	169	3·6056	56	3136	7·4833
14	196	3·7417	57	3249	7·5498
15	225	3·8730	58	3364	7·6158
16	256	4·0000	59	3481	7·6811
17	289	4·1231	60	3600	7·7450
18	324	4·2426	61	3721	7·8102
19	361	4·3589	62	3844	7·8740
20	400	4·4721	63	3969	7·9373
21	441	4·5826	64	4096	8·0000
22	484	4·6904	65	4225	8·0623
23	529	4·7958	66	4356	8·1240
24	576	4·8990	67	4489	8·1854
25	625	5·0000	68	4624	8·2462
26	676	5·0990	69	4761	8·3066
27	729	5·1962	70	4900	8·3666
28	784	5·2915	71	5041	8·4261
29	841	5·3852	72	5184	8·4853
30	900	5·4772	73	5329	8·5440
31	961	5·5678	74	5476	8·6023
32	1024	5·6569	75	5625	8·6603
33	1089	5·7446	76	5776	8·7178
34	1156	5·8310	77	5929	8·7750
35	1225	5·9161	78	6084	8·8318
36	1296	6·0000	79	6241	8·8882
37	1369	6·0828	80	6400	8·9443
38	1444	6·1644	81	6561	9·0000
39	1521	6·2450	82	6724	9·0554
40	1600	6·3246	83	6889	9·1104
41	1681	6·4031	84	7056	9·1652
42	1764	6·4807	85	7225	9·2195
43	1849	6·5574	86	7396	9·2736

Number	Square	S. R.
87	7569	9·3274
88	7744	9·3808
89	7921	9·4340
90	8100	9·4868
91	8281	9·5394
92	8464	9·5917
93	8649	9·6437
94	8836	9·6954
95	9025	9·7468
96	9216	9·7980
97	9409	9·8489
98	9604	9·8995
99	9801	9·9499
100	10000	10·0000
101	10201	10·0499
102	10404	10·0995
103	10609	10·1489
104	10816	10·1980
105	11025	10·2470
106	11236	10·2956
107	11449	10·3441
108	11664	10·3923
109	11881	10·4403
110	12100	10·4881
111	12321	10·5357
112	12544	10·5830
113	12769	10·6301
114	12996	10·6771
115	13225	10·7238
116	13456	10·7703
117	13689	10·8167
118	13924	10·8928
119	14161	10·9087
120	14400	10·9545
121	14641	11·0000
122	14884	11·0454
123	15129	11·0905
124	15376	11·1355
125	15625	11·1803
126	15876	11·2250
127	16129	11·2694
128	16384	11·3137
129	16641	11·3578
130	16900	11·4018
131	17161	11·4455
132	17424	11·4891
133	17689	11·5326
134	17956	11·5758
135	18225	11·6190
136	18496	11·6619
137	18769	11·7047
138	19044	11·7473
139	19321	11·7898
140	19600	11·8322
141	19881	11·8743
142	20164	11·9164
143	20449	11·9583
144	20736	12·0000
145	21025	12·0416
146	21316	12·0830
147	21609	12·1244
148	21904	12·1655
149	22201	12·2066
150	22500	12·2474
151	22801	12·2882
152	23104	12·3288
153	23409	12·3693
154	23716	12·4097
155	24025	12·4499
156	24336	12·4900
157	24649	12·5300
158	24964	12·5698
159	25281	12·6095
160	25600	12·6491
161	25921	12·6886
162	26244	12·7279
163	26569	12·7671
164	26896	12·8062
165	27225	12·8452
166	27556	12·8841
167	27889	12·9228
168	28224	12·9615
169	28561	13·0000
170	28900	13·0384
171	29241	13·0767
172	29584	13·1149
173	29929	13·1529
174	30276	13·1909
175	30625	13·2288
176	30976	13·2665
177	31329	13·3041
178	31684	13·3417
179	32041	13·3791
180	32400	13·4164
181	32761	13·4536
182	33124	13·4907

Number	Square	S. R.	Number	Square	S. R.
183	33489	13·5277	231	53361	15·1987
184	33856	13·5647	232	53824	15·2315
185	34225	13·6015	233	54289	15·2643
186	34596	13·6382	234	54756	15·2971
187	34969	13·6748	235	55225	15·3297
188	35344	13·7113	236	55696	15·3623
189	35721	13·7477	237	56169	15·3948
190	36100	13·6840	238	56644	15·4272
191	36481	13·8203	239	57121	15·4596
192	36864	13·8564	240	57600	15·4919
193	37249	13·8924	241	58081	15·5242
194	37636	13·9284	242	58564	15·5563
195	38025	13·9642	243	59049	15·5885
196	38416	14·0000	244	59536	15·6205
197	38809	14·0357	245	60025	15·6525
198	39204	14·0712	246	60516	15·6844
199	39601	14·1067	247	61009	15·7162
200	40000	14·1421	248	61504	15·7480
201	40401	14·1774	249	62001	15·7797
202	40804	14·2127	250	62500	15·8114
203	41209	15·2478	251	63001	15·8430
204	41616	14·2829	252	63504	15·8745
205	42025	14·3178	253	64009	15·9060
206	42436	14·3527	254	64516	15·9374
207	42849	14·3875	255	65025	15·9687
208	43264	14·4222	256	65536	16·0000
209	43681	14·4568	257	66049	16·0312
210	44100	14·4914	258	66564	16·0624
211	44521	14·5258	259	67081	16·0935
212	44944	14·5602	260	67600	16·1245
213	45369	14·5945	261	68121	16·1555
214	45796	14·6287	262	68644	16·1864
215	46225	14·6629	263	69169	16·2173
216	46656	14·6969	264	69696	16·2481
217	47089	14·7309	265	70225	16·2788
218	47524	14·7648	266	70756	16·3095
219	47961	14·7986	267	71289	16·3401
220	48400	14·8324	268	71824	16·3707
221	48841	14·8661	269	72361	16·4012
222	49284	14·8997	270	72900	16·4317
223	49729	14·9332	271	73441	16·4621
224	50176	14·9666	272	73984	16·4924
225	50625	15·0000	273	74529	16·5227
226	51076	15·0333	274	75076	16·5529
227	51529	15·0665	275	75625	16·5831
228	51984	15·0997	276	76176	16·6132
229	52441	15·1326	277	76729	16·6433
230	52900	15·1658	278	77284	16·6733

Number	Square	S. R.	Number	Square	S. R.
279	77841	16·7033	327	106929	18·0831
280	78400	16·7332	328	107584	18·1108
281	78961	16·7631	329	108241	18·1384
282	79524	16·7929	330	108900	18·1659
283	80089	16·8226	331	109561	18·1934
284	80656	16·8523	332	110224	18·2209
285	81225	16·8819	333	110889	18·2483
286	81796	16·9115	334	111556	17·2757
287	82369	16·9411	335	112225	18·3030
288	82944	16·9706	336	112896	18·3303
289	83521	17·0000	337	113569	18·3576
290	84100	17·0294	338	114244	18·3848
291	84681	17·0587	339	114921	18·4120
292	85264	17·0880	340	115600	18·4391
293	85849	17.1172	341	116281	18·4662
294	86436	17·1464	342	116964	18·4932
295	87025	17·1756	343	117649	18·5203
296	87616	17·2047	344	118336	18·5472
297	88209	17·2337	345	119025	18·5742
298	88804	17·2627	346	119716	18·6011
299	89401	17·2916	347	120409	18·6279
300	90000	17·3205	348	121104	18·6548
301	90601	17·3494	349	121801	18·6815
302	91204	17·3781	350	122500	18·7083
303	91809	17·4069	351	123201	18·7350
304	92416	17·4356	352	123904	18·7617
305	93025	17·4642	353	124609	18·7883
306	93636	17·4929	354	125316	18·8149
307	94249	17·5214	355	126025	18·8414
308	94864	17·5499	356	126736	18·8680
309	95481	17·5684	357	127449	18·8944
310	96100	17·6068	358	128164	18.9209
311	96721	17·6352	359	128881	18·9473
312	97344	17·6635	360	129600	18·9737
313	97969	17·6918	361	130321	19·0000
314	98596	17·7200	362	131044	19·0263
315	99225	17·7482	363	131769	19·0526
316	99856	17·7764	364	132496	19·0788
317	100489	17·8045	365	133225	19·1050
318	101124	17·8326	366	133956	19·1311
319	101761	17·8606	367	134689	19·1572
320	102400	17·8885	368	135424	19·1833
321	103041	17·9165	369	136161	19·2094
322	103684	17·9444	370	136900	19·2354
323	104329	17·9722	371	137641	19·2614
324	104976	18·0000	372	138384	19·2873
325	105625	18·0278	373	139129	19·3132
326	106276	18·0555	374	139876	19·3391

Number	Square	S. R.
375	140625	19·3649
376	141376	19·3907
377	142129	19·4165
378	142884	19·4422
379	143641	19·4679
380	144400	19·4936
381	145161	19·5192
382	145924	19·5448
383	146689	19·5704
384	147456	19·5959
385	148225	19·6214
386	148996	19·6469
387	149769	19·6723
388	150544	19·6977
389	151321	19·7231
390	152100	19·7484
391	152881	19·7737
392	153664	19·7990
393	154449	19·8242
394	155236	19·8494
395	156025	19·8746
396	156816	19·8997
397	157609	19·9249
398	158404	19·9499
399	159201	19·9750
400	160000	20·0000
401	160801	20·0250
402	161604	20.0499
403	162409	20·0749
404	163216	20·0998
405	164025	20·1246
406	164836	20·1494
407	165649	20·1742
408	166464	20·1990
409	167281	20·2237
410	168100	20·2485
411	168921	20·2731
412	169744	20·2978
413	170569	20·3224
414	171396	20·3470
415	172225	20·3715
416	173056	20·3961
417	173889	20·4206
418	174724	20·4450
419	175561	20·4695
420	176400	20·4939
421	177241	20·5183
422	178084	20·5426

Number	Square	S. R.
423	178929	20·5670
424	179776	20·5913
425	180625	20·6155
426	181476	20·6398
427	182329	20·6640
428	183184	20·6882
429	184041	20·7123
430	184900	20·7364
431	185761	20·7605
432	186624	20·7846
433	187489	20·8087
434	188356	20·8327
435	189225	20·8567
436	190096	20·8806
437	190969	20·9045
438	191844	20·9284
439	192721	20·9523
440	193600	20·9762
441	194481	21·0000
442	195364	21·0238
443	196249	21·0476
444	197136	21·0713
445	198025	21·0950
446	198916	21·1187
447	199809	21·1424
448	200704	21·1660
449	201601	21·1896
450	202500	21·2132
451	203401	21·2368
452	204304	21·2603
453	205209	21·2838
454	206116	21·3073
455	207025	21·3307
456	207936	21·3542
457	208849	21·3776
458	209764	21·4009
459	210681	21·4243
460	211600	21·4476
461	212521	21·4709
462	213444	21·4942
463	214369	21·5174
464	215296	21·5407
465	216225	21·5639
466	217156	21·5870
467	218089	21·6102
468	219024	21·6333
469	219961	21·6564
470	210900	21·6795

Number	Square	S. R.	Number	Square	S. R.
471	221841	21·7025	501	261121	22·6053
472	222784	21·7256	502	262144	22·6274
473	223729	21·7486	503	263169	22·6495
474	224676	21·7715	504	264196	22·6716
475	225625	21·7945	505	265225	22·6936
476	226576	21·8174	506	266256	22·7156
477	227529	21·8403	507	267289	22·7376
478	228484	21·8632	508	268324	22·7596
479	229441	21·8861	509	269361	22·7816
480	230400	21·9089	510	270400	22·8035
481	231361	21·9317	511	271441	22·8254
482	232324	21·9545	512	272484	22·8473
483	233289	21·9773	513	273529	22·8692
484	234256	22·0000	514	274576	22·8910
485	735225	22·0227	515	275625	22·9129
486	236196	22·0454	516	276676	22·9347
487	237169	22·0681	517	277729	22·9565
488	238144	22·0907	518	278784	22·9783
489	239121	22·1133	519	279841	23·0000
490	240100	22·1359	520	280900	23·0217
491	241081	22·1585	521	281961	23·0434
492	242064	22·1811	522	283024	23·0651
493	243049	22·2036	523	284089	23·0868
494	244036	22·2261	524	285156	23·1084
495	245025	22·2486	525	286225	23·1301
496	246016	22·2711	526	287296	23·1517
497	247009	22·2935	527	288369	23·1733
498	248004	22·3159	528	289444	23·1948
499	249001	22·3383	529	290521	23·2164
500	250000	22·3607	530	291600	23·2379

अनुक्रमणिका

अ

क

च

थ

न

प

भ

म

र

ल

स

श

ह

—: ० :—